शम्भुहोराप्रकाश

पं० महीधरशर्माजी कृत

हिन्दीटीकासहित

मुद्रक व प्रकाशकः—

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष—"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस,

कल्याण-बम्बई.

[illegible]

मूल्य ३० रुपये मात्र

मुद्रक
खे० खेमराज श्रीकृष्णदास, अध्यक्ष-श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई-४, के लिये
के० के० शर्मा, मैनेजर, द्वारा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस, खेतवाड़ी, बम्बई-४ में मुद्रित।

भूमिका।

प्रिय पाठकगण!

मैंने परम कारुणिक जगदीश्वर एवं श्रीगुरुचरणोंकी कृपासे अनेक ग्रन्थ संग्रह तथा भाषाटीका की हैं, जिनमें फलादेशके जातकग्रन्थ बृहज्जातक, भावकुतूहल, सर्वार्थचिन्तामणि तथा जातकशिरोमणि आदिकी सर्वोपकारी भाषाटीका बनाई है। जो श्रीमान् सेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजीके प्रबन्धसे छपभी गई हैं, जिनसे बहुत लोक अपना कार्य निर्वाह सुगमतासे करते हैं। जो ज्योतिषके संकेत (कुंजियाँ) बडी मुश्किलसे विद्वानोंद्वारा कदाचित् ही खुलते थे, उन्हें भाषाटीकासे सहजहीमें जानकर आनंदित होते हैं। कोई विरले ही मत्सरी हैं जो उन्हीं ग्रन्थोंसे कार्य साधन करते हैं और बाहर निन्दा उपहास भी किया करते हैं, उन्हें छोडकर बहुतसे गुणज्ञ कृतज्ञ तथा निष्पक्षपात सज्जन जो मेरी कृतिसे सानन्द लाभ उठाकर मेरे परिश्रमको उपकारी मानते हैं। उक्त जातक ग्रन्थोंकी सरल भाषाटीका होनेसे अब अन्य जातकफलादेश ग्रन्थोंकी भाषाटीकाकी आवश्यकता नहीं थी, परन्तु यह **शम्भुहोराप्रकाश** नामक ग्रन्थ जो **शम्भुराजाके** समयमें पण्डित **पुञ्जराजाचार्यने** अपने राजाके नामसे बनाया था इससे अन्य जातकोंकी अपेक्षा छोटे ग्रन्थमें बडा काम है जैसा ग्रहयोगादियोंसे चमत्कारिक फल विशेष तथा केशवी जातकके सदृश ग्रहषड्बलादि गणित, अंशायु, पिण्डायु, निसर्गायु आदिका गणित विशेषतः अष्टकवर्गकी दशाका गणित जिससे आयुका निर्णय ठीक ठीक होता है। इतनी विशेषता होनेपरभी ग्रन्थ गूढार्थ और कोई टीका टिप्पणी न होनेसे अप्रचलित था, इस अभावके मेटनेके निमित्त इसकी सरल **भाषाटीका** विशेषतः गणितस्थलोंमें उदाहरणसहित बना है जिससे सर्वसाधारण ज्योतिषी आयुर्निर्णय एवं फलादेश चमत्कारी सुगमता-

सेही ठीक करसकेंगे इस ग्रन्थके अवलोकने तथा फलादेश करनेसे जो महाशय मेरे इस परिश्रमको सफल करेंगे उनका मैं कृतज्ञ हूंगा, इसमें जो भूल वा किसी प्रकार त्रुटि होवै उसे सरलचित्त विद्वान् शोधें तथा कृपया मुझेभी सूचित करें जिससे अग्रिम संस्करणमें ठीक करदिया जावें। और इस पुस्तकका पुनर्मुद्रणादि सर्वाधिकार मैंने सेठ **खेमराज श्रीकृष्णदास** "अध्यक्ष" "**श्रीवेङ्कटेश्वर**" स्टीम् प्रेस बम्बईको सादर समर्पित कर-दिया है और कोई महाशय इसके छापने आदिका साहस न करें, नहीं तो लाभके बदले हानि उठानी पडेगी।

निवेदक टीकाकार–

पं० महीधरशर्मा धर्माधिकारी,

राजधानी टिहरी, जिला गढवाल.

श्रीः ।

शम्भुहोराप्रकाशस्थविषयानुक्रमणिका ।

इति विषयानुक्रमणिका समाप्ता ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ शम्भुहोराप्रकाशः ।

पं० महीधरजीशर्मकृत-

भाषाटीकासहितः ।



अथ राशिभेदाध्यायः १ ।

मङ्गलाचरणम् ।

सानन्दं परमं शिवं सगिरिजं भक्ताभिलाषप्रदं
गीर्वाणार्चितपादपद्मयुगलं श्रीरेणुकां सिद्धिदाम् ।
सिन्दूरोल्लसितं गजेन्द्रवदनं मार्तण्डमुख्यग्रहान्
वंदेऽहं गरुडध्वजं च शिरसा श्रीमाधवाख्यं गुरुम् ॥ १ ॥

श्रीनाथं गणनायकं च वरदां श्रीशारदां सर्वदां
नत्वा सद्विवृतिं तनोति सरलां सद्भाषया भूषिताम् ।
टीहर्यां निवसन् महीधरधरादेवो मुदे हौरिका
णां होरादिप्रकाशकस्य विशदां गूढार्थसंबोधिनीम् ॥ १ ॥

ग्रन्थकर्त्ता ग्रंथादिमें मंगलाचरण करता है कि, गिरिजासहित परम शिव जो भक्तोंकी अभिलाषा देनेवाला है, जिसके चरणकमलयुगल देवताओंसे अर्चित हैं उसको तथा सिद्धि देनेवाली रेणुकाको, सिंदूरसे देदीप्यमान गजेन्द्रमुखवाले गणेशको, सूर्यादि ग्रहोंको, गरुड है ध्वजामें जिसके ऐसे विष्णुको और माधवनाम अपने गुरुको शिरसे नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

ग्रन्थारम्भप्रयोजनम् ।

ब्राह्मं सूर्यसमुद्भवं शिवशिवासंवादजं हौरिकं
श्रीमद्भर्गवशिष्ठशौनकशुकव्यासादिभिः कीर्तितम् ।

---

१ ग्रन्थादिमें निर्विघ्नतया ग्रन्थसमाप्त्यर्थ मङ्गलाचरण करता है कि, श्रीगुरु गणेश और समस्त वर देनेवाली सरस्वतीको नमस्कार करके ज्योतिषियोंके प्रसन्नतार्थ टीहरीनिवासी महीधरशर्मा गूढार्थबोधन करनेवाली सरल एवं सुंदर भाषासे भूषित होराप्रकाशनामक ज्योतिष फलादेश ग्रन्थकी टीका करता है ॥ १ ॥

शास्त्रं सत्यवराहरेणुकमणित्थाद्यैश्च यद्विस्तृतं
तत्सारं परिगृह्य कोमलपदैः श्रीमच्छिवानुज्ञया ॥ २ ॥
शिवमुखैर्गदितं च निजागमैर्भगणजं गगनेचरजं फलम् ।
ललितनिर्मलकोमलसत्पदैः सुमतिना कृतिना हि विरच्यते ॥३॥

होराशास्त्रके ब्रह्मसिद्धान्त, सूर्यसिद्धान्त, शिवपार्वतीसंवाद (गौरीजातक), गर्ग, वशिष्ठ, शौनक, शुक, व्यासादियोंके कहे, सत्याचार्य, वराह मिहिर, रेणुक, मणित्थादियोंके विस्तारित किये हुए शास्त्रोंसे सारांश ग्रहण करके श्रीमान् शिवकी आज्ञासे कोमल पदोंसे यहां विस्तारित किया जाता है ॥ २ ॥ शिवादि ग्रन्थकर्त्ता आचार्योंने जो अपने आगमोंमें ग्रहजनित फल कहा है वह रमणीय एवं कोमल पदों करके उत्तम बुद्धिवाले पंडितसे यहां रचा जाता है ॥ ३ ॥

विद्वद्रम्यं खेटलीलाविलासं होराचार्यः पुञ्जराजः करोति ।
होरासारं शंभुहोराप्रकाशं रम्यैर्वृत्तैः शंभुभूपालतुष्ट्यै ॥ ४ ॥

विद्वानोंकरके गम्य, ग्रहोंकी लीलाका विलास, ज्योतिषका सार यह शंभुहोराप्रकाश शंभुनाम राजाके प्रसन्नतार्थ ज्योतिषाचार्य पुंजराजनामा करता है ॥ ४ ॥

ज्योतिःशास्त्रप्रशंसा ।

चक्षुर्भूतमिदं कृतेश्च विधिना ज्ञातुं प्रवृत्तं रवे-
र्होराख्यं व्यवहारकं च गणितं स्कन्धत्रयं ज्योतिषम् ।
तत्सूर्येण मयासुराय कथितं प्रत्यक्पुरे रोमके-
ऽप्यध्येतव्यमिलामरैश्च परमं पुण्यं रहस्यं यतः ॥ ५ ॥

अब ज्योतिःशास्त्रकी प्रशंसा कहते हैं—कि, यह जातकादि फलादेशस्कंध (व्यवहार) निर्णयादिस्कंध और गणितस्कंधरूप स्कंधत्रयात्मक ज्योतिष वेदका चक्षु अंग है, इसको सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माने जगच्चक्षु ज्योतिषके आदि प्रवर्तक श्रीसूर्यनारायणद्वारा संसारके जाननेको प्रवृत्त किया है, वही सूर्यने पश्चिम रोमकपुरमें मयनामा दानवसे पहिले कहा, इसी प्रकार संसारमें प्रवृत्त

हुआ, वेदचक्षु होनेसे तथा ब्रह्माके जगच्चक्षु सूर्यके द्वारा प्रकट करानेसे यह परम पुण्य और संरक्ष्य है इस कारण ब्राह्मण इसे अवश्य पढें ॥ ५ ॥

ज्योतिषशास्त्रे सप्त सिद्धान्ताः ।

आद्यः सिद्धान्तः स्मृतः सोमसंज्ञो यो वै दुर्गायै शिवेन प्रयुक्तः ।
अन्यो धात्रा निर्मितो ब्रह्मसंज्ञः सूर्येणोक्तः सौरसंज्ञस्तृतीयः ॥ ६ ॥
वाशिष्ठाख्यः पौलिशो लोमशश्च पाराशर्य्यः सांप्रताचार्यसंज्ञः ।
प्रोक्ताः सिद्धांतास्त्वमी सप्तसंख्या व्यक्ताव्यक्तैर्भूरिभेदैः समेताः ॥७॥

पहिला सिद्धांत सोमसिद्धांत है, जो पार्वतीजीसे शिवजीने कहा है, दूसरा ब्रह्माका बनाया ब्रह्मसिद्धान्त है, तीसरा सूर्यप्रोक्त सूर्यसिद्धान्त है ॥ ६ ॥ चौथा वशिष्ठसिद्धान्त, पांचवाँ पौलिशसिद्धान्त, छठा लोमशसिद्धान्त, सातवाँ आधुनिकाचार्य पराशरकृत है, ये सात सिद्धांत कहे हैं, जो दृग्गणित आदि भेदोंसे अनेक प्रकारके भेदोंसे युक्त हैं ॥ ७ ॥

दैवज्ञलक्षणम् ।

होरापारसमुद्रपारगमने नूनं समर्थो महान् पाट्याख्ये गणिते च बीजगणिते यो दर्भगर्भाग्रधीः॥सिद्धांते स्फुटवासनाप्रकथने भेदैरनेकैर्युते गोले स्यात्कुशलः स एव गणको योग्यः फलादेशके॥ ८॥ भोज्यं यद्वत्सद्रसं वै विनाऽऽज्यं राज्यं यद्वद्राजहीनं न भाति ॥ नो भात्येवं सत्सभा वक्तृहीना तद्वद्दैवज्ञोऽपि गोलानभिज्ञः ॥ ९ ॥ त्रिस्कंधज्ञो दर्शनीयः प्रशांतः श्रौतस्मार्त्तोपासने निष्ठचित्तः ॥ निर्दंभो यः सत्यवादी प्रसन्नो दैवज्ञो वै स स्मृतो नेतरश्च ॥ १० ॥

अब ज्योतिषीके लक्षण कहते हैं कि—होरारूपी अपार समुद्रको तरके पार जानेमें निश्चय बडी सामर्थ्यवाला हो, पाटीगणित तथा बीजगणितमें कुशगर्भके अग्रसमान तेज बुद्धि हो, सिद्धांतकी स्पष्ट वासना कहनेमें और अनेक भेदवाले गोलाध्यायमें अभिज्ञ हो वही ज्योतिषी फलादेश कहनेमें योग्य है और नहीं ॥ ८ ॥ अच्छे रसोंसे युक्त भोजन जैसे बिना घृतके

तथा विना राजाके राज्य शोभायमान नहीं होते और जैसे सभारंजक चतुर मनुष्योंके विना सभा नहीं शोभती तैसेही गोलगणितानभिज्ञ ज्योतिषीभी नहीं शोभता है ॥ ९ ॥ ज्योतिष पूर्वोक्त तीन स्कंधोंको जाननेवाला, सुरूप, शांत, श्रौत (वैदिक) स्मार्त (धर्मशास्त्रीय) कर्मोपासनामें निष्ठ चित्तवाला, दंभरहित, सत्यवादी, प्रसन्न प्रकृतिवाला दैवज्ञ कहा है अन्य नहीं ॥ १० ॥

जन्मपत्रलेखे मङ्गलश्लोकाः ।

भद्रं पङ्कजिनीपतिः कुमुदिनीप्राणेश्वरः सद्युतिं माहेयो विभवं बुधो निपुणतां दीर्घायुषं गीष्पतिः ॥ दैत्येज्यः प्रभुतां शनिर्विजयितां सिंहीसुतोऽभीष्टतां केतुर्यच्छतु वैरिसंघदलनं ब्रह्माच्युतेशाः सुखम् ॥ ११ ॥ आदित्यप्रमुखाश्च ये दिविचरास्तारागणैः संयुता मेषाद्या अपि राशयो गणपतिर्ब्रह्मेशलक्ष्मीधराः ॥ गौर्याद्याः किल मातरोऽष्ट वसवः शक्रश्च सप्तर्षयस्ते रक्षंतु सदैव यस्य विमला पत्री मया लिख्यते ॥ १२ ॥

जन्मपत्रीके आदिमें लिखने योग्य मंगलाशीर्वादश्लोक कहते हैं—कि, सूर्य कल्याण, चंद्रमा अच्छी कांति, मंगल ऐश्वर्य, बुध निपुणता, बृहस्पति दीर्घायु, शुक्र प्रभुता, शनि विजयिता, राहु मनोभिलाषसिद्धि, केतु शत्रुसमूहका मर्दन और ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर सुख देवैं ॥ ११ ॥ तारागणोंसे सहित जो सूर्यादि आकाशचारी ग्रह हैं तथा मेषादिराशि, गणेश, ब्रह्मा, शिव, लक्ष्मी, पृथ्वी, गौरी आदि मातृका, आठों वसु, इन्द्र और सप्तर्षि इतने निश्चय सर्वदा उसकी रक्षा करैं, जिसकी जन्मपत्री मुझसे लिखी जाती है ॥ १२ ॥

प्रागुत्थानां कर्मणां व्यंजयित्री सौख्यायुःश्रीतेजसां वर्द्धयित्री ॥ नानासंपत्तुष्टिपुष्टिप्रदात्री यस्येयं वै लिख्यते जन्मपत्री ॥ १३ ॥ प्राग्जनौ तु सदसद्भिमिश्रितं कर्म यन्मनुजनैरुपार्जितम् ॥ तद्विपाकमिह होरिकागमो व्यञ्जयत्यपि दशाक्रमेण च ॥ १४ ॥ वर्णावली तु लिखिता भुवि मानवानां धात्रा

ललाटपटले किल दैवविलाम्। संवाचयत्यपि च हौरिक-
शास्त्रदृष्ट्या नान्यो घटादिसकलं तमसि त्वदीपः ॥ १५ ॥

जिसकी यह जन्मपत्री लिखी जाती है उसके पूर्वकृत कर्मोंको प्रगट करनेवाली, सुख, आयु, श्री और तेजकी बढानेवाली, अनेक प्रकार संपत्ति, प्रसन्नता, पुष्टि देनेवाली है॥ १३ ॥ मनुष्योंने पूर्वजन्ममें शुभ, अशुभ, मिश्रित जो कर्म किये हैं उनका फल जो इस जन्ममें होना है उसको यह होराशास्त्र दशाविपाकक्रमसे प्रगट करता है ॥ १४ ॥ संसारमें मनुष्योंके मस्तकपत्रमें जो अक्षरमाला विधाताने लिखी है उसको ज्योतिषी होराशास्त्र-दृष्टिसे भले प्रकार बांचता है और अन्य नहीं देखता है, जैसे अन्धकारमें दीपकरहित पुरुष कोईभी संसारके घटपटादि दृश्यमान पदार्थोंको नहीं देख सकता ॥ १५ ॥

नराङ्गे राशिन्यासो राशिस्वामिनश्च ।

शीर्षाख्यं वदनं च बाहुयुगलं हृच्चोदरं कट्यथो
बस्तिर्गुह्यमुरू च जानुजघनौ पादद्वयं वै क्रमात् ।
मेषाद्याः किल राशयः समुदिताः पूर्वैः सुबोधाय ये
त्वेके लग्नमतश्च काद्यवयवा ज्ञेयास्तु निःसंशयम् ॥ १६ ॥
कुजः सितो बुधो विधुर्भगज्ञशुक्रभूमिजाः ।
सुरेज्यमंदसूर्यजा गुरुः क्रियाच्च भेश्वराः ॥ १७ ॥

मेषादिराशियोंके अंगविभाग कहते हैं कि, मेष शिर, वृष मुख, मिथुन दोनों बाहु, कर्क हृदय, सिंह उदर, कन्या कटि, तुला बस्ति, वृश्चिक गुदा, धन ऊरु, मकर जंघा, कुम्भ घुटने, मीन पैर, ये स्थान क्रमसे पूर्वाचार्योंने सुबोधके लिये कहे हैं। कोई आचार्य लग्नराशिसे द्वादश भावपर्यंत यही शिर आदि अंग कहते हैं। येभी कार्यवश निःसंदेह विचारने ॥ १६ ॥ मंगल, शुक्र, बुध, चंद्रमा, सूर्य, बुध, शुक्र, मंगल, गुरु, शनि, शनि, गुरु ये मेषादि राशियोंके क्रमसे स्वामी हैं ॥ १७ ॥

राशिनामानि ।

छागः क्रियो मेष इहाव्यजौ स्तात्वृषोक्षगावो वृषभश्च तावुरिः ।
द्वन्दो नृयुग्मो मिथुनोऽथ युग्मोऽथो वैणिकाख्यो जितुमोऽथ जित्मः ॥
कर्कः कुलीराह्वयकर्कटौ च सिंहाख्यकण्ठीरवकेसरी च ।
लेयो मृगेन्द्रश्च हरिश्च कन्या बालाऽबला स्त्री प्रमदांगनाख्या ॥१९॥
पाथोननामाथ तुलाधरः स्यात्तुलाघटौ जूकतुलौ च तौलिः ।
कौर्प्यश्च कीटश्च सरीसृपश्च स स्यादलिर्वृश्चिकसंज्ञ उक्तः ॥ २० ॥
धनुर्द्धरश्चापधरो धनुश्च कोदण्डसंज्ञश्च शरासनश्च ।
चापो हयस्तौक्षिककार्मुकोऽथ धन्वी धनाख्यो धनुषस्तथोक्तः॥२१॥
आकोकेरो मृगो नक्रो मकरो मृगवक्रकः ।
घटः कुम्भधरः कुम्भो हृद्रोगः कलशः स्मृतः ॥ २२ ॥
शफरी पृथुरोमाऽन्त्यो मत्स्यो मीनो झषस्तिमिः ।
राशिसंज्ञाः स्मृता ह्येताः प्राचीनमुनिसम्मताः ॥ २३ ॥

मेषादिराशियोंके पर्याय नाम कहते हैं—मेष, छाग, क्रिय, अवि, अज । वृष, उक्षा, गौ, वृषभ, तावुरि । मिथुन, द्वन्द्व, नृयुग्म, युग्म, वैणिक, जितुम, जित्म ॥ १८ ॥ कर्क, कुलीर, कर्कट । सिंह, कण्ठीरव, केसरी, लेय, मृगेन्द्र, हरि । कन्या, बाला, अबला, स्त्री, प्रमदा, अंगना, पाथोन ॥ १९ ॥ तुला, तुलाधर, घट, जूक, तुल, तौलि । वृश्चिक, कौर्प्य, कीट, सरीसृप, आलि ॥ २० ॥ धन, धनुर्द्धर, चापधर, धनु, कोदण्ड, शरासन, चाप, हय, तौक्षिक, कार्मुक, धन्वी, धनुष ॥ २१ ॥ मकर, आकोकेर, मृग, नक्र, मृगवक्र । कुंभ, घट, कुम्भधर, हृद्रोग, कलश ॥ २२ ॥ मीन, शफरी, पृथुरोमा, अंत्य, मत्स्य, झष, तिमि इतनी राशियोंकी संज्ञा प्राचीन मुनियोंके संमत हैं ॥ २३ ॥

राशिस्वरूपम् ।

झषद्वयं मीन इति प्रदिष्टो नक्रो मृगास्यो मिथुनो नृयुग्मम् ।
वीणागदाभृच्च तुलाधरो ना धनुर्द्धरो ना धनुरश्वजंघः ॥ २४ ॥

तरिस्थिता तु कन्यका हुताशसस्यसंयुता ।
सरिक्तकुंभपूरुषो घटः स्वनामवत्परे ॥ २५ ॥

मीन मछलीका जोडा, एकके मुखपर दूसरेका पूंछ है, मकरका मुख मृगका, शेष शरीर मगरमच्छका है, मिथुन स्त्री पुरुषका जोडा वीणा और गदा धारण किये हैं, तुला पुरुष तखडी तोल रहा है, धन धनुषसहित पुरुष परंतु कटिसे नीचे घोडा है ॥ २४ ॥ कन्या नावमें बैठी आग तथा धान लिये है, कुंभ खाली घडा कंधामें लिये पुरुष है । अन्य राशि अपने नाम-सदृश हैं जैसे मेष मेंढा, वृष बैल, कर्क केकडा, वृश्चिक विच्छू ॥ २५ ॥

राशीनां रक्तादिवर्णाश्चरादिसंज्ञाश्च ।

रक्तः सितो हारितपाटलौ च पाण्डुर्विचित्रस्त्वसितः पिशंगः ।
स्यात्पिगलः कर्बुरबभ्रुशुभ्रा वर्णास्त्वजादेः क्रमशो निरुक्ताः ॥२६ ॥
चरस्थिरद्विमूर्त्तयो ह्यसौम्यसौम्यकौ क्रमात् ।
अयुग्मयुग्मसंज्ञकौ नरस्त्रियौ कियादिह ॥ २७ ॥

राशियोंके रंग कहतेहैं—मेष रक्त, वृष श्वेत, मिथुन हरित, कर्क श्वेतरक्त, सिंह अल्प श्वेत, कन्या अनेक रंग, तुला कृष्ण, वृश्चिक कृष्णवर्ण, धन पीला, मकर कर्बुर, कुंभ न्यौलाकासा रंग, मीन श्वेतवर्ण है ॥ २६ ॥ मेषादि राशि चर, स्थिर, द्विस्वभाव क्रमसे जैसे मेष चर, वृष स्थिर, मिथुन द्विस्वभाव, कर्क चर इत्यादि । ऐसेही क्रमसे क्रूर सौम्य हैं जैसे मेष क्रूर, वृष सौम्य, मिथुन क्रूर, कर्क सौम्य इत्यादि । तथा विषम समभी क्रमसे हैं, जैसे मेष विषम, वृष सम, मिथुन विषम, कर्क सम इत्यादि । तथा पुरुष स्त्री भी क्रमसे हैं जैसे मेष पुरुष, वृष स्त्री, मिथुन पुरुष, कर्क स्त्री इत्यादि ॥ २७ ॥

राशीनां दिग्वर्णद्विपदादिदिनबलाद्याः ।

मेषोक्षवीणाधरकर्कटाद्याः पूर्वादितः सूरिभिरूहनीयाः ।
राजन्यविट्शूद्रधरासुराश्च सर्वं फलं राश्यनुसारतः स्यात् ॥ २८ ॥
नक्राद्यखण्डं धनुषः परार्द्धं गोसिंहमेषाश्च चतुष्पदाः स्युः ।
कन्यानृयुग्मं घटकुंभभृच्च चापाद्यखण्डं द्विपदाः प्रदिष्टाः ॥ २९ ॥

मृगोत्तरार्द्धं शफरीकुलीरौ नीरेचराः कीटक एव कीटः ।
संध्या द्युरात्रं बलिनो भवंति कीटा नराः साप्र्यचतुष्पदाख्याः ॥३०॥

मेषादि राशि क्रमसे पूर्वादिदिशाओंमें रहती हैं, जैसे १ । ५ । ९ पूर्व, २ । ६ । १० दक्षिण, ३ । ७ । ११ पश्चिम, ४ । ८ । १२ उत्तरमें पंडितोंने जानने । वैसेही वर्णभी जानने जैसे १ । ५ । ९ क्षत्रिय, २ । ६ । १० वैश्य, ३ । ७ । ११ शूद्र, और ४ । ८ । १२ ब्राह्मण जानने । रूपादि समस्त राशिवशसे होते हैं इसलिये इनके रूप रंग आदि कहे हैं ॥ २८ ॥ मकरका पूर्वार्द्ध, धनका उत्तरार्द्ध, वृष, सिंह मेष ये चतुष्पद हैं । कन्या-मिथुन, तुला, कुंभ और धनका पूर्वार्द्ध द्विपद हैं ॥ २९ ॥ मकरका उत्त-रार्द्ध, मीन, कर्क जलचर हैं । कर्क (केकडा) तिर्यक् है, जल स्थल दोनोंमें विचरता है । कीटराशि संध्यासमयमें, मनुष्यराशि दिनमें, जलचर और चतुष्पद राशि रात्रिमें बलवान् होती हैं ॥ ३० ॥

दिग्बलमदृश्यदृश्यचक्रार्द्धश्च ।

लग्नस्थिताः पूर्वगता नराख्याश्चतुष्पदा याम्यगताः खभस्थाः ।
कीटाः प्रतीच्यां बलिनोऽस्तसंस्था रसातलस्था जलजाश्च सौम्ये ३१
लग्नस्य भोग्या द्युनभस्य भुक्ता अदृश्यखंडानुदिते च संज्ञे ।
भोग्यांशका द्यूनगृहस्य भुक्ता दृश्यं विलग्नस्य तथोदिताख्यम्॥३२॥
प्रागर्द्धसंज्ञं गगनस्य भोग्याः पातालग्नस्य च भुक्तभागाः ।
प्रोक्तं भचक्रस्य च पश्चिमार्द्धं तुर्यस्य भोग्या गगनस्य भुक्ताः॥३३॥

दिग्बल कहते हैं कि—लग्नस्थित तथा पूर्वगत नर राशि दक्षिणगत तथा दशमस्थित चतुष्पद राशि, पश्चिममें सप्तमस्थानमें कीट राशि और उत्तरमें तथा चतुर्थस्थानमें जलचर राशि बली होती हैं ॥ ३१ ॥ लग्नके भोग्यांशसे सप्तमके भुक्तांश पर्यन्त अदृश्य खण्ड तथा अनुदित संज्ञा है, सप्तमके भोग्यांशसे लग्नके भुक्तांशपर्यंत दृश्यखण्ड तथा उदितसंज्ञक होते हैं ॥ ३२ ॥ दशमके भोग्यांशसे चतुर्थके भुक्तांशपर्यंत पूर्वार्द्ध संज्ञा और चतुर्थके भोग्यांशसे दशमके भुक्तांशपर्यंत राशिचक्रकी पश्चिमार्द्ध संज्ञा है ॥ ३३ ॥

द्युनिशबलपृष्ठोदयाद्याः ।

मेषो वृषद्वन्द्वकुलीरचापकुरङ्गनक्राश्च निशाबलाः स्युः ।
तुलाधरो वृश्चिककुम्भभृच्च कन्यालिमीना दिवसात्मिकाः स्युः॥३४॥
अविर्वृषः कर्कधनुर्द्धराश्च पृष्ठोदयाख्याः समृगाः सदोह्याः ।
कन्यातुलायुग्मघटालिसिंहाः शीर्षोदयाख्या ह्युभयोदयोऽन्त्यः॥३५॥

मेष, वृष, मिथुन, कर्क, धन, मकर रात्रिबली हैं। तुला, वृश्चिक, कुंभ, कन्या, सिंह, मीन दिवाबली हैं ॥ ३४ ॥ मेष, वृष, कर्क, धन, मकर पृष्ठोदय हैं तथा कन्या, तुला, मिथुन, कुम्भ, वृश्चिक, सिंह ये शीर्षोदय हैं। मीन उभयोदयी है। तात्पर्य यह है कि, जो राशि शिरसे उदय होती हैं वे शीर्षोदय और जो पीठसे उदय होती हैं वे पृष्ठोदय हैं। मीन एकका पुच्छ दूसरेके मुखपर होनेसे गोलाकार है इससे उभयोदय है ॥ ३५ ॥

राशिबलाबलज्ञानम् ।

स्वस्वामिना वीक्षितसंयुतो वा बुधेन वाचस्पतिना प्रदृष्टः ।
स एव राशिर्बलवान् किल स्याच्छेषैर्यदा दृष्टयुतो न चात्र ॥ ३६ ॥
राशिर्यदा खेटयुतो न दृष्टः स्वीयस्वभावात्स्वफलं ददाति ।
दृष्टोऽथ युक्तः सदसद्ग्रहेण पापोऽपि सौम्यः शुभदोऽपि पापः॥ ३७ ॥
यो यो हि भावः पतिदृष्टयुक्तोऽथवा शुभैस्तस्य च वृद्धिरस्ति ।
हानिस्त्वसौम्यैरथ तद्विलोमाच्चिन्त्यं फलं रन्ध्ररिपुव्ययानाम् ॥ ३८॥

जो राशि अपने स्वामीसे दृष्ट वा युक्त हो, बुध बृहस्पतिसे दृष्ट हो वह राशि निश्चय बलवती होती है परंतु पापग्रहोंसे दृष्ट न होवे तब यह फल है। राशीश पापभी हो तो उसके दृष्टियोगसे बलीही होती है ॥ ३६ ॥ जो राशि किसी ग्रहसे युक्त दृष्ट न होवै तो अपने पूर्वोक्त स्वभावानुसार फल देती है, ग्रहयुक्त दृष्ट होनेसे उसके स्वभावानुसार फल करती है, शुभग्रहके योग दृष्टिसे पापभी शुभ फल और पापदृष्टियोगसे शुभभी पाप फल देती है ॥ ३७ ॥ जो जो भाव अपने स्वामीसे दृष्ट वा युक्त है, अथवा शुभग्रहोंसे दृष्ट युक्त है

उस भावसंबंधी फलकी वृद्धि होती है। पापग्रहके योग दृष्टिसे विपरीत फल जानना और छठे आठवें बारहवें भावोंका उक्त फल विपरीत जानना ॥ ३८॥

भावसंज्ञाः ।

मूर्तिर्धनाख्यः सहजः सुखं च सुतारिपत्नीमृतिधर्मकर्माः । साय-
व्यया वै तनुतो विचिन्त्या भावा अमी द्वादश हौरिकार्य्यैः ॥ ३९॥

लग्न, धन, सहज, सुख, सुत,शत्रु, पत्नी, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय, व्यय, ये लग्नसे बारह भाव होराचार्य्योंने कहे हैं ॥ ३९ ॥

सप्तवर्गकथनं तत्साधनं च ।

क्षेत्रं होरा त्र्यंशसप्तांशकश्च नन्दांशो वा द्वादश त्रिंशदंशाः ।
पूर्वैः प्रोक्ताः सप्तवर्गाः समौजे होरे स्यातामिन्दुरव्यो रवीन्द्वोः ॥४०॥
द्रेष्काणाः स्युः स्वीयपंचाङ्कपानां सप्तांशाःस्युस्त्वोजराशौ स्वभाद्याः
द्यूनाद्युग्मे द्वादशांशाः स्वभाद्या विज्ञेयास्ते हौरिकैर्बुद्धिमद्भिः॥४१॥

गृह, होरा, द्रेष्काण, सप्तांश, नवांश, द्वादशांश, त्रिंशांश ये सप्तवर्ग पूर्वाचार्य्योंने कहे हैं, इनका खुलासा यह है कि, सम राशिमें १५ अंश पर्यंत चन्द्रमाकी उपरांत सूर्यकी, विषम राशिमें प्रथम सूर्यकी पीछे चन्द्रमाकी होरा होती है ॥ ४० ॥ प्रथम १० अंशपर्यंत राशीशका, ११ से २० पर्यंत पंचम राशिके स्वामीका, २१ से ३० पर्यंत नवम राशिके स्वमीका द्रेष्काण होता है। सप्तांशक ३० अंशके ७ भाग अंशादि ४।१७।८।३ का होता है। सम राशिमें अपनी राशिसे विषम राशिमें, अपनेसे सप्तम राशिसे बुद्धिमान् ज्योतिषियोंने गिनना ॥ ४१ ॥

नवांशकाः ।

मेषे हरौ चापधरे त्वजाद्याः कन्योक्षनक्रेषु मृगान्नवांशाः ।
जूके घटे वैणिकभे तुलाद्याः कर्कालिमीनेषु च कर्कटाद्याः ॥ ४२॥
शरेषुनागाद्रिसमीरणानां भौमार्किजीवज्ञसितास्त्वधीशाः ।
त्रिंशांशकानां विषमे समर्क्षेषूक्ताद्विलोमाः खलु जातकज्ञैः ॥ ४३ ॥

नवांशक कहते हैं—मेष सिंह धनमें मेषसे । वृष कन्या मकरमें मकरसे । मिथुन तुला कुंभमें तुलासे । कर्क, वृश्चिक, मीनमें कर्कसे गिनना ॥ ४२ ॥ ३० अंशके ९ भाग ३ अंश २७ कला होती हैं । त्रिंशांशक विषमराशिमें ५ अंश पर्यंत मंगलका, १० पर्यंत शनिका, १८ पर्यंत बृहस्पतिका, २५ पर्यंत बुधका, ३० पर्यंत शुक्रका, विषम राशीमें विपरीत अर्थात् ५ पर्यन्त शुक्रका, १० पर्यंत बुधका, १८ पर्यंत बृहस्पतिका, २५ पर्यंत शनिका और ३० पर्यंत मंगलका होता है ॥ ४३ ॥

केन्द्रादिसंज्ञाः ।

अथ च केन्द्रचतुष्टयकण्टकं तनुसुखाम्बरसप्तमभं स्मृतम् ।
पणफरं धनलाभसुताष्टमं सहजशत्रुनवांत्यमपोक्लिमम् ॥ ४४ ॥
मूलत्रिकोणं नवपञ्चमर्क्षं स्यात्त्रित्रिकोणं नवमं च तद्वत् ।
षष्ठं त्रिकं वैरिगृहं निरुक्तं तुर्याष्टमर्क्षं चतुरस्रसंज्ञम् ॥ ४५ ॥
दुश्चिक्यलाभांबरषष्ठगेहं प्रोक्तं तथैवोपचयं त्रिकं तु ।
षडंत्यरंध्रं च निजं नवांशं वर्गोत्तमाख्यं विबुधा वदन्ति ॥ ४६ ॥

इसके उपरान्त भावोंकी संज्ञायें कहते हैं—कि, लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम ये ४ केन्द्र हैं । इन्हीको चतुष्टय और कण्टकभी कहते हैं । इनसे परे २।५ ८।११ भावोंको पणफर, ३ । ६ । ९ । १२ को आपोक्लिम कहते हैं॥ ४४॥ नवम पंचमकी संज्ञा त्रिकोण, नवमकी त्रिकोण, छठेकी त्रिक शत्रु संज्ञा, चौथे आठवेंकी चतुरस्र संज्ञा है ॥ ४५ ॥ तीसरा ग्यारहवाँ, दशवाँ, छठा ये उपचय स्थान हैं । ६ । ८ । १२ त्रिकस्थान हैं और जो राशि है उसीका अंशक उसमें वर्गोत्तम संज्ञक पंडित कहते हैं ॥ ४६ ॥

भावानां संगृहीतनामानि ।

लग्नं मूर्तिः कल्पमाद्यं वपुः स्यादंगं देहश्चोदयाख्यं तनुश्च । स्वं कोशार्थाख्यं कुटुंबं धनं च प्रांत्यं रिष्फश्चांत्यमाख्यं व्ययं स्यात् ॥ ४७ ॥ अम्बा तूर्यं वाहनं वेश्मबंधू गेहं पातालं सुखं वै सुहृच्च । क्षेत्रं भ्वृक्षं नीरमंबूदकाख्यं संज्ञा प्रोक्ता तूर्य-

भावस्य तज्ज्ञैः ॥ ४८ ॥ दुश्चिक्यविक्रमपराक्रमभं तृतीयं भ्राता ततः सहजभं गदितं पुराणैः। स्यादष्टमं निधनजीवित-मायुरंध्रं छिद्रं ततो लयपदं मृतियाम्यसंज्ञम् ॥ ४९ ॥ व्यापारमेषूरणमध्यकर्ममानास्पदाज्ञाजनकं च राज्यम् । खमंबरं वै गगनं नभश्च व्योमाख्यमुक्तं दशमं पुराणैः ॥५०॥ विद्यात्मजाख्यं तनयं तनूजं वाग्बुद्धिसंज्ञं किल पंचमं स्यात् । गुर्वाख्यमुक्तं नवमं तपश्च भाग्याभिधं धर्मपथश्च पुण्यम्॥५१॥ जामित्रमस्तं मदनं द्युनं द्यूनं स्मरं मदः । स्त्री कामाख्यामिति प्रोक्तं सप्तमं पूर्वसूरिभिः ॥ ५२ ॥ षष्ठं शत्रू रिपुर्द्वेष्यः सपत्नाख्यं च वैरिभम् । भवलाभागमप्राप्तिमायमेकादशं स्मृतम् ॥ ५३ ॥

लग्नादि भवोंके पर्यायनाम कहते हैं—लग्न, मूर्ति, कल्प, आद्य, वपु, अंग, देह, उदय, तनु ये लग्नके नाम हैं । स्व, कोश, अर्थ, कुटुम्ब, धन दूसरे भावके नाम हैं। प्रांत्य, रिष्फ, अंत्य, व्यय बारहवें भावके नाम हैं ॥ ४७ ॥ अंबा, तूर्य, वाहन, वेश्म, बंधु, गेह, पाताल, हिबुक, सुख, सुहृत् क्षेत्र, भू, ऋक्ष, नीर, अंबु, जल ये चौथे भावकी संज्ञायें ज्योतिषियोंने कही हैं॥ ४८ ॥ तीसरे भावकी दुश्चिक्य, विक्रम, पराक्रम, भ्राता, सहज इतनी संज्ञायें प्राचीनोंने कही हैं। अष्टमकी निधन, जीवित, आयु, रन्ध्र, छिद्र, लय-पद, मृति, याम्य संज्ञायें हैं ॥ ४९ ॥ दशम भावकी संज्ञायें व्यापार, मेषू-रण, मध्य, कर्म, मान, आस्पद, आज्ञा, जनक, राज्य, ख, अम्बर, गगन, नभ, व्योम इतनी हैं ॥ ५० ॥ विद्या, आत्मज, तनय, तनूज, वाक्, बुद्धि पंचम भावकी संज्ञायें हैं । गुरु, नवम तप, भाग्य, धर्म, पथ, पुण्य इतनी नवम भावकी संज्ञायें हैं ॥ ५१ ॥ जामित्र, अस्त, मदन, द्युन, द्यून, स्मर, मद, स्त्री, काम इतनी संज्ञायें सप्तम भावकी प्राचीन पण्डितोंने कही हैं ॥ ५२ ॥ छठे भावकी संज्ञायें शत्रु, रिपु, द्वेष्य, सपत्न, वैरि हैं । लाभ भावकी संज्ञायें भव, लाभ, आगम, प्राप्ति, आय, एकादश हैं ॥ ५३ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च ।
होरासारे शम्भुहोराप्रकाशे राशेर्भेदाध्याय आसीत्सुपूर्णः ॥५४॥

इति श्रीपुञ्जराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे राशिभेदाध्यायः प्रथमः ॥ १ ॥

विद्वानोंकेही जानने योग्य ग्रहलीलाका विलास भले प्रकार बोध करनेवाला होराका सार जो पुञ्जराजका कहा शम्भुहोराप्रकाश है इसमें राशिभेदाध्याय प्रथम संपूर्ण हुआ ॥ ५४ ॥

इति श्रीशंभुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां राशिभेदाध्यायः प्रथमः ॥ १ ॥

ग्रहभेदाध्यायः २ ।

तत्र ग्रहेशकालनरात्मादिराजादिवर्णाः ।

शिवः शिवा गुहो विष्णुर्विरंचिः शक्रसूर्यजौ ।
क्रमाद्धिकर्त्तनादीनां पतयो मुनिभिः स्मृताः ॥ १ ॥
कालस्यात्मा स्याद्रविश्चित्तमिन्दुः सत्त्वं भौमो वाग्बुधो दुःखमार्किः ।
दैत्याचार्य्यः पुष्पधन्वाऽमरेज्यः सौख्यस्थाने सूरिभिः संप्रदिष्टाः ॥२॥
नृपौ रवीन्दू किल सैन्यनेता भौमः कुमारः शशिजो निरुक्तः ।
सन्मंत्रिणौ देवगुरूशनाख्यौ सूर्यात्मजः सेवकसंज्ञकः स्यात् ॥ ३ ॥
रक्तः सितो रक्ततरः सुनीलः पीतोऽतिशुक्लस्त्वसितोऽत्र वर्णः ।
सूर्यादधीशा दहनोऽम्बुभूमी दामोदरः शक्रशची विरंचिः ॥ ४ ॥

सूर्यका देवता शिव, चन्द्रमाका पार्वती, मंगलका कार्त्तिकेय, बुधका विष्णु, गुरुका ब्रह्मा, शुक्रका इन्द्र, शनिका यम है ॥ १ ॥ कालनरका आत्मा कहते हैं कि—सूर्य आत्मा, चन्द्रमा मन, मंगल सत्त्व, बुध वाणी, शनि दुःख, शुक्र कामदेव, बृहस्पति सुखस्थान पंडितोंने कहे हैं ॥ २ ॥ सूर्य चन्द्रमा राजा, मंगल सेनापति, बुध युवराज, गुरु शुक्र मंत्री, शनि सेवक हैं ॥ ३ ॥ सूर्य रक्त रंग, चन्द्रमा सफेद, मंगल अतिरक्त, बुध हरित, गुरु पीला, शुक्र अतिशुक्ल, शनि काला ये ग्रहोंके वर्ण हैं । सूर्यका अधिपति अग्नि, चन्द्रमाका जल, मंगलका भूमि, बुधका दामोदर, गुरुका इंद्र, शुक्रका इन्द्राणी, शनिका ब्रह्मा है ॥ ४ ॥

दिगीशशाखेशक्रूराक्रूरवर्णेशाः ।

प्राच्यादितः सूर्यसिताररराहुमन्देन्दुसौम्याङ्गिरसो दिगीशाः ।
वेदाधिनाथाः क्रमशः सुरेज्यपूर्वामरेज्यावनिजेन्दुपुत्राः ॥ ५ ॥
क्रूराः खेटा राहुमन्दार्कभौमाः पापः सौम्यस्तैर्युतः क्षीण इन्दुः ।
पूर्णश्चन्द्रः सौम्यशुक्रामरेज्याः सौम्याः सर्वे चन्द्रयुक्ता बलाढ्याः ॥६॥
विप्राधीशौ जीवशुक्रौ कुजार्कौ राजन्यानामोषधीशो विशां च ।
शूद्राणां ज्ञश्चान्त्यजानां च मन्दः सिंहीसूनुर्म्लेच्छवंशोद्भवानाम् ॥७॥

दिशाओंके स्वामी कहते हैं—पूर्वका सूर्य, आग्नेयका शुक्र, दक्षिणका मङ्गल, नैर्ऋत्यका राहु, पश्चिमका शनि, वायव्यका चन्द्रमा, उत्तरका बुध, ईशानका बृहस्पति है। ऋग्वेदका स्वामी गुरु, यजुका शुक्र, सामका मंगल, अथर्वका बुध है ॥ ५ ॥ राहु, शनि, सूर्य, मंगल क्रूर ग्रह हैं। इनके साथ बुध भी पाप होता है और पापरहित शुभ है। क्षीण चन्द्रमाभी पापही होता है। पूर्ण चन्द्रमा, बुध, शुक्र, बृहस्पति शुभ ग्रह हैं। सभी ग्रह चन्द्रमाके साथ बलवान् होते हैं ॥ ६ ॥ बृहस्पति शुक्र ब्राह्मण वर्णके अधिपति, मंगल सूर्य क्षत्रियोंके, वैश्योंका चंद्रमा, शूद्रोंका बुध, अन्त्यजोंका शनि और म्लेच्छवंशका स्वामी राहु है ॥ ७ ॥

ग्रहाणां पुरुषादिसंज्ञासत्त्वादिगुणरसाः ।

प्रोक्ता नराः सूर्यकुजामरेज्याः क्लीबौ शनिज्ञौ युवती सितेन्दू ।
सत्त्वं रवीज्यक्षणदाधिपाः स्यू रजः सितारौ ज्ञयमौ तमश्च ॥ ८ ॥
बुधः कषायः कटुकौ कुजार्कौ पटुर्विधुर्मंदतमौ च तीक्ष्णौ ।
अम्लोशनाख्यो मधुरः सुरेज्यः प्रोक्ता अमी षड्रसनायकाश्च ॥ ९ ॥

सूर्य मंगल बृहस्पति पुरुष, शनि बुध नपुंसक और शुक्र चंद्रमा स्त्री ग्रह हैं। सूर्य गुरु चंद्रमा सत्त्वगुणी, मंगल शुक्र रजोगुणी, बुध शनि तमोगुणी हैं ॥ ८॥ बुधका रस कषाय (क्वाथ), सूर्य मंगलका कटु, चंद्रमाका नमकीन, शनि राहुका तीक्ष्ण, शुक्रका अम्ल, गुरुका मीठा यह ६ रसोंके स्वामी कहे हैं ॥ ९ ॥

ग्रहवशादयनादिज्ञानं लोकादिज्ञानं च ।

अयनक्षणवासरर्तुमासाः क्रमशः पक्षसमाधिपाः स्युरर्कात् ।
धरणीसुतपूर्वकाधिपाः स्युर्दहनक्ष्माखजलानिलादिकानाम् ॥ १० ॥
पुंलोकेशौ कुजादित्यौ सितेन्दू पितृलोकपौ ।
तिर्यग्बुधो गुरुः स्वर्गी रविजो नरकाधिपः ॥ ११ ॥
सितेन्दू पितृलोकेशौ मन्दज्ञौ नरकाधिपौ ।
तिर्यग्लोकस्य सूर्यारौ केचित्स्वर्गाधिपो गुरुः ॥ १२ ॥

प्रश्नादिमें अथवा नष्टजन्मपत्रीकरणमें यद्वा जहां समय जाननेकी आवश्यकता हो तहां सूर्यसे अयन, चन्द्रमासे क्षण, मंगलसे वार, बुधसे ऋतु, गुरुसे महीने, शुक्रसे पक्ष, शनिसे वर्ष जानने । बहुज्ञ विद्वान् इतनेही श्लोकार्द्धसे नष्ट जन्मपत्री बनाय लेते हैं । जैसे सूर्यसे अयन जाननी है तो "पूर्वापरार्द्धे भवनस्य विद्याद्भानावुदग्दक्षिणगे प्रसूतिम्" अर्थात् राशिके पूर्वार्द्धमें सूर्य होवै तो उत्तरायणमें, उत्तरार्द्धमें होवै तो दक्षिणायनमें जन्म कहना । ऐसेही चंद्रादिसे मुहूर्तादि निकलते हैं । यह विचार चौरप्रश्न, यात्रा, युद्ध, लाभ, गर्भाधान, कार्यसिद्धि, गमागमादिमें करना । मंगल अग्नितत्त्वका, बुध पृथ्वीतत्त्वका, गुरु आकाशका, शुक्र जलका, शनि वायुतत्त्वका स्वामी है ॥ १० ॥ मंगल सूर्य मृत्युलोकके, शुक्र चन्द्रमा पितृलोकके, बुध पाताललोकका, गुरु स्वर्गका, शनि नरकका अधिपति है ॥ ११ ॥ किसीका मत है कि, शुक्र चन्द्र पितृलोकके, बुध शनि नरकके, सूर्य मंगल पातालके और बृहस्पति स्वर्गके स्वामी हैं ॥ १२ ॥

ग्रहाणामुच्चनीचाः ।

अजोक्षनक्रकन्यकाकुलीरमीनतौलिकाः ।
क्रमाद्रवेस्तु तुंगभान्यतो द्युनं च नीचभम् ॥ १३ ॥
दिशा गुणा गजाश्विनः शरेन्दवः समीरणाः ।
नगाश्विनः करोद्भवा रवेस्तु तुंगजाः पराः ॥ १४ ॥

सूर्यका मेष, चंद्रमाका वृष, मंगलका मकर, बुधका कन्या, गुरुका कर्क, शुक्रका मीन, शनिका तुला उच्चराशि हैं ॥ १३ ॥ सूर्य मेषके १० अंशपर, चंद्रमा वृषके ३ अंशपर, मंगल मकरके २८ अंशपर, बुध कन्याके १५ अंशपर, बृहस्पति कर्कके ५ अंशपर, शुक्र मीनके २७ अंशपर और शनि तुलाके २० अंशपर परमोच्च होते हैं ॥ १४ ॥

ग्रहाणां मूलत्रिकोणम् ।

हरौ रवेर्नखा २० लवास्त्रिकोणकं परे १० गृहम् ।
वृषे विधोस्तु तुंगजा गुणाः ३ परे २७ त्रिकोणजाः ॥ १५ ॥
कुजस्य भास्करा १२ अवौ त्रिकोणजाः परे १८ स्वभम् ।
धनुर्धरे गुरोर्दिश १० स्त्रिकोणजाः परे २० स्वभम् ॥ १६ ॥
घटे भृगोः शरेन्दव १५ स्त्रिकोणकाः परे १५ स्वभम् ।
घटे शनेस्त्रिकोणजा नखाः २० परे १० स्वगेहजाः ॥ १७ ॥
बुधस्य तुंगजाःस्त्रियां शरेन्दवः १५ परे शराः ५ ॥
स्वभं परे त्रिकोणजा दिश १० स्तु संस्मृता बुधैः ॥ १८ ॥

सूर्य सिंहके २० अंशपर परम स्वगृही, १० अंशपर परम मूलत्रिकोणी होता है। चंद्रमा वृषके ३ अंशपर परमोच्च २७ पर मूलत्रिकोणी होता है ॥ १५ ॥ ऐसेही मंगल मेषके १२ अंशपर स्वगृही १८ मूलत्रिकोणी, गुरु धनके १० स्व०, २० मू० ॥ १६ ॥ शुक्र तुलाके १५ स्व०, १५ मू०, शनि कुंभके २० स्व०, १० मू० ॥ १७ ॥ बुध कन्याके १५ में उच्च ५ में स्वगृही और १० में मूलत्रिकोण कहा है ॥ १८ ॥

ग्रहाणां मित्रसमशत्रवः ।

शत्रू रवेर्मंदसितौ समो ज्ञो भौमेन्दुजीवाः सुहृदो निसर्गात् ।
चन्द्रस्य मित्रे ज्ञरवी समाः स्युः कुजामरेज्योशनसार्कपुत्राः ॥ १९ ॥
भौमस्य मित्राणि रवीज्यचन्द्रा ज्ञोऽरिः समौ शुक्रदिनेशपुत्रौ ।
बुधस्य मित्रेऽर्कसितावरीन्दुः समा महीजामरपूज्यमन्दाः ॥ २० ॥

जीवस्य मित्राणि रवीन्दुभौमाः शनिः समः सौम्यसितावरी स्तः।
सितस्य मित्रे शनिसोमपुत्रौ समौ कुजेज्यौ च रिपू रवीन्दू ॥ २१ ॥
रवीन्दुभौमा रिपवः शनेः स्युः समो गुरुः सौम्यसितौ च मित्रे।
मैत्रादिचक्रं गदितं निसर्गात्पुरातनैर्जातकशास्त्रविद्भिः ॥ २२ ॥

सूर्यके शुक्र शनि शत्रु, बुध सम, मंगल चन्द्रमा गुरु मित्र हैं। चन्द्रमाके बुध सूर्य मित्र, मं० बृ० शु० श० सम हैं, शत्रु कोई नहीं है॥१९॥ मंगलके सू० बृ० चं० मित्र, बुध शत्रु, शु० श० सम हैं। बुधके सू० शु० मित्र, चं० शत्रु, मं० बृ० श० सम हैं॥ २० ॥ बृहस्पतिके सू० चं० मं० मित्र, शनि सम, बु० शु० शत्रु हैं। शुक्रके श० बु० मित्र, मं० बृ० सम, सू० चं० शत्रु हैं॥२१॥ शनिके सू० चं० मं० शत्रु, बृ० सम, बु० शुक्र मित्र हैं। इस प्रकार (नैसर्गिक) स्वाभाविक मित्रादिचक्र जातकज्ञोंने कहा है ॥२२॥

तात्कालिकमित्रामित्रे।

तात्कालिकाः स्युः सुहृदो नभोगाः खविक्रमायांबुधनव्ययस्थाः।
एकर्क्षसप्ताष्टमधर्मपुत्रोपगारिगास्ते रिपवो निरुक्ताः॥ २३ ॥
मैत्रीचक्रं भावतः कैश्चिदुक्तं नैतच्छ्रीपत्यादिकानां मतं हि।
लग्ने नैसर्गाद्यथास्थानसंस्थैः खेटैर्मैत्रीयोगपूर्वं विचिन्त्यम्॥ २४ ॥

तात्कालमें अपने स्थानसे १०। ३। ११। ४। २ । १२ स्थित मित्र और १। ७। ८। ९। ५। ६ भावस्थित शत्रु कहेहैं॥ २३ ॥ यह तत्कालमैत्रीचक्र है। कोई आचार्य भावगणनासे भी मैत्रीका विचार कहते हैं, सो श्रीपति आदि आचार्य्योंका मत नहीं है। लग्नमें नैसर्गिकसे और स्थानस्थितिसे जो मैत्री कही है उसीको योगपूर्वक विचारना चाहिये जैसे- "मित्रामित्रत्वेऽधिमित्रम्। मित्रसमत्वे मित्रम्। मित्रशत्रुत्वे समः। शत्रुशत्रुत्वेऽधिशत्रुः। शत्रुसमत्वे शत्रुः।" अर्थात् जो नैसर्गिक और स्थानस्थिति इन दोनोंमें मित्र हो वह अधिमित्र होता है। और जो तात्कालिकसे मित्र और दूसरी गणनासे सम हो वह मित्र होता है और जो एकसे मित्र दूस-

ऐसे शत्रु हो वह सम, और जो दोनोंसे शत्रु हो वह अधिशत्रु तथा जो नैसर्गिक सम और तात्कालिक शत्रु हो वह शत्रु होता है। ऐसा युक्तिसे विचारना २४

अयनद्युनिशदिग्बलानि ।

सौम्यायने सूर्यसितेज्यभौमा याम्ये शनीन्दू ह्युभयत्र सौम्यः ।
वीर्यान्विता आयनवीर्यमिन्दुरुदग्बली स्यादिति केचिदूचुः ॥ २५ ॥
गुरुः सदा सोमसुतो दिनादौ मध्यंदिनेऽर्कौ रविजस्तथाऽन्ते ।
क्षपामुखे शीतरुचिर्निशीथे शुक्रो निशांते कुसुतो बलीयान् ॥ २६ ॥
लग्ने सुरेज्येन्दुसुतौ कुजार्कौ मेषूरणेऽस्ते रविजो बलीयान् ।
रसातले भार्गवयामिनीशौ दिशाबलं प्रोक्तमदः सुधीभिः ॥ २७ ॥

अब षड्बलविधिमें प्रथम अयनबल कहते हैं—कि, सूर्य शुक्र गुरु मंगल उत्तरायणमें, शनि चन्द्रमा दक्षिणायनमें और बुध दोनों अयनोंमें अयनबली होते हैं। कोई कहते हैं कि, चन्द्रमा उदग्बली होता है ॥ २५ ॥ गुरु सर्व दिन रात्रि दोनोंमें, बुध दिनादिमें, सूर्य मध्याह्नमें, शनि सायंकालमें, चंद्रमा रात्र्यारंभमें, शुक्र अर्धरात्रिमें, शनि रात्रिके अंतमें बलवान् होता है ॥ २६ ॥ बुध बृहस्पति लग्नमें, मंगल सूर्य दशम भावमें, शनि सप्तममें, शुक्र चंद्रमा चतुर्थमें दिग्बली विद्वानोंने कहे हैं ॥ २७ ॥

स्थानबलादि ।

स्त्रीक्षेत्रगौ वीर्ययुतौ सितेंदू शेषा नरक्षेत्रगता बलाढ्याः ।
पक्षे सिते वीर्ययुताः शुभाख्याः सितेतरे पापनभश्चरेन्द्राः ॥ २८ ॥
वक्रो रणे चोत्तरगो विधत्ते चेष्टाबलं चन्द्रसमागमेऽपि ।
केश्चिद्दिवाऽर्केज्यसिताः सवीर्या नक्तं कुजेन्द्वर्कसुताः सदा ज्ञः ॥ २९ ॥
क्षेत्रादिदृक्के नृखगा बलाढ्याः षण्ढौ च मध्ये चरमे युवत्यौ ।
केंद्रादिगास्तूत्तममध्यहीनाः सर्वे स्ववारादिगताः सवीर्याः ॥ ३० ॥
चन्द्रोष्णगू चोदयकेऽन्यखेटाः स्निग्धा विलोमा विपुलाः सदीप्ताः ।
सौरारसौम्येज्यसितेन्दुसूर्या वृद्ध्या निसर्गाद्बलिनो भवन्ति ॥ ३१ ॥

शुक्र चन्द्रमा स्त्रीक्षेत्रमें, अन्य ग्रह पुरुषराशियोंमें बलवान् होतेहैं। शुभ

ग्रह शुक्लपक्षमें, पापग्रह कृष्णपक्षमें पक्षबली होते हैं ॥ २८ ॥ वक्री ग्रह तथा ग्रहयुद्धमें विजयी उत्तर शरवाला और चंद्रमाके समागममेंभी ग्रह चेष्टाबली होते हैं। कोई कहते हैं कि, दिनमें सू० बृ० शु०, रात्रिमें मं० चं० शनि बलवान् होते हैं और बुध सर्वदा दिन रात्रि दोनोंमेंही बली होता है ॥२९॥ राशिके प्रथम द्रेष्काणमें नरग्रह (सू० मं० बृ०), मध्यद्रेष्काणमें नपुंसक (बु० श०) और अन्त्य द्रेष्काणमें स्त्रीग्रह (चं० शु०) बली होते हैं। केन्द्रमें उत्तम, पणफरमें मध्यम, आपोक्लिममें हीन बली सभी ग्रह होते हैं। अपने वारमें सभी ग्रह बली होते हैं ॥ ३० ॥ सूर्य चन्द्रमा उदयकालमें, अन्य ग्रह मृदुरश्मि वक्र तेजवान् और दीप्त होनेमें बलवान् होते हैं। शनि, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, चन्द्रमा, सूर्य ये क्रमकरके एकसे एक वृद्धिक्रमसे बलवान् हैं ॥ ३१ ॥

ग्रहाणां वयांसि बलाबलविचारश्च ।

युवा कुजः शिशुर्बुधः सिताब्जकौ च मध्यमौ ।
शनीज्यराहुभास्कराः स्मृतास्तु वृद्धखेचराः ॥ ३२ ॥
स्वोच्चत्रिकोणर्क्षनवांशवर्गोत्तमाधिमित्रत्रिलवादिसंस्थः ।
चन्द्रान्वितः सौम्ययुगीक्षितः स्याद्बली न पापेक्षणयुग्ग्रहेन्द्रः ॥३३॥
ताराग्रहाः स्वोच्चगृहादिसंस्था वक्रास्तगा मिश्रफलं प्रदद्युः ।
विचार्य्य सम्यग्बलतारतम्यात्फलं प्रवाच्यं सुधिया खगानाम् ॥३४॥

मंगल जवान, बुध बालक, चंद्रमा शुक्र मध्यम उमर, शनि, गुरु राहु और सूर्य बूढे ग्रह हैं। अपनी अवस्था सदृश उमरमें फल देते हैं ॥ ३२ ॥ अपने उच्च, मूलत्रिकोण, स्वराशि, स्वनवांशक, वर्गोत्तम, अधिमित्रांश, स्वद्रेष्काणगत, चंद्रयुत शुभग्रहोंसे युक्त दृष्ट ग्रह बलवान् होता है, यदि पापयुक्त दृष्ट न हो ॥ ३३ ॥ जो ग्रह स्वोच्च, स्वगृहादिमें हो तथा वक्रगति अस्तंगतभी हो तो मिश्रित फल देते हैं। इसी प्रकार बलके तारतम्यसे बुद्धिमान् विचार करके फल कहें ॥ ३४ ॥

नीचाधिसंस्थोऽप्यथवाधिशत्रुगृहस्थितो यस्तु पराजितः स्यात् ।
युद्धेऽथवा लुप्तकरो ग्रहेन्द्रः सर्वैर्निरुक्तो विफलो मुनीन्द्रैः ॥ ३५ ॥

जो ग्रह नीच राशिमें अथवा अधिशत्रुराशिमें वा युद्धमें पराजित हो यद्वा अस्तंगत हो उनको सब मुनीन्द्रोंने निष्फल कहा है ॥ ३५ ॥

ग्रहाणां स्वरूपादि ।

शूरोऽस्थिसारश्चतुरस्रगात्रः श्यामारुणो वृद्धपटुः पृथुश्च ।
पित्तः सुरूपोऽल्पकचो गभीरो नात्युच्चकोऽर्को मधुपिंगनेत्रः ॥ ३६ ॥
कामी मृदुर्मध्यवयाः सुवक्ता प्राज्ञः सितः कुञ्चितकृष्णकेशः ।
पद्मेक्षणो वातकफी सुवृत्तः स्याद्रक्तसारः शुभगः शशांकः ॥ ३७ ॥
हिंस्रो युवा पैत्तिकरक्तगौरः पिंगेक्षणो वह्निनिभः प्रचण्डः ।
शूरोऽप्युदारः सतमास्त्रिकोणो मज्जाधिको भूतनयः सगर्वः ॥ ३८ ॥
प्राज्ञः कलाज्ञो मधुवाक् त्रिदोषी त्वक्सारकः श्यामतनुः शिरालः ।
रजः कुमारोऽप्यथ मध्यरूपो रक्तेक्षणश्चन्द्रसुतः सुहृष्टः ॥ ३९ ॥
दक्षः सकामः सबलः सगौरः प्राज्ञः सुवृत्तोत्कटबुद्धिसत्त्वः ।
मेदोऽधिकः सिंहरवः सुवृद्धः पिङ्गेक्षणो ह्रस्वतनुः सुरेज्यः ॥ ४० ॥
शुक्रः सुकांतः समदेभगामी श्यामो रजो वातकफी विपर्वा ।
सुवृत्तदोःशुक्रबलोऽम्बुजाक्षः सुखी सुवक्ताऽसितमूर्धजःस्यात् ॥ ४१ ॥
मूर्खोऽलसः कृष्णतनुः कृशांगः स्यात्स्नायुसारो मलिनोऽतिदीर्घः ।
क्रोधी जरत्पिङ्गदृशोऽर्कसूनुः सपैत्त्यवायुः पृथुरोमदन्तः ॥ ४२ ॥

जिसका जो ग्रह बलाधिक हो उसके सदृश शरीर होता है । इसलिये ग्रहोंके शरीर प्रकृति कहते हैं—कि, "सूर्य" शूर, हड्डीसारवान्, चतुरस्र गात्र (जितना लंबा उतनाही चौडा), श्याम और कुछ लाल रंग, वृद्धाकृति, चतुर, स्थूल पित्तस्वभाव, सुरूप, केश अल्प, गंभीर अति ऊँचा नहीं, मधुसमान पीले नेत्र ॥ ३६ ॥ "चंद्रमा" कामी कोमल मध्यावस्था, सुंदर बोलनेवाला, विद्वान्, श्वेतरंग, काले और घुंघराले केश, कमलदलके सदृश नेत्र, वातकफ प्रकृति, वृत्ताकार गात्र, रुधिर बल प्रधान, शुभग ॥ ३७ ॥

"मंगल" हिंसक, जवान, पित्तस्वभाव, सुर्खी सहित गौर वर्ण, पीले नेत्र, अग्निके समान प्रचंड, शूरमा, उदार, कोपसहित, त्रिकोणाकार, मज्जा(चर्बी)में सार, अहंकारवाला ॥३८॥ "बुध" विद्वान्, अनेक कला जाननेवाला, मीठी वाणी, त्रिदोषवाला, त्वचामें सार, हरित वर्ण शरीर, नशी, बहुत रजोगुणी, बालक, मध्यम रूप, सुर्ख नेत्र और प्रसन्न ॥३९॥ "बृहस्पति" चतुर, कामसहित, बलवान्, गौर वर्ण, पण्डित, वृत्ताकार उत्कट बुद्धि, सत्त्वगुणी, मेदबल प्रधान, सिंहके समान शब्दवाला, वृद्धावस्था, पीले नेत्र, छोटा शरीर ॥ ४० ॥ "शुक्र" सुरूप मदसहित, हाथीकीसी चाल, श्यामवर्ण, रजोगुणी, वात कफ प्रकृति, विरल शरीरसन्धि, सुन्दर वृत्ताकार बाहु, शुक्र धातु प्रधान, कमलदलके समान नेत्र, सुखी, अच्छा बोलनेवाला, काले घुंघुराले बाल ॥ ४१ ॥ "शनि" मूर्ख, आलस्यवाला, काला शरीर, पतला अंग, नसोंमें सार, मलिन, अतिलंबा, क्रोधी, बूढी आकृति, पीले नेत्र, पित्तवात प्रधान, रोम और दांत मोटे हैं ॥ ४२ ॥

ग्रहाणां दीप्ताद्यवस्था तल्लक्षणं च।

दीप्ता स्वस्था हर्षिताख्या प्रशांता शक्ता पीडासंयुता वाथ भीता।
वैकल्याख्या स्यात्खला दीनसंज्ञाऽवस्था प्रोक्ता खेचराणां सदैव४३।
दीप्तः स्वोच्चे हर्षितो मित्रगेहे स्वस्थः स्वर्क्षे सौम्यवर्गे प्रशांतः।
शक्तः खेटःस्यात्स्फुरद्रश्मिजालो वैकल्यः स्याद्भानुना ततरश्मिः४४
पापाक्रांतः पीडितः संप्रदिष्टो नीचे दीनः क्रूरभस्थः खलाख्यः।
भीतः शत्रुक्षेत्रसंस्थो दशैता इत्थं प्रोक्ताः खेचराणामवस्थाः॥४५॥

ग्रहोंकी दीप्त, स्वस्थ, हर्षित, शांत, शक्त, पीडित, भीत, विकल, खल, दीन ये दश अवस्थायें होती हैं ॥ ४३ ॥ इनके लक्षण कहते हैं कि, अपने उच्चमें ग्रह दीप्तावस्थामें रहता है। मित्रराशिमें हर्षित, स्वराशिमें स्वस्थ, शुभग्रहके राश्यादिवर्गमें शांत, सूर्यसान्निध्यसे उदितानर्ह शक्त, अस्तमें विकल ॥ ४४ ॥ पापोंसे दबा हुआ पीडित, नीच राशिमें दीन, क्रूर राशिमें खल, शत्रुक्षेत्रमें भीत ये १० अवस्था कही हैं ॥ ४५ ॥

अवस्थाफलानि ।

दीप्ते प्रतापी विजितारिपक्षो नरः सदा चारुहरिप्रियाढ्यः ।
भवेन्मदोन्मत्तगजाधिपो वा तुरंगमेशः स्वकुलानुमानात् ॥ ४६ ॥
स्वस्थे महौजा विजयाधिशाली कुटुंबयुक्तो विजितारिसंघः ॥
चमूपतिः स्याद्वरवाहनाद्यैर्युक्तो नरः सम्मतिभूषणाद्यैः ॥ ४७ ॥
हर्षिते कनककामिनीजनैः सद्विलासमणिभूषणैः सुखैः ।
संयुतो भवति पुण्यकृन्नरो नाशको रिपुगणस्य हर्षितः ॥ ४८ ॥
शांते भवेन्ना बहुमित्रपुत्रः परोपकारी सुकृतः प्रशांतः ।
शास्त्राधिकारी नृपतिप्रधानो जायाविलासानुरतः स्वतंत्रः ॥ ४९ ॥
शक्तेऽतिशक्तो मनुजोऽरिहन्ता परोपकारी सुजनः प्रसन्नः ।
विख्यातकीर्तिः सुतरां सुशीलः सुगंधमाल्याभिरुचिर्भवेत्सः ॥५०॥

अवस्थाओंके फल कहते हैं–दीप्त अवस्थामें प्रतापवान्, शत्रु जीतनेवाला, सर्वदा मनुष्य रमणीय लक्ष्मीसे युक्त रहे, मदोन्मत्त हाथियोंका वा घोडोंका स्वामी अपने कुलानुरूप होवे ॥ ४६ ॥ स्वस्थावस्थामें बडा तेजस्वी, विजयवाला, कुटुम्बसे युक्त, शत्रुसमूह जीतनेवाला, सेनापति, श्रेष्ठ वाहनादिसे संयुक्त, उत्तम बुद्धि तथा भूषण आदिसेभी युक्त रहे ॥ ४७ ॥ हर्षितमें सुवर्ण, युवास्त्रीजनसे विलास युक्त, मणि भूषण और सुखसे संयुक्त, पुण्य करनेवाला, शत्रुगणका नाश करनेवाला और हर्षितभी मनुष्य रहता है ॥४८॥ शांतावस्थामें मनुष्य बहुत मित्र रहता पुत्रवाला, पराया उपकार करनेवाला, पुण्यात्मा, शांत स्वभाव, शास्त्राधिकारी, राजाका प्रधान, स्त्रीविलासमें तत्पर और स्वतंत्र रहता है ॥ ४९ ॥ शक्तावस्थामें अतिशक्त, शत्रुहंता, परोपकारी, सज्जन, प्रसन्न, विख्यातकीर्ति, अच्छे प्रकारका सुशील, सुगंध पुष्पादियोंमें रुचि रखनेवाला वह मनुष्य होता है ॥ ५० ॥

परोपकारे विगतादरः स्याद्बलेन हीनो मलिनः कृशाङ्गः ।
पराभिभूतो रिपुणा मनुष्यो नभश्चरे चेद्विकले प्रसूतौ ॥ ५१ ॥

प्रपीडिते शत्रुभयार्तियुक्तः प्रपीडितः स्यात्सततं मनुष्यः ।
निजस्थलाच्चश्चलनत्वमेति चिंतोपसर्गैर्व्यसनाभिभूतः ॥ ५२ ॥
दीनेऽतिदीनो नृपशत्रुभीत्या युक्तो भवेन्नाऽपचयेन तप्तः ।
सज्जातिवैरोऽपि विहीनकांतिः संत्यक्तनीतिर्द्रविणेन हीनः ॥ ५३ ॥
विदेशवासी द्रविणेन हीनः कांतार्तिचिंतापरितप्तचित्तः ।
मर्त्यः सकोपो भवति प्रसूतौ खलाभिधाने कलहः सुहृद्भिः ॥५४॥
भीते सदा भीतियुतो मनुष्यः संत्यक्तसौजन्यधनादिहीनः ।
अशत्रुभूपादपि तस्कराद्वा भार्यादितः स्याद्व्यसनानुरक्तः ॥ ५५ ॥

जिसके जन्ममें ग्रह विकल हो वह मनुष्य पराये उपकारमें अनादर पावे, बलहीन, कृश अंग, शत्रुसे हारा रहे ॥ ५१ ॥ पीडितमें मनुष्य शत्रुभय और पीडासे पीडित सर्वदा रहे, अपने स्थानसे चंचलता पावे, चित्त उपसर्ग (संक्रामकरोग) और व्यसनोंसे दबा रहे ॥ ५२ ॥ दीनावस्थावाले ग्रहमें अतिदीन (दरिद्री) राजा और शत्रुके भयसे युक्त, हानिसे संतप्त, अच्छी जातिमें वैर, हीन कान्ति, नीतिसे परित्यक्त और धनसे हीन रहे ॥ ५३ ॥ खलावस्थावाले ग्रहमें विदेशमें रहनेवाला, धनहीन, स्त्रीके पक्षकी अतिचिन्तासे मन संतप्त, क्रोधी और मित्रोंसे कलह होवे ॥ ५४ ॥ भीतिअवस्थावाला ग्रह जिसके जन्ममें हो वह सर्वदा भयसे युक्त, सुजनतासे वर्जित, धनरहित रहे, मित्रसे राजासे चोरसे वा स्त्रीसे पीडित और व्यसनोंमें तत्पर रहे ॥ ५५ ॥

ग्रहदृष्टिविचारः ।

खभे विक्रमे पाददृष्टिर्ग्रहस्य त्रिकोणेऽर्द्धदृष्टिर्द्युने पूर्णदृष्टिः ।
त्रिपादा च तुर्याष्टमे दृष्टिरेवं स्मृता होरिकज्ञैर्यथाशास्त्रदृष्ट्या ॥५६॥
गुरोः पूर्णदृष्टिस्त्रिकोणे यथा स्यात्तथा सूर्यपुत्रस्य खे विक्रमे च ।
चतुर्थेऽखिला नैधने भूसुतस्य विशाला स्मृता दृष्टिरेवं ग्रहज्ञैः॥५७॥

दृष्टिविभाग कहते हैं-१०।३ भावोंमें ग्रहोंकी चौथाई दृष्टि, त्रिकोण ५। ९ में आधी, सप्तम ७ में पूर्ण दृष्टि होती है, ४ । ८ में तीन पाद दृष्टि ज्योतिषज्ञोंने शास्त्रद्वारा कही है ॥ ५६ ॥ और बृहस्पतिकी त्रिकोण ५ । ९ में

पूर्ण दृष्टि होती है, तैसेही शनिकी १० । ३ में पूर्णदृष्टि होतीहै । चतुर्थ और अष्टम भावमें मंगलकी पूर्ण दृष्टि ग्रहज्ञोंने कही है ॥ ५७ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुंजराजोदिते च ।
होरासारे शम्भुहोराप्रकाशेऽध्यायस्त्वासीत्खेटभेदः प्रपूर्णः ॥ ५८ ॥

इति श्रीपुंजराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे ग्रहभेदाध्यायो द्वितीयः ॥ २ ॥

विद्वद्रम्ये इत्यादि अध्यायश्लोकका अर्थ पूर्ववत् है और यह खेटभेदाध्याय है ॥ ५८ ॥

इति श्रीशंभुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां ग्रहभेदाध्यायः द्वितीयः ॥ २ ॥

अथ बलसाधनाध्यायः ३ ।

तत्र दृष्टिसाधनम् ।

अथ प्रवक्ष्ये गगनेचराणां बलानि सम्यङ् मुनिनिर्मितानि ।
विना बलेनैव न शक्यतेऽत्र फलं प्रवक्तुं किल दैवविद्भिः ॥ १ ॥
दृश्ये द्रष्टूनेऽथ चैकादिशेषे कोष्टेष्वेता लिप्तकाद्या दृशः स्युः ।
पूर्णं तिथ्यो बाणवेदाः खरामाः पूर्णं षष्टिः पंचवेदाः खरामाः ॥ २ ॥
तिथ्यः पूर्णं खं च पूर्णं यमस्य नंदे नेत्रे षष्टितुल्याः कलाः स्युः ।
अद्रौ वह्नौ षष्टिसंख्याः कुजस्य वेदे नागे गीष्पतेः षष्टिरुक्ताः ॥ ३ ॥
एकादिशेषे ध्रुवकांतरेण लवादिशेषं निहतं खरामैः ।
लब्धं युतोनं प्रचये क्षये ता लवादिकाः स्पष्टतरा दृशः स्युः ॥ ४ ॥

विना ग्रहोंके बल साधे ज्योतिषियोंकरके फल नहीं कहा जाता, इसलिये मुनियोंके बनाये ग्रहोंके बल भले प्रकार कहता हूं ॥ १ ॥ जो देखता है वह द्रष्टा, जिसको देखता है वह दृश्य कहाता है । दृश्य ग्रह स्पष्टमें द्रष्टाको स्पष्ट घटायके एकसे लेकर १२ राशिपर्यंत जो अंक शेष

दृष्टेध्रुवांकचक्रम् ।

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
०	१५	४५	३०	०	६०	४५	३०	१५	०	०	०
	श	मं	बृ			मं	बृ	श			
	६०	६०	६०			६०	६०	६०			

रहे उसमें एकादि क्रमसे ०।१५।४५।१०।०।६०।४५।३०।१५।०।०।०

कला दृष्टिबल मिलता है। तथा शनिके ९। ३ शेषमें ६० कला, मंगलकी ७।३ में ६० कला और गुरुके ४।८ में ६० कला मिलती है ॥ २ ॥ ३ ॥ एक आदि शेष ध्रुवकांतरसे अंशादि शेषको गुणके ३० से भाग लेकर जो मिले वह चयमें योग, क्षयमें हानि करके स्पष्ट दृष्टि होती है। उदाहरण—द्रष्टा चंद्रमा ५। १२। २५। २३ दृश्य सूर्य २। १४। २०। ५८ चन्द्रमाको सूर्यमें घटायके शेष रहा ९। १। ५५। २६ नौ राशिके नीचे चक्रमें १ दश राशिके नीचे० है इनका अंतर आगे न्यून होनेसे क्षय हुआ अधिक होनेमें चय होना था अंतर १ से अंशादि १। ५५। २६ को गुणा तो १। ५५। २६ भाग ३० से लेकर लब्धि०। ३। ५० पर कोष्ठांक कम होनेसे घटाया०। ५६। १० इसमें ४ से भाग लिया तो सूर्यपर चंद्रमाकी दृष्टि०। १४। २ हुई, यह क्षय चयका उदाहरण है। अन्य प्रकार उदाहरण है कि, बुधपर गुरुकी दृष्टि देखनेमें द्रष्टा बृ० ७। १६। ४६। ५४, दृश्य बु० ९। ११। ३४। ८ में घटाया तो यह १। २४। ४७। १४ शेष रहा अर्थात् प्रथम खण्डा गत होकर द्वितीय खण्डा भोग रहा है, इसलिये गत खण्डा० और वर्तमान खण्डा १५, इन दोनोंका अन्तर किया तो १५ भया, अब इससे अंशादि २४। ४७। १४ इन शेषोंको अन्तर १५ से गुणकर तीससे भाग लेना चाहिये तहां हार गुणक दोनोंको १५ से अपवर्तन दिये तो हार दो बचा इसलिये दोसे भाग देना अर्थात् इनका आधा १२। २३। ३७ यह बुध दृष्टि हुई। इस तरह द्रष्टा-हीन दृश्य २ राशि होवे तो जो तहां अंश है उनमें १५ जोडके दृष्टि होती है, जैसे दृश्य लग्न १०। १६। २४। १०, चंद्रमा द्रष्टा ७। २४। ३४। १५ घटायके २। २१। ४९। ५५ अंश २१। ४९। ५५ में १५ जोडे ३६। ४८ दृष्टि हुई। यदि पूर्वोक्त विधिसे घटायके ३ राशि रहे तो भोग्यांशोंमें ३० जोडके दृष्टि होती है, जैसे—मं० द्रष्टा ५। २३। २६। ३ सूर्य दृश्य ९। ९। ४२। १६ में घटायके ३। १६। १६। १३ इसको ३० में घटायके भोग्यांश १३। ४३। ४७, इसका आधा ६। ५१। ५३ में

जोडे ३६ । ५१ । ५३ । मध्यदृष्टि हुई । इसमें ' अद्रौ वह्नौ षष्टिसंख्या कुजस्य ' इस वचनसे द्व्यंगदृष्टिमें भुक्तांशोंका, त्र्यंगदृष्टिमें भोग्यांशोंका आधा जोडनेसे ०।५१।१० स्फुट दृष्टि होती है । यदि वह द्रष्टाहीन दृश्य ४ राशि होवे तो भोग्यांशही दृष्टि होती है । उदाहरण लग्न दृश्य १० । ५ । ५।४६ चंद्रमा द्रष्टा ६ । १ ।८।३० से हीन ४ । ३ । ५७ । ७ इसके भोग्यांश ० । २६ । ३ यही दृष्टि हुई । यदि दृश्यहीन द्रष्टा ५ से अधिक हो तो भुक्तांशकादि दूने करके दृष्टि होती है, यदि ६ से अधिक होवे तो १० में घटायके उसके अंश करके २ से भाग लेनेसे दृष्टि होती है। जैसे द्रष्टा सूर्य ९ । ९ । ४२ । १६ । दृश्य शनि २ । २४ । ३५ । २५से हीन ६ । १५ । ६ । ५१ दशमें शुद्ध किया ३ । १४ । ५३ । ९ इसके अंश १०४ । ५३ । ९ दोसे भाग लिया ० । ५२ । ३६ दृष्टि हुई यदि द्रष्टाहीन दृश्य १० से अधिक होवे तो दृष्टि ही नहीं होती अर्थात् शून्य ० । ० । ० लिखना, अब मंगल, गुरु, शनिके लिये विशेष है कि, पूर्वोक्त प्रकारसे भौमफलमें यदि २ । ६ । ३ । ७ राशि आवें तो भुक्त भोग्यांशकोंका आधा जोडना जैसे पूर्वानीत भौमदृष्टि ० । ३६ । ५२ यहां सूर्यके साथ दृष्टिमें भुक्त भोग्यांशकार्ध जोडनेसे ० । ४३ । ४४ । स्पष्ट दृष्टि हुई। ऐसेही बृहस्पतिमें ३ । ७ । ८ । ४ राशि होवे तो पूर्वानीत दृष्टिके भुक्तभोग्यांशमें ३० जोडने जैसे चंद्र ६ । २ । ३७ । २७ गुरु ९ । ११ । ८। ३४ दृष्टि हीन ८ । २१ । २८ । ५३ छः से अधिक होनेसे १० में शुद्ध किया १ । ८ । ३१ । ७ इसके अंश ३८ । ३१ । ७ दोसे भाग लिया ० । १९ । १६ अष्टम राशि होनेसे भोग्यांश ८ । ३१ जोडे ० । २७ । ४७ गुरुदृष्टि हुई । ऐसेही शनिमें २ । ९ । ८ । १ होवे तो पूर्वानीत दृष्टिमें भुक्तभोग्यांशका ३ । ३० तिगुने करके ९० दो २ से भाग लिया। २ । ४५ पूर्वानीत दृष्टिमें जोडके शनिकी स्पष्ट दृष्टि होती है जैसे चंद्र ३ । १०। १५ । दृश्य द्रष्टा शनि १ । २ । ५६ । पूर्वोक्त प्रकारसे दो राशि होनेसे १५ जोडे अंश दृष्टि ० । २३ । ० वही ० । २३ । ० इसमें विशेषोक्त

प्रकारसे जोडे ० । ३५ । ० दृष्टि शनिकी हुई । चंद्रमामें शनि दृष्टिके भोग्यांशक ३ से गुणाकर २ से भाग लिया मध्य दृष्टिमें जोडनेसे शनिकी स्पष्ट दृष्टि होती है ॥ ४ ॥

उच्चबलादि ।

नीचोनखेटो रसभाधिकश्चेच्चक्राद्विशुद्धस्त्वथ शेषराशिः ।
दशाहतस्तस्य लवा न[illegible]ाः षष्ट्युद्धृतास्तुंगबलं कलाद्यम् ॥ ५ ॥
मूलत्रिकोणे चरणोनरूपं स्वर्क्षे दलं मित्रगृहे च पादम् ।
त्रयोऽष्टमांशास्त्वधिमित्रगेहे समेऽष्टमांशास्त्वरिभे नृपांशः ॥ ६ ॥
दंतांशकः स्यादधिशत्रुगेहे स्यात्तद्दलं स्वीयपतेर्वशात्तु ।
कार्यं बलैक्यं भवनादिकानां प्रोक्तं बुधैः सप्तकवर्गवीर्यम् ॥ ७ ॥

उच्च बल कहते हैं—ग्रहस्पष्टमें नीचस्पष्ट घटाय देना यदि ६ राशिसे अधिक होवे तो १२ राशिमें शुद्ध करना शेष राशिको १० से गुणाकर अंश करने तब २० से गुणाकर ६० से उद्धृत करना उच्चबल होता है। मतांतरसे सुगम रीति है कि, नीचोनित ग्रह ६ से न्यून हो तो वही रखना, अधिक होवे तो १२ में शुद्ध करना उसके अंश बनायके ३ से भाग लेना उच्चबल होताहै । उदाहरण—सूर्य ९ । ९ । ४२ । १६ नीच ६ । १० । ० । ० घटाया शेष २ । २९ । ४२ । १६ यह ६ राशिसे न्यून होनेसे यही रहा इसके अंश ८९।४२।१६ तीन ३ से भाग लिया ० । २९।५४ यहां शून्य एकके स्थानमें जानना । ऐसेही सभी ग्रहोंके उच्चबल जानना । श्लोकार्थ रीति यही है कि, ग्रहमें नीच घटाके ६ से भाग देना उच्चबल मिलता है । यदि शेष ठीक ६ रहे तो ६ के भाग देनेसे पूर्णबल अर्थात् अंशके स्थानमें १ रूप बल मिलता है । यदि ६ राशिसे कम रहे तो राशिमें ६ से भाग देनेसे अंशस्थानमें ० मिलेगा पुनः राशिको ६० से गुनके अंश दूना करके जोडना फिर ६ से भाग देना फल कलास्थानमें रखना । शेषको ६० से गुनके विकला दूनी करके जोडना ६के भागसे विकला मिलेगी । अथवा नीचग्रहांतरका कला करना १८०से भाग देना बल मिलेगा । अथवा नीचग्रहांतरकी

राशिको १० से गुणना अंशादियोंको २० से गुणना तौभी उच्चबल होता है ॥ ५ ॥ जो ग्रह मूलत्रिकोणका हो वह चतुर्थांश त्रिगुण ०।४५।० बल पाता है, स्वगृहमें आधा ०।३०।० समके गृहमें अष्टमांश ०।७।३० मित्रगृहमें चतुर्थांश ०।१५।० अधिमित्रमें त्रिगुण अष्टमांश ०।२२।३०, शत्रुगृहमें षोडशांश ०।३।४५, अधिशत्रुमें बत्तीसवां भाग ०।१।५२, यह बल गृहहोरादि सप्तवर्गके स्वामियोंके अनुसार मिलते हैं। स्वामी अपने गृहमें होवे तो आधा, समगृहमें होवे तो अष्टमांश इत्यादि ऐसे सातोंका बल एकत्र करके सप्तवर्गज बल होता है ॥ ६ ॥ ७ ॥

सप्तैक्यजबलविचारः ।

स्थानाख्यवीर्यं त्वथ दिग्बलं च कालाख्यवीर्यं च निसर्गकाख्यम् ।
चेष्टाबलं दृग्बलमेवमेतत्प्रोक्तं बुधैः षड्विधमग्रगानाम् ॥ ८ ॥
सप्तैक्यजं तुंगबलं समौजं केन्द्रादिवीर्यं त्रिलवाह्वयं च ।
स्थानाभिधं पंचविधं हि वीर्यं निरुक्तमेतन्ननु जातकज्ञैः ॥ ९ ॥

स्थान १, दिग् २, काल ३, निसर्ग ४, चेष्टा ५, दृष्टि ६ ये षड्बल हैं ॥ ८ ॥ उच्च, सप्तवर्ग, युग्मायुग्म, केन्द्रादि, द्रेष्काण इनका ऐक्य स्थानबल होता है। दिग्बल एकही प्रकारका है। नतोन्नत, पक्ष, दिनरात्रित्रिभाग वर्षमासादि इन चारोंका ऐक्य कालबल होता है। चौथा चेष्टाबल अयन, चेष्टा केन्द्रज भेदसे २ प्रकारका है। पंचम निसर्ग एकही प्रकारके है। छठा दृष्टिबलभी एकही प्रकारका है ऐसा जातकज्ञोंसे निरूपित है ॥ ९ ॥

सप्तवर्गजबलानयनम् ।

युग्मे गृहांशोपगतौ सितेन्दू संयच्छतः पादबलं तथौजे
गृहांशके सूर्यकुजार्किसौम्यपुरन्दरेज्या वितरंति १५तावत् ॥ १० ॥
केन्द्रादिगा रूपदले च पादं यच्छंति खेटा बलमत्र नूनम् ।
भांते सितेन्दू ज्ञयमौ च मध्ये सूर्यारजीवाः प्रथमे दृकेऽङ्घ्रिः ॥ ११ ॥
भौमादर्काच्चाम्बुभं हेलिपुत्राल्लग्नं जीवाद्बोधनादस्तभावम् ।
शोध्यं शुक्राद्यामिनीशान्नभर्क्षं दिग्वीर्यं स्यात्तुंगवीर्योक्तवत्तत् ॥ १२ ॥

युग्मायुग्म बल कहते हैं—शुक्र चन्द्रमा समराशि वा समांशकमें हों और सूर्य मंगल बुध गुरु शनि विषम राशि वा विषम नवांशकमें चौथाई ० । १५ । ० बल पाते हैं ॥ १० ॥ केंद्रादिबल कहते हैं—ग्रह केन्द्र १ । ४ । ७ । १० में १ बल, पणफर २ । ५ । ८ । ११ में आधा ० । ३० । ०, आपोक्लिम ३ । ६ । ९ । १२ में चरण ० । १५ । ० पाते हैं । शुक्र चंद्रमा तीसरे द्रेष्काणमें, बुध शनि मध्य द्रेष्काणमें, सूर्य मंगल गुरु प्रथम द्रेष्काणमें, चौथाई ० । १५ । ० बली होते हैं । इस प्रकार ५ बलोंका ऐक्य स्थानबल होता है ॥ ११ ॥ दिग्बल कहते हैं—सूर्य मंगलमें चतुर्थभाव, शनिमें लग्न, चंद्रमा शुक्रमें दशम भाव, बुध गुरुमें सप्तम भाव, घटायके और उच्चबलके तरह ६ से अधिक होवे तो १२ में घटायके और ६ से कम होवे तो उसीमें ६ का भाग देनेसे दिग्बल मिलता है ॥ १२ ॥

द्विघ्नं नतं चन्द्रकुजार्कजानां षष्ट्यूनितं जीवसितोष्णगूनाम् ।
रूपं सदा ज्ञस्य नतोन्नताख्यं वीर्यं त्वथो पक्षबलं प्रवच्मि ॥ १३ ॥
व्यर्कः शशी चेन्द्रसभाधिकोऽसौ चक्रोनितस्तुंगबलोक्तवत्स्यात् ।
सितासिते तच्च सतां खलानां षष्ट्यूनितं शीतरुचोर्द्विनिघ्नम् ॥ १४॥
अह्नस्त्रिभागेषु बुधार्कमंदा यच्छन्ति रूपं बलमत्र नक्तम् ।
चन्द्रोशनारा द्युनिशं सुरेज्यस्त्रिभागसंज्ञं बलमेतदुक्तम् ॥ १५ ॥
वर्षे स्वमासे स्वदिने स्वहोरास्वपीत्थमुक्तं बलमंघ्रिवृद्ध्या ।
प्रोक्तं तु कालाभिधमेव वीर्यं चतुर्विधं जातकशास्त्रविद्भिः ॥ १६ ॥

कालबल कहते हैं—नतको द्विगुण करके चंद्र, भौम, शनिका और वही द्विगुणित नत ६० में घटायके अर्थात् उन्नतको द्विगुण करके बृहस्पति, शुक्र, सूर्यका नतोन्नत बल होता है । बुध दिन रात्रि सर्वदा १ बल पाता है । अब पक्षबल कहते हैं ॥ १३ ॥ चन्द्रमामें सूर्यको घटाकर छः राशिसे अधिक हो तो बारहमें घटाना, फिर उच्च बलके सदृश क्रिया करनी तो शुभग्रहोंका पक्षबल होता है और इसी बलको साठ ६० में घटानेसे पापग्रहोंका पक्षबल होता है और दूसरा प्रकार यह है कि, शुक्लपक्षमें गत तिथिको, कृष्णपक्षमें

(एष्य) आगंतुक तिथिको १५ से भाग देके शुभग्रह चं० बु० गु० शु० का और यही १ में कम करके पापग्रह सू० मं० श० का पक्षबल होता है। इसमें जो चंद्रमाका बल आया सो द्विगुण करना तो पक्षबल होता है ॥ १४ ॥ त्र्यंशबल कहते हैं–दिनके पहिले त्रिभागमें जन्म होवे तो बुधका रूप १ बल, द्वितीयमें सूर्यका, तीसरेमें शनिका, रात्रिके प्रथम त्रिभागमें चंद्रमाका, दूसरेमें शुक्रका, तीसरेमें मंगलका और सर्वकालमें गुरुका रूप १ । ० बल मिलता है ॥ १५ ॥ वर्षपतिका चरणबल, मासपतिका अर्ध, दिनपतिका तीन चरण और होरापतिका रूप १ बल होता है, इस प्रकार चारों बलोंके योगको कालबल कहते हैं । अब यहां वर्षेश्वराद्यानयन ग्रन्थान्तरसे लिखते हैं–" द्विष्ठोऽयं ग्रहलाघवद्युनिचयश्चक्राहतैः षट्शरैः षड्दस्रैश्च युतः सबाणतपनः सेषुश्च खांगाग्निभिः॥ खाज्यांशैर्विहृतः फले गुणयमघ्ने चक्रनिघ्नाक्षखोपेते द्वित्रियुते नगोर्वरितके स्तोऽर्कोत्समामासपौ ॥ १॥" करणकुतूहले च–"द्विष्ठो द्युपिंडो रदभू १३२ युतोऽर्क १२ युक् खांगाग्नि ३६० हृत्खाग्नि ३० हृतः फले युते ॥ वेदैर्गुणै ४ । ३ स्त्रि३ द्वि २ हतेऽद्रि ७ शेषितेऽर्काद्ग्रहतुल्ये करणेऽब्दमासपौ ॥ " अभीष्ट चक्रको ५६ से गुणके उसमें अहर्गण जोडना और १२५ भी जोडना, ३६० से भाग देना जो मिले उसे ३ से गुणके चक्रको ५ से गुनना उसमें ३ जोडने ७ से शेष करके जोडदे उतनवां सूर्यादि क्रमसे वर्त्तमान वर्षाधिपति होता है । मासेशके लिये अभीष्ट चक्रको २६ से गुणके अहर्गण जोडना ५ और जोडना ३० से भाग लेकर लब्धि द्विगुण करके उसमें ४ और जोडने तब ७ से शेष करके जो बचे वह सूर्यादियोंमेंसे मासेश जानना । दिनेशके लिये अपने देशकी मध्यरेखाका जो देशांतर है उसमेंसे उसका चतुर्थांश कम करके तन्मित फल पूर्व मध्यरेखा होवे तो १५ घडीमें कम करना, पश्चिम रेखा होवे तो १५ घडीमें युक्त करना तब यह संस्कारयुक्त घटी दिनार्धसे जितनी पल कम हो उतना पल सूर्योदयके अनंतर वारप्रवृत्ति होती है अथवा संस्कृत घटी दिनार्द्धसे जितना पल अधिक हो उतने पलसे

सूर्योदयके पूर्वापर प्रवृत्ति होती है । इस प्रकारसे जन्मकालमें जो वार हो वह दिनपति जानना । अब होरापति बनानेकी रीति कहते हैं कि, वार-प्रवृत्तिसे लेकर इष्टकालपर्यंत जितनी घटी पल हों उनको द्विगुण करके २ जगह रखना पहिलेमें ५ से भाग देकर शेषको दूसरी जगहवालेमें घटाय देना १ और जोडना तब वारपतिके क्रमसे १ बचे तो सूर्य, २ में शुक्र, ३ में बुध, ४ में चंद्र, ५ में शनि, ६ में गुरु, ७ में मंगल यह क्रम इस वारपतिसे गणना करके जो वार आवे उसकी वह गत होरा जाननी । अनंतर वर्त्तमान होराका स्वामी होरापति जानना ऐसाही प्रयोजन करणकुतूहलोक्त श्लोककाभी है ॥ १६ ॥

अयनबलानयनम् ।

युक्ताः सदाऽपमलवैः शशिजस्य सिद्धा याम्येऽप्युदक्छनि-विधोः सहिता विहीनाः ॥ सूर्यारशुक्रधिषणस्य तथा विलोमा नागाब्धिहृत्किल भवेद्बलमायनाख्यम् ॥ १७ ॥ रवेर्द्विघ्नमिदं प्रोक्तमायनाख्यं बलं बुधैः । चेष्टा चायनयो-र्योगे चेष्टावीर्यं भवेत्कुजात् ॥ १८ ॥

सर्वदा बुधकी दक्षिण वा उत्तर क्रांति २४ अंशमें युक्त करनी और २४ अंशमें शनि चंद्रमाके दक्षिण क्रांतिभाग युक्त करने तथा उत्तर क्रांति २४ अंशमेंसे कम करनी । सूर्य, मंगल, गुरु, शुक्रका २४ अंशमें दक्षिण क्रांति-भाग कम करना और उत्तर क्रांतिभाग २४ अंशमें युक्त करना तब वह सबमें ४८ से भाग देना ग्रहोंका अयनबल होता है ॥ १७ ॥ यह बल सूर्यका द्विगुण करना यह अयनबल पंडितोंने कहे हैं । चेष्टाबल तथा अयनबलको जोडके मंगल आदियोंका चेष्टाबल होता है । प्रयोजनवश क्रान्त्यानयन ग्रहलाघवसे लिखते हैं-"स्युः खण्डानि खवार्द्धयो वरकुताः शैलाग्नयोऽब्ध्य-ग्नयास्त्रिंशत्तत्त्वधृतीनवारिनिधयस्तैः सायनांशग्रहात् । बाह्वंशाभ्रकुभागसंख्यक-युतिः शेषैक्यघातादशाप्ताढ्या दिग्विहता लवाद्यपमस्तद्दिक् स्वगोलाद्भ-वेत् ॥" ग्रहमें अयनांश जोडके भुज करना, भुजके अंश करने, उसमें १० से

भाग देना जो अंक मिले उसके नीचे लिखे चक्रमेंका अंक जोडना और

क्रांत्यंकचक्रम् ।

१	२	३	४	५	६	७	८	९
४०	४०	३७	३४	३०	२५	१८	१२	४

लब्धिमें १ जोडके तत्परिमित अंक लेके उसके ऊपर अंशादि शेषको गुणके १० से भाग देना जो मिले उसमें पीछेके अंकका मिलान जोड देना जो मिलान आवे उसमें १० से भाग लेना जो मिले वह अंशादि क्रांति जाननी । जो सायन ग्रह उत्तर गोलमें होवे तो उत्तर क्रांति और दक्षिण गोलमें होवे तो दक्षिण क्रांति जाननी । मेषादि ६ राशिपर्यंत सायनग्रह उत्तरगोल और तुलादि ६ राशिपर्यंत होवे तो दक्षिण गोल होता है ॥ १८ ॥

चेष्टानैसर्गबलम् ।

स्पष्टमध्यमयोर्योगदलोनं चंचलं भवेत् ।
चेष्टाकेंद्रं कुजादीनां तद्बलं तुंगवीर्यजम् ॥ १९ ॥
सायनोऽर्कस्त्रिभयुतो व्यर्केन्दुः कंटके तयोः ।
स्यातां मयूखकष्टेऽष्टविधौ न प्राग्बलाय च ॥ २० ॥
एकोत्तरं रूपकमद्रिभक्तं निसर्गकाख्यं बलमुक्तमेतत् ।
मंदारसौम्येज्यसितद्विजेशतीक्ष्णद्युतीनां गदितं पुराणैः ॥ २१ ॥

मध्यम स्पष्ट जोडके आधा करना वह उसी ग्रहके शीघ्रोच्चमें घटानेसे भौमादियोंका चेष्टाकेन्द्र होता है । यह केन्द्र ६ राशिसे अधिक होवे तो १२ राशिमें शुद्ध करना तव उच्चबलकी विधिसे ६ से भाग देना तो चेष्टाबल होता है । अथवा षडल्पकेन्द्रके अंशादि करके ३ से भाग लेना यह सुगम रीतिसे चेष्टाबल होताहै । अयन और चेष्टाबल जोडनेसे स्पष्ट चेष्टाबल होता है । क्रमसे १ से ७ तक अंकोंको ७ से भाग देना तो क्रमसे श० मं० बु० गु० शु० चं० सू० इनका नैसर्गिक बल होता है । अथवा १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ को क्रमसे १ । से ७ तक अंकसे गुनना, श० मं०इत्यादि ग्रहोंका कलात्मक नैसर्गिक बल होता है । अथवा शनिका बल द्वित्रिचतुरादि अङ्कोंसे गुणते जाओ तो भी वही होता है ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

युद्धबलम् ।

अथेदानीं खेटयुद्धे वीर्यसंस्कारमुच्यते ।
वीर्यैक्ययोस्तु विवरं बाणविश्लेषभाजितम् ॥ २२ ॥
स्वं सौम्यस्थे बले कार्यं याम्यदिक्स्थे बले ऋणम् ।
स्फुटे बले तयोः स्यातामिति दैवविदो विदुः ॥ २३ ॥

सूर्यके साथ ग्रहसमागमको अस्त कहते हैं । भौमादियोंके समागमको ग्रहयुद्ध कहते हैं। उत्तर शरवाला बली और बिजयी होता है। युद्धसमयमें ग्रहोंके कलात्मक स्पष्ट बराबर होते हैं तब उनके कलात्मक शरका अंतर करना, उन्हीं ग्रहोंके पूर्वोक्त बलैक्यका अंतर करके उसमें शरके अंतरसे भाग देना, जो फल मिले उत्तर शरवाले ग्रहके बलमें युक्त करना, दक्षिण शरवालेके बलमें घटाय देना यह संस्कार दैवज्ञोंने चेष्टाबलका भेद कहा है यहां शरानयन ग्रहलाघवसे लिखते हैं—" खाम्बुधयः खयमाः खभुजंगाः खांगमिताः खदश क्रमशः स्युः । पातलवाः कुसुताद्बुधभृग्वोर्मध्यमचंचलकेन्द्रविहीनाः ॥ कुद्विव्यब्धियुगाश्विनो दलचयश्चेत्षड्भपुष्टं चलं केन्द्रं चक्रविशुद्धमस्य भमितार्द्धैक्यं लवघ्नागतात् ॥ त्रिंशल्लब्धयुतं कुजात्कुयमलाब्धीन्द्वद्रिभक्तं क्रमात् तद्धीना धृतिरिष्विलागुणभुवो गोब्जा इनाद्राक् छ्रुतिः ॥ मन्दस्पष्टखगात्स्वपातरहितात्क्रांत्यंशकाः केवलात् कर्णाप्तास्त्रियमाहता अथ गुरोश्चेल्लोचनाप्ताः पुनः । स्वांघ्र्यूना असृजोऽगुलादिकशरः पातोनदिक् स्यादसौ त्रिघ्नः स्यात्कलिकादिकः स्फुटतरस्तत्संस्कृतश्चापमः ॥ " भौमादिमें जिसका शीघ्रकर्ण करना हो उसका अंतिम शीघ्रकेन्द्र लेके ६ राशिसे अधिक होवे तो १२ राशिमें शुद्ध करना, षड्भागाल्पकेन्द्रके राशिपरिमित

मं	बु	बृ	शु	श	ग्रहाः
४०	२०	८०	६०	१००	पातांशाः
१	२	३	४	४	शीघ्रांकाः
१	२	४	१	७	भाज्यांकाः
१८	१५	१३	१९	१२	शीघ्रकर्णांकाः

कोष्ठमें जो शीघ्रांक लिखा है उसको मिला लेना और एकाधिक राशिपरिमित शीघ्रांकमें केन्द्रकी राशि छोडके अंशादि गुणने ३० से भाग लेना फल अंशादिमें शीघ्रांकका मिलान युक्त करना उसमें क्रमसे कोष्ठकमेंके

भाज्यांकसे भाग लेना जो मिले वह अंशादि जानना, वह क्रमसे कोष्ठकमेंका शीघ्रकर्णांकमेंसे कम करना जो शेष रहे वह ग्रहोंका अंशादि शीघ्रकर्ण होता है और जो बुध शुक्रके पातांशक कहे हैं उसमें अहर्गणोत्पन्न बुध शुक्र शीघ्रकेंद्र जो होवे वह उपरोक्त पातांशमें घटायके जो शेषांश रहे सो बुध और शुक्रके पातांश होते हैं। जिस ग्रहका शर बनाना हो उसका पातांश मंदस्पष्ट ग्रहमें घटायके पातोन ग्रह होता है, उसको अयनांश देने विना उससे क्रान्ति लाना उस क्रांतिको २३ से गुणके शीघ्रकर्णसे भाग देना अभीष्ट ग्रहका अंगुलादि शर होता है। पातोनग्रह उत्तरगोलमें होवे तो उत्तरशर दक्षिण गोलमें होवे तो दक्षिण शर जानना। वैसाही गुरुका शर करना होवे तो उक्त रीतिसे आये शरको २५ से भाग देना अंगुलादि शर होता है। भौममें उक्त प्रकार आये शरमेंसे उसका चतुर्थांश न्यून करनेसे मंगलका अंगुलादि शर होता है, अनंतर बनाया जो शर उसे ३ से गुनना कलात्मक शर होता है॥२२॥२३॥

दृष्टिसंस्कारः ।

सद्दृष्टिपादसहितमुग्रदृष्ट्यंघ्रिवर्जितम् ।
क्रमाद्दिकर्त्तनादीनां षड्बलैक्यं स्फुटं भवेत् ॥ २४ ॥

ग्रहपर जिस ग्रहकी दृष्टि होती है उसके बीचमें शुभग्रहोंकी दृष्टिका ऐक्य करके उसका चतुर्थांश लेना वह धन दृग्बल होता है और पापग्रहोंकी दृष्टिका ऐक्य करके उसका चतुर्थांश लेना वह ऋण दृग्बल होता है। इन धन एवं ऋण दृग्बलका अंतर करना वह स्पष्ट दृग्बल होता है। इस प्रकारसे स्थानबल १ दिग्बल २ कालबल ३ चेष्टाबल ४ निसर्गबल ५ इन पांचोंका योग करके उसमें छठा ६ दृग्बल जोडना वह षड्बलैक्य होता है, फलविचारमें यही काम आता है ॥ २४ ॥

भावबलसाधनम् ।

तन्वादिकानां बलमीशजं बलं नरश्चतुष्पादिह कीटनैराः ।
जायांबुलग्नांबरभोनितास्ते स्याद्दिग्बलं तुंगबलोक्तवत्तु ॥ २५ ॥

सद्दृष्टिपादान्वितमुग्रदृष्टिविवर्जितं दृष्टियुतं ज्ञगुर्वोः ।
तन्वादिकानामपि भाववीर्यं विचारणीयं विदुषा प्रयत्नात् ॥ २६ ॥

लग्नादि भावस्वामियोंका बलही भावबल होता है । मनुष्यराशि ३ । ६ । ७ । ११ और धनका पूर्वार्द्ध और कुंभ इनमें सप्तमभाव घटाय देना, चतुष्पद राशि १ । २ । ५ धनका उत्तरार्द्ध मकरका पूर्वार्द्ध इनमें चतुर्थ भाव घटाना कीटराशि कर्क वृश्चिकको लग्नमें घटाना । जलचर राशि मीन और मकरके पश्चिमार्द्धमेंसे दशम भाव घटाना तब शेष ६ राशिसे अधिक होवे तो १२ में शुद्ध करना षड्भावाल्प शेषसे दिग्बलमें पूर्वोक्त उच्चबलकी रीतिसे बल साधन करना तो भावदिग्बल होता है । तब यह दिग्बल भावबल (स्वामि-बल) में युक्त करना । भावपर जिन ग्रहोंकी दृष्टि हो उनमेंसे शुभग्रहोंकी दृष्टिका ऐक्य करके उसका चतुर्थांश लेना यह धन दृग्बल होता है, तथा पापग्रहोंकी दृष्टिका ऐक्य करके उसका चतुर्थांश लेना यह ऋण दृग्बल होता है । इन दोनों धन ऋण दृग्बलोंका अंतर करना तब स्पष्ट दृग्बल होता है । इस दृग्बलसे भावबलको संस्कृत अर्थात् धन होवे तो युक्त ऋण होवे तौ हीन करना तब उसको भावके ऊपरकी बुध गुरुकी दृष्टि युक्त करनी तो स्पष्ट भावबल होता है ॥ २५ ॥ २६ ॥

चेष्टोच्चरश्मयः ।

ये चेष्टतुंगाख्यबले रसघ्ने सैके भवेयुर्निजरश्मयस्ते ।
स्वतुंगचेष्टाबलघातमूलमिष्टाख्यमेकोनबलाच्च कष्टम् ॥ २७ ॥

चन्द्रमेंसे सूर्य घटानेसे चंद्रमाका और सायन सूर्यमें ३ राशि जोडनेसे सूर्यका चेष्टाकेन्द्र होता है । इस केंद्रसे रश्मि कष्टेष्ट साधनार्थ उच्चबलमें कही-हुई विधिसे चेष्टाबल बनाना । यह चेष्टाबल पूर्वका जैसा षड्बलार्थ नहीं है क्योंकि सूर्यका जो अयनबल है वही चेष्टाबल है इसलिये द्विगुण करना, चंद्रमाका जो पक्षबल वही चेष्टाबल है इसलिये दूना करना यह नियम है । अब इष्ट कष्ट बल एवं दृष्टिके लिये कहते हैं कि, ग्रहोंका जो चेष्टाबल और

उच्चबल उसको ६ से गुणाकर उसमें १ जोड देनेसे ग्रहोंकी उच्चरश्मि और चेष्टारश्मि होती है । ग्रहोंका चेष्टाबल और उच्चबलके गुणाकारका वर्गमूल निकालना वह ग्रहोंका इष्ट होता है । ग्रहोंका उच्चबल एवं चेष्टाबल अलग अलग एकमें घटानेसे शेष गुणाकारका वर्गमूल निकालना वह ग्रहोंका कष्ट होता है, इस इष्ट कष्टके अनुसार ग्रहोंके शुभाशुभ दशाफल जानना । ग्रहोंका षड्बलैक्य और ग्रहोंपर दृष्टिको पृथक् पृथक् ग्रहोंके इष्ट और कष्टसे गुन-देनेसे ग्रहोंका इष्टबल कष्टबल और इष्टदृष्टि कष्टदृष्टि होती हैं । यह वर्गमूल ग्रंथमें न होनेसे पाठकोंके सुगमार्थ अन्यत्रसे विधि लिखता हूं-" अंत्यं यावदिहाद्यांकादूर्ध्वतिर्यक्स्थरेखया । संज्ञा स्थानांककानां च विषमाख्य-समक्रमात् ॥ त्यक्त्वाऽन्त्याद्विषमात्कृतिं द्विगुणयेन्मूलं समे तद्धृते त्यक्त्वा लब्धकृतिं तदाद्यविषमाल्लब्धं द्विनिघ्नं न्यसेत् । पंक्त्यां पंक्तिहृते समेऽन्य-विषमां त्यक्त्वाऽऽप्तवर्गं फलं पंक्त्या तद्द्विगुणं न्यसेदिति मुहुः पंक्तेर्दलं स्यात् पदम् ॥ " अर्थात् जिस संख्याका मूल निकालना हो उसके दाहिने ओरसे विषमको ऊर्ध्व रेखासे और समको कुछ तिर्यक् रेखासे चिह्न करना जबतक अंककी समाप्ति न हो जावे तबतक सबके बाईं ओर जो अंतिम विषम हो उसमें जिस संख्याका वर्ग घटे वह घटाय देना और जिसका वर्ग घटे उस संख्याको मूल कहते हैं, उसे दूना करना उसका नाम पंक्ति है, उससे भाग देना जो विषमके पास सम हो उसमें लब्धि ऐसी लेनी कि, जिसका वर्ग आगेके विषममें घट जाय तो उस लब्धिका वर्ग आगेके विष-ममें घटाय देना, उसे दूना करके प्रथम जो पांक्तिसंज्ञक है उसमें आगे एक-स्थानमें बढायके रखना । यदि औरभी होवे तो उसी पांक्तिसे पुनः पूर्व-रीतिसे भाग देना, लब्धिका वर्ग आगेके विषममें घटाना, लब्धि दूनी पंक्तिमें रखना ऐसा अंक समाप्तिपर्यंत करते जाना। फिर उस पंक्तिका आधा करना वह मूल होता है ॥ " मूलावशेषकं सैकं षष्टिघ्नं विकलान्वितम् । द्विनिघ्नेन द्वियुक्तेन मूलेनाप्तं स्फुटं भवेत् ॥ " अर्थात् सावयव अंकके मूल निकाल-नेकी रीति कहते हैं-कि, जब मूल निःशेष न होवे तो शेषमें १ जोडके ६० से

गुनना इससे आया जो मूल उसको दूना करके २ युक्त करके भागदेना तब मूलका अवयव होता है। यह स्थूल रीति है ॥ "सैकेन द्विघ्नमूलेन भक्तं मूलावशेषकम् ॥ लब्धं तु तदधः स्थाप्यं मूलं सूक्ष्मतरं भवेत् ॥" अर्थात् सूक्ष्मरीति ऐसी है कि, जो मूल आया है उसे दूना करके तथा १ और जोडके मूलशेषमें भाग देना, लब्धिको उस मूलके नीचे रखना वह सूक्ष्ममूलके आसन्न होगा। एक और प्रकार है कि, जिसका मूल लेना हो उसे ६० से गुणके कला युक्त करना पुनः ६० से गुनना उसका मूल लेना उसे ६० से भाग देना तो ठीक मूल होगा। यदि ऊपरका अंक शून्य होवे तो नीचेके अंकको ६० से गुणके विकला युक्त करके मूल लेना उमसें ६० से भाग देना तब मूल होता है। रश्म्युदाहरण—सूर्यका चेष्टाबल ० । ४१ । ५८ इसे ६ से गुणके ४ । ११ । ४८ इसमें १ युक्त करके ५ । ११ । ४८ यह सूर्यकी चेष्टारश्मि हुई। सूर्यका उच्चबल ०।५८।५६ इसको ६ से गुना ५।५३। ३६ इसे १ जोड दिया ६ । ५३ । ३६ यह सूर्यकी उच्चरश्मि हुई । ऐसेही अन्य ग्रहोंकी भी जाननी। इष्टोदाहरण—सूर्यका चेष्टाबल ० । ४१ । ५८ को सूर्यके उच्चबल ० । ५८ । ५६ से गुना ० । ४१ । १३ इसका वर्गमूल ० । ४९ । ४३ यह सूर्यका इष्ट भया, ऐसेही अन्य ग्रहोंका भी जानना। कष्टोदाहरण—सूर्यका चेष्टाबल ० । ४१ । ५८ इसको १ में घटायके ० । १८ । २ सूर्यका उच्चबल ० । ५८ । ५६ इसको १ में घटायके ० । १ । ४ इससे ० । १८ । २ को गुणा ० । ० । १९ इसका वर्गमूल ० । ४ । २० यह सूर्यका कष्ट हुआ ऐसेही सबका जानना। इष्टकष्टबलोदाहरण—सूर्यका षड्बलैक्य ७ । ५१ । ५३ । ३० इसको सूर्यके इष्ट ० । ४९ । ४३ से गुना ६ । ३१ । ० । ५३ यह सूर्यका इष्टबल भया। सूर्यका कष्ट ० । ४ । २० इससे सूर्यके षड्बलैक्यको गुणके ० । ३४ । ४ । ५२ यह सूर्यका कष्टबल भया। ऐसेही चन्द्रादियोंका भी जानना। इष्टकष्टदृष्टिका उदाहरण—चंद्रमापर सूर्यकी दृष्टि ० । १८ । ५४ इसको चंद्र इष्ट ० । २६ । ३ से गुणा ० । ८ । १२

यह चंद्रमापर सूर्यकी इष्टदृष्टि हुई । चंद्रमाका कष्ट ० । ३२ । ४७ से सूर्यकी दृष्टिके ० । १८ । ५४ गुणके ० । १० । १९ यह कष्टदृष्टि भई । ऐसे सबकी इष्टदृष्टि कष्टदृष्टि जाननी ॥ २७ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुंजराजोदिते च ।
होरासारे शंभुहोराप्रकाशे वीर्याध्यायः पूर्ण आसीत्तृतीयः ॥ २८ ॥

इति श्रीपुंजराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे ग्रहबलसाधनाध्यायस्तृतीयः ॥ ३ ॥

इसका अर्थ पूर्वोक्तही है, यह ग्रहबलसाधनाध्याय तीसरा है ॥ २८ ॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां ग्रहबलसाधनाध्यायस्तृतीयः ॥ ३ ॥

अथ निषेकाध्यायः ४ ।

बलान्वितावर्कसितौ स्वभांशे पुंसां सदा चोपचये भवेताम् ।
तथाङ्गनानां शशिभूमिजौ वा तदा भवेद्गर्भसमुद्भवश्च ॥ १ ॥
स्त्रीणां विधौ चोपचये कुजेन दृष्टेऽपि गर्भग्रहणेऽपि योग्या ।
पुंसां तथा गीष्पतिना प्रदृष्टे स्त्रीपुंसयोर्योगमतोऽन्यथा च ॥ २ ॥
निषेकेऽस्तराशिर्यथा मैथुने च तथा तत्समः पूरुषो मैथुने स्यात् ।
असत्खेचरैः संयुते वीक्षितेऽस्ते सरोषः शुभैर्हास्ययुक्तो विलासः ॥३॥

अब निषेकाध्याय कहते हैं—पुरुषकी राशिसे बलवान् सूर्य शुक्र अपनी राशि वा अंशादिमें उपचयस्थानोंमें होवे तथा स्त्रीके चन्द्रमा मंगल बली एवं उपचयमें होवें तो ऐसे अवसरमें गर्भ रहता है॥ १ ॥ स्त्रियोंके उपचयमें चन्द्रमा मंगलसे दृष्ट हो उस समय स्त्री गर्भग्रहणयोग्या होती है तैसेही पुरुषोंके उपचयगत चंद्रमाको गुरु देखे ऐसे समयमें स्त्री पुरुषका संयोग गर्भयोग्य होता है अन्यथा नहीं ॥ २ ॥ आधानकालमें जैसी सप्तमराशि हो उसके अनुरूप पुरुष यद्वा स्त्रीकी प्रकृति होती है । अर्थात् सप्तम भावमें पापदृष्टि पापयोग होवे तो रोषकलहयुक्त और शुभग्रह योगदृष्टिसे हासविलासयुक्त होती है ॥ ३ ॥

गर्भधारणसमयः ।

स्त्रीणामृतुः षोडशकं निशानां तासां त्यजेत्सप्तकमत्र पूर्वम् ।
समे नराणां विषमेऽङ्गनानां गर्भा भवेयुः पुरुषस्य योगात् ॥ ४ ॥
शनैश्चरक्ष्मासुतशुक्रसूर्यैर्निजांशगैश्चोपचयस्थितैश्च ।
त्रिकोणलग्नोपगते सुरेज्ये वीर्यान्विते गर्भसमुद्भवः स्यात् ॥ ५ ॥
वीर्यान्विते लग्नगते सुरेज्ये त्रिकोणसंस्थे यदिवाऽत्र योगः ।
स्युर्निष्फलास्ते हतवीर्यकाणां वीणेवशब्दाः श्रववर्जितानाम् ॥ ६ ॥

स्त्रियोंकी ऋतु १६ रात्रिपर्यंत रहती है, उनमेंसे प्रथमकी ७ रात्रि छोडके संयोग करनेसे विषमदिनोंमें कन्या, सम दिनोंमें पुरुष गर्भमें पैदा होता है॥ ४॥ आधानलग्नसे वा प्रश्नलग्नसे शनि, मंगल, शुक्र और सूर्य अपने अंशकोंमें तथा उपचय ३।६।१०।११ में होवै तथा त्रिकोण ५।९ वा लग्नमें बृहस्पति होवै तो गर्भोत्पत्ति होवे ॥ ५ ॥ अथवा बलवान् बृहस्पति लग्नमें हो वा त्रिकोणमें होवे तौभी गर्भयोग होता है । ऐसे योग हतवीर्य (नपुंसकों) को बधिरको वीणाका शब्द जैसा निष्फल है ॥ ६ ॥

गर्भाधानसमयान्मातापित्रोररिष्टविचारः ।

यथा नृनार्योर्हि मनःस्वभावं रतौ तथा गर्भगतोऽत्र जन्तुः ।
द्यूने रवेर्मन्दकुजौ तु पुंसो रोगप्रदौ शीतरुचेःस्त्रियश्च ॥ ७ ॥
सूर्ये यमारांतगते तु पुंसः स्त्रियास्तथेन्दौ मृतिदौ तयोः स्तः ।
मन्देन वाऽऽरेण दिवाकरेन्दू युक्तौ च दृष्टौ निधनं तयोर्वा ॥ ८ ॥
स्वर्क्षस्थितौ रन्ध्रगतौ यमार्कौ प्रष्टुः स्त्रियं संदिशतश्च वंध्याम् ।
छिद्रस्थितौ चन्द्रबुधौ सदोषां वा काकवन्ध्यां वदतोऽङ्गनां वै ॥ ९ ॥

निषेकसमयमें स्त्रीपुरुषका मनःस्वभाव जैसा होवै वैसाही गर्भगत जीवभी होताहै । उस समयके लग्नसे यद्वा प्रश्नलग्नमें सूर्यसे सप्तम शनि मंगल होवैं तो पुरुषको और चंद्रमासे सप्तम होवै तो स्त्रीको रोग करते हैं ॥ ७ ॥ शनि मंगलके बीच सूर्य होवै तो पुरुषको और चंद्रमा होवै तो स्त्रीको मृत्यु देते

हैं। अथवा शनि मंगलसे युक्त सूर्य चन्द्रमा होवैं अथवा दृष्ट होवै तो स्त्री पुरुष दोनोंहीका मरण होताहै। इन योगोंके फल गर्भके दिनोंमें होतेहैं ॥ ८ ॥ प्रश्नलग्नसे अष्टमस्थानमें अपने राशिके शनि सूर्यमेंसे कोई होवे तो प्रष्टाकी स्त्री वांझ कहनी अर्थात् गर्भ नहीं है। चंद्र बुध अष्टम होवैं तो उसकी स्त्रीपर कोई प्रकार रोग, या भूत, देवता आदिका दोष है। जिससे गर्भ नहीं होता। अथवा काकवंध्या-(जिसका १ गर्भ होकर फिर न हो) कहनी ॥ ९ ॥

गर्भस्रावो रजोवर्णाश्च ।

मृतप्रजा छिद्रगयोः सितेज्ययोर्गर्भस्रवा भूमिसुतेऽष्टमस्थे। छिद्रेश्वरे छिद्रगते बलान्विते पुष्पं न विन्दत्यबला सुगर्भदम् ॥ १० ॥ सूर्येऽत्र कपिलं पुष्पं चन्द्रे श्वेतं कुजेऽरुणम् । बुधे विचित्रवर्णाभं गुरौ मांजिष्ठवर्णकम् ॥ ११ ॥ सिते श्वेतं शनौ कृष्णं राहौ जलसमं वदेत् । शून्येऽष्टमे स्वभावस्थं मार्गे पात्यं खले गृहे ॥१२॥ पुष्पमेति तदुष्णं तु भौमार्कौ शीतलं परे । कटिवातं वदेद्राहौ पीडाकरमहर्निशम् ॥ १३ ॥

अष्टमस्थानमें गुरु शुक्र होवैं तो प्रष्टाकी स्त्रीके पुत्र मरते होंगे, मंगल अष्टम होवै तो गर्भस्राव होते होंगे, अष्टमेश अष्टममें बलवान् होवे तो गर्भ देनेवाला उत्तम पुष्प (रज) हीन होवै ॥ १० ॥ अष्टमस्थानमें सूर्य होवै तो धूम्ररंगका, चंद्रमासे श्वेत, मंगलसे लाल, बुधसे अनेक वर्ण, बृहस्पतिसे मंजीठके रंगकासा ॥ ११ ॥ शुक्रसे श्वेत, शनिसे काला, राहुसे जलके समान रजका रंग कहना। अष्टममें कोई ग्रह न होवै तो पुष्पका रंग स्वाभाविक कहना। तहां पापराशि होवै तो मार्गमें गिराने योग्य अर्थात् बहुत रज होवै॥१२॥ मंगल सूर्यसे रज गरम उतरे, अन्य ग्रहोंसे शीतल होवै, राहु अष्टम होवै तो दिन रात पीडा करनेवाला कटिमें वातकारक रज होवै ॥ १३ ॥

दिनेऽर्कशुक्रौ पितृमातृसंज्ञौ नक्तं शनीन्दू सहजेऽन्यथा तत् । पितृव्यमातृष्वसृसंज्ञितौ च तयोः शुभावोजसमर्क्षगौ तौ ॥ १४ ॥

क्रूरान्तस्थौ लग्नचन्द्रौ निषेके क्रूरैः खेटैः संयुतौ वाथ दृष्टौ ।
सौम्यैश्चैतौ वीक्षितौ नैव युक्तौ नारी गर्भेणान्विता मृत्युमेति ॥१५॥
चन्द्रात्तनोर्वा यदि पापखेटैर्बन्धुस्थितैर्भूमिसुतेऽष्टमस्थे ।
यद्वा कुजार्कौ व्ययबन्धुसंस्थौ क्षीणे निशेशे मृतिरुक्तवत्स्यात्॥१६॥
शुक्रो यदा मन्दयुतोऽथ दृष्टश्चन्द्रात्सुतस्थः स तु मातृहन्ता ।
सपापकः कर्मगतोऽथ वा चेद्दिवाकरो मातुरनिष्टदः स्यात् ॥ १७ ॥
क्षीणे विधौ पापयुते च मृत्युस्तदन्यथाऽर्के जनकस्य नूनम् ।
आधिर्भवेत्पापनिरीक्षितौ तौ मिश्रैर्विमिश्रं शुभदैः शुभं स्यात्॥१८॥
सप्तमस्थे दिवानाथे लग्नस्थे धरणीसुते ।
शस्त्रप्रहारान्निधनं जायते नात्र संशयः ॥ १९ ॥

दिनके आधानमें सूर्य पिता, शनि ताऊ (चाचा), शुक्र माता, चन्द्रमा माताकी बहिन । रातके आधानमें शनि पिता, सूर्य ताऊ (चाचा), चन्द्रमा माता, शुक्र मांकी बहिन ऐसी संज्ञायें इस लियेहैं कि, दिनके आधानमें सूर्य विषम राशिमें हो तो पिताको शुभ, रात्रिकेमें पितृव्यको शुभ, समराशिमें होवै तो दिनके गर्भमें माताको, रातमें मांकी बहिनको शुभ, शनि विषम राशिमें हो तो रातके गर्भमें पिताको शुभ, दिनमें पितृव्यको शुभ, चंद्रमा समराशिमें हो तो रातमें माताको, दिनमें मांकी बहिनको शुभ, शुक्र दिनके गर्भमें सम राशिमें माताको, रातमें माताकी बहिनको शुभ इत्यादि । उक्त राशि तथा दिनरातके विपरीत होनेमें शुभाशुभ फलभी विपरीत होता है ॥ १४ ॥ आधानलग्नमें लग्न चन्द्रमा पापग्रहोंके बीचमें हों पापग्रहोंसे युक्त वा दृष्ट हों शुभग्रहोंसे युक्त दृष्ट न हो तो वह स्त्री गर्भसहित मरजावे ॥ १५ ॥ लग्नसे वा चन्द्रमासे चतुर्थ स्थानमें पापग्रह होवै, अष्टममें मंगल हो अथवा मंगल सूर्य १२ । ४ भावमें होवें, चन्द्रमा क्षीण होवै तो भी गर्भसहित स्त्री मरे ॥ १६ ॥ यदि शुक्र शनिसे युक्त वा दृष्ट हो और चन्द्रमासे पंचम होवे तो माताका मारनेवाला होता है । सूर्य पापयुक्त दशम भावमें माताको अनिष्ट देनेवाला होता है ॥ १७ ॥ क्षीण चन्द्रमा

पापयुक्त होवै तो माताको मृत्यु होवै । उसके विपरीत फल अर्थात् सूर्यसे पिताकी मृत्यु होती है। सूर्य चन्द्रमा पापदृष्ट होवैं तो माता पिताको मानसी व्यथा होवै । शुभ पापोंसे युक्त दृष्ट होनेमें फलभी मिश्रित होता है ॥ १८ ॥ सप्तममें सूर्य लग्नमें मंगल होवै तो निःसंदेह उक्त मृत्यू शस्त्रप्रहारसे होवै॥ १९॥

मासि मासिं गर्भगतजीवावयवा मासेश्वराश्च ।

कललं च घनं शाखास्थित्वग्रोमोद्गमः स्मृतिः ।
भुक्तिरुद्वेगसंभूतिर्मासेष्वाधानतः क्रमात् ॥ २० ॥
शुक्रारजीवार्कशशीयमज्ञलग्नेशशीतांशुदिवाकराः स्युः ।
मासेश्वरास्तैः कलुषैः प्रपीडा पातो हतैर्वीर्ययुतैश्च पुष्टिः ॥२१॥
वीर्याढ्यः स्यान्मासपः स्वोच्चगो वा वृद्धिर्गर्भस्यैव चेन्निम्नवीर्यः ।
अस्तं यातो नीचगः पापयुक्तस्तत्तन्मासे जायते गर्भपातः ॥ २२ ॥

गर्भ प्रथममासमें रज वीर्य मिलके पतला रहता है, दूसरे मासमें गाढा होकर पिण्डाकार होता है, तीसरेमें उसमें हाथ पैर आदि अवयव निकलते हैं, चौथेमें हड्डी पैदा होती है, पांचवेंमें त्वचा (चमडा) बनता है, छठेमें रोम जमते हैं, सातवेंमे हस्त पादादि हिलाने लगता है । आठवेंमें माताके किये भोजनका असर उसपर होता है, नवममें चलनेकी नाईं हस्तपाद संचालन और दशममें प्रसव होता है ॥ २० ॥ शुक्र, मंगल, बृहस्पति, सूर्य, चंद्रमा, शनि, बुध, लग्नेश, चंद्रमा और सूर्य ये गर्भके १० महीनोंके मासाधिपति हैं। जिस महीनेका स्वामी निर्बल हो उसमें पीडा गर्भको होती है । जिस महीनेका स्वामी पीडित है उसमें गर्भपात और जिसका स्वामी वीर्यवान् हो उसमें पुष्टि होती है ॥ २१ ॥ जिस महीनेका स्वामी बलवान् अथवा उच्चका हो उसमें गर्भकी वृद्धि होती है, जिस महीनेका स्वामी हीनवीर्य अस्तंगत नीचगत पापयुक्त हो उसमें गर्भपात होता है ॥ २२ ॥

गर्भस्रावयोगः ।

यमारौ लग्नगौ स्त्रीणां गर्भस्रावस्तथा विधौ ।
तद्भे दृष्टे तद्युते वा गर्भपातः प्रजायते ॥ २३ ॥

शनि मंगल लग्नमें होवैं तो स्त्रियोंका गर्भस्राव होवै चन्द्रमाभी उस भावमें हो अथवा उसे देखे तो गर्भपात होता है ॥ २३ ॥

पुंस्त्रीयमलाद्युत्पत्तियोगाः ।

ओजर्क्षकांशोपगतौ रवीज्यौ सूतौ च पुंजन्मकरौ निषेके ।
समर्क्षकांशोपगताः सितेन्दुधरात्मजाः स्त्रीजननप्रदाः स्युः ॥२४॥
गुर्वर्कयोश्चापनृयुग्मभांशे ज्ञदृष्टयोः पुंयुगुलं तदा स्यात् ।
तद्वच्च कन्याझषगैः सितारकलाधरैः स्त्रीयुगलं सवीर्यैः ॥ २५ ॥

सूर्य गुरु आधानकालमें विषम राशि विषमांशकोंमें होवैं तो पुरुष जन्मेगा, शुक्र चन्द्रमा मंगल समराशि समांशकोंमें होवैं तो कन्याका जन्म करते हैं ॥ २४ गुरु सूर्य ९।३ राशि अंशकोंमें बुधसे दृष्ट होवैं तो दो पुत्र (यमल) होवैं । ऐसेही कन्या ६ मीन १२ राशिके अंशकमें शुक्र मंगल, चंद्रमा होवैं तथा बलवान् होवैं तो २ कन्या (यमलकन्या) होंगी॥ २५॥

क्लीबयोगाः ।

ओजेऽब्जलग्ने क्षितिजेन दृष्टे समौजगौ वा द्विजराजसौम्यौ ।
ओजांशके भार्गवलग्नसूर्या वीर्यान्विताः क्लीबजनुःकराः स्युः ॥२६॥
समोजभस्थावपि लग्नसूर्यौ परस्परं चेत्परिपश्यतो वा ।
कुजोष्णगू वा शनिसोमजौ वा तद्वच्च तौ क्लीबकरौ निरुक्तौ ॥ २७ ॥

विषमराशि लग्न और चंद्रमा मंगलसे दृष्ट हो अथवा चंद्रमा समराशिमें बुध विषमराशिमें हो, दोनों परस्पर देखे अथवा शुक्र सूर्य लग्न बलवान् हो तथा विषम नवांशकोंमें हो तो ये योग गर्भसे नपुंसक उत्पन्न करनेवाले होते हैं ॥ २६ ॥ लग्न सम राशि सूर्य विषम राशिमें हों परस्पर देखते हों अथवा ऐसेही मंगल सूर्य अथवा चंद्रमा बुध होवैं तो भी नपुंसक उत्पन्न करनेवाले कहे हैं ॥ २७ ॥

गर्भे त्र्यधिकजन्तवः सर्पवेष्टितश्च ।

धनुर्विलग्नेऽन्त्यलवे प्रदृष्टे सौम्येन सौरेण च वीर्ययुक्तैः ।
धन्वांशकस्थैरखिलैश्च खेटैर्गर्भो भवेत्र्यूर्द्ध्वकजंतुकश्च ॥ २८ ॥

भौमस्य द्रेष्काणगते हिमांशौ पापान्विते पापविलग्नके च ।
सौम्यग्रहेरायधनोपयातैः सर्पेण संवेष्टितगर्भ एव ॥ २९ ॥

लग्नमें धनका अन्त्य नवांशक हो बुध शनि उसे देखे, अन्य संपूर्ण ग्रह बलवान् हों तथा सभी धननवांशकमें होवैं तो गर्भसे तीनसे अधिक जीव उत्पन्न होंगे ॥ २८ ॥ चंद्रमा मंगलके द्रेष्काणमें पापयुक्त होवै, पाप राशि लग्नमें हो और शुभग्रह लाभ धनभावमें होवैं तो बालक सर्प वा सर्पसे वेष्टित होगा॥२९॥

सगर्भस्त्रीमरणयोगः ।

असद्ग्रहैर्व्ययस्थितैः शुभस्य दृष्टिवर्जितैः ।
निषेककालिके वदेन्मृतिर्बुधैस्तु योषितः ॥ ३० ॥

पापग्रह व्ययभावमें हों शुभग्रह उनको न देखें ऐसा योग आधानकाल वा प्रश्नमें होवै तो गर्भसहित स्त्रीका मरण होना पंडितोंने कहा है ॥ ३० ॥

वामनशिरोबाहुपादादिरहितयोगाः ।

सूर्येन्दुमन्दैर्मकरेऽन्त्यलग्ने दृष्टे भवेद्वामनकः सपापैः ।
धीधर्मलग्नोपगतैर्दृकाणैर्भुजांघ्रिशीर्षैश्च विवर्जितः स्यात् ॥ ३१ ॥
विलग्नद्रेष्काणगते महीजे निरीक्षिते सूर्यशनींदुभिश्च ।
कुर्यादशीर्षं सुतभे विबाहुं धर्मे विपादं न शुभेक्षितश्चेत् ॥ ३२ ॥

मकर लग्न अंत्यनवांशक हो उसे सूर्य, चंद्रमा, शनि देखें तो वामन ५२ अंगुल शरीरवाला होवै । लग्नमें पापयुत द्रेष्काण दूसरा हो सू० चं० श० देखें तो उसके हाथ न होवैं और यदि लग्नमें पापयुक्त तीसरा द्रेष्काण तथा सू० चं० शनिसे दृष्ट होवैं तो उसके पैर न होवैं । प्रथम द्रेष्काण सू० चं० श० दृष्ट होवै तो उसका शिर न होवै॥ ३१ ॥ इसीको दूसरे प्रकार कहते हैं कि, लग्न द्रेष्काणमें मंगल हो उसे सू० श० चन्द्रमा देखें तो वह द्रेष्काण प्रथम होवै तो शिररहित, दूसरा होवै तो बाहुरहित और तीसरा होवै तो पादरहित हो परन्तु उसपर शुभदृष्टि न होगी जब पूरा फल होगा ॥ ३२ ॥

पितृमातृग्रहद्रेष्काणवशात्फले न्यूनाधिकत्वं
गर्भसुखद्विगुणसुखादियोगाः ।

आदौ हि पूर्णं ददतु स्वकीयं फलं द्युरात्र्योः पितृमातृखेटौ । मध्ये च मध्यं चरमेऽतितुच्छं शुभाशुभं वा परिकल्पनीयम् ॥ ३३ ॥ लग्नेन्दुतः केन्द्रधनत्रिकोणसंस्थैः शुभैरुयायगतैरसौम्यैः । गर्भस्तदानीं सुखसंयुतः स्याद्वीर्यान्वितास्तिग्ममयूखदृष्ट्या ॥ ३४ ॥ बुधे त्रिकोणगे शेषैर्बलहीनैर्नभश्चरैः । मुखपादकरैरेव द्विगुणः स्यात्तदा शिशुः ॥ ३५ ॥

जो पहिले पितृमातृसंज्ञक ग्रह कहे हैं उनका शुभाशुभ फल प्रथम द्रेष्काणमें हों तो पूर्ण, मध्य द्रेष्काणमें मध्यम और तीसरेमें तुच्छ होता है। ऐसी कल्पना करना ॥ ३३ ॥ लग्न एवं चन्द्रमासे केंद्र १ । ४ । ७ । १० धन २ त्रिकोण ५ । ९ भावोंमें शुभ ग्रह हों और ३ । ११ में पापग्रह होवैं उनपर सूर्यकी दृष्टि होवै तो बलवान् और सुखयुक्त रहकर जन्मेगा ॥ ३४ ॥ बुध त्रिकोण ५ । ९ में हो अन्यग्रह बलरहित होवै तो बालकके मुख वा पाद वा हाथ द्विगुण होवै । बहुधा ६ अंगुलियां हाथ वा पैरमें देखनेमें आती हैं ॥ ३५ ॥

भांशे लग्नस्थेऽर्कसूनौ द्युनस्थे मंदे चेत्स्यात्सूतिरब्दत्रयेण । प्रालेयांशौ तद्वदेवं निषेके संसूतिः स्याद्वत्सरैर्भानुसंख्यैः ॥ ३६ ॥ उक्ता योगाः खेचराणां खलानां पापास्ते स्युः सौम्यदृष्टाश्च युक्ताः । सत्खेटानां सत्फलं वा विदध्युर्मिश्रैर्मिश्रं होरिकार्यैर्विचिंत्यम् ॥ ३७ ॥

लग्नमें शनिकी राशि वा नवांशक हो और शनि सप्तम होवै तो गर्भप्रसव तीन वर्षमें होगा । चंद्रमाकी राशि नवांशक लग्नमें और चंद्रमा सप्तम होवै तो १२ वर्षमें प्रसव होगा । जो योग पापग्रहकृत हैं वे पापफल देते हैं, जो शुभग्रहकृत योग हैं या शुभग्रहोंसे दृष्ट युत हैं वे शुभफल देते हैं । मिश्रितमें फलभी मिश्रित, श्रेष्ठ ज्योतिषी विचारें । यहांके विशेषोपयोगी प्रश्नयोग कन्या पुत्र होनेके योग सूतिकाध्यायमें देखें ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुंजराजोदिते च ।
होरासारे शंभुहोराप्रकाशे गर्भाधानाध्याय आसीत्सुपूर्णः ॥ ३८ ॥

इति श्रीपुञ्जराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाश आधानाध्यायश्चतुर्थः ॥ ४ ॥

अध्यायश्लोकका अर्थ पूर्ववत् है । यह आधानाध्याय पूर्ण भया॥३८॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायामाधानाध्यायश्चतुर्थः ॥ ४ ॥

अथ सूतिकाध्यायः ५ ।

फलादेश इष्टकाल ठीक होनेपर ठीक मिलता है अन्यथा ज्योतिषीका उपहास मात्र होता है । यह समय जन्मकालहीमें ठीक होगया तो ठीक है नहीं तो इष्टशोधनादि अनेक युक्तियोंसे भी ठीक नहीं होता । प्रसूतिकालमें स्त्रीलोग कन्या पुत्र वा जीवित मृतकका निश्चय करके बाहर कहती हैं इसके बीचमें कुछ समय व्यतीत होजाता है तहां ज्योतिषी अपने अनुमानमे अंतर देके इष्टकाल रखते हैं । कोई कोई चलती वा कर्णाकर्णी सुनी प्रथाके आरूढ लोग ठीक समय जन्म होनेही मात्रमें बाहर सुनाने और घडी घण्टा ठीक हुए परभी अपनी गढंत कल्पना करके कुछ न कुछ घटायही देते हैं, कोई कहते हैं कि, शीर्षोदयमें इष्टकाल मानना चाहिये, उस शीर्षोदयके पीछे कुछ समय बाद प्रसव होकर बाहर खबर मिलती है तब अपने अंदाजसे कुछ समय घटाय देते हैं परंतु उनको यह ज्ञान तो होताही नहीं है कि, शीर्षोदयसे कितने देरीमें जन्म भया है, शीर्षोदय इष्टकाल मानना एक स्थूल परंपरासे मानते हैं उसमें विचार संशोधन युक्ति प्रमाणानुमानादिक आवश्यक हैं । आयुप्रमाण श्वासापर है । श्वासा पूरे होनेपर शरीर रहतेभी मर गया कहते हैं ऐसेही जन्ममें प्रथम श्वासा आयुका आरंभ है, विना श्वासाका शरीर मृतकतुल्य है, इसलिये बालकके प्रथम श्वासा भरनेपर जन्मेष्ट मानना ठीक है । काकतालीय न्यायसे शीर्षोदय होनेपर शीघ्रही प्रसव पूरा हो और श्वासाभी उसी क्षणमें लेने लगे तब तो ठीक हो सकता है । अन्यथा ठीक नहीं मिलता । इस विषयमें ज्योतिष, वैदिक, डाक्टरी,

धर्मशास्त्र, अनुमान, प्रत्यक्षप्रमाण, अपना अनुभव (तजुर्बा) आदियोंसे मैं मुक्तकंठसे कहताहूं कि, प्रथम श्वासा लेनेका समयही ठीक इष्टकाल है अन्य नहीं। इस विषयमें कुछ व्याख्या मैंने बृहज्जातक माहीधरी भा०टी० सूतिकाध्यायके आदिमें भी लिखी है। विद्वान् शास्त्रज्ञ अनुभवी महाशय इसमें विचार करके देखलेवैं ॥

आधानात्प्रश्नाद्वा जन्मसमयज्ञानम् ।

सम्यग्ज्ञाते नूनमाधानकाले योगानुक्तांश्चिंतयेज्जातकज्ञः ।
यद्वा सर्वे प्रश्नतः सूतिकालात्प्रोक्तास्ते वै तत्फलज्ञैर्महद्भिः॥१॥
प्रश्नभे कुमुदिनीपतिस्थिते सप्तमं वदति बादरायणः ।
गर्ग आह भगवान्नृजन्मभं पञ्चमं तु मुनिसंमतं त्विदम् ॥ २ ॥

आधानसमय अच्छे प्रकार जानके जातकज्ञने उक्त योग उसी लग्नसे विचारै। वह समय ज्ञात न होवै तो प्रश्न लग्नसे अथवा जन्मलग्नसे ज्योतिष फला देशको जाननेवाले श्रेष्ठ ज्योतिषियें कहैं ॥ १ ॥ प्रश्नमें जिस राशिका चंद्रमा है उससे सप्तम राशिके चंद्रमामें जन्म बादरायण कहते हैं। गर्ग कहते हैं कि, पंचम राशिके चन्द्रमामें जन्म होता है, यह मत मुनिसंमत है ॥२॥

तत्कालशीतांशुनवांशकाच्च जामित्रगे शीतकरे प्रसूतिः ।
लग्नस्य नन्दांशपतेस्तु यद्वा क्षेत्रं प्रयाते हिमगौ प्रसूतिः॥३॥
यस्मिन्द्विषट्कांशगते विधौ तद्राशिस्थितेऽब्जे पुरतः प्रसूतिः ।
रसातलेशो बलसंयुते च गर्भस्तदानीं सुखसंयुतः स्यात् ॥४॥
यश्चोदयेंद्वोः सबलस्तु तस्य द्विषट्कभागैः सहितोऽत्र राशिः ।
तावद्धि तद्राशिगते मृगांके भवेत्प्रसूतिः पुरतश्च केचित्॥५॥
यावानुदेति द्युनिशोर्नवांशस्तावद्गते घस्रनिशोर्जनुः स्यात् ।
द्युरात्रिसंज्ञाः कथितास्तु पूर्वं तद्राशितः कालविनिश्चयः
स्यात् । आधानके चरगृहे दशमे प्रसूतिस्त्वेकादशे स्थिर-
गृहेऽप्युभयेऽर्कमासे ॥ ६ ॥

गर्भकुण्डलीका विधान कहते हैं कि, आधान वा प्रश्नलग्नमें चंद्रमा जिस नवांशकमें है उससे सप्तम राशिगत चन्द्रमामें जन्म होगा। नवांशक जितना भुक्त हुआ है उससे अनुपात त्रैराशिक आदिसे प्रसूतिकालिक चंद्रमाके अंश वा नक्षत्र भुक्त निकलता है उसीसे इष्टकालभी मिल जाता है। अथवा लग्नके नवांशपतिके राशिगत चन्द्रमामें जन्म होता है ॥ ३ ॥ तीसरा प्रकार है कि, आधान वा प्रश्नमें चंद्रमा जिस द्वादशांशकमें है उस राशिके चंद्र-मामें आगे जन्म कहना। इसमें भी आचार्यांतरका मत है कि, चन्द्रमा जितने द्वादशांशपर है मेषादि गणनासे उतनेही संख्यक राशिके चंद्रमामें जन्म होगा। अथवा जिस राशिपर चन्द्रमा है उसीसे गिनकर जितने द्वादशांशपा चंद्रमा है उतनीही राशिके चंद्रमामें जन्म होगा। नक्षत्रभुक्त निकालनेका अनुपात है कि, एक चंद्रराशिकी १८०० लिप्ता होती हैं, चंद्रमाने कितनी कला द्वादशांशककी भोगी हैं कितनी बाकी हैं, इनका त्रैराशिक करनेसे नक्षत्रभुक्त मिलता है उससे इष्टकाल तब ग्रहकुण्डली बन जाती है। यहां ४ प्रकारसे कहा है, जहां दो तीन प्रकारसे एकवाक्यता हो उसे ठीक समझना। नक्षत्रभुक्त निकालनेका उदाहरण है कि, प्रश्नसमयमें सूर्य स्पष्ट ११। २८। २४। २५ ग० ५८। ४५। चंद्रस्पष्ट १। ९। ११। २६, ल० ४। ५। ५९। १४, चंद्रस्पष्टमें द्वादशांश चौथा है वृषसे गिनकर चौथे सिंहके चंद्रमामें नवम वा दशम मासमें जन्म होगा। नक्षत्र भुक्तके लिये चंद्रस्पष्टमें गत द्वादशांश ३ के ७। ३० अंशादि भुक्त हुए यह चंद्रस्पष्टमें घटाया शेष १। ४१। २६ अंशकी कला १०१। २६ एक राशिकी कला १८०० से गुणा १८२५८० एक द्वादशांशककी कला १५० से भाग लिया लब्धि १२१७। १२ यह नक्षत्रप्रमाण पिंड है। इसमें एक नक्षत्रप्रमाण ८०० घटाया शेष ४१७। १२ इसमें चरण-प्रमाण २०० घटाया २१७। १२ पुनः चरणप्रमाण घटाया शेष १७। १२ प्रथम एक नक्षत्रप्रमाण घटेमें सिंहके चंद्रमामें मघानक्षत्र घटा तब २ चरणप्रमाण घटनेसे पूर्वाफाल्गुनीके २ चरण घटे अब कोई नहीं घटता

शेष अंक १७ । १२ में पूर्वाफाल्गुनीके तीसरे चरणका भुक्त निकालना है शेषको चरणप्रमाण घटी १५ से गुना २०० से भाग लिया लाभ १।२ घट्यादि तीसरे चरणकी भुक्त हुई यह भुक्त पंचांगमें किस समय मिलता है यह जन्म समय होगा । प्रश्नलग्नमें चतुर्थभावेश बलवान् होवै तो सुखसे गर्भ प्रसव होवै ॥ ४ ॥ किसीका मत है कि, लग्न और चन्द्रमामेंसे जो विशेष बलवान् हो उस तत्काल द्वादशांशमें जो राशि है उस राशिके चंद्रमामें जन्म होगा ॥ ५ ॥ तत्काल लग्नमें वर्त्तमान नवांशक दिवाबली हो तो दिनमें, रात्रिबली होवै तो रात्रिमें जन्म कहना । दिन रात्रि संज्ञायें पाहिले कही हैं, उनके अनुसार कालका निश्चय होता है । उदाहरण— लग्नमें नवांशक वृष रात्रिबली है तो जन्म रात्रिमें होगा । इष्टकालके लिये ल० स्प० ४ । ५ । ५९ । १४ में भुक्त नवांश ३ । २० अंशादि घटाया २ । ३९ । १४ इसकी कला १५९ । १४ लग्ननवांशक रात्रिबली होनेसे रात्रिमान २९ । ६ से गुणा ४६३३ चरणकलाप्रमाण २०० से भागलिया २३ । १० यह रात्रिका इष्टकाल भया। जहां दिवाबली अंश होनेसे दिनका जन्म ज्ञात हो तहां दिनमानसे गुणना। जो ऊपर नवम वा दशम मासमें जन्म होना लिखा है सो प्रश्नसमयमें गर्भ कितने मासका है इसके जाननेके लिये कितनीही युक्तियां हैं उनमेंसे एक यह है कि " लग्नाद्वाङ्गाद्बली शुक्रो यावद्गेहेऽथ तन्मिता " लग्नसे वा लग्नसे जिस स्थानमें शुक्र हो उससे जैसे गर्भका मिलान मिलता हो उतने महीनेका गर्भ जानना इससे ९ । १० मास गिन लेना दूसरा प्रकार अगले श्लोकमें कहेंगे आधानकालमें लग्न चर राशि होवै तो दशम मासमें, स्थिरराशि होवै तो ग्यारहवेंमें, द्विस्वभाव होवे तो बारहवेंमें प्रसव होगा । आधान लग्न ज्ञात न होनेमें प्रश्नलग्न प्रश्ननवांशकमें जो बलवान् हो उससे कहना । प्रसूति नवम दशम मासमें होती है अधिक समय योगांतरसे कहना ॥ ६ ॥

मस्तकाद्युत्पत्त्यादि ।

शीर्षोदयैश्च शिरसाप्युभये कराभ्यां पृष्ठोदयैश्च जननं भवतीह पद्भ्याम् ॥ ७ ॥ लग्नेषु सिंहाजवृषस्थितेषु तत्स्थे

कुजे सूर्यसुते च यद्वा । साकोंऽर्कजो भांशसमे च गात्रे स्यादर्भको नालकवेष्टितांगः ॥ ८ ॥

शीर्षोदय लग्न होवै तो शिरसे, उभयोदयसे हाथोंसे और पृष्ठोदयसे पैरोंसे बालकका जन्म होता है ॥ ७ ॥ लग्नमें ५ । १ । २ राशिमेंसे कोई हो उसमें मंगल वा सूर्य हो अथवा सूर्यसहित शनि होवै तो जिस राशि अंशकमें है उसके समान राश्यंगमें नालवेष्टित होगा ॥ ८ ॥

यमलसदन्तादियोगा दन्तोत्पत्तिप्रश्नानि च ।

रवौ चतुष्पदस्थिते द्विदेहसंस्थितैः परैः । बलान्वितैस्तदा यमौ स्त एव कोशवेष्टितौ ॥ ९ ॥ सौम्यस्य भांशोपगतौ यमारौ बालं सदंतं कुरुतः प्रसूतौ । कुलीरलग्ने हिमगौ तदा चेन्मंदारदृष्टे स तु कुब्जकः स्यात् ॥ १० ॥ दन्तैर्युतश्चेत्प्रथमेऽर्भकः स्यात्स्वयं विनश्येदनुजं द्वितीये । हन्यात्तृतीये भगिनीं चतुर्थे स्वमातरं बाणमितेऽग्रजातम् ॥ ११ ॥ षष्ठादिमासेषु शुभं फलं स्यात्साकं यदा जन्म भवेत्तु दन्तैः । तस्योर्द्ध्वपंक्तौ प्रथमं द्विजाः स्युः स्वमातरं स्वं च निहंति तातम् ॥ १२ ॥

सूर्य चतुष्पदराशिमें हो, अन्य ग्रह बलवान् एवं द्विस्वभाव राशियोंमें होवैं तो यमल (दो बालक) नालवेष्टित होवैं ॥ ९ ॥ शनि, मंगल, बुधके राशि नवांशकमें होवै तो बालकके गर्भहीसे दांत जमे होवैं । कर्कका चन्द्रमा लग्नमें हो उसे शनि, मंगल देखें तो कुबडा होवै ॥ १० ॥ अब मासपरके दंतोत्पत्तिफल कहते हैं कि, पहिले महीनेसे दांत जमें तो बालक आपही न रहे, दूसरेमें भाई न ठहरे, तीसरेमें बहिन, चौथेमें माता, पांचवेंमें ज्येष्ठभ्राता न रहै ॥ ११ ॥ छठे आदि मासोंमें दंत जमें तो सुख होवै । यदि दंतसहित जन्म हो वा प्रथम ऊपरकी पंक्तिमें दांत आवैं तो अपने माता पिताकी हानि करता है ॥ १२ ॥

मूकपंगुकरयोगादिः ।

कर्कालियंत्यांतगैः पापैर्भान्त्यस्थैर्वा वृषे विधौ । मूकः पापे-
क्षिते सद्भिर्दृष्टे गीः स्याच्चिरेण तु ॥ १३ ॥ लग्ने झषे चंद्रयुते
च यद्वा सिंहाजचापांत्यगतैश्च पापैः । वृषे विधावर्कयमार-
दृष्टे पंगुर्नरः स्याच्छुभदृष्टिहीने ॥ १४ ॥

कर्क, वृश्चिक, मीनके अंत्य नवांशकोंमें पापग्रह हों अथवा राश्यंतमें हों, चंद्रमा वृषका हो, उसपर पापदृष्टि होवै तो गूंगा होवै । शुभग्रहकी दृष्टि होवै तो वाणी बहुत दिनोंमें बोले ॥ १३ ॥ लग्न मीन हो उसमें चन्द्रमा हो तथा ५ । १ । ९ के अंत्यांशगत पाप हों अथवा वृषका चन्द्रमा सूर्य, शनि, मंगलसे दृष्ट हो शुभग्रहकी दृष्टि न होवै तो मनुष्य (पंगु) पैरहीन वा लंगडा होगा ॥ १४ ॥

जडान्धबुद्बुदाक्षयोगाः ।

क्रूरग्रहैः संधिगतैः शुभालोकनवर्जितैः ।
हिमांशुसाहितैर्बालो जडः स्यान्नात्र संशयः ॥ १५ ॥
सिंहे विलग्ने रविशीतभानू मन्दारदृष्टौ कुरुतो नरांधम् ।
शुभाशुभैर्बुद्बुदनेत्रयुग्मं वामं हिनस्त्यब्ज इनोऽन्त्यगोऽन्यत् ॥ १६ ॥

पापग्रह संधियोंमें शुभग्रहोंसे अदृष्ट हों, चंद्रमाभी उनके साथ होवै तो बालक निश्चय (जड) मूर्ख होवै ॥ १५ ॥ सिंहलग्नमें सूर्य और चन्द्रमा स्थित हों तथा शनि मंगलसे दृष्ट हों तो मनुष्य अंधा होवै । शुभाशुभ दोनोंकी योगदृष्टि होवै तो नेत्र चंचल अथवा कातर नेत्र होवै । यह योग सूर्य चन्द्रमा दोनोंसे दोनों नेत्रोंके लिये है । यदि चंद्रमाहीका योग होवै तो वामनेत्र, सूर्यका यह योग होवै तो दाहिना काणा वा कातर होगा ॥ १६ ॥

विलोमजन्मनालरहितादियोगः ।

विलग्नगेऽर्कजे विधौ व्यये च नीचगे रवौ ।
विलोमजन्म भूमिजे सभार्गवे त्वनालकः ॥ १७ ॥

विलग्नभांशाधिपतौ विलग्ने विलोमसंस्थे सति विग्रहं स्यात् ।
क्लेशान्वितं व्यस्तगतं च जन्म शुभैः प्रदृष्टे च ततः सुखं हि ॥ १८ ॥

लग्नमें शनि बारहवाँ चन्द्रमा और सूर्य नीचराशि वा अंशकमें होवै तो प्रसव उलटा होवै । मंगल, शुक्रसे सहित होवै तो नालवेष्टित न होवै ॥ १७ ॥ लग्नेश लग्ननवांशेश लग्नमें वक्रगति होवै तो कलह होवै । कोई वक्र कोई मार्ग अर्थात् लग्नकर्तरीमें होवै तो प्रसव क्लेशसहित होवै । यदि शुभग्रहकी दृष्टिभी होवै तो सुखपूर्वक होवै ॥ १८ ॥

जारजातयोगाः ।

न प्राग्विलग्नं च विधुं प्रपश्येज्जीवोऽर्कयुक्तं सितगुं च यद्वा ।
सार्के विधौ पापयुतेऽथवा चेत्स्याज्जारजातस्य तदा हि जन्म ॥ १९ ॥
सुरेज्यदृष्टे तनुगेऽथवाऽब्जे देवेज्यवर्गोज्झित एष चन्द्रे ।
सपापकेऽर्केण युतेऽथ चन्द्रे स्याज्जारजातस्य तदा हि जन्म ॥ २० ॥
नीचोपगाः सूर्यसुरेज्यचन्द्राः कुर्वंति ते जन्मनि जारजातम् ।
यद्वा तनौ सूर्यसुतेन दृष्टाः शुभैश्च चंद्रोदयभार्गवाख्याः ॥ २१ ॥

लग्न एवं चंद्रमाको गुरु न देखें अथवा सूर्य चंद्रमा साथ हों उन्हें गुरु न देखें अथवा सूर्यसहित चंद्रमा पापयुक्त होवै तो जारसे उत्पन्नका जन्म जानना ॥ १९ ॥ अथवा चंद्रमा लग्नमें गुरुदृष्ट हो गुरुके राश्यादिवर्गसे रहित होवै अथवा पापसहित सूर्ययुत चंद्रमा होवै तो वही फल जानना ॥ २० ॥ सूर्य गुरु चन्द्रमा नीचके हों तो जारजात पैदा करते हैं । यद्वा लग्नमें शनि हो और चन्द्रमा, लग्न, शुक्र शुभदृष्ट न होवैं तौभी वही फल (जारजात) कहना ॥ २१ ॥

जारजयोगभंगः ।

चंद्रे गुरुक्षेत्रगतेऽथवा चेत्सुरेज्ययुक्तेऽन्यगृहस्थितेऽब्जे ।
गुरोर्दृकाणेऽथ नवांशके वा न जारजातस्य भवेत्प्रसूतिः ॥ २२ ॥

उक्त योगोंमें परिहार कहते हैं, चंद्रमा गुरुक्षेत्रमें हो अथवा गुरुसे युक्त हो अथवा अन्यगृहमें गुरुके द्रेष्काणमें वा नवांशकमें होवै तो जारजात न होवै ॥ २२ ॥

कारागारादिषु जन्मयोगाः ।

लग्नेन्दुभ्यां द्वादशे सूर्यपुत्रे गुप्त्यां सूतिर्वीक्षिते पापखेटैः । लग्ने कर्के वृश्चिके मन्दयुक्ते गर्तायां स्याच्चन्द्रयुक्ते प्रसूतिः ॥ २३ ॥ लग्ने सौम्ये वेश्मगे सौम्यखेटे प्रालेयांशौ स्वर्क्षगे पूर्णदेहे । आये लग्ने द्यूनगे वा मृगांके गर्भो नूनं सूयते नावसंस्थः ॥ २४ ॥ लग्ने नीरे मंदयुते दृष्टे चन्द्रार्कचन्द्रजैः । ऊषरे देवतागारे क्रीडागेहे क्रमात्सवः ॥२५॥ पुंलग्नभे भानुसुते श्मशाने शैल्पिके गृहे । भूपालये च गोष्ठे च देवागारे मखालये ॥ २६ ॥ वीक्षिते भौमसौम्येन्दुशुक्रार्कगुरुभिः क्रमात् । प्रसवोऽयं समाख्यातः सत्यलल्लादिसूरिभिः ॥ २७ ॥

लग्न चन्द्रमासे बारहवां शनि पापदृष्ट होवै तो कैदमें प्रसव होवै । कर्क वा वृश्चिक लग्नमें चन्द्रमासहित शनि होवै तो गढे (खाई) में होवै ॥२३॥ लग्नमें बुध, चौथा कोई शुभग्रह हो चंद्रमा अपनी राशि ४ का तथा पूर्ण हो अथवा ऐसा चंद्रमा ११ । १ । ७ मेंसे किसीमें होवै तो निश्चय वह नाव (नौका जहाज) में जन्मता है ॥ २४ ॥ जलचरराशि लग्नमें शनि चन्द्रदृष्ट होवै तो ऊषर भूमिमें, सूर्यसे दृष्ट हो तो देवतालयमें, बुधसे दृष्ट होवै तो खेलके स्थानमें क्रमसे प्रसव कहना ॥ २५ ॥ पुरुषराशिलग्नमें शनि, भौम दृष्ट होवै तो श्मशानमें, बुधदृष्टिसे शिल्प (कारीगरी) के घरमें, चन्द्रदृष्टिसे राजघरमें, शुक्रदृष्टिसे गोशालामें, सूर्यदृष्टिसे देवतालयमें, गुरुदृष्टिसे यज्ञशालामें प्रसव होता है ऐसा सत्यलल्लादि पण्डितोंने कहा है ॥ २६ ॥ २७ ॥

चरे भांशचारेण तुल्ये पथि स्यात्प्रसूतिः स्थिरे स्वर्क्षगैः खेचरेंद्रैः । निजांशस्थितैः स्वीयगेहेऽथ वीर्यात्फलं भांशयोर्होरिकेंद्रा वदंति ॥ २८ ॥ यदैकराशिगौ लग्नचन्द्रौ दृष्टिविवर्जितौ । विजने प्रसवः प्रोक्तो मणित्थाद्यैश्च सूरिभिः ॥ २९ ॥ ताताम्बाभवनेषु तद्बलवशान्नीचास्थितैः साधुभिः सूतिः स्यात्तरुशालकादिषु तदा यद्वा तरोराश्रितः ।

मंदर्क्षांशगते विधौ हिबुकगे नीरांशकर्क्षेऽथवा मंदेनैव युते-
क्षिते तमसि वा भूमौ च नीचस्थिते ॥ ३० ॥

लग्न चरराशि और चरांशकी होवै तो मार्गमें प्रसव, स्थिरराशि और नवांशकमें तथा स्थिरराशि वा स्वराशि स्वांशकी ग्रहोंमें अपने घरमें प्रसव वर्गोत्तमादि बलसे राश्यंशफल श्रेष्ठ ज्योतिषी कहते हैं ॥ २८ ॥ यदि लग्न चंद्रमा एक राशिमें हों उन्हें कोईभी ग्रह न देखे तो जहाँ कोई मनुष्य न हो ऐसे स्थानमें प्रसव होना माणित्थादि पंडितोंने कहा है ॥ २९ ॥ पितृसंज्ञक ग्रह सूर्य शनि बलवान् हों तो पिता वा उसके भाइयोंके घरमें जन्म, यदि मातृसंज्ञक ग्रह चं० शु० बलवान् हों तो माता वा उसकी बहिनके घरमें प्रसव कहना। शुभग्रह नीचराशियोंमें होवें तो वृक्षके नीचे वा लकडीके घरमें, चंद्रमा शनिके राशि और अंशकमें चौथा हो अथवा जलचर राशिमें वा जलचर राशिके अंशकमें हो और शनिहीसे युक्त वा दृष्ट हो अथवा नीचका हो तो इन प्रत्येक योगोंमें अंधेरेमें जन्म कहना अथवा भूमिमें जन्म जानना। इनमें विशेष विचार है कि, सूर्य बलवान् मंगलसे दृष्ट होवै तो उक्त योगोंके हुएमेंभी दीपसहित घरमें जन्म होगा अंधेरेमें नहीं। जो ३से ऊपर ग्रह नीचराशियोंमें हो अथवा लग्न वा चतुर्थमें नीचका चन्द्रमा हों तों भूमिमें जन्म कहना॥ ३० ॥

सुखप्रसवपुत्रकन्योत्पत्तिविचारः ।

शुभग्रहैः स्वबंधुगैः सुखेन संयुतः सवः। सुतांकसप्तमस्थितै-
रसद्ग्रहैस्तु कष्टतः॥ ३१ ॥ ओजभे च विषमांशकोपगैर्लग्न-
चन्द्रगुरुभास्करैर्नरः । स्यात्तथापि समभे समांशगैः स्त्री
निषेकसमयप्रसूतिषु ॥ ३२ ॥ लग्नं विनौजर्क्षगतो यदि
स्यात्सौरोऽपि पुंजन्मकरः सवीर्यः । बलान्वितो व्योमचरो
नराख्यश्चतुष्टये वा नरजन्म कृत्स्यात् ॥ ३३ ॥

शुभग्रह दूसरे और चौथे भावोंमें होवैं तो प्रसव सुखपूर्वक होवै। पञ्चम, नवम, सप्तम भावोंमें पापग्रह होवैं तो कष्टसे प्रसव होवै ॥ ३१ ॥ विषमराशि विषमांशकमें लग्न, चंद्र, गुरु, सूर्य, होवैं तो पुरुष होगा। स्त्रीराशि स्त्रीनवांशकोंमें उक्त ग्रह आधान प्रश्नकालमें होवैं तो कन्या जन्म होता है ॥ ३२ ॥

लग्न विना विषम राशिमें शनिभी पुरुषका जन्म करता है, यदि बलवान् हो । पुरुषग्रह बलवान् होकर केन्द्रमें होवै तो पुत्र जन्म करता है । ये योग आधान वा प्रश्नमें विचारणीय हैं । जन्मपत्री पुरुषकी वा स्त्रीकी है ऐसे प्रश्नमें भी काम आते हैं इसलिये इस अध्यायमें लिखे हैं ॥ ३३ ॥

पितृपरोक्षादिजन्मयोगाः ।

क्रूरर्क्षगाः क्रूरखगा यदि स्युर्दिवामणेर्धर्मसुतास्तसंस्थाः ।
स्थिरादिभेऽर्के जनकोऽन्यदेशे बद्धः स्वभावाद्विषयादि-
केषु ॥ ३४ ॥ न प्राग्विलग्नं यदि पश्यतीन्दुर्ज्ञशुक्रयोर्मध्य-
गतेऽथवाऽब्जे । यमोदये वा कुसुतेऽस्तसंस्थे पितुः परो-
क्षस्य तदा हि जन्म ॥ ३५ ॥ तनुं न वीक्षिते विधौ चरर्क्ष-
कांशसंधिगे । परोक्षसंस्थितस्य वा पितुर्जनुस्तदा भवेत् ॥३६॥

यदि क्रूरग्रह क्रूरराशियोंमें सूर्यसे ९ । ५ । ७ भावोंमें होवैं तो बालकका पिता उस समयमें बंधनमें होगा । इसमें विशेष विचार है कि, सूर्य स्थिर राशिमें होवै तो स्वदेशमें, चरराशिमें होवै तो विदेशमें और द्विस्वभावमें होवै तो मार्गमें बालकका पिता बालकके जन्ममें बंधनमें होगा ॥ ३४ ॥ लग्नको यदि चन्द्रमा न देखे अथवा चन्द्रमा बुध शुक्रके बीचमें होवैं अथवा शनि लग्नमें मंगल सप्तममें होवै तो जन्ममें पिता परोक्ष होगा ॥३५॥ चंद्रमा चरराशि और चरांशककी संधिमें हो लग्नको न देखे तौभी पिता परोक्ष होगा ॥ ३६ ॥

पित्रोरारिष्टयोगाः ।

भौमेक्षितावर्कसितौ द्युरात्र्योस्तदा वदेत्तत्पितरं व्यतीतम् ।
चरर्क्षगौ भौमयुतेक्षितौ वा तदान्यदेशे जनकस्य मृत्युः ॥ ३७ ॥
व्ययाष्टमस्थितौ खलौ विलग्नपे बलोज्झिते ।
तुरीयधर्मगौ हि वा पिता रुगर्दितः स वै ॥ ३८ ॥
जनौ रवेर्बलास्थिते शनौ तदीक्षिते यदा ।
पिता रुगर्दितस्तदा कुजेक्षितेऽथवा भवेत् ॥ ३९ ॥

दिनके जन्ममें सूर्य, रात्रि जन्ममें शुक्र, मंगलसे दृष्ट हो तो जन्ममें पिता व्यतीत जानना अथवा सूर्य, शुक्र चरराशिमें मंगलसे युक्त वा दृष्ट होवे तो उसके पिताकी परदेशमें मृत्यु हुई होगी ॥ ३७ ॥ पापग्रह १२।८ भावोंमें होवैं लग्नेश बलरहित होवे अथवा पापग्रह ४ । ८ भावोंमें होवै तो बालकका पिता रोगसे पीडित होगा ॥ ३८ ॥ जन्ममें सूर्यसे शनि बलवान् होवै तथा सूर्यको शनि अथवा मंगल देखे तो पिता रोगपीडित होगा ॥ ३९ ॥

मन्दस्त्रिकोणगश्चन्द्रात्कुर्यान्मातृवधं निशि । दिवसे पापसंयुक्तो दानवेज्यस्तथा कुजः ॥ ४० ॥ सुखास्तसंस्थैर्यदि पापखेटैर्मातुः कलिर्वैन्दुयुतैश्च मृत्युः । सूर्याद्यमारौ प्रसवेऽस्तसंस्थौ शुभैरदृष्टौ जनकस्य रिष्टम् ॥ ४१ ॥ इन्दुतो नवमे द्यूने नैधने पापखेचराः । अखिलाः पितरं हन्युर्बालं जातं समातृकम् ॥ ४२ ॥

चंद्रमासे त्रिकोण ५।९ में शनि होवे और रात्रिका जन्म होवै तो माताका वध करता है । तथा दिवाजन्ममें शुक्र, मंगल पापयुत होवैं तौभी वही फल है ॥ ४० ॥ यदि ४ । ७ भावोंमें पापग्रह होवै तो माता कलहसे कष्टी होवै उनके साथ चंद्रमा भी होवै तो माताकी मृत्यु होवै । सूर्यसे सप्तम भावमें शनि मंगल जन्ममें होवैं उनको शुभग्रह न देखैं तो पिताको अरिष्ट होवै ॥ ॥ ४१ ॥ चन्द्रमासे ९।७।८ भावोंमें सभी पापग्रह होवैं तो उत्पन्न बालकको मातापितासहित मृत्यु देते हैं ॥ ४२ ॥

भौमान्वितः सूर्यसुतश्चरर्क्षे भवेन्निशा जन्म हि मानवस्य । तदा व्यतीतस्तु पिता प्रवाच्यो ह्यशंकितस्तद्विषयांतरे च ॥ ४३ ॥ यत्र तत्र स्थितो भानुर्मन्दाराभ्यां समन्वितः । पितरं जन्मतः पूर्वं निवृत्तं नात्र संशयः ॥ ४४ ॥ लग्नाष्टारिपुजामित्ररिष्फस्थैः पापखेचरैः । सुतेन सार्द्धं जननी म्रियते नात्र संशयः ॥ ४५ ॥ षष्ठांत्यगेषु पापेषु माता जीवेन्न वै सुतः । लग्नाष्टसप्तमस्थेषु माता नश्येन्न वै सुतः ॥ ४६ ॥

चरराशिमें शनि, मंगल युक्त हो और रात्रिका जन्म होवै तो मनुष्यका पिता निस्संदेह परदेशमें मरा कहना ॥४३॥ जिस किसी स्थानमें सूर्य, शनि मंगलसे युक्त होवै तो जन्मसे पहिलेही पिता निवृत्त होगया ऐसा निःसंदेह फल है ॥ ४४ ॥ पापग्रह १ । ८ । ६ । ७ । १२ भावोंमें होवैं तो निःसंदेह पुत्रसहित माता मरे ॥ ४५ ॥ यदि पापग्रह ६ । १२ में होवें तो माता बचे । बालक न बचे । यदि १ । ८ । ७ में होवैं तो माता मरे बालक नहीं मरे ॥ ४६ ॥

बालकस्य मातृत्यागादियोगाः ।

मन्दाराभ्यामस्तगे वा त्रिकोणे शुभ्रांशौ चेत्त्यज्यतेऽसौ जनन्या । दीर्घायुः स्याज्जीवदृष्टे सुखाढ्यः पापैर्दृष्टे संयुते वाप्यनायुः ॥४७॥

पापैर्दृष्टे शशिनि तनुगे सप्तमस्थे महीजे त्यक्तो नश्येद्रविज-कुजयोर्लग्नलाभास्तगे वा । सौम्यैर्दृष्टे शशिनि यदि वा तत्स-मानस्य हस्ते याति क्रूरैर्जननसमयेऽप्यन्यहस्ते गतायुः ॥४८ ॥

चंद्रमा शनि मंगलसे सप्तम वा त्रिकोण ५ । ९ भावमें होवै तो वह बालक मातासे त्यागा जावै । उसपर बृहस्पतिकी दृष्टिभी होवै तो त्यागा हुआ बालक दीर्घायु एवं सुखयुक्त होवै । यदि पापग्रहोंसे युक्त वा दृष्ट होवै तो त्यक्त बालक मरजावै ॥ ४७ ॥ पापदृष्ट चन्द्रमा लग्नमें मंगल सप्तममें होवै अथवा शनि और मंगलसे १ । ११ । ७ भावोंमेंसे किसीमें होवै तो बालक त्यक्त होकर मरजावै । यदि चंद्रमापर शुभग्रहकी दृष्टि होवै तो जिस ग्रहकी दृष्टि है उसके समान जातकवाले मनुष्यके हाथमें बालक जावै यदि पापदृष्टि होवै तो अन्यके हाथमेंभी जाकर मरजावै ॥४८॥

उपसूतिकाविचारः ।

लग्नाज्जांतरसंस्थितैर्दिविचरैस्तुल्या वदेत्सूतिका बाह्याभ्यं-तरदृश्यकोदितदलेऽप्येवं तु मध्यास्थिताः । पूर्वार्धदृश्यदलेऽपि वा ह्यनुदिते चक्रस्य सौम्या शुभा रूपाढ्या खलखेचरैस्तु मलिना मिश्रैर्विमिश्रा बुधैः ॥ ४९ ॥ वक्रोच्चसंस्थैस्त्रिगुणाः

स्वराशौ दृक्के नवांशे द्विगुणाः स्वबुद्ध्या । नीचास्तगेऽर्द्धं ह्युपसूतिकाख्या होराविदैर्द्वित्रिगुणे सकृद्वा ॥ ५० ॥ अज-झषे द्विमिता वृषकुंभयोः श्रुतिमिता हयकर्कटके शराः । मकरयुग्मतुलाधरकन्यकास्वलिहरौ त्रिमिता ह्युपसूतिकाः॥५१॥

उपसूतिका (सूतिकाके साथ अन्य स्त्रियाँ) कहते हैं कि, लग्न और चन्द्रमाके बीच जितने ग्रह हों उतनी अन्यस्त्री होंगी । जो ग्रह मध्यमें हैं उनके तुल्य रूप, वर्ण, जाति आदि उन स्त्रियोंकी जाननी । लग्नसे सप्तम पर्यंत दृश्यार्द्धमें जितने ग्रह है उतनी स्त्री भीतर और अदृश्यार्द्धमें जितने हों उतनी बाहर कहनी । दृश्यादृश्यभागमें शुभग्रहोंसे सुंदर रूपवान्, पाप ग्रहोंसे मलिन, मिश्रितमें मिश्रित रूपादिवाली होती हैं ॥ ४९ ॥ उन ग्रहोंमेंसे जो वक्रगति उच्चराशिमें हो उनसे तिगुण, अपनी राशि नवांश द्रेष्काणवालोंसे द्विगुण, नीच अस्तंगत ग्रहोंसे आधे, जो स्वांश-कादिमें हो तथा उच्च वक्रमेंभी होवै तो यहां द्विगुण त्रिगुण दोनों प्राप्त हैं इसलिये जो एक बृहद्गुणक (तीन) हैं उससे एकही बार गुणकर होराको जाननेवाले कहें ॥ ५० ॥ प्रकारांतर कहते हैं कि, लग्न १ । १२ से दो, वृष कुंभ २ । ११ से चार, धन कर्क ९ । ४ से ५, मकर, मिथुन तुला कन्या वृश्चिक सिंहसे ३ उपसूतिका कहनी ॥ ५१ ॥

सूतीगृहप्रसवदिक् ।

तुलालिकर्काजघटैस्तु सूतिस्थितिर्भवेच्छक्रककुप्क्रमेण । मृगास्यहयौर्वृषभेण चापि कन्यानृयुग्मांत्यशरासनाख्यैः ॥५२ ॥ द्वौ द्वावजाद्याः किल राशयः स्युः प्राच्यादितो द्व्यंगगृहं विदिक्षु । शय्या प्रवाच्याप्यथवा यथा स्याद्वा ह्रुस्तथैवेति वदन्ति केचित्॥५३॥

घरके किस ओर प्रसव हुआ इसमें कहते हैं कि–७ । ८ । ४ । १ । ११ लग्नसे पूर्व, १० । ५ से दक्षिण, २ से पश्चिम और ३ । ६ । ९ । १२ से उत्तरकी ओर कहना ॥ ५२ ॥ शय्या यद्वा पूर्वोक्त घरसे सूतिकास्थानका प्रकारांतर है कि, मेषादि दो दो राशि पूर्वादि दिशाओंमें, द्विस्वभावराशि

विदिशाओंमें स्थापित कर शय्या कहनी। जैसे १। २ पूर्व, ३ आग्नेय, ४। ५ दक्षिण, ६ नैर्ऋत्य, ७। ८ पश्चिम, ९ वायव्य, १०। ११ उत्तर, १२ ईशानमें गृहवास्तुसे सूतिकास्थान जानना। कोई कहते हैं कि; राहुसेभी ऐसाही विचार करना ॥ ५३ ॥

मातुर्वस्त्रभोजनबालकरोदनादिः।

मातृवस्त्रं वदेत्तत्र वा विलग्ननवांशपात् । तुर्येशवशतो वाच्यं सूतेः प्राङ्मातृभोजनम् ॥ ५४ ॥ कठिनं मधुरं रूक्षं लेह्यपेयादिकं मृदु। शोषणाम्लं गुडं दुग्धं विचित्रं स्वल्पभोजनम् ॥ ५५ ॥ वटकाद्यं बहुरसं पेयादि मधुरं हिमम् । क्रोधादिना कदशनं सूर्यादेः श्लोकपादतः ॥ ५६ ॥ मेषत्रिपंचाननचापलग्ने विस्मृत्य सर्वं बहु रोदिति स्म । अल्पं घटस्त्रीवणिजे परेषु रुदन्ति नो ज्ञानबलस्य तत्त्वात् ॥ ५७ ॥

लग्नमें जो नवांकश है उसके स्वामीके अनुसार माताका वस्त्र कहना, जैसे सूर्यसे पुराना और दृढ, चंद्रमासे श्वेत नवीन, मंगलसे लाल दग्ध और फटा, बुधसे रंगीन, गुरुसे बहुमूल्य, शुक्रसे चित्रविचित्र, शनिसे मैला पुराना, राहु केतुसेभी ऐसाही जानना। चतुर्थेशके वशसे प्रसूतिसे पहिले माताका भोजन कहना। कटुक, लवण आदि ग्रहोंके रस पहिले कहे हैं॥ ५४ ॥ और विशेष ग्रहानुरूप भोजन कहते हैं कि, चतुर्थेश सूर्य होवे तो कठिन मधुर और रूखा पदार्थ, चंद्रमा हो तो चटनी पकनेके वस्तु (दूध आदि) और कोमल पदार्थ। मंगलसे सूखा खट्टा, गुड, दूध, बुधसे चित्रविचित्र (खिचडी आदि) और थोडा भोजन हो। गुरुसे वटक आदि अनेक रस पीने योग्य दूध आदि मधुर और ठंढा पदार्थ, शनिसे पेवश कदन्न भक्षण अर्थात् कोदों सामा आदि ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ जन्मलग्नमें १। ३। ५। ९ राशि हो तो बालक जन्मतेही सब काम भूलके बहुत रोता रहे, ११। ६। ७ लग्नसे थोडा रोवै, २। ४। ८। १०। १२ में ज्ञानबलकी सत्तासे जैसा थोडाभी नहीं रोवै ॥ ५७ ॥

खट्वाविचारः ।

शीर्षस्यांघ्रिर्दक्षिणो विक्रमर्क्षं वामः पादो द्वादशर्क्षं विचिन्त्यः । एवं षष्ठं धर्मभं दक्षवामौ खट्वांगानां निर्णयोऽत्र स्वबुद्ध्या ॥ ५८ ॥ खट्वांगे यत्र पापिष्ठास्तत्र घातस्तु तत्समः । वक्तव्यो दैवविदुषा विनतत्वं द्विरूपभैः ॥ ५९ ॥

खाट (चारपाई) जो सूतिकाके बैठनेकी है उसके शिरहानेका दाहिना पैर तीसरा भाव, वाम पाद द्वितीय भाव जानना, छठा भाव पायंतका दाहिना पावा, नवम भाव वाम अन्यभावोंसे पट्टी (डंडी) आदि और अंग जानने ॥ ५८ ॥ जिस भावमें पापग्रह हों उसके सदृश अंगमें घात कील आदि, जहां द्विस्वभाव राशि है वा मिश्रित ग्रह हो तहां त्वचा सहित वा कच्ची लकडी सडी टेढी आदि होगी ॥ ५९ ॥

गृहद्वारादिविचारः ।

द्वारं केन्द्रस्थैर्ग्रहैर्वीर्ययुक्तैर्ज्ञेयं नैवं चेत्तदा लग्नगेहात् । दृश्यो भागो वाममङ्गं निरुक्तं यो वाऽदृश्यो दक्षिणांगं मुनीन्द्रैः ॥ ६० ॥ लग्नोक्तदिशि खट्वायाः शिरोऽङ्गानि धिया ततः । लग्नं पश्यंति ये खेटास्तद्वस्त्रास्तरणं विदुः ॥ ६१ ॥

सूतिकागृहका द्वार बलवान् केन्द्रगत ग्रहकी दिशामें जानना, केन्द्रमें कोई ग्रह न हो तो लग्नराशिकी दिशामें कहना, वह ग्रह दृश्यार्द्धमें होवै तो उस दिशाके वामभागमें, अदृश्यार्द्धमें होवै तो दक्षिणभागमें द्वार मुनीन्द्रोंने कहा है ॥ ६० ॥ लग्नकी जो पूर्वोक्त दिशा है उस दिशामें खाटका शिर अन्य राशियोंसे अन्य अंग अपनी बुद्धिसे कहने जो ग्रह लग्नको देखते हों उनके जैसे वस्त्र एवं विस्तर कहे हैं ॥ ६१ ॥

सूतिकागृहे दीपादिविचारः ।

दीपः सूर्यादिन्दुतः स्नेहमानं वर्त्तिर्लग्नादेवमुक्तं पुराणैः । ज्ञातुं शक्यं मंदधीभिर्न तस्मात्सच्छिष्याणां प्रीतये प्रोच्यतेऽत्र ॥ ६२ ॥ खट्वांगे स्याद्भास्करो यत्र तत्र वाच्यो दीपश्चालित-

श्चंचलर्क्षे। वारंवारं द्व्यंगभे चैकवारं तत्रस्थो वै स्यात्स्थिरर्क्षे तु दीपः ॥ ६३ ॥ पूर्णं तैलं दीपकं पूर्वदृक्के चन्द्रे मध्येऽर्द्धं त्रिभागं तृतीये। वर्तिर्लग्नात्तद्वदेवं प्रकल्प्य वाच्यं सम्यग्बुद्धिमद्भिः स्वबुद्ध्या ॥ ६४ ॥

सूर्यसे सूतिकागृहका दीप, चन्द्रमासे तेलका प्रमाण, लग्नसे बत्तीका मान पूर्वाचार्योंने कहा है। मंदबुद्धिवालेसे जानना अशक्य है इस कारण सत् शिष्योंकी प्रसन्नताके लिये यहां प्रकट कहा जाता है ॥ ६२ ॥ जैसा विचार खाटके अंगोंका कहा है ऐसीही सूर्यसे दीपका स्थानादि जानना, जैसे सूर्य चर राशिमें होवे तो दीप चलायमान था, लालटैन जैसी चलायमान रहती है ऐसेही बार बार चलायमान दीप रहता है। द्विस्वभावमें होवे तो एक जगहसे दूसरी जगह रक्खा गया, स्थिर राशिमें होवे तो यथास्थापित होगा ऐसेही सूर्य बलवान् होवे तो दीप नवीन, बहुमूल्य, निर्बलसे पुराना, फूटा आदि बलाबलके अनुसार कहना ॥ ६३ ॥ चन्द्रमा पूर्वद्रेष्काणमें हो तो दीप तेलसे पूर्ण, मध्यद्रेष्काणमें आधा, तीसरेमें तीसरा भाग था। ऐसाही विचार लग्नसे बत्तीकाभी अपनी बुद्धिसे बुद्धिमान् करें ॥ ६४ ॥

बालकस्य शिरोदिगादि तन्मातृकष्टकालश्च।

पूर्वादिषु शिरो ज्ञेयं मेषसिंहधनुः क्रमात्। शीर्षांशे प्रसवः शीर्ष्णा कराभ्यामुभयोदये ॥ ६५ ॥ पद्भ्यां पृष्ठोदये वाच्यो बालकस्य न संशयः। चन्द्रात्तुर्येऽस्तगे पापे मातुः क्लेशं वदेद्बुधः ॥६६॥ पापाधिकारे तु घटी मुहूर्त्तः स्याद्दृष्टिपातेऽथ युतौ तु यामः। द्यूने चतुर्थे प्रविचार्य सम्यग्वाच्याऽतिपीडा जनने जनन्याः ॥ ६७ ॥

बालकका शिर १।५।९ में पूर्व, २।६।१० में दक्षिण, ३।७।११ में पश्चिम, ४।८।१२ में उत्तरके ओर कहना, शीर्षोदय राशि और अंश लग्नमें होवे तो प्रथम शिरसे उत्पन्न, उभयोदयी १२ से हाथोंसे ॥ ६५ ॥ पृष्ठोदयमें पैरोंसे बालकका प्रसव निःसंदेह कहना। चन्द्रमासे ४।७ भावोंमें पापग्रह होवैं तो पंडित प्रसवमें माताको क्लेश कहैं ॥ ६६ ॥ लग्न चंद्रमासे

४।७ स्थानोंमें पापका अधिकार होवे तो १ घटी, पापदृष्टि होवै तो २ घटी, पापयोग होवै तो १ प्रहरपर्यंत माताको अतिपीडा विचारके कहनी ॥ ६७॥

बहुदीपकतृणज्योतिर्गृहविचारः ।

बलान्वितेऽर्के कुजवीक्षिते चेत्सौरेण वा स्युर्बहवः प्रदीपाः । व्ययस्थितैरन्यखगैः सवीर्यैर्ज्योतिस्तृणैः स्याद्ददतीति गर्गः ॥ ६८ ॥ संस्कारितं तु जरितं रविजे कुजे तु दग्धं च काष्ठसहितं न दृढं खरांशौ । रम्यं नवं भृगुसुते शशिजे विचित्रं सोमे नवं च धिषणे सुदृढं गृहं स्यात् ॥ ६९ ॥ चेत्तुंगादधिकोनकेऽथ परमोच्चांशस्थिते वा गुरौ खस्थे द्वित्रिचतुर्थभूमिकमदः कुर्यात्तदा मन्दिरम् । एवं वीर्ययुते शरासनगते तद्वात्रिशालं गृहं चेदन्येषु समर्थकेषु सुधिया वाच्यं द्विशालं तदा॥७०॥

जन्ममें सूर्य बलवान् हो उसे यदि मंगल देखे तो उस घरमें बहुत दीप (रोश्नी) थीं और अन्य ग्रह बलवान् होकर व्ययस्थानमें होवें तथा शनि उन्हें देखे तो घास फूंस आदिकी रोश्नी उस घरमें होगी॥ ६८॥ सूतिकागृहके लिये कहते हैं कि, शनि बलवान् होवै तो जीर्ण घर जला हुआ पीछे मरम्मत किया हुआ है, ऐसेही मंगलसे दग्ध, सूर्यसे अदृढ (पक्का न) हो और काष्ठयुक्त, शुक्रसे रमणीय एवं नवीन, बुधसे चित्र विचित्र, चन्द्रमासे नवीन, बृहस्पतिसे खूब मजबूत घर होगा ॥ ६९ ॥ और यदि बृहस्पति अपने उच्चके कम ज्यादा समीप हो वा परमोच्चांशहीमें होकर दशम भावमें होवै तो क्रमसे द्विशाल त्रिशाल, चतुःशाल अर्थात् दोमंजिला, तिमंजिला, चौमंजिला यद्वा द्विगुणादि कोठडियोंवाला मंदिर करता है । इसी प्रकार बलवान् बृहस्पति धनका दशममें होवै तो वह तिपुरा वा तिमंजिला, यद्वा चौडाईमें ३ दीवारवाला होगा । अन्य द्विस्वभाव राशिमें बलवान् बृहस्पति दशमस्थ होवै तो द्विशाल (दोमंजिला वा दोहरी कोठरीका) होगा ॥ ७० ॥

बालस्य स्वरूपविचारः ।

बलान्वितेऽर्के सदृशश्च पित्रा मात्रा समः शीतरुचौ सवीर्ये । त्रिंशांशके यस्य गतो विवस्वान् वाच्यो गुणस्तत्खचरस्य

नूनम् ॥ ७१ ॥ लग्नस्थनंदलवपेन समस्तु मूर्त्या यो वा ग्रहो बलयुतस्तु तथैव मूर्त्तिः। वर्णो विधोर्नवलवेशसमस्तु बुद्धा जातिं कुलं च विषयान् प्रवदेच्च वर्णम् ॥ ७२ ॥

सूर्य बलवान् होवै तो बालक पिताके तुल्य रूपादिमें होगा, चंद्रमा बली होवै तो माताके सदृश होगा। सूर्य जिसके त्रिंशांशकमें है उसके गुणसदृश पूर्वोक्त (ग्रहभेदाध्यायोक्त) ग्रहस्वरूपादिके तुल्य गुणयुक्त बालकका शरीर होगा ॥ ७१ ॥ लग्नमें जिसका नवांशक है उसके तुल्य बालककी मूर्ति होगी अथवा बलवान् ग्रहके सदृश होगी। रंग चन्द्रमा नवांशेशतुल्य होता है। जाति, कुल, देशको जानकर फल कहने। जैसे डोमजातियोंमें बहुधा काले रंगके, पंजाबमें गोरे, पूर्वमें काले, भुटानमें चिपिट नासिका, अंग्रेजोंमें सब गौर वर्ण स्वभावसेही होते हैं ॥ ७२ ॥

लग्नद्रेष्काणवशादङ्गविभागः।

शीर्षं दृशौ श्रुतियुगं च नसाकपोलौ तस्माद्धनुश्च वदनं प्रथमे दृकाणे। कण्ठांशकौ भुजयुगं किल पार्श्ववक्षः क्रोडं च नाभिरिति वा कथितं द्वितीये ॥७३॥ बस्तिश्च शिश्नगुदके वृषणावुरू च जानुद्वयं च जघने चरणौ तृतीये। चक्रस्य वाममुदितं सकलं नरस्य याम्यं तथा ह्यनुदितं गदितं ग्रहज्ञैः ॥ ७४ ॥

द्रेष्काणवशसे राशियोंके अंगविभाग कहते हैं—प्रथम द्रेष्काणमें लग्नराशि शिर, २। १२ नेत्र, ३। ११ कान, ४। १० नाक, ५। ९ गाल, ६।८ हनु (ठोडी), ७ मुख। दूसरे द्रेष्काणमें लग्नराशि कंठ, २। १२ कंधा, ३। ११ बाहु, ४। १० बगल, ५। ९ हृदय, ६ पेट, ७ नाभि। तीसरे द्रेष्काणमें १ बस्ति, २ लिंग, १२ गुदा, ३। ११ वृषण ऊरु, ५। ९ जंघा, ६। ८ घुटने, ७ पैर ये द्रेष्काणके अंगविभाग हैं। इनमेंभी लग्नसे सप्तमपर्यंतके दाहिनी ओरके और ७ से १२ पर्यंत वामांग जानने ७३॥ ७४॥

अङ्गव्रणादिविचारः।

व्रणो भवेत्पापयुतेऽत्र युक्ते संवीक्षिते लक्ष्म तिलस्तु सद्भिः। स्थिरे स्वभांशे सहजस्तदानीमागंतुकस्तद्विपरीतसंस्थे ॥७५॥

रवौ काष्ठतुर्यांघ्रिजः सूर्यपुत्रे दृषद्वायुजश्चन्द्रजे भूभवश्च । गराग्न्यस्त्रजो भूमिपुत्रे व्रणस्तत्समांगे विधौ शृंगिनीराब्जजः स्यात् ॥ ७६ ॥ स्थानकेऽर्कहिमरश्मिसंयुते कालपूरुषसमे बलोन्मिते । स्याच्चरादिवशतोऽथवा तदाऽऽगंतुकं तु सहजं तिलाङ्कनम् ॥ ७७ ॥ यत्र त्रयः सौम्ययुता ग्रहाः स्युस्तत्र व्रणस्तत्समराशिदेशे । तद्वद्रिपुस्थो व्रणकृत्खलो वा सद्दृष्टयुक्तास्तिललक्ष्मकृत्स्यात् ॥ ७८ ॥

जिस द्रेष्काणके वशसे जो अङ्गविभाग किया है उसके अनुसार पापग्रह हैं, उस अंगमें (व्रण) खोट वा दाग होवै। यदि उसमें शुभग्रह भी युक्त हो या उसको देखता हो तो उस अंगमें तिल वा लक्ष्म (चिह्न) लाखण होवै । स्वराशिमें अथवा स्थिरराशिमें होवै तो वह व्रणादि जन्मसे ही होगा । इसके विपरीत हो तो आगंतुक जानना ॥ ७५ ॥ सूर्यसे वह व्रणादि काष्ठसे वा चतुष्पदसे, शनिसे पत्थरसे वा वायुसे, बुध हो तो भूमिमें गिरनेसे, मंगल हो तो विष, अग्नि, शस्त्रसे, चंद्रमा हो तो शींगसे वा जल यद्वा जलोत्पन्न वस्तुसे तत्तुल्य अंगमें वह व्रण होगा ॥ ७६ ॥ जिस स्थानमें सूर्य चन्द्रमा हैं उसके सदृश कालपुरुषांगविभागमें बलके अनुमानसे और चर स्थिरादि वशसे सहज वा आगंतुक व्रणादि कहना ॥ ७७ ॥ जहां बुधसहित तीन ग्रह शुभ हों या अशुभ ग्रह होवैं उसके समान राशि अंगमें व्रण करता है। तैसेही रिपुगत पापग्रहभी व्रण करता है। शुभग्रहसे दृष्ट युत होवै तो तिल वा कोई चिह्न करता है ॥ ७८ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च । होरासारे शंभुहोराप्रकाशे जन्माध्यायः पंचमः पूर्ण आसीत् ॥ ७९ ॥

इति श्रीपुंजराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे सूतिकाध्यायः पञ्चमः ॥ ५ ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है । यह जन्माध्याय पूर्ण भया ॥७९॥

इति श्रीशंभुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां सूतिकाध्यायः पञ्चमः ॥ ५ ॥

अथ भावफलाध्यायः ६ ।

अथोच्यते द्वादशभावजातं फलानि सत्कोमलवाग्विलासैः ।
शिवादिभिर्यान्युदितानि तानि सम्यक्चमत्कारकराणि नूनम् ॥ १ ॥

अब बारह भावोंके चमत्कारिक फल कोमलवाणीके विलसित पदोंसे जो शिव आदियोंके कहे हैं निश्चय करके कहे जाते हैं ॥ १ ॥

तनुभावविचारः ।

रूपं वर्णं साहसं देहमानं चिह्नं जातिः सौख्यदुःखे नरस्य ।
शीर्षं देहो वा पितुर्मातुरेवं सर्वं वीक्ष्यं लग्नभावे सुधीभिः ॥ २ ॥ सर्वैः खेटैर्यो हि भावो ग्रहो वा दृष्टो भद्रं स्वं प्रदातुं समर्थः । चेल्लग्नेन्दू सर्वखेटैः प्रदृष्टौ पुंसां सूतौ राज्यदौ तौ भवेताम् ॥ ३ ॥ लग्ने प्रदृष्टेऽखिलखेचरेन्द्रैः कुले नृपालोऽरिकुलस्य हन्ता । लीलाविलासैः सहितो नयेन युक्तो बलीयान् विपुलायुषः स्यात् ॥ ४ ॥

तनुभावके विचार है कि, रूप, रंग, साहस, देहमान, चिह्न, जाति, सुख, दुःख, शिर, पिता माताका देह इतने मनुष्यके बुद्धिमान् लग्नभावमें विचारें ॥ २ ॥ जो भाव अथवा ग्रह समस्तग्रहोंसे दृष्ट होवै वह भाव वा ग्रह अपने शुभ फल देनेको समर्थ होता है । यदि पुरुषोंके जन्ममें लग्न चंद्रमा समस्त ग्रहोंसे दृष्ट हों तो वे राज्य देनेवाले होते हैं ॥ ३ ॥ समस्त ग्रह लग्नको देखें तो वह मनुष्य अपने कुलमें श्रेष्ठ (राजा) होता है, शत्रुकुलको मारनेवाला लीलाके विलासोंसे युक्त अर्थात् ऐश्वर्यवान् सुखी न्यायवान् बलवान् और दीर्घायु होता है ॥ ४ ॥

चन्द्रे सर्वग्रहैर्दृष्टे राजा राजकुलोद्भवः । धनधान्यसमायुक्तो नीतियुक्तो भवेन्नरः ॥ ५ ॥ लग्नात्सौम्या द्यूनरंध्रारिसंस्थाः क्रूरैर्युक्ता नेक्षिताः स्यात्क्षितीशः । छत्री दंडेशश्चिरायुर्बहूनां स्त्रीणां भर्त्ता निर्भयो वीतरोगः ॥ ६ ॥

चंद्रमा सब ग्रहसे दृष्ट होवै तो राजकुलोद्भव राजा, अन्य स्वकुलश्रेष्ठ, धन अन्नयुक्त, नीतियुक्त वह मनुष्य होता है ॥ ५ ॥ लग्नसे ७।८।६ भावोंमें शुभग्रह हों पापग्रहसे युक्त दृष्ट न हों तो राजा छत्रवाला, दंड करनेवाला, दीर्घायु, बहुत स्त्रियोंका भर्त्ता, निर्भय और रोगरहित होता है ॥ ६ ॥

सौम्याः सर्वे लग्नसंस्था यदि स्युर्जातं कुर्युः संततं वै विनीतम् । पापाः सर्वे व्याधिदारिद्र्यशोकैर्भीत्या युक्तं वाथ दुर्भक्षकं च ॥ ७ ॥ लग्नस्थिते सत्खचरे सवीर्ये स्थूलो नरः स्यादबलोऽन्यथा तु । तत्र स्थिते क्रूरयुते सुधांशौ पापेक्षिते शीतरुजान्वितः स्यात् ॥ ८ ॥

समस्त शुभग्रह लग्नमें होवैं तो मनुष्यको सर्वदा नम्र करते हैं और पापग्रह रोग दरिद्र शोक भीतिसे युक्त रखते हैं वा अभक्ष्यभक्षी करते हैं ॥ ७ ॥ लग्नमें शुभग्रह बलवान् होवै तो मनुष्य स्थूल होता है, पापग्रह तथा निर्बल ग्रहसे दुर्बल होता है, लग्नमें पापयुत चन्द्रमा पापदृष्ट होवै तो शीतरोगसे वह मनुष्य युक्त रहै ॥ ८ ॥

लग्ने च होराद्वितये च यस्मिन्नर्द्धे स्थितः क्रूरखगस्तु तत्र । शीर्षस्य वामेऽप्यथ दक्षिणे च पीडा प्रवाच्या मनुजस्य नूनम् ॥ ९ ॥ शीर्षस्थाने राहुभौमार्कमन्दाः शीर्षस्थाने वह्निशस्त्रात्तु काष्ठात् । मूर्तौ क्रूरः क्रूरलग्नं च दृष्टं दाहो वह्नेश्चेद्विधौ नीरभीतिः ॥ १० ॥

लग्न तथा लग्नकी होरामें पापग्रह होवै तो वह होरा पूर्वदल होवै तो शिरके वाम भागमें, उत्तरदलकी होरा हो तो शिरके दाहिने भागमें पीडा मनुष्यके रहे यह निश्चय जानना ॥ ९ ॥ लग्नद्रेष्काणके विभागमें शिरस्थानमें राहु मंगल व शनि होवे तो शिरस्थानमें अग्नि शस्त्र वा काष्ठसे भय होवै । लग्नमें पापग्रह पापराशिका हो, पापग्रह उसे देखे तो अग्निसे दग्ध होवै, ऐसा चंद्रमा लग्नमें होवै तो जलकी भय होवै ॥ १० ॥

आकृतिः प्रकृतिर्दोषा गुणा गुणवयोरसाः ।
पुंस्त्री चेष्टा स्वभावश्च ग्रामादिस्थितिकर्म च ॥ ११ ॥
लग्ननाथवशाद्वापि लग्नसंस्थग्रहादपि ।
वक्तव्यं दैवविदुषा प्राचीनमुनिसंमतात् ॥ १२ ॥

शरीरकी आकृति, स्वभाव, दोष, गुण, अवगुण, अवस्था, रस, पुरुष, स्त्री, चेष्टा, अभ्यास और ग्राम आदिकी स्थिति कर्म ॥ ११ ॥ इतने सब लग्नेशके आकृति प्रकृति गुणादिके अनुसार वा लग्नगत ग्रहके अनुसार प्राचीनमुनिसंमत ज्योतिषी कहैं ॥ १२ ॥

ग्रहाकृतिः ।

युवा कुजः शिशुः सौम्यः शनिशुक्रौ च मध्यमौ ।
मन्दमार्त्तण्डदेवेज्यफणिनः स्थविरा ग्रहाः ॥ १३ ॥
पित्तं प्रभाकरक्ष्माजौ श्लेष्मा भार्गवशीतगू ।
ज्ञगुरू समधातू च पवनौ राहुमन्दगौ ॥ १४ ॥

ग्रहोंकी आकृति आदि कहते हैं कि, मंगल जवान, बुध बालक, शनि शुक्र मध्यम (अधड उमर), शनि सूर्य गुरु राहु बूढे हैं ॥ १३ ॥ सूर्य मंगलका पित्त धातु, शुक्र चंद्रमाका श्लेष्मा, बुध गुरुका समधातु, राहु शनिका वायु धातु है ॥ १४ ॥

लग्नपो वा तथा लग्ने तादृग्वा सबलो ग्रहः । यदा लाभगते भौमे स वृद्धोऽपि युवायते ॥ १५ ॥ यथा लग्नगते सौम्ये युवा बालायते किल । शशिशुक्रौ च लग्नस्थौ नातिवृद्धो न वै युवा ॥ १६ ॥ स्थविराः सबला यस्य ग्रहा लग्नगता यदि । प्रकृत्या स भवेद्वृद्धो मान्यः सर्वजनेषु च ॥ १७ ॥

लग्नेश लग्नमें हो यद्वा बलवान् ग्रह लग्नमें हो और जो लाभस्थानमें मंगल होवै तो बूढाभी मनुष्य जवानके तुल्य होवै ॥ १५ ॥ जैसे लग्नके बुध होनेमें मनुष्य जवानभी बालक समझा जाता है। तैसेही चन्द्रमा शनि लग्नमें हो तो न अतिवृद्ध न अतियुवा मालूम पडता है ॥ १६ ॥ जिसके जन्ममें

स्थविर (बूढे) ग्रह बलवान् होकर लग्नमें हों तो उसकी प्रकृति बूढी होती है । सब मनुष्य उसको माननीय गिनते हैं ॥ १७ ॥

यत्रांगस्थौ भानुकुजौ तत्र स्याद्रक्तलाञ्छनम् । शनिराहू च यत्रस्थौ श्यामं तत्र भवेत्किल ॥ १८ ॥ लग्नस्थे च द्वितीये वा जीवे स्यान्मधुरप्रियः । मधुरं वचनं वक्ति सत्यं सर्वहितावहम् ॥ १९ ॥ चन्द्रपुत्रे च तत्रस्थे स नरस्तुवरप्रियः । द्वितीयगे फलं तद्वद्वाच्यं नात्र विचारणा ॥ २० ॥

द्रेष्काणवश कालांगगणनामें जिस अंगमें सूर्य मंगल हों तहां सुर्ख चिह्न, जहां शनि राहु हैं तहां निश्चय श्याम चिह्न होगा ॥ १८ ॥ लग्न वा धनभावमें गुरु होवै तो मीठा प्यारा माने तथा मीठे वचन सत्य सबके भलाईके कहे ॥ १९ ॥ बुध तहां १। २ होवे तो वह मनुष्य कषाय वस्तुप्रिय, होवै । दूसरेमेंभी निःसन्देह यही फल कहना ॥ २० ॥

भार्गवश्च तथा चंद्रो लग्नेशो वा विलग्नगः । अम्लक्षारप्रियो नित्यं जायते च द्वितीयगे ॥ २१ ॥ राहुः शनैश्चरः केतुर्यदि ते स्युर्विलग्नगाः । स तीक्ष्णप्रकृतिर्ज्ञेयस्तथा तीक्ष्णरसप्रियः ॥ २२ ॥ मूर्तीशौ मूर्तिगौ वाऽपि कुजार्कौ यस्य दृश्यते । स क्रोधी जायते नूनं व्यसनी कटुकप्रियः ॥ २३ ॥

शुक्र तथा चन्द्रमा अथवा लग्नेश लग्नमें होवै तो खट्टा तथा क्षार (लवण आदि) को नित्य प्रिय माने । दूसरे भावमें हो तौभी यही फल जानना ॥ २१ ॥ यदि शनि राहु केतु लग्नमें हो तो तीक्ष्णप्रकृति होवै तथा तीक्ष्णरसको प्रिय माने ॥ २२ ॥ लग्नेश लग्नमें सूर्य मंगलसे दृष्ट हो वा सूर्य मंगल लग्नमें हों तो वह मनुष्य क्रोधी और कडुआ रसमें प्रेमवाला होवै ॥ २३ ॥

सौम्यैः खेटैः सांगपैर्लग्नसंस्थैर्यद्वा सौम्यैर्द्यूतगैः स्याच्चिरायुः । अस्तं यातैर्वीर्ययुक्तैश्च पापैर्दुःखी स्वल्पायुः स्वयं वाथ कांता ॥ २४ ॥ लग्नस्थानं चेदसत्खेचराणां जीवेन्दुभ्यां संयुतं शीर्षरोगः । नारीदेहे जन्तुरोगोऽतिसारो वह्नेर्भीतिः

स्वीयदेहेऽथवा स्यात् ॥ २५ ॥ रविभौमौ विलग्नेशौ सबलौ वा विलग्नगौ । वह्निना स विदग्धः स्यात्तथा पित्तेन बाध्यते ॥ २६ ॥

लग्नेशसहित शुभग्रह लग्नमें हों यद्वा सप्तममें शुभग्रह हों तो मनुष्य दीर्घायु होगा । अस्तंगत तथा बलवान् पापग्रहोंसे दुःखी तथा अल्पायु आप अथवा उसकी स्त्री होवै ॥ २४ ॥ लग्नमें पापराशि हो तहां गुरु चन्द्रमा बैठे हों तो शिरमें रोग होवै और अपने वा स्त्रीके शरीरमें कृमिरोग अतिसार और अग्निभय होवै ॥ २५ ॥ सूर्य मंगलसे कोई लग्नेश हो वा लग्नमें हो तो वह मनुष्य अग्निसे दग्ध होवै तथा पित्तरोगसे पीडित रहे ॥ २६ ॥ इति लग्नभावविचारः ॥

अथ द्वितीयभावविचारः ।

द्वितीयकं यद्भवनं धनाख्यं कुटुंबकं तत्पुरुषस्य वक्रम् ।
वाणी शुभार्णा क्रयविक्रयाश्च सुवर्णमुक्तारजतादिकानाम् ॥ २७ ॥
कोशार्थसिद्धिः सकलं सुधीभिर्धनाभिधाने भवने विचिन्त्यम् ।
लग्नेशयुक्ताः सबलाः शुभाख्याः कोशस्थितास्तत्फलमेव दद्युः ॥ २८ ॥

दूसरा जो स्थान है सो धन, कुटुंब, पुरुषका मुख, वाणीसे सुंदर अक्षर, मोल लेना, बेचना, सोना, मोती, चांदी आदि तथा खजाना धनकी सिद्धि ये संपूर्ण धनसंज्ञक भावमें बुद्धिमानोंने विचारने, लग्नेशसहित सभी शुभग्रह बलवान् होकर धनस्थानमें उक्त प्रकारके शुभफल देते हैं ॥ २७ ॥ २८ ॥

धनालये सत्खचरैः प्रदृष्टे वाणी शुभार्णा बहुलं धनं च ।
खलैः प्रदृष्टे तनुपे खले वा फलं विलोमात्परिचिंतनीयम् ॥ २९ ॥
सूर्यारसिंहीसुतसूर्यपुत्रैर्धनालयं तत्सहितं प्रदृष्टम् ।
नरस्तदा स्याद्द्रविणेन हीनः कृशेन्दुना वा सहितं च दृष्टम् ॥ ३० ॥
सुरेज्यपूज्ये धनभावसंस्थे दृष्टे शुभैश्चेद्द्रविणं करोति ।
कोशस्थितः शीतलभानुसूनुश्चन्द्रेण दृष्टो धनहानिकृत्स्यात् ॥ ३१ ॥

धनस्थानमें शुभग्रहोंकी दृष्टि होवै तो उसकी वाणी सुंदर अक्षरोंकी तथा बहुत धन होवै, यदि धनभावमें पापदृष्टि हो अथवा लग्नेश पाप हो तो उक्त फल उलटा जानना ॥ २९ ॥ सूर्य मंगल राहु शनि धनभावमें हों वा उसे देखें तो

मनुष्य धनहीन होवै । क्षीण चंद्रमाके योगदृष्टिसेभी यही फल होता है॥ ३०॥ बृहस्पति धनभावमें शुभदृष्ट होवै तो धन करता है । धनस्थानमें बुध चंद्रमासे दृष्ट होवै तो धनहानि करनेवाला होता है ॥ ३१ ॥

कृशः शशांको धनभावसंस्थो बुधेन दृष्टोऽपि धनादिकानाम् ।
प्रागर्जितानां कुरुते विनाशं नवीनवित्तप्रतिबन्धनानि ॥ ३२ ॥
बुधेन दृष्टो धनभावसंस्थो भृगोः सुतो वित्तकरो नराणाम् ।
स एव सत्खेचरसंयुतो वा दृष्टस्तदानीं बहुवित्तकृत्स्यात् ॥ ३३ ॥
मुखस्थितेऽर्के यदि जातकस्य शैलेयरोगोत्थितमत्र चिह्नम् ।
भवेद् ध्रुवं तद्वचनं च मिष्टं नात्यन्तवित्तः कटुकप्रियश्च ॥ ३४ ॥
तत्र स्थिते ज्ञेन युतेऽथवाऽर्के सेवारतः स्यान्न धनस्थिरत्वम् ।
स चेद्युतः स्त्रीखचरैस्तदानीं स्त्रीहस्तगं स्वं पुरुषस्य वाच्यम् ॥३५॥
यद्वा पिताऽम्बा सहजाऽऽत्मजस्त्री पितृव्यको मातुलशालकश्च ।
पित्रादिनाथैः सहितो यदा स्यात्तत्करस्थं द्रविणं नरस्य ॥ ३६ ॥

क्षीण चंद्रमा धनस्थानमें बुधसे दृष्ट होवै तो पहिलेवालोंके कमाये धनोंका नाश करै, नये कमानेमें प्रतिबंध (अटकी) पडे ॥ ३२ ॥ बुधसे दृष्ट शुक्र धन भावमें हो तो मनुष्योंका धन करनेवाला होता है । वही शुक्र शुभग्रहसे दृष्ट होवै तो तब बहुत धन करनेवाला होता है ॥ ३३॥ जन्मवालेके धनभावमें सूर्य होवै तो पत्थरसे उत्पन्न रोगसे मुखपर चिह्न होवै तथा निश्चय उसकी वाणी मीठी होवै, धन बहुत न होवै, कटुकरस प्रिय माने ॥ ३४॥ धनस्थानमें सूर्य सहित बुध होवै तो सेवामें तत्पर रहे, धन स्थिर न होवै। वही सूर्य स्त्रीग्रहसे युक्त होवै तो उस पुरुषका धन उसकी स्त्रीके हाथमें होगा ऐसा कहना॥ ३५॥ अथवा पिता, माता, भाई, पुत्र, स्त्री, ताऊ, चाचा, मामा, शालाके हाथमें जिस भावेशसे युक्त हो उसके हाथमें धन होवै ॥ ३६ ॥

पुत्रेशे स्त्रीगृहे पुत्री भगिनी सहजेश्वरे । मातृष्वसा मातुलेशे
पितृव्येशे पितृष्वसा ॥ ३७॥ जनकेशे श्वश्रुहस्ते श्वशुरो वा
गृहेश्वरे । लाभेशे शालकीहस्ते धनं वाच्यमशंकितः ॥ ३८ ॥

उक्त योग जो पित्रादिकोंके हस्तगत धन कहा यह तो धनगत सबुध सूर्यके साथ पुरुषग्रह दृष्टियोगसे है, यदि पुत्रेश स्त्रीराशिमें हो और स्त्रीग्रहसे युक्त दृष्ट होवै तो लडकीके हाथमें, एवं तृतीयेशसे बहिनके षष्ठेशसे मांकी बहिनके, लग्नेशसे पिताकी बहिनके ॥ ३७ ॥ दशमेशसे सासके, चतुर्थेशसे ससुरके, लाभेशसे सालीके हाथमें निःशंक उस पुरुषका धन कहना ॥ ३८॥

क्रूरैर्धनस्थैर्वदनेऽथवांसे नेत्रे श्रुतौ वा व्रणकं विघातः।
विधुंतुदे वा सवितात्मजे स्यात्तत्र स्थिते संग्रहणीरुजार्त्तः ॥ ३९ ॥
स्याद्दंतुरो दंतरुगर्दितो वा सिंहीसुते चेद्धनभावसंस्थे।
तत्र स्थितेऽब्जे खलु शीतदोषः स्यात्सन्निपाताश्रययुङ्नरः स्यात् ४०
तत्र स्थिते क्रूरयुते सिते चेत्काणोऽथवा मंदविलोचनश्च।
मूको द्वितीये त्रिलवे तृतीये स्खलद्गिरः स्यान्मनुजो नितांतम्॥४१॥
धनव्ययस्थो भृगुजोऽथवाऽऽरः करोति पुंसां श्रवणप्रपीडाम्।
तत्र स्थितः शीतमयूखमाली दृग्दोषकारी मुनिभिस्तथोक्तः ॥४२॥

क्रूरग्रह धनभावमें होवै तो मुखपर वा कन्धपर वा नेत्रमें वा कानमें व्रण (खोट वा चोट) होगी, राहु वा सूर्य धनभावमें होवै तो संग्रहणीरोगसे पीडित होवै ॥ ३९ ॥ राहु वा केतु धनभावमें होवै तो बडे दांतोंवाला वा दंतरोगी होवै। तहां चन्द्रमा होवै तो निश्चय शीतदोष होगा और मनुष्य सन्निपात (त्रिदोष) के आश्रयवाला होवै ॥ ४० ॥ धनभावमें पापयुक्त शुक्र होवै तो एक नेत्रहीन (काणा) अथवा मंददृष्टि होवै। यह शुक्र दूसरे द्रेष्काणमें होवे तो गूंगा, तीसरेमें होवै तो टूटी जबान (हेकला) वह मनुष्य सर्वदा होगा ॥ ४१ ॥ धन वा व्ययस्थानमें शुक्र वा मंगल हो तो मनुष्योंके कानमें पीडा करता है। तहां दूसरे वा बारहवेंमें चंद्रमा होवै तो नेत्रदोष करनेवाला मुनियोंने कहा है ॥ ४२ ॥

कोशस्थे चेद्देवपूज्येऽथवा ज्ञे वाग्मी स स्यात्पूरुषः सौम्यवक्त्रः। केतौ तत्रस्थे तदा दीर्घवक्त्रो नूनं प्रोक्तः शंकराद्यैर्महद्भिः ॥४३॥ धनस्थितः सत्खचरः खलो वा शत्र्वालयस्थो

रिपुणा युतो वा । करोति मर्त्यं मुखरोगयुक्तमेवं विधुश्चेत्स-
लिलाच्च भीतिम् ॥ ४४ ॥ धनस्थितश्चेद्रविजस्तमो वा स्त्री-
खेचरेशेन युतस्तदानीम् । म्लेच्छैर्निषादैर्गणिकाजनैश्च
गांधर्वनादेन धनव्ययः स्यात् ॥ ४५ ॥ यदा धनेशोऽथ धन-
स्थितो वा भौमस्तदा वित्तविनाशदः स्यात् । धनञ्जयाद्वापि
च तस्कराद्वा शत्रोः क्षितीशान्मनुजस्य नूनम् ॥ ४६ ॥
विषेण वा तु शस्त्रेण तथा रक्तप्रकोपतः । तन्मृतिर्विहिता
लोके क्षितिजेन धनस्थिते ॥ ४७ ॥

धनभावमें गुरु अथवा बुध होवै तो वह मनुष्य युक्तियुक्त बात करने-वाला मुलायम (प्रसन्न) मुख होवै, धनभावमें केतु होवै तो लंबामुख होवै ऐसा शंकरादि आचार्योंने निश्चय कहा है ॥ ४३ ॥ धनभावमें शुभ वा पाप ग्रह शत्रुराशिका अथवा शत्रुयुक्त होवै तो मनुष्यको मुखरोगसे युक्त करता है इस प्रकार चन्द्रमा होवै तो जलसे भी भय होवै ॥ ४४ ॥ धनस्थानमें शनि वा राहु स्त्रीग्रहसे युक्त होवै तो म्लेच्छ निषाद (भील) वेश्या जनोंसे तथा गायनके शब्दके आनन्दमें धन व्यय होवै ॥ ४५ ॥ यदि धनेश मंगल हो अथवा धनभावमें मंगल होवै तो वित्तका नाश अग्नि चोर शत्रु और राजासे मनुष्यके धनका निश्चय नाश करता है ॥ ४६ ॥ ॥ मंगल धनस्था-नमें होवै तो विषसे वा शस्त्रसे अथवा रुधिरके कोपसे संसारमें उसकी मृत्यु कही है ॥ ४७ ॥ इति धनभावविचारः ॥

अथ सहजभावविचारः ।

अथ प्रवक्ष्ये सहजालयस्य प्रोक्तं फलं यच्छशिशेखरेण ।
तत्स्यात्तृतीयं त्वथ बाहुसंज्ञं दुश्चिक्यसंज्ञात्र तदेवमुक्तम् ॥ ४८ ॥
सहोत्थितानां च पराक्रमाणां दास्यादिकानां च सुखासुखं हि ।
अंबापितृव्याम्बकमातुलानां फलं विचिन्त्यं सहजे सुधीभिः॥ ४९ ॥

अब तृतीय भावका फल जो महादेवजीने कहा है उसको कहता हूं-तीसरा भाव तृतीय, बाहुसंज्ञक, दुश्चिक्य संज्ञक है ॥ ४८ ॥ भाई, परा-

क्रम, दासी आदियोंका सुखासुख, माता, चाचा, ताऊ, उनकी पत्नी, मामा इनका विचार विद्वानोंको तीसरे भावसे करना चाहिये ॥ ४९ ॥

सौम्यैर्युक्तं वा शुभं सौम्यदृष्टं दुश्चिक्यं स्यात्सर्वतो मङ्गलाय ।
एवं पापैर्दृष्टयुक्ते खलर्क्षे नूनं पुंसां भ्रातृलब्धेरभावः ॥ ५० ॥
मंदेऽनुजर्क्षे क्षितिसूनुदृष्टे नरस्य नश्यंत्यनुजाश्च जाताः ।
जीवोशनोभ्यां यदि तत्र दृष्टे सकृच्छुभं स्यादनुजेषु नूनम् ॥ ५१ ॥

तीसरे भावमें शुभ राशि हो उसमें शुभग्रह हो अथवा शुभदृष्ट हो तो तद्भावोक्त सभी कामोंके मंगलके लिये होते हैं । ऐसेही पापराशि पापयुक्त वा पापदृष्ट होवे तो भाईके लाभका अभाव होवै॥५०॥ शनि तीसरे स्थानमें मंगलसे दृष्ट होवै तो मनुष्यके भाई नष्ट होवैं, उसपर गुरु शुक्रकी दृष्टि होवै तो भाइयोंमें थोडा शुभ अर्थात् कुछ भाई रहैं ॥ ५१ ॥

चेद्गीष्पतौ विक्रमपे च तत्स्थे सहोत्थितानां बहुलं सुखं स्यात् । दुश्चिक्यगे सूर्यसुते तदानीं भाग्याधिकः स्यात्पुरुषो विशेषात् ॥ ५२ ॥ बाहुस्थितश्चेद्रविजोऽसुरेण युक्तस्तदानीं कुनखित्वकं तु । दक्षे करे दारुभवं विघातं करोति वा वायु-समुद्भवार्तिम् ॥ ५३ ॥ रविर्यदा हस्तगतः कुजो वा तदाऽस्थिभंगं विषजं भयं च । करोति दाहं ज्वलनाच्च चिह्नं शुभेक्षिते त्वग्विरलत्वमेति ॥ ५४ ॥

यदि बृहस्पति एवं तृतीयेश तीसरा होवै तो भाइयोंका बहुत सुख होवै और शनि तीसरा होवै तो पुरुष विशेषतर भाग्यशाली (ऐश्वर्यवाला) होवै ॥ ५२ ॥ तीसरा शनि राहुसे युक्त होवै तो कुनखी होवै अथवा दाहिने हाथपर लकडीकी चोट अथवा वायुसे उत्पन्न पीडा करता है ॥ ५३ ॥ तीसरा सूर्य अथवा मंगल होवै तो हड्डी टूटे और विषकी भय, दाह, अग्निसे चिह्न (खोट) करता है, यदि वह शुभदृष्ट होवै तो उस स्थानकी खालमें भिन्नता होवै ॥ ५४ ॥

नंदांशा ये विक्रमस्थानसंस्थाः प्रालेयांशुक्षोणिपुत्रप्रदृष्टाः । तत्संख्याः स्युर्भ्रातरो वै भगिन्यस्त्वन्यैर्दृष्टा हौरिकैः कल्पनीयाः ॥ ५५ ॥ तत्स्थे शनौ ज्ञेन कुजेन दृष्टे करोति नष्टं च सहोत्थितानाम् । कुजेन दृष्टे सहजेऽब्जवर्गे स्युर्मानवानां सहजाः सरोगाः ॥५६॥ चेदत्र भानौ नवमे स्वगेहे तदा विनश्यंत्यखिलाः सहोत्थाः । एकश्चिरायुः सहजः कदाचिन्नृणां भवेद्भूपतिना समो वा ॥ ५७ ॥

जितने नवांशक तृतीयभावमें चंद्रमा मंगलसे दृष्ट होवैं उतने भाई और अन्य ग्रहोंसे वहिनें ज्योतिषियोंने कल्पना करनी ॥ ५५ ॥ तीसरे शनिपर बुध मंगलकी दृष्टि हो तो भाइयोंका नाश करता है तीसरेमें चंद्रमाके वर्गका शनि होवै तो मनुष्योंके भाई रोगसहित रहते हैं ॥ ५६ ॥ यदि तीसरा सूर्य हो अथवा नवममें स्वगृही होवै तो समस्त भाई नष्ट होते हैं । कदाचित् एक भाई बचे तो वह दीर्घायु यद्वा राजाके समान होता है ॥ ५७ ॥

चन्द्रे खलानां त्रितयेन दृष्टे भ्रातृप्रणाशो न शुभेक्षितश्चेत् । सूर्योऽग्रजान् हन्ति कुजोऽनुजातान्पूर्वापरोत्थान्सहजान्यमो हि ॥ ५८ ॥ दुश्चिक्यस्थे लोहितांगे च बाहौ चिह्नं दद्यात्क्रूरदृष्टो नरस्य । शस्त्राघाताद्वा सुधीभिः प्रवाच्या पित्तोद्भूता गंडमालाऽनुजस्य ॥ ५९ ॥

चन्द्रमा तीन पापग्रहोंसे दृष्ट हो शुभग्रह उसे न देखे तो भाइयोंका नाश होवै । तीसरा सूर्य आगेवालोंको, मंगल पीछेवालोंको और शनि आगे पीछे दोनोंको नाश करता है ॥ ५८ ॥ तीसरा शनि क्रूरदृष्ट होवै तो बाहुमें चिह्न शस्त्राघातसे देता है अथवा छोटे भाईको पित्तसे उत्पन्न गंडमाला होवै ऐसा बुद्धिमानोंसे कहने योग्य है ॥ ५९ ॥

तत्र क्रूराः शत्रुयुक्ताः सहोत्थं स्वल्पं सौख्यं बाहुपीडा नरस्य । पक्षाघातो वायुजो भ्रातृपीडा तस्य स्त्री स्याद्धस्तबद्धार्पणेषु ॥ ६० ॥ चेद्विक्रमस्थेऽर्कसुते प्रवाच्यौ द्वौ भ्रातरौ

गर्भंयुतौ विनष्टौ । सहोत्थपक्षाश्रित एव नूनं द्रव्यस्य हानि-र्मनुजस्य वाच्या ॥६१॥ लाभे महीजे मदनेऽर्कपुत्रे विधुन्तुद-श्चेन्नवमे तदानीम् । हानिः प्रवाच्या विबुधैर्नराणां भ्रातृ-द्वयस्य त्रितयस्य वापि ॥६२॥ गुरुस्तृतीये भृगुजो बुधो वा सौख्यं त्रयाणां च सहोत्थितानाम् । वाच्यं खलैर्दृष्टयुतोऽथ वा चेद्द्वयोर्विनाशं विबुधैस्तदानीम् ॥ ६३ ॥

तृतीय भावमें पापग्रह शत्रुयुत हो तो भाइयोंका सुख अल्प मिले तथा मनुष्यके बांहमें पीडा रहे अथवा वायुसे उत्पन्न पक्षाघात रोग होवै, भाइ-योंको पीडा होवै, उसकी स्त्री हस्तबद्ध (कृपण) दानादियोंमें होवै ॥ ६० ॥ तीसरे शनि होवै तो उसके दो भाई गर्भहीमें नष्ट हुए होंगे और निश्चय है कि, भाइयोंके पक्षके आश्रयसे मनुष्यके धनकी हानि कहनी ॥ ६१ ॥ लाभ-भावमें मंगल सप्तममें शनि और यदि नवममें राहु होवै तो पंडितोंने उस मनु-ष्यके दो वा तीन भाइयोंकी हानि कहैं ॥ ६२ ॥ तीसरा गुरु अथवा बुध वा शुक्र होवै तो तीन भाइयोंका सुख होवै । तृतीय भाव पापदृष्ट और पाप-युक्त होवै तो पंडितोंने दो भाइयोंकी हानि कहनी ॥ ३६ ॥

पुण्ये विधौ रविसुते सहजे कुजाद्वा सौम्यग्रहेक्षितयुतेऽप्यसुरे तृतीये । नाशो नरस्य च तदा भगिनीत्रयस्य स्याल्लाञ्छनं तु भुजयोरथ वापि कुक्षौ ॥ ६४ ॥ भगिन्येका राहुदृष्टः सितो विषभयान्मृता । तत्रस्थः शनिना दृष्टः सर्पाद्भयमथो वदेत् ॥ ६५ ॥ षष्ठस्थानस्थैर्ग्रहैर्मातुलानां प्रोक्तं नूनं यादृशं यत्फलं तत् । दुश्चिक्यस्थैस्तादृशं वाऽनुजानां वाच्यं सर्वं होरिकैर्बुद्धिमद्भिः ॥ ६६ ॥

नवमस्थानमें चंद्रमा तीसरा शनि हो अथवा मंगलसे तीसरा राहु शुभग्रहोंसे दृष्ट युत होवै तो मनुष्यकी तीन बहिनोंका नाश होवै तथा बाहुमें अथवा कुक्षिमें लांछन (चिह्न) होवै ॥ ६४ ॥ तीसरा शुक्र राहुसे दृष्ट होवै तो एक बहिन विषकी भयसे मरी होगी । तीसरे शुक्रपर शनिकी दृष्टि होवै तो सर्पसे भय कहना ॥ ६५ ॥ जैसा फल छठे भावस्थ ग्रहोंसे मामाओंको

कहा है वैसाही फल निश्चय तीसरे भावस्थ ग्रहोंसे भाइयोंके लिये बुद्धिमान् ज्योतिषियोंने कहे हैं ॥ ६६ ॥ इति तृतीयभावविचारः ॥

अथ चतुर्थभावविचारः ।

वक्ष्ये तुर्यस्थानसंस्थं फलं तद्वक्षस्थानं पूरुषाणां निरुक्तम् ।
अंबाबंधुक्षोणिमित्रालयानां सर्वान्नानां ग्रामयुग्वाहनानाम् ॥ ६७ ॥
वापीकूपक्षेत्रभूमीरुहाणां तुर्यस्थाने कल्पनीयं महद्भिः ।
चेत्तुर्यर्क्षे सद्ग्रहैर्युक्तदृष्टं सर्वं सौख्यं तद्गृहस्थं तदानीम् ॥ ६८ ॥

अब चतुर्थस्थानके फल कहता हूं—जो पुरुषोंका वक्षस्थान कहा है तथा अंबा, बन्धु, पृथ्वी, मित्र, गृह, समस्त अन्न, ग्रामसहित वाहन ॥ ६७ ॥ बावली, कुआ, खेती, वृक्ष इनका विचार चतुर्थ स्थानमें करना । यदि चौथा भाव शुभग्रहोंसे युक्त दृष्ट हो तो चतुर्थभावसंबंधी सब सुख होंगे ॥ ६८ ॥

तुर्यस्थिते तुर्यपतौ सवीर्यें शुभं फलं यच्छति तद्गृहोत्थम् ।
अस्तं गतो नीचगतो जितो वा फलं विलोमात्परिचिन्तनीयम् ॥ ६९ ॥
लग्ने गुरुः खेऽर्कसुतस्तृतीये राहुस्तदाऽम्बा म्रियते तु तस्य ।
लग्ने व्ययेऽस्ते ह्यशुभाः शुभाश्चेत्क्षयंकरः स्यात्परिवारकस्य ॥ ७० ॥
सूर्योऽथवाऽऽरः सबलश्चतुर्थे पित्तज्वरो वा व्रणरुग्जनन्याः ।
भवेन्नितान्तं मनुजो व्रणार्तः पार्श्वेऽथवाऽऽरे दहनेन दग्धः ॥ ७१ ॥

चतुर्थेश बलवान् चतुर्थस्थानमें हो तो चतुर्थभावसंबंधी शुभ फल देताहै । यदि चतुर्थेश अस्त हो नीचगत हो तो उक्तफल विपरीत विचारना ॥ ६९ ॥ लग्नमें गुरु, दशम शनि, तीसरे राहु होवै तो उसकी माता शीघ्र मरे । लग्न व्यय और सप्तममें सभी शुभ और पाप ग्रह होवैं तो परिवारका क्षय करै ॥ ७० ॥ सूर्य वा मंगल बलवान् चतुर्थमें होवै तो माताको पित्तज्वर वा फोडेका रोग होवैं । मंगलसे मनुष्य व्रणपीडित वा अग्निसे दग्ध होताहै ॥ ७१ ॥

मातामहस्य पक्षेऽपि विषशस्त्रकृता व्यथा । जीवे च सर्वकल्याणं यदा स हिबुके वसेत् ॥ ७२ ॥ चतुर्थस्थिते सूर्यपुत्रेऽसुरे वा जनित्री भवेद्वायुदोषार्तियुक्ता । हता काष्ठपाषाणघातेन वा सा स्थिते तत्र चेद्यामिनीशे सरोगा ॥ ७३ ॥ तरु-

प्रपातेन जलेन तस्या निजात्मना वापि मृतिः सहोत्थे। चन्द्रे
समन्दे रविणा युते वा रोगार्दिता स्याज्जननी नरस्य ॥ ७४ ॥

उक्त योगोंसे मातामह (नाना) के पक्षमेंभी विष शस्त्रसे पीडा होती है। यदि गुरु चतुर्थ होवै तो मातामहादियोंको सर्वप्रकार मंगल होवे ॥ ७२ ॥ चतुर्थ शनि वा राहु होवै तो माता वायुदोषसे पीडित रहे। अथवा लकडी पत्थरसे उसको चोट लगे। चतुर्थमें चंद्रमा होवै तो माता रोगसहित रहे ॥७३॥ राहु शनिसे युक्त चन्द्र अष्टम या तीसरेमें हो तो माताका मरण पेडसे गिरके, वा जलमें डूबके आत्मघातसे देते हैं। चंद्रमा शनिसहित अथवा सूर्यसहित चतुर्थमें होवै तो उस मनुष्यकी माता रोगपीडित रहे ॥ ७४ ॥

चतुर्थे भवने क्रूरः पृच्छकस्य यदा ग्रहः। ग्रामे वा नगरे वापि
गृहे तस्य सुखं नहि ॥ ७५ ॥ मातृस्थानगते भौमे दृश्यते
शनिराहुणा। चन्द्रदृष्टिर्भवेत्तत्र माता स्याद्व्यभिचारिणी ॥७६॥

जन्ममें वा प्रश्नमें प्रष्टाके चौथे भावमें पापग्रह होवै तो उसको ग्राम नगर वा घरमें सुख न मिले ॥ ७५ ॥ चौथा मंगल शनि राहुसे दृष्ट होवै और तहां चन्द्रमाकी दृष्टिभी होवै तो उसकी माता व्यभिचारिणी होवै ॥ ७६ ॥

तुर्ये शुक्रेऽब्जे च नीरं पटु स्यात्सौम्ये मिश्रं कूपवाप्या-
दिकेषु। मन्दे राहौ तिक्तमिज्येऽतिमिष्टं भानौ भौमे कष्टलभ्यं
जलं हि ॥ ७७ ॥ तुर्यस्थेऽर्के तुर्यपे नो दृढं स्याद्गेहं सौम्ये
चित्रितं नव्यमिन्दौ। शुक्रे रम्यं राहुमन्दे च जीर्णं भौमे दग्धं
देवपूज्ये दृढं च ॥७८॥ मन्दे राहौ वीर्ययुक्तेऽस्थियुक्तं भस्मां-
गारैर्भस्मभाण्डैर्दृषद्भिः। सूर्यस्तुर्यांशाश्रयी कष्टकृत्स्यात्
स्थानभ्रष्टोऽन्याश्रयी भौमशन्योः ॥ ७९ ॥

कूप, बावडी, तालाव आदिके प्रश्नादिमें लग्नसे चतुर्थ शुक्र चंद्रमा होवैं तो स्वच्छ, बुधसे मिश्रित, शनि राहुसे कडुआ, गुरुसे अतिमीठा जल मिलेगा। सूर्य एवं मंगल हो तो कष्टसे जल मिलेगा ॥ ७७ ॥ ऐसे मकान आदिमें चतुर्थेश सूर्य चौथा होवै तो दृढ नहीं होगा, बुधसे चित्रोंवाला, चंद्र-

मासे नवीन, शुक्रसे रमणीय, शनि राहुसे पुराना, मंगलसे दग्ध, गुरुसे दृढ जानना ॥ ७८ ॥ शनि राहु बलवान् होवैं तो हड्डी भस्म अंगारे फूटे वर्तन और पत्थरोंसे युक्त होवै । सूर्य चौथे भावके अंशमें बैठा हो तो कष्ट करे, मंगल शनिसे स्थानसे भ्रष्ट होकर अन्य स्थानका आश्रय करनेवाला होवै ७९

तुर्येश्वरे तुर्य्यगतेऽथवाऽब्जे सिते धनं रूप्यमयं धनं स्यात् ।
चेन्मंदिरेऽन्नं बहुलं तदानीं स्युर्मानवानां प्रबला रसाश्च ॥ ८० ॥
स्वर्णान्वितं ज्ञे तपने च मुक्ता कांस्यान्वितं रत्नयुतं सुरेज्ये ।
ताम्रं त्रपुर्वा कुसुतेऽर्कपुत्रे लोहायुधं वाऽस्थियुतं त्वगौ स्यात्॥८१॥

चतुर्थेश शुक्र अथवा चन्द्रमा चतुर्थ होवै तो उस घरमें चांदी अधिक धन होवै, अन्नभी बहुत होवैं और मनुष्योंको रसभी बहुत होवैं ॥८० ॥ बुध होवै तो सुवर्ण, सूर्यसे मोती, गुरुसे कांभी रत्न, मंगलसे तांबा, पीतल, शनिसे लोहा शस्त्र और राहुसे हड्डियोंसे युक्त घर होगा ॥ ८१ ॥

जीवेऽसुरालयगते हिमगौ सिते च नीराशये शशिसुते यदि वेष्टकासु । सूर्ये चतुष्पदपदेऽप्यथ बाह्यभूमौ सौरेऽसुरेऽग्निनिकटे कुरुते च वस्तु ॥८२॥ तुर्यस्थितैर्वीर्ययुतैर्नभोगैः पूर्णं प्रवाच्यं फलमुक्तमत्र । अर्द्धं फलं मध्यबलैश्च तुच्छं नीचास्तसंस्थैर्ननु जातकज्ञैः ॥ ८३ ॥

जन्म वा वस्तुस्थानप्रश्नमें गुरु चन्द्रमा शुक्रमेंसे कोई चतुर्थ भावमें होवै तो जलाशयमें, बुध होवै तो ईंटोंमें, सूर्य चतुर्थमें होवै तो बाहर भूमिमें, शनि वा राहु हो तो अग्निके समीप वस्तु करते हैं ॥ ८२ ॥ चतुर्थभावमें ग्रह पूर्णबली होवै तो उक्त फल पूर्ण कहना । मध्यबलमें आधा और हीनबलमें नीचमें अस्तमें बहुतही अल्प वह फल कहना ॥ ८३ ॥

शुभग्रहैस्तुर्यगतैः सवीर्यैस्तातस्य सौख्यं जननीसमेतम् ।
सुधीः सुखी साधुजनानुयातो भवेन्नरो विष्णुपरायणश्च ॥ ८४ ॥
तुर्यस्थितः पापनभश्चरश्चेत्सौख्यं न शीतद्युतिना प्रदृष्टः ।
इनस्तदा मातृसुखोज्झितः स्यादेवं शुभश्चेद्विपरीत एव ॥ ८५ ॥

चौथे भावमें बलवान् शुभग्रह होवै तो मातासहित पिताको सुख मिले तथा वह मनुष्य सद्बुद्धिवाला, सुखी, साधुसंगतिवाला और विष्णुभक्तिमें तत्परभी रहे ॥ ८४ ॥ यदि चौथे भावमें पापग्रह होवै तो माता पिताका सुख न होवै । सूर्य चतुर्थ चंद्रदृष्ट हो तो मातृसुखसे रहित होवै । शुभ ग्रह ऐसा होवै तो विपरीत फल होगा ॥ ८५ ॥

सूर्ये खलानां त्रितयेन दृष्टे शुभैरदृष्टे जनकस्य नाशः ।
भवेत्तथैवं खलु यामिनीशे भवेन्नराणां जननीविनाशः॥८६॥
मेषूरणे सूर्यसुतोऽर्कदृष्टः कुजस्तमो वा जनकस्य नाशम् ।
करोति पुंसां विपुलं दरिद्रं हृदामयं वै निजपक्षहानिम्
॥ ८७ ॥ तीक्ष्णोपघातं खलसंयुतश्चेत्स्कंधे च कुक्षौ हृदये
तदानीम् । एवं चतुर्थे कुसुतेऽग्निदाहं मन्देऽनिलार्तिं त्वपरै-
र्विघातम् ॥ ८८ ॥ तुर्ये क्रूरो भवेत्तस्य माता स्याद्द्वित्रि-
संख्यया। मातृस्थानगते सौम्ये तदैका जननी भवेत् ॥ ८९ ॥

सूर्य तीन पापोंसे दृष्ट हो और शुभ ग्रहोंसे अदृष्ट होवै तो पिताका नाश होवै । ऐसेही चन्द्रमा पापत्रयसे दृष्ट और शुभोंसे अदृष्ट होवै तो माताका नाश होवै ॥ ८६ ॥ दशम शनि सूर्यसे दृष्ट हो अथवा मंगल वा राहु दशम सूर्यसे दृष्ट होवै तो पिताका नाश करता है । तथा मनुष्योंको बडा दरिद्र, हृदयमें रोग और अपने पक्षकी हानि करता है ॥ ८७ ॥ चतुर्थभाव पाप-युक्त होवै तो तीखी चोट कंधामें वा कुक्षिमें वा हृदयमें करता है, मंगल चतुर्थमें अग्निदाह, शनि वायुपीडा, अन्य ग्रहोंसे चोट कहनी ॥ ८८ ॥ चौथा पापग्रह होवै तो उसकी दो तीन माता होंगी । शुभग्रहसे एकही होगी ॥ ८९ ॥ इति चतुर्थभावविचारः ॥

अथ पंचमभावविचारः ।

अथ प्रवक्ष्ये किल पंचमस्य फलं नराणामुदरं तदेव ।
संतानगर्भस्थितिनीतिसंस्था मंत्रादिसिद्धिर्विनयश्च विद्या ॥ ९० ॥
बुद्धिप्रबंधः सुतभे समस्तं विचिन्त्यमेतन्ननु जातकज्ञैः ।
सर्वं शुभं वीर्ययुते तदीशे वीर्योज्झिते सर्वमशोभनं स्यात् ॥ ९१ ॥

अब पंचम भावविचार कहते हैं कि, मनुष्योंका यह उदरस्थान है इसमें संतान, गर्भस्थिति, नीतिकी स्थिति, मंत्रादिकी सिद्धि, विनय, विद्या॥ ९० ॥ बुद्धिप्रबंध इतने संबंधी समस्त फल जातकज्ञोंने विचारने । पंचमेश बलवान् होवै तो उक्त सभी अच्छे और निर्बल होनेमें सभी अशुभ होते हैं ॥ ९१ ॥

चेद्भानावुदरस्थिते तु मनुजः कोपान्वितः स्यात्तदा दग्ध-स्तत्र कृशानुनाऽथ चरणे दक्षे शृगालाश्वजा । पीडा वा विषवह्निजा हृतसुतो भौमेऽग्निशस्त्रव्यथा प्रोक्ताऽङ्गेषु मृत-प्रजस्तु नितरां स्यान्मानवो दुःखितः ॥ ९२ ॥ स्वर्भानावु-दरस्थिते कृमिरुजा वा वातगुल्मान्वितो मन्देऽप्येवमथेन्दुना यदि युते प्लीहायुतः स्यान्नरः । आदित्ये स्थिरधीर्विधौ तु चपला क्रूरा कुजे ज्ञे समा सद्बुद्धिर्धिषणे सिते मृदुमति-स्तीक्ष्णाप्यगौ वाऽर्कजे ॥ ९३ ॥

यदि सूर्य पंचम भावमें होवै तो मनुष्य क्रोधी होवै, दाहिना पैर अग्निसे दग्ध होवै अथवा स्यार वा कुत्तेसे उत्पन्न पीडा अथवा विष वा अग्निसे उत्पन्न पीडा होवै । मंगल पंचम होवै तो अग्नि वा शस्त्रसे पीडा पूर्वोक्त अंगोंमें होवै तथा बराबर संतान मरती रहैं, मनुष्य दुःखित रहै ॥ ९२ ॥ राहु पंचम होवै तो कृमिरोग वा वातगुल्मरोगसे युक्त रहै, शनिसेभी ऐसाही फल जानना। यदि चंद्रमासे युक्त होवै तो प्लीह (फीहा) रोगसे मनुष्य युक्त रहै । सूर्य पंचम हो तो स्थिर बुद्धि, चंद्रमासे चपल, मंगलसे क्रूर, बुधसे सामान्य, गुरुस उत्तम बुद्धि, शुक्रसे कोमल, शनि राहुसे तीक्ष्ण बुद्धि होवै । केतु राहुके तुल्य जानना ॥ ९३ ॥

धीस्थैः सत्खचरैः प्रपञ्चरचको दक्षोऽतिगूढः सुधीः सन्मंत्रा-ऽमरसेवनेषु निरतो नूनं सुशीलः सदा । क्रूरैस्तत्रगतैरसन्मनु-सुराराध्यो विगूढः कुधीर्मर्त्यः स्यादशुचिः प्रपञ्चरचनासक्तः सतां निन्दकः ॥ ९४ ॥ सूर्यः पित्तरुजा ज्वरेण गरलेनैवात्म-जस्थो यदा मर्त्यानां विनिहन्ति गर्भपतनाद्यैर्वा तदा

संततिम् । मन्दोऽगुः कृमिणाऽनिलेन दृषदा काष्ठेन नीरेण वा शैलेयेन कुजो व्रणेन यदि वा शस्त्रेण रक्तार्तिना ॥ ९५ ॥

पंचम भावमें शुभग्रह हो तो प्रपंच रचनेवाला चतुर होवै। उसके मनकी कोई न जानसके, सद्बुद्धि उत्तम (मंत्र) सलाह जाने । यद्वा अच्छे मंत्र एवं देवताके सेवनमें तत्पर रहै, निश्चय सर्वदा उत्तम शीलवाला होवै। यदि पंचममें पापग्रह होवै तो क्रूरमंत्र क्रूरदेवताका आराधन करे । मनमें बात छिपे नहीं, दुर्बुद्धि, अपवित्र, प्रपंचरचनामें आसक्त तथा वह मनुष्य सज्जनोंकी निन्दा करनेवाला होवै ॥ ९४॥ सूर्य पंचम हो तो पित्तरोग, ज्वर, विष और गर्भपतनादिसे संतति हानि करे । शनि वा राहु होवै तो कृमि, अग्नि, पत्थर, काष्ठ, जल, पर्वतोत्पन्नवस्तुसे सन्ततिकी हानि होवै, मंगल पंचम होवै तो व्रणसे अथवा शस्त्रसे यद्वा रुधिरसंबंधी पीडासे संततिकी हानि होवै ॥ ९५ ॥

कन्यापत्यः पुत्रगेऽब्जे बुधे वा कन्यापुत्रैः संयुतो भार्गवेण ।
सत्पुत्रैःस्यात्संयुतो देवपूज्ये मर्त्योऽपत्यात्सौख्ययुक्तो नितांतम् ९६
क्रूरैः खेटैर्दुःखयुक्तो नरः स्यात्पुत्रस्थश्चेद्धंति सूर्योऽग्रजातम् ।
पश्चाज्जातं सूर्यसूनुर्निहन्ति सिंहीसूनुर्हंति पूर्वापरोत्थम् ॥ ९७॥
भूमीपुत्रो नंदनस्थानसंस्थो जातं जातं नन्दनं वा निहन्ति ।
चेत्संदृष्टो देवपूज्येन नूनं दैत्येज्येन स्यात्तदा पूर्वजातम् ॥ ९८ ॥

पंचमभावमें चन्द्रमा वा बुध होवै तो मनुष्यकी कन्याही संतति होवै । शुक्रसे कन्या पुत्र सभी होवैं। गुरु पंचम होवै तो सत्पुत्रोंसे युक्त होवै, संततिके सुखसे सर्वदा युक्त रहे ॥ ९६ ॥ क्रूरग्रह पंचम होनेसे मनुष्य संतति पक्षसे दुःखयुक्त रहैं । पंचम सूर्य आगेके पुत्रोंका, शनि पीछेके पुत्रोंका और राहु पहिले पिछले सभीका नाश करता है ॥९७॥ मंगल पंचम हो तो जितने पुत्र होते जाँय उन सभीको मारता रहता है । यदि वह बृहस्पतिसे वा शुक्रसे दृष्ट होवै तो पहिलेके पुत्रोंका नाश करता है, पीछेके बच जाते हैं ॥ ९८ ॥

सुताधीशः सुतस्थानं नेक्षते सद्ग्रहोऽपि वा । यदा क्रूरयुतो दृष्टस्तदा गर्भच्युतिं वदेत् ॥ ९९ ॥ सुखे सपापे भृगुजेऽस्तसंस्थे स्वस्थे विधौ संततिवर्जितः स्यात् । यद्वा खलर्क्षे

खलयुक्तदृष्टे सौम्यैरदृष्टे सुतभे नरः स्यात् ॥ १०० ॥ धीस्थे
मंदे चानपत्यत्वमेति गर्भस्रावो भूसुते चेत्तदानीम् । सूर्ये
तत्रस्थे मृतापत्यभाजो राहौ केतौ स्यात्कुपुत्रो नरस्तु ॥ १०१ ॥

पंचमेश वा शुभग्रह पंचम भावको न देखे और यदि क्रूरग्रहसे भाव दृष्ट युक्त होवै तो गर्भ गिरना कहना ॥ ९९ ॥ चतुर्थमें पापग्रह सप्तममें शुक्र दशममें चन्द्रमा होवै तो संततिसे वर्जित रहै । अन्य जातकोंमें इस योगका नाम वंशच्छेत्ता है । अथवा पंचममें पापराशि पापग्रहसे युक्त दृष्ट हो शुभग्रह उसे देखें तौभी वही फल होता है ॥ १०० ॥ पंचमभावमें शनि होवै तो अपुत्र होता है " अन्य ग्रन्थोंमें एकमात्र पुत्र होना लिखा है, स्वगृही शुभयुक्त दृष्ट होनेसे पुत्रवान् होनाभी लिखा है " मंगल पंचम होवै तो गर्भच्युतिको करता है । सूर्य पंचम जिसका हो उसके पुत्र मरते हैं । राहु केतु पंचम हों तो मनुष्यके कुपुत्र होते हैं ॥ १०१ ॥

चेत्पद्मिनीशे सुतभावसंस्थे नरस्य पुत्रत्रितयं तदा स्यात् ।
हन्त्यग्रजातं शुभवीक्षिते चेत्सौख्यं भवेत्तस्य सुतद्वयस्य ॥ १०२ ॥
चेत्पंचमर्क्षे समराशिवर्गे बुधेन वा सूर्यसुतेन युक्ते ।
सितेन शीतद्युतिनेक्षिते वा कन्याप्रजः स्यान्मनुजो नितांतम् ॥ १०३ ॥
सिताब्जवर्गे सुतभे समर्क्षे ताभ्यां प्रदृष्टे बहुदारिकाः स्युः ।
तत्र स्थिते चेद्विषमर्क्षके वा पुत्रा भवेयुर्मनुजस्य नूनम् ॥ १०४ ॥

सूर्य पंचम होवै और उसे शुभग्रह देखें तो तीन पुत्र होवै उनमेंसे पहिलेवालेका नाश करे पीछेके दोका सुख मनुष्यको होवै ॥ १०२ ॥ पंचममें समराशिका वर्ग हो और बुध अथवा शनिसे युक्त होवै अथवा शुक्र चन्द्रमासे दृष्ट होवै तो मनुष्य सर्वदा कन्या संतानवाला होवै ॥ १०३ ॥ पंचममें सम राशि शुक्र चंद्रमाके वर्गकी हो शुक्र चंद्र उसे देखें तो बहुत कन्या होंगी । यदि पंचममें विषम राशि होवै तो निश्चय मनुष्यके पुत्र होवैं ॥ १०४ ॥

सितस्य भांशे भृगुजेन दृष्टे बहून्यपत्यानि तथा हिमांशोः ।
यद्वेन्दुशुक्रेज्ययुते सुताख्ये तथेक्षिते वा विधुभार्गवाभ्याम् ॥ १०५ ॥

सौरस्य भांशे सुतभेऽब्जयुक्ते वा मंदयुक्ते शशिनि प्रदृष्टे।
पुनर्भुवासंभवदत्तकश्च पुत्रः प्रवाच्यो मनुजस्य नूनम् ॥ १०६ ॥
तथैव मन्दे शशिसौम्ययुक्ते क्रीतः सुतः स्यान्मनुजस्य नूनम्।
ज्ञेनेक्षिते नो रविभूमिजाभ्यां भांशेऽथवा क्षेत्रसमुद्भवः स्यात् १०७॥
जीवादीनां सद्ग्रहाणां च दृष्ट्या सर्वं भद्रं लाभधीस्थैश्च सौम्यैः।
वीर्येणाढ्या प्रीतियुक्तांगना स्यात्क्रूरैर्वाच्या प्रीतिहीनाऽप्यसत्त्वा॥ ८

पंचममें शुक्रकी राशि नवांशक हो उसे शुक्र देखे तो बहुत संतान होवैं। ऐसेही चंद्रमासेभी फल है। यद्वा चंद्रमा शुक्र गुरुसे पंचमभाव युक्त हो तथा चंद्रमा शुक्रसे दृष्ट हो तो वही फल होगा ॥ १०५॥ पंचममें शनिकी राशि नवांशक हो तहां चंद्रमा हो अथवा शनिसे युक्त चंद्रमासे दृष्ट होवै तो पुनर्भुवा (दूसरे घरकी स्त्री) से अथवा दत्तक (किसीका दिया) पुत्र मनुष्यका कहना यह निश्चय है ॥ १०६ ॥ ऐसाही शनि, चंद्रमा तथा बुधसे युक्त होवै तो मनुष्यका निश्चय क्रीत (मोल लिया) पुत्र होवै। यदि बुधसे दृष्ट हो सूर्य मंगलसे दृष्ट न हो वा उसकी राशि नवांशमें हो तो क्षेत्रज (परस्त्रीसे) पुत्र होवै ॥ १०७ ॥ पंचमभावमें गुरु आदि शुभग्रहोंकी दृष्टिसे पंचमभावसंबंधी संपूर्ण फल मंगल होवै। पंचमभाव तथा लाभभावमें शुभग्रह होवै तो स्त्री बलवान् और प्रीतिसे युक्त होवै तथा पापग्रहोंसे प्रीतिसे रहित और निस्तेज होवै ॥ १०८ ॥

पुत्रस्थाने संस्थिता नंदभागा यावत्संख्यैः पापखेटैः प्रदृष्टाः। गर्भा नश्यंत्येव तावत्प्रमाणाः सत्खेटानां तत्र नो वीक्षणं चेत् ॥ १०९ ॥ यावत्संख्यानां नभस्थानगानां पुत्रस्थाने दृष्टिरस्तीति केचित्। तावत्संख्यासंततिः स्यान्नृसंज्ञैः पुत्रास्तस्मिन्कन्यकाः स्त्रीनभोगैः ॥ ११० ॥ तत्तुल्याः स्युस्तत्र ये नंदभागाः सौम्यैः खेटैर्वीक्षितास्ते द्विनिघ्नाः। ज्ञेयाः क्लिष्टाः पापखेटैः प्रदृष्टा मिश्रामिश्रैः संततिः खेचरेन्द्रैः ॥ १११ ॥

पंचमभावमें जितने नवांशक पापदृष्ट हों उतने गर्भ नष्ट होते हैं परंतु उनपर शुभदृष्टि न हो तब यह फल है ॥ १०९ ॥ किसीका मतहै कि, पंचम

भावमें जितने ग्रहोंकी दृष्टि हो उनमें जितने पुरुषग्रहोंकी दृष्टि है उतने पुत्र, जितने स्त्रीग्रहोंकी दृष्टि हैं उतनी कन्या होंगी ॥ ११० ॥ जिन शुभग्रहकी दृष्टि है वे बली हो तो उस संख्यासे द्विगुण पुत्र होवैं। जितने पापग्रहकी दृष्टि हो उतने गर्भका क्लेश और मिश्रसे फलभी मिश्रित जानना ॥ १११ ॥

यत्संख्येऽङ्के पुत्रपे तावती स्यात्संख्या यावद्भिः खलैः खेचरेन्द्रैः । वीक्ष्यंते वै तन्मिता एव गर्भा लीयंते सत्खेचरैश्चेच्छुभं हि ॥ ११२ ॥ एतत्प्रोक्तं श्रीशिवेनैव साक्षाद्दुर्गायै तद्भानुना चारुणाय । सत्यं प्रोक्तं नान्यथा चिंतनीयं होराविद्भिः खेचरेन्द्रैश्च वाक्यम् ॥११३॥ पुत्रस्थानांकेन तुल्या तथात्र संख्या केचिद्धोरिकेन्द्रा वदंति । धीस्थे भौमे पुत्रनाशः खभस्थे सौम्याख्ये वा पुत्रसौख्यं विलंबात् ॥ ११४ ॥ धीस्थे शुक्रेऽब्जेऽथवा सूर्यपुत्रे वाच्या पुत्रस्योदरे वायुजार्तिः। तत्रस्थौ चेच्छुक्रराहू तदानीं पुत्रस्य स्याद्रक्तपित्ते कुजे तु ॥ ११५ ॥

जितने संख्याके राशिमें पुत्रभावेश शुभदृष्ट हो उतनी संख्या गर्भकी शुभ और पापग्रहदृष्टि हो तो उतने गर्भोंकी हानि होती है॥ ११२ ॥ यह विचार साक्षात् शिवजीने दुर्गाके पास कहा, वही सूर्यने अरुणसे कहा इस कारण वह सत्य कहा है। होरा जाननेवालोंने ग्रहोंकरके सत्य जानना अन्यथा चिंतन न करना ॥ ११३ ॥ कोई ज्योतिषी पुत्रभाव राशिकी जो संख्या है उसके तुल्य संतान कहते हैं यह राशिबलके अनुसार है। पंचम मंगल पुत्रनाश करता है। यदि दशम शुभग्रहभी हो तो विलंबसे पुत्रसुख होता है ॥ ११४ ॥ पंचममें शुक्र चन्द्रमा अथवा शनि होवै तो पुत्रके पेटमें वायुसे उत्पन्न पीडा कहनी तथा पंचममें शुक्र राहु होवें तौ भी वायुसे उत्पन्न पीडा होवै और मंगल हो तो पुत्रको रक्तविकार पित्तका विकार कहना ॥ ११५॥

बुद्धिस्थाने जीववर्गे यदा वा सौम्यक्षेत्रे वापि सत्खेटवर्गे । सौम्यैर्दृष्टे त्वौरसः पुत्रकः स्यादेवं क्रूरैः खेचरैर्वैपरीत्यम् ॥१६॥ रविस्त्वेकपुत्रं त्रयं वा प्रदद्याद्विधुः कन्यकायुग्मकं वा

चतुष्कम् । प्रदद्यात्कुजः पुत्रकाणां त्रयं च बुधः पुत्रिकापंचकं वा चतुष्कम् ॥ ११७ ॥ सुतानां गुरुः पंचकं वा चतुष्कं सितो दारिकाणां चतुष्कं च षट्कम् । शनिस्त्वेकपुत्रं सुतायुग्मकं तु प्रवाच्यं ग्रहाणां युतेर्वीक्षणाद्वा ॥ ११८ ॥

पंचमस्थानमें गुरुका वर्ग हो अथवा बुधकी राशि वा किसी शुभग्रहका वर्ग हो और शुभग्रहोंसे दृष्ट होवै तो औरस पुत्र (विवाहितासे यथाविधि उत्पन्न) होगा, क्रूर ग्रहोंसे विपरीत जानना ॥ ११६ ॥ पाहिले जो प्रत्येक ग्रहके पंचमगत फल कहे हैं उनमें विशेष शुभग्रहकी दृष्टि और योग, ग्रहबल, राश्यादिवर्गके अनुसार फल कहते हैं कि, सूर्य उक्त प्रकारका पंचममें हो तो एक वा तीन पुत्र देता है । चंद्रमा दो वा चार कन्या, मंगल तीन पुत्र, बुध चार वा पांच कन्या, गुरु चार वा पांच पुत्र, शुक्र चार वा छः कन्या, शनि, एक पुत्र दो कन्या, उक्त प्रकार होनेपर देता है॥ ११७॥ ११८॥इति पंचमभावविचारः ॥

अथ षष्ठभावविचारः ।

वक्ष्ये षष्ठस्थानसंस्थं फलं तत्क्रोडं प्रोक्तं मानवानां शिवाद्यैः । तुर्यांघ्रीणां क्रूरकर्माऽऽमयानां संग्रामाणां मातुलानां रिपूणाम् ॥ ११९ ॥ चिंता शंका सर्वमेतद्विचिंत्यं शत्रुस्थाने हौरिकैर्बुद्धिमद्भिः । तत्पे तत्स्थे वीर्ययुक्ते शुभे वा तत्स्थानस्थं शोभनं सर्वमेव ॥ १२० ॥

अब छठे भावमें स्थित फल कहते हैं—यह भाव मनुष्योंका पेटसंज्ञक शिवादियोंने कहे हैं, इसमें चतुष्पद, क्रूरकर्म, रोग, संग्राम, मामा, शत्रु ॥ ११९ ॥ इतनोंकी चिंता शंका सब शत्रुस्थानमें बुद्धिमान् ज्योतिषी विचारैं। षष्ठेश छठे भावमें हो वीर्यवान् हो अथवा शुभ होवै तो उस स्थानोक्त समस्त फल शुभ होता है ॥ १२० ॥

शत्रुस्थानं सौम्यभं सौम्ययुक्तं सौम्यैर्दृष्टं शोभनं संप्रदिष्टम् । यद्वा क्रूरैः संयुतं क्रूरदृष्टं क्रूरक्षेत्रं नैव तच्छोभनं स्यात् ॥ १२१ ॥ चन्द्रो वा भृगुजः सुरेज्यशशिजौ वीर्यान्वितोऽरिस्थितस्तद्गेहं बहुगोधनेन सहितं वा सौरभेयैर्धनैः । सूर्यो

वा रुधिरो यदा पशुमयं वाऽजाविकं चोष्ट्रजं मंदोऽगुश्च शिखी तदा नरगृहे स्यात्सौरभीणां धनम् ॥ १२२ ॥

छठे भावमें शुभग्रहकी राशी हो शुभयुक्त हो शुभग्रहोंसे दृष्ट हो तो तद्भावोक्त फल शुभ कहा है। पापयुक्त पापदृष्ट पापराशि हो तो शुभ न होवै ॥ १२१ ॥ चंद्रमा शुक्र गुरु बुध इनमेंसे कोई बलवान् छठे भावमें हो तो उस मनुष्यका घर गोधन वा बैलोंसे युक्त रहे। सूर्य वा मंगल होवै तो पशुमय भेड बकरी ऊंट रहे। शनि राहु केतुमेंसे कोई होवै तो घरमें गोधन बहुत होवै ॥ १२२ ॥

शनिस्तमो वाऽरिगृहस्थितश्चेत्स्यादप्रजत्वं खलु मातुलस्य। काष्ठाश्मघातेन चतुष्पदा वा तरुप्रपातेन जलेन मृत्युः ॥ १२३ ॥ सूर्योऽथ वाऽऽरो रिपुभावसंस्थः शस्त्राग्निघातस्त्वथवाग्निदग्धम्। करोति मर्त्यस्य च मातुलस्य विषोत्थदोषेण विदूषितं वा ॥ १२४ ॥ चंद्रे शुक्रे ज्ञेऽथवा शत्रुसंस्थे कन्यापत्यो मातुलः स्यान्नरस्य। वीर्याढ्येज्ये सुप्रजाः सौख्ययुक्तः पुत्रापत्यो भ्रातृसौख्यान्वितः स्यात् ॥ १२५॥ पुण्ये षष्ठे विक्रमे पापखेटाः स्वल्पं सौख्यं सोदराणां प्रवाच्यम्। पापैः पीडा मातुलानामरिस्थैः क्रूरैर्ज्ञेया विक्रमे सोदराणाम् ॥१२६॥

शनि राहु छठे भावमें होवै तो उसका मामा अपुत्र होवै तथा काठ पत्थरके चोटसे वा चौपायोंसे यद्वा वृक्षसे गिरकर वा जलमें डूबकर मृत्यु जाननी ॥ १२३ ॥ सूर्य वा मंगल छठे भावमें होवै तो मनुष्यके मामाको शस्त्र अग्नि प्रहार अथवा अग्नि दग्ध करता है अथवा विषसे उत्पन्न दोषसे दूषित करता है ॥ १२४ ॥ चंद्र शुक्र अथवा बुध शत्रुभावमें होवै तो उसके मामाकी कन्याही संतति होगी। बलवान् गुरु छठा होवै तो उसका मामा सुखयुक्त पुत्रसंततिवाला भाइयोंके सुखसे युक्त होवै ॥ १२५ ॥ नवम, छठे, तीसरे भावमें पापग्रह हों तो भाइयोंका सुख अल्प मिलैगा ऐसा कहना तथा पापग्रहोंसे मातुलोंको पीडा होती है। छठे पापसे मामाको, तीसरेसे भाईको पीडा होवै ॥ १२६ ॥

स्त्रीखेचरैः शत्रुगृहोपयातैः सौख्यं प्रवाच्यं भगिनीसमुत्थम् । मातृष्वसासंभवकं सवीर्यैः सौम्यैः प्रवाच्या पतिपुत्रयुक्ता ॥ १२७ ॥ दुःखेनाढ्याऽरिस्थितैः पापखेटैर्मिश्रैर्मिश्रा जातकज्ञैः प्रवाच्या । यज्जातीयः खेचरो यस्य षष्ठे तज्जातीया वैरिणस्तत्पातिर्वा ॥ १२८ ॥ शत्रुः सूर्ये क्षत्रियोऽब्जे स्वकीयः शत्रुस्थे चेद्भूसुते स्यात्तुरुष्कः । सौम्ये नारी देवपूज्येऽग्रजातः शुक्रे वेश्या राहुमन्देऽन्त्यजश्च ॥ १२९ ॥

छठे भावमें स्त्रीग्रह होवै तो बहिनसे सुख मिलै, तहां शुभग्रह बलवान् हो तो पतिपुत्रवाली माकी बहिन (मौंसी) से सुख मिलै ॥ १२७ ॥ शत्रुस्थामनें पापग्रह होवे तो बहिन तथा मौंसी दुःखयुक्त और मिश्रितग्रह हो तो मिश्रित फल जातकज्ञ कहैं । जिनके छठे भावमें जिस जातिका ग्रह हो उनके उसी जातिके वैरी होंगे । छठेमें कोई ग्रह न हो तो भावेशके जातिके जानने ॥ १२८ ॥ सूर्यसे क्षत्रिय, चंद्रमासे अपना मनुष्य, मंगलसे तुरुक, बुधसे स्त्री, गुरुसे ब्राह्मण, शुक्रसे वेश्या, राहुशनिसे चांडाल शत्रु जानना ॥ १२९ ॥

स्वर्भानौ वा सूर्यजे शत्रुसंस्थे तत्कट्यां स्याच्छ्यामलं लाञ्छनं च । तत्र स्थानेशेऽप्यथो वायुना वा तन्नारीणां चिह्नमेतत्प्रवाच्यम् ॥ १३० ॥ शत्रुस्थे क्षितिजेऽथवा दिनकरे शस्त्राभिघातो व्रणो मेहो वा मनुजस्य वह्निविषजा पीडाऽस्थिभंगोद्भवा । यद्वा रक्तसमुद्भवाऽप्यतितरां पुंसां रमण्यास्तु वा जंघायां गलकेऽथ दक्षिणपदे चिह्नं भवेन्नान्यथा १३१

राहु वा शनि छठा होवै तो उसकी कटिस्थानमें काला चिह्न (लाखण) होवै । षष्ठेश शनि और राहुसे युक्त होवै तो उसकी स्त्रीकी कमरमें वायुकृत पीडा वा चिह्न होवै कहना ॥ १३० ॥ छठे स्थानमें मंगल वा सूर्य होवै तो शस्त्रसे चोट व्रण अथवा प्रमेह अथवा अग्नि विषसे उत्पन्न पीडा मनुष्यको होती है अथवा हड्डी टूटनेसे पीडा होती है वा रुधिरसे उत्पन्न अतिपीडा अथवा स्त्रीके जंघामें कंठमें वा दाहिने पैरमें चिह्न होता है, इसमें अन्यथा नहीं ॥ १३१ ॥

षष्ठे भौमेऽस्तेऽप्यगौ मातृपक्षाद्वैकल्यः स्याच्चापवादेन मर्त्यः ।
शत्रुस्थानं भानुना युक्तदृष्टं कट्यां शूलं शत्रुनाशो नरस्य॥१३२॥
षष्ठे भानौ मंत्रिणा युक्तदृष्टे शत्रोर्भीतिर्वा नरस्य स्त्रियाश्च ।
अर्द्धांगादेर्नाशनं वा विकारो वाच्यः कट्यां शृङ्गिभिः काष्ठतो वा१३३

छठा मंगल सप्तम राहु होवै तो माताके पक्षसे मनुष्य अपवादसे विकल होवै । छठा भाव सूर्यसे युक्त वा दृष्ट होवै तो कमरमें शूल रहे तथा उस मनुष्यके शत्रु नाश होवै ॥ १३२ ॥ छठा सूर्य गुरुसे युक्त वा दृष्ट हो तो मनुष्यकी वा उसकी स्त्रीको शत्रुकी भय होवै, अर्द्धांग आदिकसे विकार या मरण कहना, कमरमें सींगवालेसे वा काष्ठसे विकार कहना ॥ १३३ ॥

शत्रुस्थोऽब्जो ज्ञोऽथवा देवपूज्यः पुंसां नूनं स्वल्पमृत्युं विधत्ते । तत्रस्थौ वा मन्दराहू कुजो वा नष्टो वाच्यो मातुलो दुष्टयुक्त्या ॥ १३४ ॥ खस्थे चन्द्रे गीष्पतौ वित्तसंस्थे द्वंद्वं वाच्यं मातुलानां त्रयं वा । षष्ठे भौमेऽब्जेऽथवा मातुलः स्यादेकोऽकस्माच्छत्रुभीत्या व्यथार्तः ॥ १३५ ॥ शत्रुस्थाने यदा शुक्रस्तदा मातृष्वसुः सुखम् । त्रयाणां च द्वयोर्वापि वक्तव्यं दैववेदिना ॥ १३६ ॥

शत्रुस्थानमें चंद्रमा बुध वा बृहस्पति होवै तो मनुष्योंको अल्पमृत्यु देता है । तहां शनि राहु वा मंगल होवै तो उसके मामा दुष्ट युक्तिसे नष्ट हुए कहना ॥ १३४ ॥ दशम चंद्रमा दूसरा बृहस्पति होवै तो उसके मामा दो अथवा तीन होंगे। छठा मंगल अथवा चंद्रमा होवै तो एक मामा होवै तथा अकस्मात् शत्रुकी भयसे व्यथासे पीडित रहै ॥ १३५ ॥ यदि छठा शुक्र होवै तो माकी बहिन (मौसी) का सुख दो वा तीनका ज्योतिषी कहैं ॥ १३६ ॥ इति शत्रुभावविचारः ॥

अथ सप्तमभावविचारः ।

फलं प्रवक्ष्ये किल सप्तमस्य बस्तिः स्मृता सा मनुजस्य तस्मात् ।
वादप्रयाणागमनं कलत्रं वीक्ष्यं वणिज्यं व्यवहारकं च ॥ १३७ ॥

शुभं गृहं शुभेक्षितं शुभैर्युतं च शोभनम् ।
भवेत्खलक्षकं युतेक्षितं खलैस्तु तन्न सत् ॥ १३८ ॥

अब सप्तम भावके फल कहते हैं कि, यह मनुष्यका बस्तिस्थान है इससे विवाद, गमन, आगमन, स्त्री, वणिज (व्यौपार) का विचार करना ॥ १३७॥ भावमें शुभराशि शुभग्रहसे दृष्ट युत होनेमें उक्त विचार सब शुभ, पापराशि पापदृष्टि योगसे उक्त विचार अशुभ होते हैं ॥ १३८ ॥

जीवे शुक्रेऽर्के विधौ गौरवर्णा नारी भौमे रक्तवर्णा प्रवाच्या ।
ईषच्छ्यामा नीलवर्णा बुधे वा मन्दे राहौ श्यामवर्णा सुधीभिः १३९
सूर्ये वाच्या कालजीर्णा बुधेऽब्जे बाला शुक्रे यौवनारेऽप्यतीता ।
जीवे रम्या पुत्रसूः सद्गुणाढ्या नारी मन्दे सैंहिकेयेऽतिवृद्धा॥ १४०॥

गुरु शुक्र सूर्य चंद्रमामेंसे कोई सप्तम होवै तो स्त्री गोरे रंगकी कहनी । बुधसे थोडी श्याम वा नीलवर्णकी, शनि राहुसे कृष्णवर्णकी स्त्री पंडित कहें॥ १३९॥ सूर्य सप्तम हो तो वेसी अवस्थावाली, बुध चंद्रमासे सर्वदा छोटी अवस्थाकी, शुक्रसे युवावस्थाकी, मंगलसे गतयौवना मध्य अवस्थावाली, गुरुसे रमणीय एवं पुत्र जननेवाली, सुगुणयुक्त, शनि राहुसे अतिबूढी स्त्री होगी॥ १४०॥

क्लीबा मन्दे सैंहिकेये प्रवाच्या चन्द्रे शुक्रे स्त्रीस्वभावाऽस्त-भावात् । अन्यैः खेटैरंगना पुंस्वभावा द्यूने होराशास्त्रविद्भिः स्वबुद्ध्या ॥ १४१ ॥ सौम्यैर्युक्तं सौम्यभं सौम्यदृष्टं वाच्यं पुंसां श्वश्रुपक्षोद्भवं च । सौख्यं स्त्रीणां मिश्रखेटैर्विमिश्रं जायागेहं क्रूरखेटैर्न किञ्चित् ॥ १४२ ॥ पत्नीस्थाने शुक्रवर्गे सितेन दृष्टे यद्वा सौम्यवर्गे च तेन । पुंसां वाच्यं शं च बह्वंग-नानां यद्वा जीवे चैकपत्नीसमुत्थम् ॥ १४३ ॥

शनि वा राहु सप्तम होवै तो स्त्री क्लीब कहनी, चंद्रमा शुक्रसे सप्तम भावसे राश्यंशके अनुसार स्त्रीस्वभाववाली तथा अन्य ग्रहोंसे पुरुषोंके जैसे स्वभाव-वाली स्त्री, होराशास्त्र जाननेवाले विशेषतः अपनी बुद्धिसे कहें ॥ १४१ ॥ सप्तममें सौम्यराशि सौम्यग्रहसे दृष्ट होवे तो पुरुषोंको सासके पक्षसे तथा स्त्री-पक्षसे सुख तथा स्त्रियोंकोभी सासके पक्षसे सुख कहना । शुभ पाप मिश्रित हो

तो फलभी मिश्रित कहना । सप्तममें पापराशि पापग्रहकी दृष्टियोगसे सास आदि पक्षका सुख न होगा ॥ १४२ ॥ सप्तमभावमें शुक्रका राश्यादि वर्ग हो उसपर शुक्रकी दृष्टि हो अथवा शुभवर्ग शुभदृष्ट हो तो बहुत स्त्रियोंका सुख कहना, गुरुके वर्ग दृष्टि योगसे एक स्त्रीका सुख कहना ॥ १४३ ॥

शुक्रेन्द्वीज्ये द्यूनगे शुक्रदृष्टे द्वाभ्यां चैकेनैव वा पूरुषस्य । वैषां गेहे चोपगे वीक्षिते वा भावैर्दुष्टाः सन्ति नार्यः सगर्वाः ॥ १४४ ॥

द्यूनेऽर्के क्षितिजे नरस्य रमणी पित्तव्रणेनान्विता दग्धा वा विषवह्निना यदि तदा वा बस्तिरोगान्विता । चन्द्रे शीर्ष-रुजान्विता च सततं शुक्रे तु किञ्चित्कृशाऽथो वन्ध्यत्व-विदूषिता क्षितिसुते वाच्या विदंता कृशा ॥ १४५ ॥ द्यूनस्थे-ऽर्कसुतेऽथ जैमिनिसुते पुंसः पुरंध्री भवेत् काष्ठाश्मायसका-दिना विनिहता तुर्यांघ्रिणा वा हता । यद्वा वातरुजान्विता च सततं नूनं च वा चञ्चला तत्कटयां च समादिशेन्मति-वरैः श्यामं तथा लाञ्छनम् ॥ १४६ ॥

शुक्र चंद्रमा गुरु सप्तममें शुक्रदृष्ट तीनोंमेंसे दो वा एकभी होवै वा इनकी राशिमें हो वा इनसे दृष्ट हो तो उस पुरुषकी स्त्रियें भावसे दुष्ट अहंकारयुक्त हैं ऐसा कहना ॥ १४४ ॥ सप्तममें यदि सूर्य वा मंगल होवै तो मनुष्यकी स्त्री पित्तव्रणसे युक्त होवै अथवा विष आग्निसे दग्ध होवै अथवा बस्ति नाभिके नीचेके स्थानमें रोगयुक्त रहे, चंद्रमा होवै तो शिरके रोगसे युक्त सर्वदा रहे, शुक्रसे थोडा कृश रहै, मंगलसे बांझपनसे दूषित, दंतरहित और कृश कहनी ॥ १४५ ॥ सप्तममें शनि वा राहु होवै तो पुरुषकी स्त्री वेश्या होगी। काष्ठ, पत्थर लेहोसे ताडित अथवा चतुष्पदसे ताडित स्त्री होगी अथवा वातरोगसे युक्त सर्वदा निश्चय उसकी स्त्री रहै । अथवा चंचला होवै तथा बुद्धिमान् उसकी कमरमें श्याम (दाग) लाञ्छन कहें ॥ १४६ ॥

यादृशं तनुगतैर्ग्रहैः फलं तादृशं तु खलु तस्य योषितः । चिन्तनीयमखिलं सचिह्नकं बुद्धिमद्भिरपि दैवचिंतकैः ॥ १४७ ॥

द्यूनस्थितेऽर्के म्रियते पुरन्ध्री प्रसूतिदोषेण तथा ज्वरेण ।
वा सन्निपातेन कृशानुना वा यद्वाऽतिसारेण विषेण वाऽपि ॥१४८॥
तथा विधौ भूमिसुतेऽस्तसंस्थे व्रणेन यद्वाऽप्युदरामयेन ।
मन्देऽस्तसंस्थे कृमिणा जलेन यद्वा गृहेशी म्रियतेऽब्जवक्त्रा॥१४९॥

जिस प्रकार लग्नस्थित ग्रहोंसे पुरुषके फल कहे हैं तैसेही सप्तमभावस्थ ग्रहोंसे उसकी स्त्रीको बुद्धिमान् ज्योतिषी विचारके कहैं ॥ १४७ ॥ सप्तम स्थानमें नीचादिगत सूर्य होवै तो पतिपुत्रवती पत्नी प्रसूतिदोषसे तथा सन्निपातसे वा ज्वरसे वा अग्निसे वा अतिसारसे अथवा विषसे मरे ॥ १४८ ॥ ऐसा चंद्रमा वा मंगल सप्तम हो तो व्रणसे अथवा उदररोगसे मरे। शनि सप्तम हो तो कृमिरोगसे वा जलसे कमलके समान मुखवाली घरकी स्वामिनी वा स्त्री मरे ॥ १४९ ॥

राहौ द्यूनगृहस्थिते तु पशुभिर्वा शस्त्रघातैस्तथा
डाकिन्या निजकर्मणा तु युवतेः केतौ सचन्द्रेऽप्यगौ ।
नीरोत्थैश्च विकारकैश्च नियतं वा नीरमध्ये मृतिः
प्लीहाद्यैः शिशिरामयैः क्षययुतैश्चन्द्रे सपापे भवेत् ॥ १५० ॥

राहु सप्तम होवै तो पशुओंसे वा शस्त्रोंके घातसे तथा डाकिनी (यक्षिणी) आदिके दोषसे अपनेही कर्मके बहानेसे स्त्री मरे। चंद्रमायुक्त राहु वा केतु सप्तम होवै तो जलसे उत्पन्न विकारोंसे वा जलके बीचमें निश्चय मरण होवै। चंद्रमा सपाप सप्तममें हो तो प्लीहा (पिलही) आदि रोगोंसे, शीतरोगोंसे वा क्षयरोगोंसे युक्त स्त्रीका मरण होवै ॥ १५० ॥

खेटान्रन्ध्रस्थानसंस्थान्समीक्ष्य तद्वद्द्यूनस्थानसंस्थान्स्वबुध्या ।
वाच्यं यत्नेनैव तत्तत्फलं हि होराविद्भिः पण्डितैः शास्त्रदृष्ट्या१५१
द्यूनस्थैश्चेत्क्रूरखेटैस्तदा स्यात्स्वल्पं सौख्यं चांगनानां बहूनाम् ।
सौम्यैः खेटैस्तत्रगैर्मानवस्य जाया चैका सौख्ययुक्ता प्रवाच्या१५२॥

अष्टमस्थानगत तथा सप्तमस्थानगत ग्रहोंको देखके अपनी बुद्धिसे होराशास्त्रके पंडित शास्त्रदृष्टिसे यत्नपूर्वक फल कहैं ॥ १५१ ॥ सप्तममें क्रूरग्रहोंसे

बहुत स्त्रियोंका भी थोडा सुख मिलता है । शुभग्रह तहां हो तो मनुष्यकी एक स्त्री सुखयुक्ता कहनी ॥ १५२ ॥

द्यूने सौम्यैः पूरुषो मन्मथाढ्यः क्रूरैरेवं चाल्पकामः प्रवाच्यः ।
क्लीबैः क्लीबत्वं समाप्नोति सूर्ये जायामृत्युर्जीविता चेत्सरोगा ॥१५३॥
स्वर्भानौ चेद्द्यूनगे पापदृष्टे पापैर्युक्ते नैव पत्नीयुतिः स्यात् ।
संभूता वा मीयते स्वल्पकालात्सौम्यैर्युक्ते वीक्षिते वा विलंबात् १५४

सप्तममें शुभग्रह हो तो पुरुष कामदेवसे युक्त अर्थात् अतिकामी होवै ऐसेही क्रूरग्रहसे अल्पकामी होवै, नपुंसक ग्रहोंसे नपुंसक कहना और सूर्य होवै तो स्त्री मरे, यदि जीवित रहे तो रोगयुक्त रहे ॥ १५३ ॥ राहु सप्तममें पापग्रहोंसे दृष्ट होवै तो पत्नीका मेल नहीं होवै और होवेभी तो थोडेही समयमें मरजाती है । यदि शुभग्रहोंसे युक्त दृष्टभी होवै तो बहुत कालमें मरे ॥ १५४॥

रंध्रे मन्देऽस्ते कुजे मानवस्य पत्नीयुग्मं स्यात्तदानीं तथैका ।
नष्टा वाच्या निश्चितं जातकज्ञैर्गुह्यस्थाने लाञ्छनं कृष्णवर्णम् ॥ १५५
तत्र स्थाने चन्द्रदृष्टिर्नरस्य भार्या नूनं चञ्चला स्यान्नितांतम् ।
यद्वा द्यूने जीववर्गे बुधेन युक्ते दृष्टे कामगेऽब्जे तथा स्यात् ॥ १५६॥
सौरे वर्गे द्यूनभे वा कुजस्य ताभ्यां दृष्टे दंपती चञ्चलौ स्तः ।
तत्र स्थेऽब्जे भार्गवे वा तदानीं मर्त्यः स स्यादन्यदेशाभिगामी॥५७॥

अष्टममें शनि, सप्तममें मंगल होवै तो मनुष्यकी दो स्त्री होवैं । उनमेंसे एक नष्ट होगी यह जातकज्ञ निश्चय कहैं तथा गुह्यस्थानमें काले रंगका लाञ्छनभी कहें ॥ १५५ ॥ ऐसे योगमें उस स्थानमें चंद्रमाकी दृष्टिभी होवै तो निश्चय उसकी स्त्री सर्वदा अति चंचला होगी । अथवा सप्तममें गुरुका राश्यादिवर्ग बुधसे युक्त वा दृष्ट और सप्तम चंद्रमाभी होवै तो भी वही फल होगा ॥ १५६ ॥ सप्तममें शनिका वर्ग अथवा मंगलका वर्ग हो और शनि मंगल सप्तम भावको देखें तो स्त्री पुरुष दोनों चंचल होंगे, तहां चंद्रमा वा शुक्र होवै तो मनुष्य परदेश जानेवाला होवै ॥ १५७ ॥

एकत्रस्थाश्चन्द्रमन्दावनेयाः पौंश्चल्यत्वं ते नृनार्योः प्रकुर्युः ।
सौम्यांशे वा द्यूनपे सौम्यदृष्टे वेश्यातुल्या कामिनी स्यान्नरस्य॥५८॥

लग्ने द्यूने द्वादशे पापखेटाः क्षीणे चन्द्रे धीस्थिते वा खलर्क्षे।
पत्नीहीनो मानवः स्यान्नितांतं पुत्रैर्हीनश्चेति वै चिन्तनीयम्॥१५९॥
मूर्त्तौ षष्ठे वा व्यये भास्करेन्दू पुत्रो मर्त्यस्यैककैवाऽपि पत्नी।
द्यूनस्थौ चेद्भार्गवारौ च यद्वा धीधर्मस्थौ स्यात्तु वैकल्यदोषः॥१६०॥

चंद्रमा शनि मंगल इकट्ठे होवैं तो वे स्त्री पुरुष दोनों व्यभिचार करें। सप्तमेश बुधके अंशमें बुधसे दृष्ट होवे तो मनुष्यकी स्त्री वेश्याके तुल्य होवे॥ १५८॥ लग्न सप्तम और व्यय भावमें पापग्रह क्षीण चंद्रमा पंचम वा पापराशिमें होवै तो पुरुष सर्वदा स्त्रीहीन पुत्रहीन जानना ॥ १५९ ॥ लग्नमें छठेमें वा व्ययमें सूर्य चन्द्रमा होवैं तो मनुष्यके एक स्त्री और एक पुत्र होगा। अथवा मंगल शुक्र सप्तममें वा पंचम नवममें हों तो विकलता दोष स्त्रीपर रहै अर्थात् स्त्री सर्वदा विकल रहे ॥ १६० ॥

लग्नाच्चन्द्रात्पापखेटाः कलत्रे हन्युः पुंसां वीर्ययोगात्कलत्रम्। चेन्मन्देन्दू द्यूनसंस्थौ तदानीं भार्या मर्त्यस्यैव पौनर्भवा स्यात् ॥ १६१ ॥ भूमीपुत्रे द्यूनभावोपयाते कान्ताहीनः संततं मानवः स्यात्। लब्ध्वा नूनं मीयते मन्ददृष्टे सौम्यैः खेटैर्वीक्ष्यते नैव चात्र ॥ १६२ ॥ गण्डान्तर्क्षे द्यूनभावे च शुक्रे भास्वत्पुत्रे लग्नगे चेत्तदानीम्। वंध्याधीशः पूरुषः स्यान्नितांतं नो सौम्यर्क्षे नेक्षिते सद्ग्रहैश्चेत् ॥ १६३ ॥

लग्न और चंद्रमासे पापग्रह सप्तम भावमें पुरुषके वीर्ययोगसे स्त्रीको मारते हैं। यदि शनि चन्द्रमा सप्तम हों तो पुरुषकी स्त्री पौनर्भवा (दूसरे जगह ब्याही) होवै ॥ १६१ ॥ मंगल सप्तम होवै तो वारंवार स्त्रीहीन मनुष्य होता है। उसपर शनिकी दृष्टि भी हो तो स्त्री मिले फिर मर जावे, शुभग्रहकी दृष्टिभी होतो यह फल नहीं होगा ॥ १६२ ॥ सप्तम शुक्र गंडांत राशियों ४ । ८ । १२ का हो तथा यदि शनि लग्नमें हो तो उसकी स्त्री वांझ होवै, यदि शुभ ग्रहोंका योग दृष्टि न हो तब यह फल है ॥ १६३ ॥

द्यूनस्थानाधीशनंदांशतुल्याः खेटानां वा वीक्षणादेव नार्यः।
एकैका स्यादर्कभूपुत्रयोश्च नंदांशे वा सौम्यशन्योर्नरस्य ॥ १६४ ॥

शत्रुस्थाने यदा भौमः सप्तमे सिंहिकासुतः । नैधने भानु-
पुत्रश्चेत्तस्य भार्या न जीवति ॥ १६५ ॥ धर्मस्वामी धर्मगो
धर्मसंस्थौ सूर्यक्ष्माजौ चेत्तदाग्निप्रवेशम् । कुर्यात्पत्नी लग्न-
यामित्रनाथे मित्रे स्यातां नान्यथा सद्भिरुक्तम् ॥ १६६ ॥

सप्तमेश जितने नवांशकपर है उतनी स्त्री होवैं वा उसे जितने ग्रह देखते हैं उनके तुल्य स्त्रियोंकी संख्या कहनी, इन दोनोंमें बलाबल विचार स्वबुद्धिसे कहना । सूर्य मंगलके वा बुध शनिके नवांशकमें हो तो एकही स्त्री कहनी ॥ १६४ ॥ छठा मंगल, सप्तम राहु हो तथा यदि अष्टममें शनि भी होवै तो स्त्री नहीं बचे ॥ १६५ ॥ नवमेश नवममें हो तथा सूर्य मंगल नवममें हों तो स्त्री पतिके साथ अग्निमें प्रवेश करेगी । परंतु लग्नेश और सप्तमेश परस्पर मित्र हों तो वह सती होती है, अन्यथा सज्जन नहीं कहें ॥ १६६ ॥

इति सप्तमभावविचारः ॥

अष्टमभावविचारः ।

वक्ष्ये सम्यङ् नैधनस्थं फलं तद्गुह्यं प्रोक्तं शूलिना पूरुषस्य ।
नद्युत्तारो मार्गवैषम्यचिन्ता नौकाभीतिर्दुर्गसंवेष्टनं च ॥ १६७ ॥
शत्रोर्भीतिर्वस्तुनाशो हृतिर्वा व्याध्युत्पत्तिर्युद्धकालस्य संख्या ।
छिद्रालोकं बंधनं सर्वमेतद्रन्ध्रस्थाने चिन्तनीयं सुधीभिः ॥ १६८ ॥

अष्टमभावफल कहते हैं—यह भाव पुरुषका गुह्यस्थानसंज्ञक शिवजीने कहा है, इसमें नदी उतरना, मार्ग, विषमस्थान, नौका, भय किला घेरना ॥ १६७ ॥ शत्रुकी भय, वस्तुकी हानि वा नाश, रोगोत्पत्ति, युद्धकालकी संख्या, छिद्रका देखना, बंधन इन्होंका सब विचार बुद्धिमान् करें ॥ १६८ ॥

अत्र प्रधानः खलु शीतरश्मिः शुभग्रहाः सत्फलदास्तदीशैः ।
धनोपगैर्यत्फलमुक्तमत्र तन्नैधनर्क्षोपगतैर्विचिन्त्यम् ॥ १६९ ॥
सधनः स्यान्नरो नूनं यदा सौम्या मृतिस्थिताः । क्रूरग्रहाश्च
तत्रस्था धनहीनस्तदा भवेत् ॥ १७० ॥ खलैर्मृत्युगैः सव्रणं वा
सघातं सचिह्नं भवेत्तस्य मर्त्यस्य गुह्यम् । तथा वामकट्यां
व्रणं लाञ्छनं च सभार्यस्य वा जातकज्ञैः प्रवाच्यम् ॥ १७१ ॥

अष्टम भावमें प्रधान चंद्रमा है, अष्टम भावमें शुभग्रहकी राशि शुभफल देती है और जैसा फल धनभावगत ग्रहोंके कहे हैं तैसेही अष्टम भावगत ग्रहोंसे भी विचारना ॥ १६९ ॥ शुभग्रह अष्टमस्थानोंमें होवै तो वह मनुष्य सर्वदा धनसहित रहता है । यदि क्रूरग्रह तहां हों तो धनहीन होता है॥ १७० ॥पाप-ग्रह अष्टम हो तो व्रणसहित वा चोट लगनेके दागसहित वा किसी प्रकारका चिह्नसहित उसका गुह्यस्थान होवै तथा बाईं कमरमें घाव वा लाञ्छन होवै और स्त्रीके भी गुह्य कटिस्थानमें भी ऐसाही चिह्न होवै ॥ १७१ ॥

क्रूरैश्चाष्टमसंस्थितैश्च मनुजो रोगान्वितो म्रियते युद्धे स्यात्
कलहश्चिरं तु सहसा भंगो न दुर्गस्य च । बंधस्थोऽप्यचिराद्
विमुच्यत इहाथो वा द्वितीयस्थिते नौका याति सुखेन भार-
भरिता वाच्यं विचिन्त्याखिलम् ॥ १७२ ॥ मृत्युस्थितेऽर्के
मनुजोऽथ यद्वा पापैर्नभोगैः क्षयकासयुक्तैः । भगंदरप्लीह-
गुदामयैश्च प्रपीडितः स्याज्ज्वरकुष्ठमेहैः ॥ १७३ ॥

क्रूरग्रह अष्टम हो तो मनुष्य रोगयुक्त रहै, युद्धमें मरे, कलह बहुत काल-पर्यन्त रहै, किला एकाएकी न टूटे, बंधनमें पडा हुआ शीघ्र छूट जावै अथवा दूसरे भावगत क्रूरसेभी ऐसा फल संपूर्ण योगादि विचारके कहना तथा भारसे लदी हुई नाव भी सुखपूर्वक पार लगे ॥ १२ ॥ अष्टममें सूर्य अथवा कोई पापग्रह होवै तो क्षयरोग, कासरोग, भगंदर प्लीहा, गुदाके रोग तथा ज्वर कुष्ठ प्रमेहमेंसे ग्रहके धात्वनुसार रोगसे पीडित रहै ॥ १७३ ॥

इति अष्टमभवविचारः ॥

अथ नवमभावविचारः ।

फलं प्रवक्ष्ये नवमस्य पुंसां मुहुः स्मृतो वामपदः स एव ।
तीर्थं प्रयाणं विमलं च शीलं धर्मक्रियाभाग्यसमुद्भवाश्च ॥ १७४ ॥
प्रासादवाप्यादिकमत्र सर्वं पुण्याभिधाने भवने विचिंत्यम् ।
फलं यदुक्तं सहजेऽनुजानां तदेव वाच्यं नवमे सुधीभिः ॥ १७५ ॥

अब पुरुषोंके नवमभावके फल कहता हूं कि, यह भाव वामपदसंज्ञक कहा है इसमें तीर्थ, गमन, निर्मलशील, धर्मकृत्य, ऐश्वर्य होना ॥ १७४ ॥ मंदिर

बावली आदि समस्त धर्मक्रिया विचारनी और भाइयोंको जो फल तीसरे भावमें कहा है वही इस भावसेभी पंडित कहैं ॥ १७५ ॥

सोम्ये तत्पे चन्द्रसत्खेटयुक्ते तत्स्थं सर्वं शोभनं स्यात्खलेन । युक्तो रोगैः पीडितः सव्रणश्च वामे पादे सद्ग्रहैर्नेक्षितश्चेत् ॥ १७६ ॥ भग्नास्थी कुनखी भवेत्तु मनुजो राहौ च धर्मस्थिते भूपुत्रेऽग्निविषार्दितः सितरुचौ सूर्ये च तत्रास्थिते । काष्ठेनायुधकेन चापि दृषदा संपीडितश्चेच्छुभैः स्त्रीखेटैर्भगिनीयुतो नरखगैः स्याद्भ्रातृसौख्यान्वितः ॥ १७७ ॥

नवमेश शुभग्रह हो, चंद्रमा यद्वा अन्य शुभग्रह नवममें हो तो नवमभावोक्त समस्त फल शुभ होते हैं । पापयुक्त भाव होवे तो रोगोंसे पीडित व्रणसहित वामपादमें होवे । यदि शुभ ग्रहभी देखें तो इतना क्रूर फल नहीं होता ॥ १७६ ॥ राहु नवम हो तो मनुष्यकी कोई हड्डी टूटी हो, नख कुरूप हों, मंगल नवम हो तो अग्नि वा विषसे पीडित हो, चंद्र वा सूर्य तहां हो तो काष्ठसे पत्थरसे तथा शस्त्रसे पीडित होवै, शुभग्रहोंमेंसे स्त्रीग्रह हो तो बहिन पुरुषग्रहके भाईके सुखसे युक्त रहे ॥ १७७ ॥

नरः सपापः कृपणश्च धर्मे न पुण्यसिद्धिः खलखेटयुक्ते । धर्मस्य सिद्धिं सततं प्रकुर्युः शुभग्रहास्तत्र गता नराणाम् ॥ १७८ ॥ चन्द्राद्विलग्नान्निधनं निरुक्तं भाग्यालयं स्वामियुतेक्षितं तत् । कुर्यात्स्वदेशोद्भवभाग्यमत्र चेदन्यखेटैर्विषयांतरेण ॥ १७९ ॥ स्वोच्चादिगाः सत्खचराः प्रकुर्युर्भाग्यं नितांतं यदि पापखेटाः । दुःखोपलब्धिं परमां तदीशे सुस्थानगे भाग्यविराजमानः ॥ १८० ॥

धर्मस्थान पापग्रहसे युक्त होवै तो मनुष्य पापयुक्त कृपण होवै और पुण्यमें सिद्धि न होवै, शुभग्रह मनुष्योंके सर्वतः धर्मसिद्धि करते हैं, धर्मात्मा एवं उदारभी होता है ॥ १७८ ॥ चन्द्रमासे वा लग्नसे नवमस्थान स्वस्वामीसे युक्त दृष्ट होवै तो अपने देशमें भाग्योदय होवै, पापग्रहोंसे दूसरे मुल्कसे भाग्योदय होगा ॥ १७९ ॥ शुभग्रह उच्चादिगत हो तो नवममें निरंतर ऐश्वर्य

करते हैं, पापग्रह परम दुःख प्राप्त करते हैं । भाग्येश अच्छे स्थानमें होवै तो ऐश्वर्यसे विराजमान सर्वदा रहे ॥ १८० ॥

यद्वा खेटो भाग्यगामी स्वगेहे सौम्यैर्दृष्टो यस्य मर्त्त्यस्य सूतौ । भाग्याधिक्यः स्वीयवंशे वरिष्ठः श्रेष्ठो बुद्ध्या धर्मशीलः सुखाढ्यः ॥ १८१ ॥ विलग्नदुश्चिक्यसुतोपगश्चेद्बलान्वितो यो नवमं प्रपश्येत् । यस्य प्रसूतौ स तु भाग्यशाली बह्वर्थसंयुक्तविलासशीलः ॥ १८२ ॥ भाग्यस्थितश्चेत्खचरः स्वतुंगे मर्त्यस्य योगं कुरुतेऽधिपाद्यैः । शुभेक्षितोऽसौ धरणीपतित्वं विलासशीलं सुतरामुदारम् ॥ १८३ ॥

अथवा भाग्यस्थानमें ग्रह अपनी राशिका हो, शुभग्रहोंसे दृष्ट जन्ममें जिस मनुष्यका हो वह बडा ऐश्वर्यवाला, अपने वंशमें श्रेष्ठ, बुद्धिमें श्रेष्ठ, धर्म करनेवाला और सुखयुक्त होवै ॥ १८१ ॥ बलवान् ग्रह लग्न, तृतीय, पंचममें हो नवमको देखै ऐसा जिसके जन्ममें हो वह भाग्यशाली बहुत धनयुक्त और हासविलासादिवाला होवै ॥ १८२ ॥ भाग्यस्थानमें ग्रह अपने उच्चका होवै तो यह आधिपादि योग होता है । यद्वा भावेशसे तथा शुभग्रहसे दृष्ट हो तो राजत्व विलासशीलत्व देता है तथा अत्यंत उदार होता है ॥ १८३ ॥

मन्दे कुजे भाग्यगतेऽथवा द्वौ पूर्णेन्दुयुक्ते नृपजन्मनि स्यात् । स्वोच्चस्थितैर्वा सकलैर्नभोगैर्नूनं प्रणीतं मुनिभिः पुराणैः ॥ १८४ ॥ गुरुर्भाग्ये भवेन्मंत्री महाभाग्योऽखिलेक्षिते । अबलेऽपि शुभे खेटे भाग्यस्थे धार्मिकोत्तमः ॥ १८५ ॥ अदृश्येऽर्द्धे धर्मनाथे गते जन्म यदा भवेत् । लग्नपे च विशेषेण यावज्जीवं समृद्धिमान् ॥ १८६ ॥ स्वल्पायुः स्याद्भाग्यगौ चेद्रवीन्दू शन्यारौ वा भ्रातृनाशप्रदौ स्तः । द्वाभ्यां हीनो जातको हिंसकश्चेद्द्वेष्यो मर्त्यः स्यात्तदाऽर्केन्दुभौमाः ॥ १८७ ॥

पूर्णचन्द्रमासे युक्त शनि वा मंगल वा दोनों भाग्यस्थानमें राजाके जन्ममें होते हैं अर्थात् इस योगमें जन्मवाला राजा होता है । अथवा समस्त ग्रह उच्चगत हों तो भी निश्चय राजा होना प्राचीन मुनियोंने कहा है ॥ १८४ ॥

बृहस्पति भाग्यस्थानमें होवै तो मंत्री होता है । नवमको सभी ग्रह देखें तो बडा भाग्यशाली होता है, धर्मस्थानमें शुभग्रह निर्बलभी हो तौभी धर्म करनेवालोंमें उत्तम होता है ॥ १८५ ॥ नवमेश यदि जन्ममें अदृश्यार्द्धमें होवै या विशेषतः लग्नेश ऐसा होवै तो जबतक मनुष्य जीता रहै तबतक समृद्धिवाला होवै ॥ १८६ ॥ भाग्यस्थानमें सूर्य चंद्रमा होवै तो मनुष्य अल्पायु होवै, शनि, मंगल भाईका नाश देनेवाले होते हैं यद्वा दो भाइयोंसे हीन होवै, यदि सूर्य चन्द्रमा मंगल नवम भावमें हों तो मनुष्य हिंसा करनेवाला, द्वेषवाला होवै ॥ १८७ ॥ इति नवमभावविचारः ॥

अथ दशमभावविचारः ।

फलं प्रवक्ष्ये दशमस्थितस्य स पृष्ठदेशः स तु जानुयुग्मम् ।
राज्योपलब्धिः किल कर्मवृत्तिर्व्यापारमुद्रागमनं स्थितिश्च ॥१८८॥
शुभं निवासं जनकः पदाप्तिं वृष्टिस्त्ववृष्टिः पितृपक्षजातम् ।
सौख्यं नराणां दशमे किलैतद्धोरागमज्ञैः परिचिंतनीयम् ॥ १८९ ॥

अब दशमभावके फल कहते हैं कि–यह भाव पृष्ठदेश एवं दोनों जानुदेश है। इसमें राज्यलाभ, जिस कर्मसे आजीवन होता है, व्यापार, मुद्रा, गमन, स्थिति ॥१८८॥ शुभत्व, निवास, पिता, पदकी प्राप्ति, वर्षा, अवर्षण, पितृपक्षमें सुखका विचार होराशास्त्रज्ञ करैं ॥ १८९ ॥

यादृशं मातृपक्षस्य तुर्यस्थैः खेचरैः फलम् । तादृशं पितृपक्षस्य वक्तव्यं कर्मगैर्ग्रहैः ॥ १९० ॥ ॥ कर्माधिपः सौम्यखगः सवीर्यो युक्तेक्षितः सौम्यखगैर्यथा स्यात् । वा तत्रगाः सौम्यखगाः सवीर्याः शुभं फलं तद्भवनस्य वाच्यम् ॥ १९१ ॥

चतुर्थ भावस्थित ग्रहोंसे जैसे माताके पक्षके फल कहे हैं तैसेही दशम भावगत ग्रहोंसे पितृपक्षके कहने ॥ १९० ॥ दशमेश शुभग्रह बलवान् हो शुभग्रहोंसे दृष्ट युक्त जिस प्रकार हो तिसीतरह शुभ फल करता है। अथवा दशमभावमें शुभग्रह बलवान् हो तो दशमभावसंबंधी सभी फल शुभ कहना चाहिये ॥ १९१ ॥

तुर्यस्थितः शीतरुचिः प्रपूर्णोऽथवाऽस्तसंस्थो भृगुजः सवीर्यः । कर्मस्थितश्चंद्रसुतोऽथ वा चेच्छुभं फलं कर्मगतं प्रवाच्यम् ॥ १९२ ॥ पितुश्चापि तथा मातुः सुखं भवति निश्चितम् । पितृव्यका भवेयुस्तु मातुलाश्च भवंति हि ॥ १९३ ॥ वाचस्पतिः कर्मगतः स्वगेहे शुक्रो यदा वा हिमरश्मिसूनुः । पूर्णः शशी तत्रगतो नरस्य राज्योपलब्धिः स्वकुलानुमानात् ॥ १९४ ॥

चौथे भावमें पूर्ण चन्द्रमा अथवा बलवान् शुक्र सप्तमभावमें अथवा दशममें बुध होवै तो दशमभावगत पूर्वोक्त फल सब शुभ कहने ॥ १९२ ॥ जैसे कि, ऐसे योगवालेको पिता माताका सुख निश्चय होता है और उसके ताऊ चाचा एवं मामाभी होते हैं, उनसे सुख मिलता है ॥ १९३ ॥ बृहस्पति दशममें अपनी राशिका हो अथवा शुक्र वा बुध ऐसा हो और पूर्णचन्द्रमा भी तहां हो तो मनुष्यको कुलानुमानसे राज्य मिले ॥ १९४ ॥

तातस्य पक्षेऽप्यथ मातृपक्षे शुभैः प्रवाच्यं प्रबलं च सौख्यम् ।
दारिद्र्यदुःखामयशोकयुक्तं क्रूरग्रहैस्तत्र गतैर्नरस्य ॥ १९५ ॥
स्त्रीखेचरैः कर्मगृहोपयातैः कुले नराणां बहुलांगनाः स्युः ।
नराः सुरेज्ये सुखिनस्तथाऽर्के कर्मास्य वृद्धं शुभदृष्टियुक्ते ॥१९६॥
शुभग्रहाः कर्मगताः स्वगेहे शुभेक्षिताः स्वीयकुले नृपालम् ।
कुर्वंति मर्त्यं सुतरामुदारं यद्वाऽवनीजो धिषणस्तथैव ॥ १९७ ॥

शुभग्रहोंसे पिताके पक्षसे अथवा माताके पक्षसे प्रबल सुख कहना । तैसेही पापग्रहोंसे दरिद्र, दुःख, रोगशोकसे युक्त मनुष्यको फल कहना ॥ १९५ ॥ दशममें स्त्रीग्रह हों तो मनुष्योंके कुल वा कुटुम्बमें स्त्री बहुत होवैं । बृहस्पति तहां होवै तो पुरुष अधिक तथा सुखी होंगे और दशम सूर्य शुभदृष्ट होवै तो कर्मकी वृद्धि होवै ॥ १९६ ॥ शुभग्रह दशम स्थानमें अपनी राशियोंके तथा शुभदृष्ट होवै तो मनुष्यको अपने कुलमें राजा (श्रेष्ठ) अतिउदार करते हैं । अथवा मंगल वा शुक्र ऐसे हो तो भी वही फल होगा ॥ १९७ ॥

वर्षाप्रश्ने लग्नगैः कर्मगैर्वा सौम्यैः खेटैर्वृष्टिरत्यंतमत्र । यद्वा चन्द्रे तत्रगे सौम्यदृष्टे वाच्या नूनं पापखेटैरवृष्टिः ॥ १९८ ॥ विकर्त्तनः कर्मगतः कुजो वा वंशप्रदेशेऽप्यथ जानुमूले । शस्त्राभिघातं त्वथवाऽग्निदाहं व्रणं करोतीति वदन्ति तज्ज्ञाः ॥ १९९ ॥ सिंहीसुते सूर्यसुते च तत्र समीरदोषेण च पीडितः स्यात् । स्वयं जनित्री जनकस्तदंबा श्यामं कलंकं प्रलभेत्स्त्रियो वा ॥ २०० ॥ पित्रोः सुतो वा सहजोऽनपत्यो मृतप्रजो वा परिपीडितो वा । पाषाणकाष्ठाभिहतो जलेन तरुप्रपातेन चतुष्पदाद्वा ॥ २०१ ॥

वर्षाके प्रश्नमें लग्नमें वा दशममें शुभग्रह हों तो अत्यंत वर्षा होगी अथवा शुभदृष्ट चन्द्रमा तहां हो तौ भी वही फल होगा । पापग्रहोंसे अवर्षण, मिश्रितमें मिश्रित फल कहना ॥ १९८ ॥ सूर्य अथवा मंगल दशम हो तो पीठकी डूंडीके समीप अथवा जंघाके जडमें शस्त्रकी चोट वा अग्निदाहसे व्रण (दाग) करता है ऐसा ज्योतिषज्ञ कहते हैं ॥ १९९ ॥ राहु शनि तहां हों तो वायुदोषसे पीडित रहे ऐसे योगमें अपने वा माता पिता दादी वा स्त्रीके पूर्वोक्त स्थानमें श्याम रंगका चिह्न (लाखण) कहना ॥ २०० ॥ और ऐसे योगमें माता पिताका वह एकही पुत्र हो वा यदि दूसरे भाई होय भी तो वह अपुत्र वा मृतपुत्र वा रोगादिसे पीडित, पत्थर काठके चोटसे, जलमें डूबनेसे, वृक्षसे गिरने वा चौपायोंसे पीडा हानियुक्त होवै ॥ २०१ ॥

दशमे च यदा मंदः सूर्यराहू तथैव च । विलोक्यतेऽथ भौमेन पिता देशान्तरे मृतः ॥ २०२ ॥ पापक्षेत्रं पापयुक्तं मिश्रैर्दृष्टं भवेद्यदि । राजतस्तु भयं प्राप्तो वियोगेन पिता मृतः ॥ २०३ ॥ कर्मभावे तु मार्तंडो मन्देनापि विलोकितः । राहुणा कृतदृष्टिः स्याज्जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥ २०४ ॥

दशमभावमें शनि तथा सूर्य राहु मंगलसे दृष्ट हों तो उसका पिता देशांतरमें मरा होगा ॥ २०२ ॥ दशममें पापराशि पापयुक्त हो उसको शुभपाप सभी देखें तो उसका पिता राजासे भय पायके भागके अन्य देशमें मरा

होगा ॥ २०३ ॥ दशमभावमें सूर्य शनिसे दृष्ट तथा राहुसे भी दृष्ट हो तो उसके पिताकी शीघ्र मृत्यु होवै ॥ २०४ ॥

सूतौ लग्नादंबरे यो बलीयान् वृत्तिर्नूनं तस्य खेटस्य वृत्त्या । यद्वा वर्गाधीशतो वीर्ययुक्ताद्वृत्तिर्वाच्या तस्य खेटस्य पाके ॥२०५॥ सूतौ लग्नाच्छीतरश्मिर्नभस्थो वृत्तिर्नूनं पूरुषस्यापि नित्यम् । नानाकौशल्येन सद्वाग्विलासैः सद्व्यापारैः साहसैः सत्कलाभिः ॥ २०६ ॥ लग्नेन्दुतो दिनकरोऽम्बरगो नरस्य द्रव्यागमं च विविधोद्यमवृत्तियोगात् । सत्त्वाधिकत्वमपि वै नरनायकत्वं पुष्टिं तनौ प्रकुरुते मनसः प्रसादम् ॥ २०७ ॥ लग्नेन्दुभ्यां कर्मगश्चेन्महीजः खेटैः क्रौर्यैः साहसैः कर्मवृत्तिः । नूनं पुंसां वैषयासक्तबुद्धिर्दूरे वासः स्यात्तदानीं कदाचित् ॥२०८॥

जन्मकालमें लग्नसे दशममें जो ग्रह बलवान् हो उस ग्रहके तुल्य (वृत्ति) आजीविका कहनी । अथवा दशममें जिसका वर्ग है वह बलवान् हो तो उस ग्रहके समान वृत्ति यद्वा उसकी दशामें वृत्तिका आरंभ जानना ॥२०५॥ जन्ममें लग्नसे दशम चंद्रमा होवै तो निश्चय पुरुषकी वृत्ति सर्वदा अनेक प्रकारके काम जाननेसे तथा उत्तम वाणीके विलासोंसे, उत्तम व्यापारसे, उत्तम कलाओंसे होवै ॥२०६॥ लग्न वा चन्द्रमासे सूर्य दशम होवै तो अनेक प्रकारके उद्यम वृत्तियोगसे धनागम होवै तथा मनुष्यके सत्त्व अधिक रहे अर्थात् तेजस्वी होवै, मनुष्योंमें श्रेष्ठताभी पावै, शरीरमें पुष्टि तथा मनकी प्रसन्नता करता है ॥२०७॥ लग्न और चन्द्रमासे मंगल दशम होवै तो क्रूरकर्म साहसके कामोंसे आजीविका होवै तथा पुरुषोंकी निश्चय करके बुद्धि विषयोंमें आसक्त रहे और ऐसे योगमें कभी दूर निवासभी होवै ॥ २०८ ॥

लग्नेन्दुतो वा शशिजोऽम्बरस्थो धनं प्रकुर्याद्बहुनायकत्वम् । तत्साहसैः काव्यकलाकलापैः शिल्पादिभिर्वा खलु कर्मवृत्तिः २०९ लग्नाच्चन्द्रात्कर्मसंस्थो गुरुश्चेन्नानावित्ताभ्यागमं सः करोति । पुंसां नूनं गौरवं भूमिपालात्सत्त्वाधिक्यं जीवनं चित्तवृत्त्या॥२१०॥

लग्नेंदुतो भृगुसुतो दशमे नरस्य स्याज्जीवनं सकलशास्त्रकलाकलापैः।
दाने मतिर्विनयता द्रविणं यशश्च शीलं विलासमवनीपतिगौरवं च॥११
शनैश्चरः कर्मणि चन्द्रतन्वोर्विहीनवृत्तिं कुरुते सखेदम् ।
कार्श्यं शरीरे धनधान्यहीनं चिन्तां विवादं नितरां कुशीलम्॥२१२॥

लग्न वा चंद्रमासे बुध दशम होवै तो धनवान् और भी बहुतोंमें श्रेष्ठ होवै तथा साहस काव्यकलाके समूह, शिल्पकर्मसे जीविका होवै ॥२०९॥ लग्न वा चंद्रमासे गुरु दशम होवै तो अनेक प्रकारके धनका आगमन करता है तथा पुरुषोंका राजासे निश्चय गौरव (श्रेष्ठता) अधिक सत्त्व (बल) और चित्तकी वृत्तिसे आजीवन करता है ॥ २१० ॥ जिस मनुष्यका लग्न वा चन्द्रमासे शुक्र दशम हो उसका आजीवन संपूर्णशास्त्रोंके विचार और विनोदसे होवै, दानमें बुद्धि होवै, नम्र होवै, धन यश और उत्तम शील विलास सुख तथा राजासे श्रेष्ठता प्राप्त होवै ॥ २११ ॥ लग्न और चन्द्रमासे शनि दशम होवै तो नीचवृत्ति खेदसहित तथा शरीरमें कृशता, धन धान्यसे हीनता, चिन्ता, कलह और सर्वदा दुष्टस्वभाव रहै ॥ २१२ ॥

सूर्यादिभिर्गगनगैस्तनुतो हिमांशोः कल्प्यं फलं च नियतं क्रमशः स्वपाके । अर्थागमस्तु जनकाच्च तथा जनन्याः शत्रोर्हितात्सहजतश्च कलत्रभृत्यात् ॥ २१३ ॥

लग्नसे वा चन्द्रमासे दशम सूर्य हो तो पितासे, लग्नसे दशम चंद्रमा हो तो मातासे, मंगल हो तो शत्रुसे, बुध हो तो मित्रसे, गुरु हो तो भाईसे, शुक्र हो तो स्त्रीसे, शनि हो तो नौकरसे उसकी दशामें धन मिलता है ॥ २१३ ॥

रवीन्दुभात्पदेशांशपतेर्वृत्तिं समादिशेत् । सदौषधोर्णैस्तृणयुक्स्वर्णैर्वृत्तिं विकर्त्तनः ॥ २१४ ॥ कृषिक्रियाङ्गनाम्बोत्थां वृत्तिं कुर्याच्च शीतगुः । कुजः साहसधात्वग्निशस्त्रैर्वृत्तिं तु कर्मणः ॥ २१५ ॥ काव्यलेखनसच्छास्त्रकलाभिः शशिनन्दनः । गीर्वाणाध्वरधर्माद्यैः पुंसां वृत्तिं सुरार्चितः ॥२१६॥ महिषीरूप्यरत्नाद्यैर्वृत्तिं स्त्रीजनतः कविः । अतिनीचप्रकारैश्च वृत्तिं कुर्याच्छनैश्चरः ॥ २१७॥ यस्यांशे स्यात्कर्मपः

कर्मणां च वृत्तिं कुर्याद्वाथ संवीर्ययुक्तैः । सौम्यैः खेटैरर्थ-लाभाद्यसंस्थैः कुर्युः पुंसां कार्मिकीं कीर्तिमुच्चैः ॥ २१८ ॥

सूर्यसे चन्द्रमासे लग्नसे दशमेश जिसके अंशमें है उसकी उक्त वृत्तिसे जीविका कहनी। जैसे सूर्यकी वृत्ति उत्तम औषधि, तृण, सुवर्ण आदि ॥ २१४ ॥ चन्द्रमा कृषिकर्म, स्त्री, जलसंबंधी कर्मसे वृत्ति करता है। मंगल साहस, धातु, अग्निकर्म और शस्त्रोंके कर्मसे जीविका करता है ॥ २१५ ॥ बुध काव्यरचना, लिखना, उत्तम शास्त्र और कलाओंसे, बृहस्पति देवतासंबंधी कर्म, यज्ञ, धर्म आदि और देवताकी पूजासे वृत्ति करता है ॥ २१६ ॥ शुक्र महिषी चांदी रत्न आदि और स्त्रीजनसे वृत्ति करता है। शनि अति-नीच कर्मोंसे आजीविका करता है ॥ २१७ ॥ जिसके नवांशकमें दशमेश है उसके कर्मसे आजीवन करता है अथवा सूर्य चंद्र लग्नसे दशमेश जो कहा है इनमेंसे जो बलवान् हो उसकी वृत्ति जाननी। शुभग्रह ११ । २ । १ भावोंमें हो तो पुरुषोंकी उक्त कर्म वृत्ति बडी कीर्ति (खूबी) के साथ करते हैं ॥ २१८ ॥ इति दशमभावविचारः ॥

अथ लाभभावविचारः ।

वक्ष्ये फलं लाभगृहस्थितं तज्जंघायुगं वामकरः स एव । सर्वै-र्निरुक्तः किल दक्षिणांघ्रिः शिवादिभिर्होरिकशास्त्रविद्भिः ॥२१९॥ हस्त्यश्वयानशिबिकारथहेमजातमांदोलिकावसन-मङ्गलमण्डनानि । विद्यागमो द्रविणकन्यकयोः किलैषां लाभालयेऽखिलमिदं परिचिंतनीयम् ॥ २२० ॥

अब लाभभावस्थित फल कहते हैं—इसकी संज्ञा दोनों जंघा तथा वांया हाथ है, दाहिना पैर भी शिव आदि सब होराशास्त्र जाननेवालोंने कहा है ॥ २१९ ॥ इस भावमें हाथी, घोडे, सवारी, पालकी, रथ, सुवर्ण, जात, डोली, वस्त्र, मांगलिक, शृंगारद्रव्य, विद्याप्राप्ति, धनागम, कन्याप्राप्ति इतने सबका विचार है ॥ २२० ॥

शुभे तदीशे सकलं शुभं स्यात्तत्रस्थितैर्वा यदि सौम्यखेटैः । क्रूरग्रहश्चेत्त्रिषडायवर्त्तीसौभाग्ययुक्तं मनुजं करोति ॥२२१॥

लाभस्थे हिमगौ सुरेन्द्रसचिवे सद्वस्त्रकान्तासुखं
विद्यावान् सधनो भवेत्तु मनुजो राजाधिराजार्चितः ।
तत्रस्थे शशिजे सिते हिमकरे कन्याप्रजः स्यात्तथा
विद्यावान् सुतसंयुतस्तु नितरां जीवे च तत्र स्थिते ॥ २२२ ॥

लाभेश शुभ होवै तो भावोक्त विचार सभी शुभ होते हैं अथवा शुभग्रह तहां हों तो भी वही फल जानना। यदि क्रूरग्रह ३ । ६ । ११ भावोंमें हो तो मनुष्यको सौभाग्य (उत्तम ऐश्वर्य) युक्त करते हैं ॥ २२१ ॥ लाभमें चंद्रमा वा बृहस्पति हो तो उत्तम वस्त्र उत्तम स्त्रीका सुख होवै, विद्यावान् धनसहित और राजाधिराजसे पूजित होवै । यदि लाभभावमें बुध, शुक्र, चंद्रमा हो तो मनुष्य कन्यासंततिवाला होवै। यदि बृहस्पति तहां होवै तो विद्यावान्, पुत्रवान् विशेषतया होवै ॥ २२२ ॥

लाभालयेऽर्कतनये यदि सैंहिकेये भृङ्गावली तु गजकर्णसमाहिता स्यात् । तस्यालये क्षितिसुते तपने तुरंगाः शय्यासुखं विधुसुते भृगुजे नृपाणाम् ॥ २२३ ॥ सर्वे भावाः शोभनाः संप्रदिष्टा यस्याये स्याच्चन्द्रजश्चाधिवीर्यः । वाऽब्जः कूपाद्येषु यज्ञादिकेषु धीस्थैः खेटैर्यत्फलं तत्किलात्र ॥ २२४ ॥ राहौ तत्रस्थे मृतापत्यकः स्यान्मर्त्त्यो नूनं वार्द्धके पुत्रयुक्तः । मन्दे सेन्दावप्रजत्वं च किञ्चिज्जीवत्पुत्रत्वं तथा मानवस्य ॥ २२५ ॥

लाभस्थानमें शनि राहु हों तो उसके घरमें हाथियोंके कर्ण मदपान करनेवाले भ्रमरोंसे युक्त होवैं अर्थात् मदवाले हाथी उसके रहें । यदि लाभमें मंगल सूर्य होवैं तो घोडे घरमें रहैं। बुध शुक्रसे शय्या (पलंग आदि) का सुख रहे ये पूरे फल राजाओंके लिये हैं, अन्यजनोंको कुलानुमानसे कहना ॥ २२३ ॥ जिसके लाभभावमें बडा बलवान् बुध हो उसके सब भाव अच्छे कहे हैं अर्थात् सभी भावोंका फल उसको उत्तम मिलता है । अथवा चंद्रमा हो तो कूप तालाव आदि तथा यज्ञ आदियोंमें शुभ होवै और जैसा फल पंचमभावमें कहा है वैसा यहांभी जानना ॥ २२४ ॥ जैसे राहु ग्यारहवां होवै

तो संतान मरती रहे परन्तु मनुष्य बुढापेमें पुत्रयुक्त होवै । शनि चन्द्रमासहित तहां होवै तो मनुष्यको अपुत्रता होवै तथा थोडा जीवत्पुत्रताभी होवै अर्थात् कदाचित् एक पुत्र होकर मरजावै अथवा पुत्र होनेपर स्वयं ही मरजावै ॥ २२५ ॥

लग्नांघ्रिर्वा स्यात्तथा लग्नबाहुर्जंघायुग्मं वा वदेद्वामपार्श्वे ।
लाभे भौमेऽर्के विषाग्न्यस्त्रतो वा घातेनाढ्यो मानवः पीडितश्च२२६
लाभस्थितावर्ककुजौ सिताढ्यौ यद्वा खलस्त्रीग्रहसंयुतश्चेत् ।
जीवंति पुत्र्यो बहुलास्तदानीं न पुत्रसौख्यं सह मानवस्य ॥२२७॥
राहौ मन्दे काष्ठपाषाणघातं तत्रांगे वा सव्यथो मानवः स्यात् ।
दृष्टो नूनं सव्यथो बालकेन यद्वा सूतौ कुक्कुरेणायसंस्थे ॥ २२८॥

लाभमें पापयुक्त चंद्रमासे पैरकी अंगुली वा वामपादका कोई भाग जुडा होवै अथवा वामहस्तमें ऐसा होवै । लाभमें मंगल सूर्य हो तो मनुष्य विष, अग्नि, अस्त्रकी चोटसे युक्त तथा पीडितभी होवै ॥ २२६ ॥ लाभभावमें सूर्य, मंगल, शुक्रसहित अथवा पापयुक्त स्त्रीग्रह होवै तो बहुत कन्या जीवैं, पुत्रका सुख न होवै ॥ २२७ ॥ लाभमें राहु शनि होवैं तो तद्भावोक्त अंगमें काष्ठ वा पत्थरकी चोट होवै अथवा मनुष्य व्यथायुक्त रहै । बुधसे दृष्टभी हों तो निश्चयव्यथायुक्त रहे, अथवा बुधभी उनके साथ हो तो कुत्तेके काटनेसे व्यथायुक्त होवै ॥ २२८ ॥

लाभर्क्षे सहितेक्षिते च रविणा वा तस्य वर्गाश्रिते भूपाच्चौरकुलात्कलेः स्वपशुभिः कुर्याद्धनाभ्यागमः । लाभे शीतगभस्तिनेक्षितयुते वातस्य वर्गाश्रिते नूनं स्त्रीगजवाजिनीरजनितः पूर्णे विलोमं कृशे ॥२२९॥ एवं भूमिसुतेऽग्निशस्त्रजनितो यात्राधनैः साहसैः स्वर्णैर्वा मणिभूषणैस्तु नितरां द्रव्यागमः संवदेत् । सौम्ये काव्यकलाकलापविधिना शिल्पेन लिप्या वणिग्लोकैः क्लीबजनैर्धनैर्धनचयं यत्साहसैरुद्यमैः॥२३०॥

लाभमें सूर्यका राश्यादि वर्ग हो वा सूर्य तहां हो यद्वा सूर्य उस भावको देखे तो राजासे, चोरकुलसे, कलहसंबंधी कामसे, अपने पशुओंसे धनागम

करता है । लाभस्थ पूर्ण चंद्रमासे युक्त वा दृष्ट हो यद्वा चंद्रमाका वर्ग तहां हो तो निश्चय स्त्री हाथी घोडे और जलोत्पन्न वस्तुसे धनागम होवै । यदि चन्द्र क्षीण होके ऐसा योग करे तो उक्त फल विपरीत होगा अर्थात् उन वस्तुओंसे धनहानि होगी ॥ २२९ ॥ ऐसा मंगल हो तो अग्नि शस्त्रसे, तथा यात्रासे, धनव्यापारसे, सुवर्णसे वा मणियोंके भूषणोंसे अत्यन्त धनागम कहना । ऐसे बुधसे काव्यकलाके संबंधसे अथवा शिल्प (कारीगरी) से वा लिखनेसे, व्यापारी मनुष्योंसे, हीजडोंसे, धनसे, साहससे, उद्यमसे धनागम होवै ॥ २३० ॥

जीवे साधुजनानुयानसहितो राजाश्रितो मानवः स्यादुत्कृष्टतरो धनैश्च विविधैर्जांबूनदैः संयुतः । दैत्येज्ये च गमागमैर्युवतिभिर्वेश्याधनैर्वा धनी मन्दे नीलगजायसैश्च महिषीसद्ग्रामवृन्दैः शुभैः ॥ २३१ ॥ दृष्टे युक्ते सद्ग्रहैर्लाभगेहे वर्गे संस्थैः सद्ग्रहाणां तथैव । सम्यग्लाभो मानवानामथास्मिन्सर्वैः खेटैः संयुते वीक्षिते वा ॥ २३२ ॥

गुरु लाभमें उक्त प्रकार योग करै तो साधुजनोंका अनुयायी होवै तथा मनुष्य राजाका आश्रित होवै, उत्कृष्टतर होवै, अनेक प्रकारके धन सुवर्णसे संयुक्त रहे। शुक्रसे गमन आगमनसे, स्त्रियोंसे, वेश्याके कमाईसे धनवान् होवै । शनिसे नील हाथी लोहा महिषी और उत्तम ग्रामसमूहसे धनागम होवै ॥ २३१ ॥ लाभभाव शुभग्रहोंसे दृष्ट युक्त होवै तथा शुभग्रहोंका वर्ग तहां होवै तो मनुष्योंको भले प्रकारसे लाभ होवै । अथवा लाभभाव संपूर्ण ग्रहोंसे दृष्ट होवै तो लाभ बीसों विश्वा होगा ॥ २३२ ॥ इति लाभभावविचारः ॥

अथ व्ययभावविचारः ।

व्ययस्थानफलं वक्ष्ये नृणां पादयुगं हि तत् ।
हानिर्दण्डश्च निर्बन्धो व्ययो दानं करग्रहम् ॥ २३३ ॥
जलाशयादिकार्येषु यज्ञेषु विविधेषु च ।
सर्वमेतद्व्ययस्थाने चिन्तनीयं प्रयत्नतः ॥ २३४ ॥

अब व्ययभावके फल कहते हैं-यह भाव मनुष्योंका दोनों पादयुग स्थान है। इसमें हानि, दण्ड, निर्बंध, व्यय, दान, विवाह ॥ २३३ ॥ जलाशयकार्योंमें अनेक प्रकारके यज्ञ आदियोंमें व्यय (खर्च) का विचार यत्नसे शुभाशुभ बलाबलादि देखके व्ययभावमें करना ॥ २३४ ॥

यादृशा गगनगा व्ययस्थितास्तादृशं सततमाचरेद्व्ययम् ।
भास्करे व्ययगते यदर्जितं याति भूपसदने च तद्धनम् ॥ २३५ ॥
भूमीपुत्रे चेद्व्ययस्थानसंस्थे द्रव्यं पुंसां नीयते क्षत्रियैस्तत् ।
घातः कट्यां दक्षवामे च पादे वामे कर्णे लोचने तत्स्त्रिया वा॥२३६॥
पुण्याधिक्यादल्पकं तन्नृनार्योः पापाधिक्याच्चाधिकं वा तदंगम् ।
दग्धं वाच्यं वह्निना वाऽऽयुधोत्थं घातं यद्वा सव्रणं दीर्घकालम्२३७
धने व्यये वा क्षितिजे तथाऽर्के स्त्रीखेटयुक्ते यदि वा बुधेन ।
म्लेच्छैर्निषादैर्गणिकाजनैश्च गंधर्वनादेन धनव्ययः स्यात् ॥ २३८ ॥

जिस प्रकारके ग्रह व्ययभावमें हों उसी प्रकारका खर्च कराते हैं। जैसे सूर्य बारहवां होवै तो जो कमाया है सो राजाके घरमें जावै ॥२३५॥ यदि मंगल व्ययस्थानमें होवे तो पुरुषोंके धनको क्षत्रिय लेजावें तथा उसके वा उसकी स्त्रीके कमरमें दक्षिण वा वाम किसी पैरमें वा वाम कर्ण वा नेत्रमें चोट लगी होवै ॥ २३६ ॥ वह अंग अग्निसे दग्ध वा शस्त्रसे कटा हुआ अथवा व्रण (घाव) सहित, शुभग्रह संबंध अधिक होनेसे वा पुण्य अधिक होनेसे अल्प वा कुछ कालमें मिटनेवाला और पापसंबंधाधिक्यसे वा पापाधिक्यतासे वह व्रणादि अधिक बडा एवं चिरस्थायी कहना ॥ २३७ ॥ धनभावमें वा व्ययभावमें मंगल तथा सूर्य स्त्रीग्रहसे वा बुधसे युक्त होवै तो म्लेच्छ भील वेश्याओंसे गायनकर्मसे उसका खर्च होवै ॥ २३८ ॥

मन्दे व्ययस्थे यदि सैंहिकेयेऽथवा शिखी यस्य नरस्य सूतौ ।
म्लेच्छैर्निषादैः परिभुज्यते तद्धनं तु वा शत्रुजनैश्च हानिः ॥२३९॥
चन्द्रेण युक्ते सलिले प्रयाति धनं कुजार्केण युतैर्हुताशे ।
सभार्गवे तत्परयोषिताभिः सचन्द्रजैस्तादृिपुवर्गमुख्यैः ॥ २४० ॥

लोहाश्मकाष्ठेन च सक्षतः स्याद्वा भिंदिपालेन च शृंगिणा वा ।
प्रपीडितो वाऽनिलजैर्विकारैर्नरस्तदंगे गदिते च यद्वा ॥ २४१ ॥

जिस मनुष्यके जन्मकालमें शनि राहु केतुमेंसे कोई व्ययभावमें होवै तो उसके धनको म्लेच्छ (चाण्डाल यवन) निषाद लोग भोगते हैं अथवा शत्रुजनोंसे धनकी हानि होती है ॥ २३९ ॥ वह व्ययगत शनि, राहु, केतुमेंसे जो हो वह चंद्रमासे युक्त हो तो धन जलमें जावै, सूर्य वा मंगलसे युक्त हो तो अग्निमें जावै, शुक्रसे युक्त हो तो पराई स्त्रियों करके, बुधसे सहित हो तो शत्रुवर्गमें जो मुख्य हैं उनसे धन नष्ट होवै ॥ २४० ॥ तथा लोहे पत्थर काष्ठसे घावयुक्तभी होवै अथवा भिंदिपाल (नालिकास्त्र) के गोफणसे वा सींगवालेसे क्षतयुक्त होवै । अथवा वायुके विकारसे पीडित उसका उक्त अंग रहे ॥ २४१ ॥

रविः कुजो वा रविनन्दनो वा व्ययस्थितश्चेन्मनुजस्य नूनम् । तदा पितृव्यो निधनं प्रयाति पितृष्वसा दृष्टयुतो न सद्भिः ॥ २४२ ॥ शुक्रज्ञजीवा व्ययभावसंस्थाः पितुः सहोत्थाः सुखिनस्तदा स्युः । व्यये तमः शुक्रयुतोऽथ वा चेत्समाशतं तस्य भवेदृणं वा ॥ २४३ ॥ प्रांत्यस्थाने क्षीणवीर्यः कलावानादित्यो वा द्वौ च वा तत्र संस्थौ । तस्य द्रव्यं संहरेद्भूमिपालः प्रांत्यर्क्षे वा भौमयुक्तेक्षिते चेत् ॥ २४४ ॥ पूर्णश्चन्द्रो ज्ञेज्यशुक्रा व्ययस्था संस्थां कुर्वन्त्येव वित्तस्य तस्य । प्रान्त्यस्थे चेच्चन्द्रजे भूसूतेन दृष्टे युक्ते वित्तनाशस्तदा स्यात् ४५

सूर्य वा मंगल अथवा शनि बारहवां होवै तो मनुष्यका निश्चय चाचा ताऊ वा चाची तायी मरे परंतु उसपर शुभग्रहकी दृष्टि न हो तब यह फल कहना, शुभदृष्टिसे अरिष्टमात्र होता है, तिसपरभी स्त्रीग्रहके योगदृष्टिसंबंधसे पिताकी बहनको और पुंग्रहसे पितृव्यको कहना ॥ २४२ ॥ शुक्र, बुध, गुरु व्ययभावमें होवैं तो पिताके भाई सुखी होवै । अथवा व्ययस्थानमें राहु शुक्र युक्त होवैं तो उसके ऊपर सौ वर्ष अर्थात् सर्वदा ऋणही रहै ॥ २४३ ॥

द्वादशस्थानमें क्षीण चन्द्रमा वा सूर्य हो अथवा दोनों हों तो उसके धनको राजा हरण करे। व्ययभाव मंगलसे युक्त दृष्ट हो तो भी यही फल कहना ॥ २४४॥ पूर्ण चन्द्रमा, बुध, गुरु, शुक्र व्ययभावमें हों तो इसकी वित्तकी संस्था करते हैं अर्थात् नाश नहीं करते हैं व्ययगत चंद्रमा मंगलसे दृष्ट वा युक्त हो तो धन नाश होवै ॥ २४५ ॥

व्ययेऽधिसंस्थे धिषणेऽन्नदाता सभार्गवे स्यान्मखकृन्मनुष्यः । सेन्दौ प्रपाकूपतडागकर्मा ससोमजे चेत्कृषिकर्मकृच्च ॥ २४६ ॥ स्वर्णं सुरेज्ये विपुलं ददाति रम्याणि वस्त्राणि च गोधनानि । हयाः सिते शीतरुचौ गृहाणि बुधेन युक्ते विपुला धरित्री ॥ २४७ ॥ सर्वं ददाति शशिजो रविणा समेतः सेवा-परस्य मणिहेमविभूषणानि । जीवे सितेन सहिते स धनी सुकर्मा मर्त्यो हरेस्त्रिनयनस्य च भक्तियुक्तः ॥ २४८ ॥

गुरु व्ययभावमें होवै तो अन्नदाता होवै, वही गुरु शुक्रसहित होवै तो मनुष्य यज्ञ करनेवाला होवै, चंद्रमासहित होवै तो कुआँ, तालाव करनेवाला होवै, बुधसहित होवै तो कृषि(खेती)का काम करनेवाला होवै॥ २४६॥ गुरु व्ययभावमें बहुत सुवर्ण रमणीय वस्त्र और गोधन देता है। शुक्र व्ययभावमें होवै तो घोडे देता है। चंद्रमा होवै तो उत्तम घर, बुध होवै तो बहुतसी जमीन देता है ॥ २४७ ॥ बुध सूर्ययुक्त होवै तो सेवामें तत्पर मनुष्यको मणि, सुवर्ण, भूषणादि सब कुछ देता है। गुरु शुक्र सहित हो तो धनवान् सत्कर्म करनेवाला तथा मनुष्य विष्णु एवं शिवकी भक्तिसे युक्त होवै॥ २४८॥

शुभैस्तथा केन्द्रगतैः प्रवाच्यं शुभं व्ययं तस्य जनस्य नूनम् ।
शुभा व्ययस्था द्रविणं सुखं च कुर्युर्न कुर्वन्ति रिपूद्गमं च॥ २४९ ॥
क्रूराः खेटाः प्रान्त्यगाश्चाधिवीर्याः कुर्वन्त्येवं चाथ शत्रूद्गमं च ।
पश्चान्नाशं यांत्यवश्यं प्रवाच्यं पृच्छाकाले जन्मकालेऽथवापि२५०॥
इतीरितं द्वादशभावजातं फलं समस्तं कथितं शिवायै ।
श्रीशंभुना तद्रविणाऽरुणाय वशिष्ठमुख्यैर्निजशिष्यकेभ्यः ॥२५१॥

तथा शुभग्रह केन्द्रमें होवैं तो उस मनुष्यका निश्चय सद्व्यय कहना। शुभग्रह व्ययस्थानमें धन और सुखभी करते हैं तथा शत्रुका उदय नहीं करते ॥ २४९ ॥ बलवान् पापग्रह व्ययभावमें ऐसाही फल करते हैं परन्तु शत्रुका उदयभी करते हैं और शत्रु उदय होकर पीछे अवश्य नाशभी हो जाते हैं । ऐसा विचार जन्म तथा प्रश्नसमयमें करके फल कहना ॥ २५० ॥ इस प्रकार बारहों भावोंके फल जो कहे हैं ये सब श्रीशिवजीने पार्वतीजीसे कहे तब सूर्यने अरुणसे और वशिष्ठादियोंने अपने शिष्योंसे कहे क्रमागत वही फल यहां कहे गये हैं ॥ २५१ ॥ इति व्ययभावविचारः ॥

अथ कार्यसिद्धियोगाः ॥

लग्नस्य पूर्वार्द्धगता नभोगाः फलं प्रदद्युस्त्वपरोक्षकं ते ।
परार्द्धषट्कोपगताः परोक्षं फलं वदन्तीति बुधाः पुराणाः ॥ २५२ ॥
पश्येद्विलग्नं यदि लग्ननाथः कार्याधिपः कार्यगृहं प्रपश्येत् ।
लग्नाधिपः कार्यगृहं प्रपश्येत्कार्याधिपो लग्नगृहं च यद्वा ॥ २५३ ॥
यद्वा विलग्नाधिपतिस्तु कार्यगृहस्थितः कार्यपतिं प्रपश्येत् ।
कार्येश्वरो लग्नगतः प्रपश्येल्लग्नेश्वरं सिद्धिमुपैति कार्यम् ॥ २५४ ॥
कार्येश्वरो लग्नपतिं प्रपश्येल्लग्नाधिपः कार्यगृहेश्वरं वा ।
सर्वत्र पीयूषमयूखदृष्ट्या कार्यस्य सिद्धिं कुरुतस्तदानीम् ॥२५५॥

लग्नचक्रके पूर्वार्द्ध अर्थात् लग्नके भुक्तांशतुल्य दशम भावको छोडकर शेष अंश दशमके और ११ । १२ । १ । २ । ३ तथा चतुर्थके लग्नतुल्य अंशपर्यन्त भावोंमें स्थित ग्रह प्रत्यक्ष और परार्द्ध अर्थात् लग्नके भुक्तांश तुल्य चतुर्थको छोड़कर शेष अंश चतुर्थके और ५ । ६ । ७ । ८ । ९ तथा दशमभावके लग्नतुल्य अंशपर्यन्त भावस्थित परोक्ष फल देते हैं ऐसा पुराने पंडित कहते हैं ॥ २५२ ॥ यदि लग्नेश लग्नको कार्याधिप कार्यगृहको देखे अथवा लग्नेश कार्यस्थानको कार्येश लग्नस्थानको देखे ॥ २५३ ॥ अथवा लग्नेश कार्यगृहमें बैठके कार्येशको देखे और कार्येश लग्नमें बैठके लग्नेशको देखै तो कार्यकी सिद्धि होती है ॥२५४ ॥ कार्येश लग्नेशको लग्नेश

कार्येशको देखे तौभी कार्यसिद्धि करता है, इन सब योगोंमें चन्द्रदृष्टि विशेष कार्यसिद्धि करती है ॥ २५५ ॥

यद्वा विलग्नाधिपतिर्विलग्ने कार्याधिपः कार्यगृहे स्थितश्चेत् । लग्ने स्थितः कार्यपतिस्तु यद्वा कार्याधिपो वा यदि लग्ननाथः ॥ २५६ ॥ लग्नस्थितौ लग्नपकार्यनाथौ कार्यस्थितौ वा द्विजराजदृष्टौ । कार्यस्य सिद्धिं कुरुतस्तदानीं लग्नस्य कार्याधिपयोस्तु वीर्यात् ॥ २५७ ॥ यदैकगौ लग्नपकार्यनाथौ त्र्यंशे नवांशेऽप्यथ हौरिकायाम् । प्रश्ने प्रसूतावपि चिन्तनीयं पूर्णं विमिश्रं सुधिया फलं तत् ॥ २५८ ॥

अथवा लग्नेश लग्नमें कार्येश कार्यस्थानमें हो, यदिवा लग्नमें कार्येश हो अथवा लग्नेश कार्येश एकही हो ॥ २५६ ॥ अथवा लग्नेश कार्येश लग्नमें वा कार्यस्थानमें चन्द्रदृष्ट हों तो लग्नेश कार्येश अपने बलानुसार कार्यसिद्धि करते हैं ॥२५७॥ यदि लग्नेश कार्येश एक राशिमें एक द्रेष्काणमें एक नवांशकमें हों यद्वा एक होरामें हो तो बलानुसार पूर्ण वा मिश्र फल बुद्धिमान्को प्रश्न तथा जन्ममें कहना चाहिये ॥ २५८ ॥ इति कार्यसिद्धिविचारः ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च ।
होरासारे शंभुहोराप्रकाशे भावाध्यायः षष्ठ आसीत्सुपूर्णः ॥२५९॥

इति श्रीपुंजराजाविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे भावाध्यायः षष्ठः ॥ ६ ॥

इसका अर्थ पूर्वोक्तही है यह भावाध्याय छठा पूर्ण भया ॥ २५९ ॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां भावाध्यायः षष्ठः ॥ ६ ॥

अथायुर्दायाध्यायः ७।

तत्रामितायुर्योगः ।

कर्केन्दीज्ययुते लग्ने केन्द्रस्थौ बुधभार्गवौ ।
पापैस्त्र्यायारिगेहस्थैरायुर्विद्ध्यमितं तदा ॥ १ ॥

जो आयु मनुष्यादिकोंकी १२० वर्ष आदि आगे कही जायगी वह ऐसी नहीं है कि, उतनेसे ऊपर आयु न होसके, ग्रहबलाबलसे उसमें न्यूनाधिक आयु होती है, १२० आदि अंक केवल गणितके लिये एक प्रकार इष्ट वा केन्द्र माना है, इसके उदाहरणार्थ कहते हैं कि, कर्कलग्नमें गुरु चन्द्रमा केंद्रमें बुध शुक्र और पापग्रह ३ । ६ । ११ मेंसे किसीमें होवै तो गणितहीसे अमित आयु आवैगी १२० का कुछ नियम नहीं रहेगा । यदि मनुष्य सदाचारमें सत्यधर्ममें वा योगादि साधनेमें वा रसायनप्रयोगमें तत्पर रहै तो गणितागत आयुसेभी अधिक जी सकता है तथा उत्कट कर्म झूठ पराई बुराई अनियम आदिमें रहे तो गणितागत नियत आयुभी पूरी नहीं भोग सकता ॥ १ ॥

आयुर्भेदाः ।

अंशायुषं पिण्डनिसर्गजीवाश्चतुर्विधं पंचमकं ततोऽन्यत् ।
षष्ठं प्रवक्ष्ये ध्रुवमष्टवर्गसमुद्भवं यद्गदितं पुराणैः ॥ २ ॥

अंशायु, पिण्डायु, निसर्गायु, जीवायु तथा पंचम मिश्रायु और छठी अष्टक वर्गोत्पन्न आयु जो पूर्व आचार्योंने कही हैं उन आयुके निश्चयार्थ यहां कहता हूं ॥ २ ॥

चेष्टोच्चस्फुटगुणकाः ।

अल्पाश्चेत्किरणाः सैककिरणांघ्रिस्त्रयोर्ध्वकाः ।
तदा विरूपगोर्ध्वं तु गुणौ चैष्टिकतुंगजौ ॥ ३ ॥
तयोर्घातपदस्पष्टो गुणकः स्यात्तथोच्यते ॥ ४ ॥

पूर्वोक्तरश्मि ३ तीनसे कम हो तो उसमें १ एक जोडके चतुर्थांश लेना वह गुणक होता है । रश्मि ३ से अधिक हो तो उसमें १ कम करके उसका आधा गुणक होता है। इसी प्रकार चेष्टारश्मिसे चेष्टागुणक उच्चरश्मिसे उच्चगुणक होता है । तब चेष्टागुणक और उच्चगुणकके गुणाकारका वर्गमूल निकालना वह स्फुटगुणक होता है । उदाहरण—सूर्यकी चेष्टारश्मि ५ । ११ । ४८ तीनसे अधिक होनेसे १ कम ४ । ११ । ४८

इसका आधा २ । ५ । ५४ यह सूर्यका चेष्टागुणक भया । सूर्यकी उच्च-रश्मि ६ । ५३ । ३६ तीनसे अधिक होनेसे १ कम किया ५ । ५३ । ३६ इसका आधा २ । ५६ । ४८ यह सूर्यका उच्चगुणक भया, सूर्यका चेष्टा-गुणक २ । ५ । ५४ को उच्चगुणक २ । ५६ । ४८ से गुणा किया ६ । १० । ५९ इसका वर्गमूल २ । २९ । १२ यह सूर्यका स्फुटगुणक भया इसी विधिसे सभी ग्रहोंके करना । उदाहरणार्थ चक्रभी लिखते हैं ॥३॥४॥

चेष्टागुणकचक्रम् ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श
२	१	२	२	२	१	१
५	३७	२०	१३	२९	५	३
५४	४८	२४	०	३	४८	४८

उच्चगुणकचक्रम् ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श
२	१	०	०	१	२	०
५६	२	३६	३३	५६	२९	५६
४८	२१	२१	१०	४५	५४	४१

स्फुटगुणकचक्रम् ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श
२	१	१	१	२	१	१
२९	१८	११	६	११	३९	०
१२	६	३६	२४	५७	१९	८

आश्रयगुणकसाधनम् ।

यः स्ववर्गेऽधीष्टवर्गे मित्रवर्गे समे रिपोः । वर्गेऽधिशत्रुवर्गे च धृतिः पंचेन्दवस्त्रिभूः । नवपंचगुणाः स्थाप्या गृहे द्विगुण-संमिताः ॥ ५ ॥ योगः क्रमात्तद्विभजेद्रसाष्टनवार्कतुल्यैर्धृति-भिश्च सिद्धैः । षट्संगुणैः स्वीयनवांशहक्के वर्गोत्तमे षड्गुणि-तैश्च षड्भिः ॥ ६॥ स्यादाश्रयाख्यो गुणको ग्रहश्चेद्वर्गोत्तम-स्थोऽप्यरिमित्रगेहे । तन्मन्दिरांको गुणरागलब्धो वियुग्युत-स्त्वाश्रयिकश्च कार्यः ॥ ७ ॥ अरीष्टभे सागरनन्दलब्ध्या वियुग्युतः केवलकः समे स्वे । स्फुटाश्रयोर्घातपदं तु कर्म-योग्यो गुणः स्याद्रविपूर्वकाणाम् ॥ ८ ॥

आश्रयगुणकके लिये ग्रहस्ववर्गमें १८, अधिमित्रवर्गमें १५, मित्रके वर्गमें १३, समके वर्गमें ९, शत्रुके वर्गमें ५, अधिशत्रुके वर्गमें ३ अंक लेना, इनमेंसे गृहस्थानमें जो आवै उसे दूना लेना । तब गृहादि सप्तवर्गके अंकोंका योग करके ग्रह स्वगृहमें हो तो उक्त ६ के षड्गुण ३६ से, एवं अधिमित्रके गृहमें ४८ से, मित्रके गृहमें ५४ से, समके गृहमें ७२ से, शत्रुके गृहमें १०८ से, अधिशत्रुके गृहमें १४४ से भागदेना । यदि ग्रह वर्गोत्तम, स्व-

नवांशक वा स्वद्रेष्काणमें हो तो पूर्वोक्त अंक न लेना केवल ३६ सेही भाग लेना जो मिले वह आश्रयगुणक होता है । उदाहरण—सूर्य समगृही होनेसे ९ अंक, गृहस्थानमें होनेसे द्विगुण १८, स्वहोरामें होनेसे १८, स्वद्रेष्काणमें होनेसे १८, अधिमित्रके सप्तमांशमें होनेसे १५ अधिमित्रके नवांशकमें होनेसे १५, मित्रके द्वादशांशमें होनेसे १३, समके त्रिंशांशकमें होनेसे ९ इन सप्त-वर्गांकोंका योग १०६ हुआ इसमें सूर्यके समराशिमें होनेसे १२ के षड्-गुणित ७२ से भागलिया १।२८।१९ यह सूर्यका आश्रयगुणक भया। इसी रीतिसे चंद्रादियोंकेभी जानना। यहां उदाहरणमें विधि दिखानेको ७२ से भागदिया है, सूर्य स्वद्रेष्काणमें है इसलिये ३६ से भाग देनेसे २ । ५६ । ४ भया जो पहिले कहा है। अब आश्रयगुणकमें विशेष संस्कार करके कर्म-योग्य गुणक कहते हैं कि, जो ग्रह वर्गोत्तम, स्वनवांश, वा स्वद्रेष्काणमें होके अधिशत्रु वा अधिमित्रके गृहमें बैठा हो तो उसके गृहांकको ६३ से भाग देके जो लब्धि मिले वह क्रमसे पूर्वानीत आश्रयगुणकमें ऋण धन करना अर्थात् अधिशत्रुगृहमें ऋण, अधि-मित्रगृहमें हो तो धन करना । जो ग्रह शत्रु वा मित्रके राशिमें हो उसके गृहांकको ९४ से भाग देके लब्धि पूर्वानीत आश्रयगुणकमें ऋण वा धन करै तो आश्रयगुणक होता है । परंतु वर्गोत्तम, स्वनवांश, स्वद्रेष्काणमें होकर स्वगृहमें वा समगृहमें होवै तो यह संस्कार नहीं करना अर्थात् पूर्वानीतही आश्रयगुणक होगा । अब आश्रय गुणक और स्फुटगुणकके गुणाकारका वर्गमूल निकालना तब कर्मयोग्य गुणक होता है । उदाहरण—वर्गोत्तमादि ३ स्थानमें गुरु, स्वनवांशकमें शनि है इसलिये ये २ के आश्रयगुणक संस्कारयोग्य हैं जैसे गुरुके अधिशत्रुगृहमें

आश्रयगुणकसाधनचक्रम् ।

सू	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ग्र.
१८	५०	१८	१०	६	१८	३०	गृह
१८	१	९	१५	९	९	९	होरा
१८	५	१५	५	३	१८	९	द्रेष्काण
१५	१५	५	१३	१५	९	१५	सप्तांश
१५	५	९	१३	१८	१५	१८	नवांश
१३	५	१५	५	१८	३	९	द्वादशां.
९	१५	१५	१३	३	१८	९	त्रिंशां.
१०६	७३	८६	७४	७२	९०	९९	योग
३६	१०८	७२	१०८	३६	३६	३६	हर
२ ५६ ४०	० ४० ३३	१ ११ ४०	० ४१ १७	२ ० ०	२ ३० ०	२ ४५ ०	आश्रय-गुणकाः

होनेसे गुरुके गृहांक ६ में ६३ से भागलिया ० । ५ । ४२ यह लब्ध गुरुके अधिशत्रुगृही होनेसे आश्रयगुणक २ । ० । ० में घटाया १ । ५४ । १८ यह गुरुका आश्रयगुणक भया । शनिके अधिमित्रगृही होनेसे गृहांक ३० में ६३ से भागलिया तो ० । २८ । ३४ लब्धको अधिमित्रगृही होनेसे शनिके आश्रयगुणक २ । ४५ । ० में जोडदिया ३ । १३ । ३४ यह शनिका आश्रयगुणक भया । और सूर्य वर्गोत्तमादि ३ स्थानमें, शुक्र स्वद्रेष्काणमें हैं तथापि समके राशियोंमें होनेसे इनको आश्रयगुणक संस्कार नहीं है । कर्मयोग्यगुणकका उदाहरण है कि, सूर्यका आश्रयगुणक २ । ५६ । ४० और स्फुटगुणकको २ । २९ । १२ परस्पर गुणके ७ । १९ । १९ इसका वर्गमूल २ । ४२ । २१ यह सूर्यका कर्मयोग्य गुणक भया, ऐसेही चंद्रादियोंकेभी जानने ॥ ५–८ ॥

आश्रयगुणकाः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श
२	०	१	०	१	२	३
५६	४०	११	४१	५४	३०	१३
४०	३३	४०	१७	१८	०	३४

अंशायुस्साधनं चक्रार्द्धहानिश्च ।

खेटानां च तनोर्भागः खाब्धिहृच्छेषकास्त्विह ।
अंशायुषोऽथ खेटोने लग्ने षड्भाल्पके सति ॥ ९ ॥
अस्य भागोद्धृतैः पूर्णरामैस्त्वेकाल्पकस्य च ।
पूर्णरामोद्धृतैरंशैः सौम्योने दलितैस्तथा ॥ १० ॥
ऊनाभूर्गुण एकर्क्षे द्व्यादिकेष्वधिकोजसः । कार्यस्त्वियं भार्द्धहानिस्तद्ध्नायुर्भागजाः कलाः ॥ ११ ॥

कर्मयोग्यगुणकाः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श
२	०	१	०	२	२	१
४२	५६	११	५२	२	२	४७
२१	१६	३७	२१	४८	३	५३

ग्रह वा लग्नके अंश करके ४० से भाग देना जो शेष रहे वह आयुर्भाग होता है । उदाहरण—सूर्य ० । १३ । १० । ४२ इसके अंश १३ । १० । ४२ को ४० से तष्ट किया तो शेष १३ । १० । ४२ यह सूर्यका आयुर्भाग भया, ऐसेही सबके जानना. चक्रपातार्द्धहानि कहते हैं कि, लग्नमेंसे ग्रह घटायके शेष ६ राशिसे न्यून रहे तो चक्रार्ध

आयुर्भागाः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल
१३	३५	११	३१	३८	६	३३	२९
१०	२२	४	२०	१२	५६	२१	४२
४२	३५	१६	५३	३७	४	४५	२६

हानि होती है तदनंतर ग्रहोनितलग्नकी षड्भाल्प राशि कलाओंसे ३० अंशकी विकला १०८००० ओंमें भाग लेना जो लब्धि हो वह १ में कम करनेसे गुण होता है । यदि ग्रहोनित लग्न पहिलेही १ से न्यून हो तो ग्रहोनित लग्नके अंशको ३० अंशसे भाग देके जो मिले वह एकमें कम करना वह गुण होता है । परन्तु लग्नमेंसे शुभग्रह कम करके पूर्वोक्त विधिसे भाग देके जो मिले उसका आधा कम करना तब गुण होता है । यदि लग्नमें दो तीन आदि ग्रह हों तो उनमें जो अधिक बली हो उसकाही गुण करना, सभीका नहीं, तब गुणकसे अपने आयुर्भागको गुणना अर्थात् जिस ग्रहका गुणक है उस गुणकसे उसी ग्रहके आयुभार्गको गुणना, यह चक्रार्द्धहानि कही है । उदाहरण—यहाँ सूर्य, भौम, गुरु, शनिकी चक्रार्द्धहानि संभव है इसलिये लग्न ६ । ९ । ४२ । २६में सूर्य ० । १३ । १० । ४२ घटाया ५ । २६ । ३१ । ४४ इसकी विकला ६३५५०४ से ३० अंशकी विकला १०८००० में भाग दिया फल ० । १० । ११ यह १ में घटाया ० । ५९ । ४९ यह सूर्यका गुणक भया, इससे सूर्यका आयुर्भाग १३ । १० । ४२ को गुणा १० । ५६ । ३० यह सूर्यका हानिसंस्कृत आयुर्भाग भया, ऐसेही अन्य ग्रहोंकाभी जिसका संभव हो उसका करना ॥९-११॥

अंशायुर्दायानयनम् ।

दायांशोत्थकलाः सम्यक् स्वयोग्यगुणकाहताः । पूर्णपूर्णाश्विभिर्भक्ता अंशायुर्द्युसदां च तत् ॥ १२ ॥

हानिसंस्कृतायुर्भागाः ।						
र	चं	मं	बु	बृ	शु	श
१०	३५	५	३१	२०	६	२४
५६	२२	२४	२०	१	५६	४५
३०	३५	३४	३०	५	४	४४

दायांशा उदयस्य रामनिहताः पूर्णेन्दुभिर्भाजिता अंशायुश्च समादि चेत्तु बलवल्लग्नं तदा लग्नभैः । तुल्याब्दैः सहितं द्विनिघ्नशरहृद्भागादितो मासयुक्त्वायुः सौरमिदं यतोऽब्दगणना सौरात्ततः सूरिभिः ॥ १३ ॥

अब वर्षादि अंशायुर्दायानयन कहते हैं कि, पूर्वानीत चक्रार्द्ध हानिसंस्कृत आयुर्भागकी कला करके स्वकर्मयोग्यगुणकसे गुणना उसमें २०० का भाग लेके जो मिले वह ग्रहोंकी वर्षादि अंशायु होती है और

लग्नके आयुर्भागको ३ से गुणके १० से भाग देके जो मिले वह लग्नकी वर्षादि अंशायु होती है और यदि लग्न बलवान् अर्थात् ६ से अधिक बली हो तो लग्नके राशितुल्य वर्ष पूर्वानीत लग्नायुमें जोडके उसमें लग्नके भागादियोंको २ से गुणके ५ से भाग लेकर मासादि फल लेना तब लग्नायु होती है। यहाँ वर्षादि आयुगणना सौरमानसे पंडितोंने कही है। उदाहरण—सूर्यके आयुर्भागकला ६५६। ३० को कर्मयोग्यगुणक २। ४२। २१ से गुणके १७७६। २३ आयुर्भागकला हुई। ऐसे ही सबकी करनी। सूर्यकी कर्म-

आयुर्भागकला							कर्मयोग्यगुणगुणित। आ० भा०						
र	च	मं	बु	बृ	शु	श	र	चं	म	बु	बृ	शु	श
६५६	२१२२	२२४	१८८०	१२०१	४५६	१४६५	१७१६	११९०	३८७	१६४१	२४५८	८४६	२६७१
३०	३५	३४	५३	५	४	४४	२३	३१	२४	४	१३	२१	२६

योग्यगुणित आयुर्भागकला १७७६। २३ में २०० का भाग दिया लब्धि ८ वर्ष हुए शेष १७६। २३ को १२ से गुणा २११६। ३६ पूर्वोक्त हार २०० से भाग लिया लाभ १० मास हुए शेष ११६। ३६ को ३० से गुणके ३४९८ हारसे भाग लिया १७ दिन मिले शेष ९८ को ६० से गुणके ५८८० हार २०० से भाग लिया २९ घटी मिली शेष ८० को ६० से गुणके ४८०० हार २०० से भाग लिया २४ पला मिली यह सूर्यकी अंशायु हुई। ऐसेही सबके जानना। लग्नका आयुर्भाग २९।४२। २६ को ३ से गुणा ८९। ७। १८ इसको १० से भाग लिया ८ वर्ष मिले शेष ९। ७।१८ को १२ से गुणा १०९।२७।३६ और १० से भाग लिया लब्धि १० मास हुए शेष ९। २७। ३६ को ३० से गुणा १० से भाग दिया तो २८ दिन मिले शेषको ६० से गुणा १० से भाग लब्धि २२ घटी मिली शेषको ६० से गुणा १० से भाग ४८ पल मिले, यह लग्नका वर्षादि अंशायु दशा हुई। लग्न बल ६ से अधिक होनेसे लग्न राशितुल्य ६ वर्ष और जोडे १४। १०। २८। २२। ४८ हुएमें लग्नके भागादि ९४२। २६ को २ से गुना १९। २४। ५२ इसमें ५ से भागलिया लाभ ३ मास,

शेषको ३० से गुना ५ लब्ध २६ दिन, शेषको ६० गु० ५ भा० लाभ २९ घटी शेषको ६० से गु० ५ भा० लाभ १२ पल, इस मासादि ३ । २६ । २९ । १२को पूर्वानीत वर्षादि जिसमें राशितुल्य ६ वर्ष बलाधिक होनेसे मिलाया है १४ । १० । २८ । २२ । ४८ में इसमें जोड दिया तो १५ । २ । २४ । ५२ । ० यह लग्नांशायु दशा हुई ॥ १२ ॥ १३ ॥

वर्षादि अंशायु ।

र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	यो.
८	९	१	८	११	४	१३	१५	७२
१०	११	११	२	२	२	४	२	११
१७	१२	७	१३	१	२३	८	२४	१९
२९	५५	१९	५५	१२	२५	३४	५२	४४
२४	४८	१२	१२	०	४८	४८	०	१२

अथ पिण्डनिसर्गजीवशर्मोक्तायुर्भागाः ।

खोच्चोनितश्चेद्रसभाल्पकोऽसौ चक्राद्विशोध्यः खचरोऽधिकश्चेत् ।
ग्राह्यास्तदंशाः खचरोऽरिभे चेत्र्यंशोनिता वक्रगतिं विनाऽत्र ॥१४॥
दलीकृता ह्यस्तमिते ग्रहे च संत्यज्य शुक्रार्कसुतौ द्वये च ।
अत्राधिकैकाप्यथ भार्द्धहानिः पिण्डे निसर्गे कथिता च जीवे ॥१५॥

ग्रहमें उच्च घटायके शेष ६ राशिसे कम हो तो १२ राशिमें शुद्ध करके और अधिक हो तो उसीके अंश करने तब पिंड निसर्गजीवायुर्भाग होते हैं । जो ग्रह शत्रुराशिमें हो उसका तीसरा भाग आयुर्भागमेंसे कम करदेना, यदि वह वक्रगति न हो । शुक्र शनिको छोडके अस्तंगत ग्रहको आधा ही करना जो ग्रह शत्रुराशिमें एवं अस्त भी हो तो पूर्वोक्त १ का आधा ही करना, त्रिभाग द्विभाग दोनों हानि न करनी यहां नैसर्गिक शत्रुता लेनी तात्कालिक नहीं । इन पिण्ड निसर्ग जीवायुर्दायभागमें चक्रार्द्धहानि भी करनी जो पूर्व ग्यारहवें श्लोकमें कही है उसी गुणकसे यहांभी आयुर्भाग गुणने । उदाहरण—रविस्फुट ० । १३ । १० । ४२ में उच्च ० । १० । ० । ० घटाया ० । ३ । १० । ४२ यह ६ राशिसे कम होनेसे १२ में घटाया ११ । २६ । ४९ । १८ इसके अंश ३५६ । ४९ । १८ यह सूर्यका पिण्डायुर्भाग भया इसी रीतिसे सबका करना । उदाहरणार्थ चक्र भी है ।

स्फुटग्रहाः.							उच्चानि.						
र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०	९	४	११	५	१०	२	०	१	९	५	३	११	६
१३	५	११	२१	८	२६	१३	१०	३	२८	१५	५	२७	२०
१०	२२	४	२०	१२	५६	२१	०	०	०	०	०	०	०
४२	३५	१६	५३	३७	४	४५	०	०	०	०	०	०	०

उच्चको ग्रहमें घटाये.							षड्भाल्प १२ राशिमें कम.						
र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
०	८	६	६	२	१०	७	११	८	६	६	९	१०	७
३	२	१३	६	३	२९	२३	२६	२	१३	६	२६	२९	२३
१०	२२	४	२०	१२	५६	२१	४९	२२	४	२०	४७	५६	२१
४२	३५	१६	५३	३७	४	४५	१८	३५	१६	५३	२३	४	४५

पिंडायुर्भाग.							चक्रार्द्धहानिसंस्कृत पिंडाद्यायुर्भाग.						
र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	र.	चं.	म.	बु.	बृ.	शु.	श.
३५६	२४२	१९३	१८६	२९६	३२९	२३३	२९६	२४२	९४	१०६	१५५	३२९	१७३
४९	२२	४	२०	४७	५६	२१	१५	२२	२०	२०	२९	५६	१२
१८	३५	१६	५३	२३	४	४५	४०	३५	१२	५३	५	४	२४

इस उदाहरणमें अस्तादि कोई नहीं है और शत्रुराशिकाभी नहीं है इससे अंशपात अर्द्धपात संस्कार नहीं हुआ केवल चक्रार्द्धहानि संस्कार है। उसका उदाहरण है कि–सूर्यका चक्रार्द्धहानि गुणक ०। ४९। ४९ से सूर्यके अंशायु ३५६। ४९। १८ गुणे २९६। १५। ४० यह सूर्यका स्पष्टायुर्भाग भया इत्यादि ॥ १४ ॥ १५ ॥

पापग्रहे लग्नस्थे हानिः।

दायांशकाः पृथक्स्थाप्याः खेटानां च तनोर्लवाः। दिग्घ्नाः खांगाग्निलब्धोना लग्ने क्रूरे च खेचरे ॥ १६ ॥ शुभदृष्टेऽर्द्धया हीना दायांशास्ते पृथक्स्थिताः। तथारोहावरोहेण भावजेन फलेन च ॥ १७ ॥ निघ्ना लब्धोनितास्तद्वद्द्वौ चेत्तनुगतौ खलौ। बलिष्ठस्य च तत्साम्ये भावाधिकफलेन च ॥ १८ ॥ लग्नस्थो लग्नपः क्रूरो नाऽसौ हानिकरः स्मृतः। आयुर्दाये तथांशोत्थे नैवोक्ता पूर्वसूरिभिः ॥ १९ ॥

लग्नमें पापग्रह होवै तो यह विशेष संस्कार है कि, ग्रहका पिंडायुर्भाग पृथक् रखना उसे लग्नके राश्यंकको छोडके अंशादिसे गुणके ३६० से भाग देना जो मिलै उसको पृथक् स्थापित पिण्डायुर्भागमें घटाना परन्तु जो पापग्रह (रवि मंगल शनि) शुभदृष्ट होवै तो लब्धिका आधा घटाना इस प्रकार पिण्डायुर्भाग होता है। अन्य मत है कि, पृथक्स्थ आयुर्भागको लग्नस्थ पाप ग्रहका जो भाव उसका जो फल उससे गुण देना ३६० से भागदेना लब्धि पूर्ववत् पृथक् स्थापित अंशादिमें घटाना, लग्नमें दो तीन पापग्रह हों तो उनमें जो अधिक बली है उसका भावफल लेना, बलभी समान हो तो जिसका भावफल अधिक है उससे करना यदि पापग्रह लग्नेश होकर लग्नमें हो तो यह हानिसंस्कार न करना और यह संस्कार अंशायुमें भी पूर्वाचार्योंने नहीं कहा है। उदाहरणमें लग्नमें पापग्रह न होनेसे यह संस्कार नहीं हुआ॥ १६–१९॥

पिण्डनिसर्गजीवायुःसाधनम् ।

पैण्डे गोऽब्जास्तत्त्वपञ्चेन्दवोऽर्का घस्राः स्वर्गाः खाक्षि चार्का- द्गुणाः स्युः । नैसर्गे वै पाणिजा भूर्द्धितुल्या नंदा धृत्यो- ऽश्राश्विनः पूर्णबाणाः ॥ २० ॥ दायांशाः स्वगुणैर्निघ्ना भाजिता भगणांशकैः । लब्धं वर्षादिकं चायुः पैण्डनैसर्गजं क्रमात् ॥२१॥ जीवशर्मोदितं तद्वद्दायांशाः स्वर्गभाजिताः । समाद्यमिभद्दत्स्वांशैर्घटीष्वेव समन्वितम् ॥२२॥ खनखाप्ता विभतनोर्लिप्ता वर्षादिकं भवेत्। पिण्डात्रिके विलग्नायुरखिलै- रंशकैः समम् ॥ २३ ॥ कैश्चिद्भतुल्यं कथितं यस्येशोऽधि- बलस्तु तत् । परैस्तेनान्वितं त्वन्यैरंशायुर्वत्तु वा किल ॥ २४ ॥ अखिलैरुदितं यत्तद्ग्राह्यमेवादिमं किल। आयु- श्चतुर्विधं पद्यैरुक्तं यदिह कीर्तितम् ॥ २५ ॥

अब पिण्ड, निसर्ग, जीवशर्माऽऽयुर्दाय कहते हैं कि, पिण्डायुमें सूर्या- दियोंके गुणक सू० १९, चं० २५, मं० १५, बु० १२, बृ० १५, शु० २१,

श० २० निसर्गायुके गुणक सू० २०, चं० १, मं० २, बु० ९, बृ० १८, शु० २०, श० ५० हैं। ग्रहका आयुर्भाग अपने गुणकसे गुणके ३६० से भाग देना वर्षादि पिंडायु, निसर्गायु होती है। पूर्वोक्त आयुर्भागको २१ से भाग देना जो वर्षादि फल मिलै उसमें पूर्वोक्त आयुर्भागको ८ से भाग देके जो फल मिलै उसमें घटी युक्त करना जीवशर्मोक्तायु होतीहै। यहाँ मासादि फल अंशायुमें कहे अनुसार लेना। उदाहरण–पिण्डायुके लिये सूर्यका आयुर्भाग २९६। १५। ४० को सूर्यके गुणक १९ से गुणके ५६२८। ५७। ४० इसमें ३६० से भाग लिया लब्धि १५ वर्ष हुए, शेष २२८। ५७। ४० को १२ से गुना २७४७। ३२ हार ३६० से भागलिया ७ मास मिले, शेष २२७। ३२ को ३० से गुना ६८२६ हारसे भाग लिया १८ दिन मिले, शेष ३४६ को ६० से गुना २०७६० हारसे भागलिया लब्धि ५७ घटी शेष २४० को ६० से गुना १४४०० हारसे भाग लिया ४० पला मिली ऐसे सबके जानना। निसर्गायुके लिये सूर्यका आयुर्भाग २९६। १५। ४० के सूर्यके गुणक २० से गुना ५९२५। १३। २० हार ३६० से भाग लिया १६ वर्ष मिले, शेषको १२ से गुना ३६० से भाग लेके ५ मास, शेषको ३० से गुना हारसे भाग लेके १५ दिन मिले, शेषको ६० से गुना हारसे भाग लेके १३ घटी मिली, शेषको ६० से गुना हारसे भाग लेके २० पल हुए इत्यादि। जीवायुके लिये सूर्यके आयुर्भाग २९६।१५।४० को २१ से भाग लेके १४ वर्ष मिले, एवं शेषको १२ से गुना २१ से भागके १ मास, पुनः शेषको ३० से गुना २१ से भागके ८ दिन शेषको ६० से गुना २१ से भागलेके घटी ४५, शेषको ६० से गुना २१ से भाग लेके ४२ पल मिली इस प्रकार सूर्यकी जीवायु १४।१।८।४५।४२ भयी इसके घटीमें सूर्यका आयुर्भाग २९६। १५।४० को ८ से भागके लब्धि ३७।२ जोडदिये तो १४।१।९।२२।४४ यह सूर्यका स्पष्ट जीवायु भया, ऐसेही चंद्रादिकाभी करना॥ २०–२२॥

पिण्डायु.

र	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.
१५	१६	३	६	६	१९	९	२
७	९	११	२	५	२	७	१०
१८	२९	५	१६	२२	२८	१४	२८
५७	२४	३	१०	१६	३७	८	२२
४०	३५	०	३६	१८	२४	०	४८

निसर्गायु.

र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
१६	०	०	४	७	१८	२४
५	८	६	७	९	३	०
१५	२	८	२७	८	२८	२०
१३	२२	४०	७	४३	४१	२०
२०	३५	२४	५७	३०	२०	०

जीवायु.

र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.
१४	११	४	८	७	१५	८	२
१	६	५	१०	४	८	२	१०
९	१५	२७	१४	२५	१६	२९	२८
२२	३१	२३	५५	४६	४२	३७	२२
४४	४२	४७	३४	३४	२२	४	४८

अब पिण्डादि तीनों आयुर्दायोंमें लग्नायुर्दाय लानेका क्रम "खनखाप्ता विभतनोः" इत्यादि श्लोकोंसे कहते हैं कि, राशिको छोडके अंशादि लग्नकी कला करके २०० से भाग देना पिंड, निसर्ग, जीवशर्मायुर्दायमें लग्नायु होती है। यह लग्नभुक्तनवांशतुल्यायु सर्वाचार्य संमत है। कोई आचार्य लग्नराशितुल्य वर्ष कहते हैं। इसमें निर्णय है कि, आयुर्दायोक्तरीतिसे जो आयु मिले उसमें अंशपति बली होवै तो अंशतुल्य वर्ष, लग्नपति बली होवें तो लग्नतुल्य युक्त करना ऐसा बहुतोंका मत है तो भी प्रथमोक्तरीति सर्वसंमत होनेसे ठीक है यही करनी इस प्रकार चतुर्विध आयु कही है ॥ २३–२५ ॥

चतुर्ष्वायुस्सु ग्राह्यायुर्विचारः ।

अंशायुः स्याच्चेत्तनौ वीर्ययुक्ते पैण्डं सूर्येऽब्जे च नैसर्गिकं च । तुल्यं वीर्यं चेद्द्वयोस्तद्युतेश्च खण्डं चेत्स्यात्तुल्यवीर्यास्त्रयश्च ॥ २६ ॥ त्र्यायूंषि त्रिबलैर्गुण्य युतिर्वीर्यैक्यभाजिता । युतेस्त्र्यंशोऽथवा जैवं त्रयश्चेद्धीनवीर्यकाः ॥२७॥ बहुसंमतमंशायुः सत्यं सत्योदितं हि यत् । सुशीलपथ्यसुभुजां धर्मिष्ठानां न पापिनाम् ॥ २८ ॥

लग्न बलाधिक हो तो अंशायु, सूर्य बली होय तो पिंडायु, चंद्र बली हो तो निसर्गायु लेना। दो तुल्यबली हों अर्थात् दोनों षड्रूपाधिक बली हों तो उन दोनोंकी आयु जोडके उसका आधा करना। यथा लग्न सूर्य सम बली हों तो अंशायु पिंडायुके, लग्न चंद्र समबली हों तो अंशायु निसर्गायुके, सूर्य चंद्र सम बली हों तो पिंडायु निसर्गायुके योगका आधा करना। यदि तीनों सम बली हों तो तीनोंकी आयुको तीनोंके बलसे गुणके ऐक्य करके तीनोंके बलैक्यसे भागके जो मिलै सो जानना। अथवा तीनोंके आयुयोगका तृतीयांश लेना यह मिश्रायु होती है। यदि तीनों हीन बली हों तो जीवशर्मोक्त आयु लेना। अंशायु दशा बहुत आचार्योंके संमत है यह सत्याचार्यका कहा सत्य है। इतनी आयु उन्हींको भोगनेके लिये मिलती है जो अच्छे शीलवाले हैं, पथ्यभोजी हैं और धर्ममें तत्पर रहते हैं। पापियोंको पूर्णायु नहीं होती। उदाहरण चक्रोंमें है॥ २६-२८॥

अंशायु.

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल	यो
८	९	१	८	११	४	१३	१५	७२
१०	११	११	२	२	२	४	२	११
१७	१२	७	१३	१	२३	८	२४	१९
२९	५५	१९	५५	१२	२५	३४	५२	४४
२४	४८	१२	१२	०	४८	४८	०	१२

पिंडायु.

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल	यो
१५	१६	३	६	६	१९	९	२	८०
१	९	११	२	५	२	७	१०	१०
५८	२९	५	१६	२२	२८	१४	२८	१३
७	२४	३	१०	१६	३७	८	२२	०
४०	३५	०	३६	१८	२४	०	४८	२१

निसर्गायु.

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल	यो
१६	०	०	४	७	१८	२४	२	७५
५	८	६	७	९	३	०	१०	४
१५	२	८	२७	८	२८	२०	२८	१९
१३	२२	४०	७	४३	४१	२०	२२	३१
२०	३५	२०	५७	३०	२०	०	४८	५४

पिंडायुनिसर्गायुयोग.

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल	यो
४०	०	६	१९	२५	४१	४७	२१	२२९
११	८	४	०	५	९	०	०	२
२१	२	२१	२७	२	२०	१३	२१	२२
४०	२२	२	१३	११	४४	२	३७	१६
२४	३५	३६	४५	४८	३२	४८	३६	२७

योगतृतीयांशमिश्रायु.

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल	यो
१३	९	२	६	८	१३	१५	७	७६
७	१	१	४	५	११	८	०	४
२७	२४	१७	९	२०	६	४	७	२७
१३	५४	०	४	४३	५४	२०	१२	२५
२८	१९	५२	३२	५६	५१	५६	३२	२६

अत्र विशेषो म्हागुलिपद्धतौ ।

यदा त्रयाणामपि वीर्यसाम्यमेषां द्वयोः स्याद्यदि वीर्यसाम्यम् ।
तदा तदायुः स्वबलेन निघ्नमेकीकृतं तद्बलयोगभक्तम् ॥ २९ ॥ *
हानिर्याऽस्तमिते प्रोक्ता शत्रुभे चाल्पबुद्धिभिः ।
पिण्डादित्रितये सा स्यान्नांशकोत्थे कदाचन ॥ ३० ॥

यहां विशेष म्हागुलिपद्धतिमें है कि, तीनोंका बलसाम्य हो या दोका बलसाम्य हो तो अपने अपने बलसे अपने अपने आयुको पृथक् पृथक् गुणकर योग कर उन तीनों या दोनों ग्रहोंके बलयोगसे भाग लेनेसे आयु होती है और अस्तग्रहमें और शत्रुस्थानगत ग्रहमें अल्पबुद्धिवालोंने जो आयुहानि कही है वह संस्कार पिण्डादि तीनोंमें होता है अंशायुमें कभी नहीं होता अर्थात् अस्तमें आधा शत्रुगृहमें तृतीयांश न्यून अंशायुमें न करना क्योंकि अर्द्ध हानि चेष्टागुणकमें, अंश हानि आश्रयगुणकमें पहिले हो गयी है यहां वर्षगणना सौरमानसे जाननी ॥ २९ ॥ ३० ॥

मनुजादीनां परमायुःप्रमाणं पश्वायुर्दायानयनं च ।

आयुःसमा नृकरिणां नखभूः शराहं सिद्धा तुलायवृषयोः क्षितिपास्त्वजादेः । तत्त्वास्तथोष्ट्रखरयोर्दशना हयानां सूर्याः शुनां मनुजवत्तदिहानयेच्च ॥ ३१ ॥ एषां परायुर्गुणितं विहृतं नृपरायुषा । यल्लब्धं हायनाद्यं तत्तेषामायुः स्फुटं भवेत् ॥ ३२ ॥

परमायु कहते हैं कि, मनुष्य एवं हाथियोंकी १२० वर्ष ५ दिन, व्याघ्र बकरी आदिकी १६ वर्ष, गाय भैंसकी २४, ऊंट गदहेकी २५, कुत्तेकी १२,

---

* इतोऽग्रे कस्मिंश्चित्पुस्तके सार्द्धत्रयः श्लोका उपलभ्यन्ते– “ पृथक्पृथग्व्योमसदां तदायुः श्रीनीलकण्ठादय ऊचुरेव ॥ यद्वायुरेतद्ग्रहसंख्ययाप्तं तच्छ्रीधराचार्यमतं निरुक्तम् ॥ १ ॥ ” दामोदरपद्धतावपि–“ लग्नार्कचन्द्रा यदि वीर्ययुक्तास्तदा विलग्नस्य बलेन हन्यात् ॥ अंशायुरर्कस्य बलेन पैण्डं नैसर्गिकं चन्द्रमसो बलेन ॥१॥ सर्वाण्यथैकत्र विधाय तानि बलैक्यभक्तानि समादिकं यत् ॥ फलं च मिश्रायुरिदं द्वयोर्वा बलैक्यता वोभयवीर्यसाम्ये ॥ २ ॥ साध्यं बुधैः स्पष्टमिदं जगाद श्रीजीवशर्म्मा मतिमान्यथैव ॥ ” एते प्रयोजनाभावान्मूले न स्थापिताः॥

घोडेकी ३२ वर्ष है। अन्य जीवोंकी आयुसाधनभी मनुष्योंकेसी करके अपने २ परमायुसे गुनना और १२० वर्ष ५ दिनसे भाग लेना तो उस प्राणीकी आयु होती है। दशा स्थापन करनेकी रीति है कि, लग्न सूर्य चन्द्रमामेंसे जो अधिक बली हो उसकी प्रथम लिखनी, तब केन्द्रस्थकी, तब पणफरवालेकी, तब आपोक्लिमवालेकी लिखनी। एक स्थानमें बहुत ग्रह हों तो उनमें प्रथम बलाधिक्यकी, तब अल्पबलीकी, तब उससेभी हीन बलीकी। यदि बलमें समान हों तो बहुत वर्षवालेकी प्रथम लिखनी। यदि बहुवर्षदभी समान हों तो उनमेंसे अस्तसे प्रथम उदय हुआ है उसकी प्रथम लिखनी॥ ३१॥ ३२॥ इति चतुर्विधायुस्साधनम्॥

प्रकारान्तरेणायुर्नयनम्।

समाहृता भांशकलाविलिप्ता गजाभ्रचंद्रैर्ग्रहपर्ययेभ्यः। विकर्तनैः संविहृतावशेषेऽब्दमासघस्रादिकमायुरेवम्॥ ३३॥ होरादायोऽप्येवमात्राधिवीर्यं लग्नं चेत्स्याद्राशितुल्यैस्तथाऽब्दः। युक्तं शेषं भागपूर्वं द्विनिघ्नं बाणैर्भक्तं मासपूर्वैर्युतं तत्॥ ३४॥ यद्देष्टखेटस्य लवास्त्रिनिघ्ना दिग्उद्धृता द्वादशभक्तशेषम्। आयुः समामासदिनादिपूर्वं लघ्वी क्रियेयं गणकैर्निरुक्ता॥ ३५॥ नीचेऽस्तगेऽर्द्धमरिभे त्रिलवं हरंति नास्तं गतौ शनिसितौ व्ययतोऽत्र वामम्। सर्वार्द्धकत्रिकचतुर्थशरर्तुभागानुक्तान् हरंत्यशुभदाः शुभदास्तदर्धम्॥ ३६॥ एकस्थानस्थिताश्चेत्स्युर्द्व्यादयो गगनेचराः। तदा बलयुतः खेटो हरत्येको न चापरे॥ ३७॥ वर्गोत्तमस्वर्क्षनवांशदृक्के द्विसंगुणं द्व्यादिकृते सकृच्च। वक्रोच्चयोस्तत्त्रिगुणं विधेयं द्वित्रैगुणत्वे त्रिगुणं सकृच्च॥ ३८॥

प्रकारांतरसे आयु कहते हैं कि, ग्रहके राशि अंश कला विकलाको १०८ से गुणके १२ से भागके जो मिले वह वर्षके स्थानमें रखना १२ से

अधिक हो तो १२ से शेष करलेना। शेषको १२ से गुणके हारसे भाग लेना महीना मिलेंगे । शेषको ६० से गुनके हारसे भाग लेके दिन, फिर शेषको ६०से गुनके हारसे भाग लेके घटी, ऐसेही शेषसे पल विपल लेनी ॥ ३३॥ ऐसेही लग्नकी भी आयु जाननी । परंतु लग्न बली हो तो राशितुल्य वर्ष लेने, शेष अंशादिको २ से गुनके ५ से भागलेना मासादि मिलते हैं ॥३४॥ अथवा जिस ग्रहकी दशा करनी है उसके अंशको ३ से गुणके १० से भाग लेकर पुनः १२ से भागलेके शेष वर्षादि आयु मिलती है । यह लघु-क्रिया ज्योतिषियोंने कही है ॥ ३५ ॥ इतना करके पूर्वोक्त संस्कार करने कि, नीच अस्त शत्रुराशिगत ग्रहका तीसरा भाग घटाना परंतु शुक्र शनि अस्तमें नहीं घटते और अशुभग्रह १२ भावसे ७ भाव पर्यंत क्रमसे १२ में सब, ११ में आधा, १० में तीसरा भाग, ९ में चौथा भाग, ८ में पंचमांश, ७ में छठा भाग घटता है । शुभग्रह हो तो उक्त भागका आधा कम करना ॥ ३६ ॥ यदि एक भावमें दो आदि ग्रह हों तो उनमेंसे जो बलाधिक हो वही घटता है सभी नहीं ॥ ३७ ॥ वर्गोत्तम, स्वराशि, स्वनवांश, स्वद्रेष्काणमें जो ग्रह हो उसे द्विगुण करना । उच्चमें, वक्रमें त्रिगुण करना । जहां द्विगुण और त्रिगुणकी भी प्राप्ति है तहां एकही संस्कार करना दोनों नहीं करने अर्थात् त्रिगुणही करना ॥ ३८ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुंजराजोदिते च ।
होरासारे शंभुहोराप्रकाशे आयुर्दायाध्याय आसीत्सुपूर्णः ॥ ३९ ॥

इति श्रीपुंजराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे पञ्चविधायुःसाधनाध्यायः सप्तमः ॥ ७ ॥

इसका अर्थ पूर्ववत् है । यह पंचविधायुःसाधनाध्याय समाप्त भया ॥ ३९ ॥

इति श्रीशंभुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां पंचविधायुस्साधनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अथाष्टकवर्गाध्यायः ८।

अथ प्रवक्ष्येऽष्टकवर्गजायुः स्वयामले तद्विधिना यदुक्तम् ।
भिन्नायुसंज्ञं समुदायकं च निजागमे यत्तु मणित्थपूर्वैः ॥ १ ॥
अष्टवर्गस्य वाक्यानि सूर्यादीनां यथाक्रमम् ।
गृहप्रभृतिसंस्थानं निर्दिशेदक्षरक्रमात् ॥ २ ॥
राशिचक्रं लिखेद्भूमौ संयोज्याक्षरसंख्यया ।
शून्याक्षरेण दशमं निर्दिशेद्विधिवत्क्रमात् ॥ ३ ॥

अब अष्टवर्गसे भिन्नायुससुदाय जो श्रीशिवजीने अपने यामलमें कही हैं उन्हींको मणित्थादि आचार्योंने अपने २ ग्रन्थोंमें कही हैं वेही यहां कही जाती हैं ॥ १ ॥ सूर्यादियोंके अष्टकवर्गवाक्योंके अंक लग्नादिस्थानोंमें यथाक्रम जानने ॥ २ ॥ प्रथम कर्मभूमिमें राशिचक्र (कुण्डली) लिखके अक्षरसंख्यासे अंकस्थानोंमें रेखादि चिह्न करने । विधिपूर्वक क्रमसे गणना कर कहनी । शून्याक्षरसे दशम जानना, यहां अंक क ट प य चक्रके अनुसार हैं । क १ ट १ प १ य १ इस क्रमसे कख आदि ९ टठ आदि ९, पादि ५ यादि ८ शून्याक्षरसे दशसंख्या न १० ञ १० जानने कट पय यह ग्यारहकी ११ संख्या है श्रीसे १२ का ग्रहण होता है । ये कटपयचक्रके अंक हैं ॥ ३ ॥

अर्कात्सूर्यसुतात्कुजात्पुरवसुर्दुग्धानका भार्गवात् तासां श्रीर्हिमगोर्गतिर्नयबुधाद्द्रोशांतिधेनोः परम् । लग्नाद्गर्भतनुः परः सुरगुरोः शीताधिको भानुमानित्याद्यष्टकवर्गके शुभकरो देवेति संख्या गुणाः ॥४॥ इन्दोर्यागतिसानया भृगुसुताद्गर्भे सुसिद्धानकं सौम्याद्योगवशं सदानय गुरोर्यात्रं वसोर्जानकी। भौमाच्छ्रीगणिताधनाय रविजाद्द्रोणांतिको लग्नभाद्गीतानस्य रवेर्लितेसहनयाश्चंद्राष्टवर्गे ध्रुवाः ॥ ५ ॥ वक्रात्कौरवसूदनस्य रविजात्पर्वं सदा धेनुकं सौम्याद्द्रोशतको सितात्तुदकरं भानोर्गुणातेनया । जीवात्तत्रपुरं विलग्नभवनात्कालस्तु नित्यं विधोर्गातास्यादिह शंकरो धरणिजः सर्वेषु वर्गे धिगः ॥ ६ ॥ सौम्याद्योगशतं धनाकर रवेः शेषाधिकारी गुरोस्तेजस्कारि

कुजाच्छनेः करभसं दुग्धानयं भार्गवात् । पुत्रीगर्वमदांधकोंगभवनात्पारवताजानकी चन्द्राद्रेवतिदानकृच्छशिसुतो मुख्योत्र संख्या वशी ॥ ७ ॥ जीवात्कंठलघुं सदा नय कुजात्पात्रं वसादानये आदित्यात्पुरलाभसंदधिनये चन्द्राद्रमासाधकम् । सौम्यात्पारवशंतधानकशनेर्गोमाचिरं भार्गवाच्छ्रीमन्तो धनिकस्तनोः पुरवशस्तत्संधिनापस्तमः ॥ ८ ॥ शुक्रः स्वात्पुरगर्भमोहधनिकः सौम्याद्गुणंचाधिको लग्नात्कंठलघुर्महाधिपगुरोर्मोहो धनायो विधोः। यात्रागर्वमदांधकारि रविजाद्रवोमदाधीनको भौमाद्रोमतधीकरो दिनकरादिक्यौरसंख्या रमाः ॥ ९ ॥ मंदाल्लक्ष्मिचयो गुरोर्मतिकरः शुक्रात्तयाश्रीःकुजाद्रोमन्तज्ञपुराबुधात्तद्धनी पात्रं विधोर्गीतकृत्। लग्नाद्योगवितानये दिनमणेःपात्रं वसोर्जानकी मंदस्यात्र सुखं वदंति मुनयः संख्या धिला कथ्यते॥ १०॥सूर्याद्रौ वितना परं रविसुताद्योगो वितानस्य शुक्रेज्यात्कौरवशेषसाधनकभूपुत्रात्कलातानयम् । शुक्रात्कारुगवोमदांधपतनोश्चन्द्राच्चगीतज्ञयं सौम्यात्कौरवचन्दनाढ्य इति वै लग्नाष्टवर्गे धवः ॥ ११ ॥ अथ लग्नाष्टकवर्गवाक्यानि । सूर्यशनिगुरुशुक्रभौमबुधचन्द्रलग्नक्रमेण यथाक्रमं गौर्वितानपरम् । योगवेत्ता न स्यात् । कुरुवंशेषुसंधानाय कारागावोमन्दधीः स्यात् । कालचक्रस्तु नित्यः कुरवश्च नाद्यः गीतज्ञोयं गीतगोयमिति। यवनाचार्यमतेन राहोरष्टकवर्गांकाः। सूर्यात्पुत्रगमः सदा न हिमगोः पूगं मसादेर्धनं भौमात्खड्गपुरं बुधाद्रघुसदारः सूर्यपुत्रादपि । गोमेसन्नुपरो भृगोस्तिथिपरं जीवात्पुगावस्तदा लग्नाद्रोविमधीर इत्यगुगुणा संख्या त्रिभा कुत्रचित् ॥ १२ ॥

अष्टवर्गके श्लोकोंसे जो अंक निकलते हैं वे चक्रमें लिखे हैं इनका अर्थ यही जानना रेखा योग सूर्यका ४८, चं० ४९, मं० ३९, बु० ५४, बृ० ५६, शु० ५२, श० ३९ हैं ॥ ४-१२ ॥

सूर्याष्टकवर्गः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल
१	३	१	३	५	६	१	३
२	६	२	५	६	७	२	४
४	१०	४	६	८	१२	४	६
७	११	७	८	११	०	७	१०
८	०	८	१०	०	०	८	११
९	०	९	११	०	०	९	१२
१०		१०	१२	०	०	१०	०
११		११				११	

चन्द्राष्टकवर्गः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल
३	१	२	१	१	३	३	३
६	३	३	३	२	४	५	६
७	६	५	४	४	५	६	१०
८	७	६	५	७	७	११	११
१०	९	१०	७	८	९	०	०
११	१०	११	८	१०	१०	०	०
०	११	०	१०	११	११	०	०
			११				

भौमाष्टकवर्गः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल
३	३	१	३	६	६	१	१
५	६	२	५	१०	८	४	३
६	११	४	६	११	११	७	६
१०	०	७	११	१२	१२	८	१०
११	०	८	०	०	०	९	११
०	०	१०	०	०	०	१०	०
०	०	११	०			११	०
०		०					

बुधाष्टकवर्गः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल
५	२	१	१	६	१	१	१
६	४	२	३	८	२	२	२
९	६	४	५	११	३	४	४
११	८	७	६	१२	४	७	६
१२	१०	८	९	०	५	८	८
०	११	९	१०	०	८	९	१०
०	०	१०	११	०	९	१०	११
		११	१२	०	११	११	०
						०	

गुरोरष्टकवर्गः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल
१	२	१	१	१	२	३	१
२	५	२	२	२	५	५	२
३	७	४	४	३	६	६	४
४	९	७	५	४	९	१२	५
७	११	८	६	७	१०	०	६
८	०	१०	९	८	११	०	७
९	०	११	१०	१०	०	०	८
१०	०	०	११	११	०	०	१०
११	०	०	०	०	०	०	११

शुक्राष्टकवर्गः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल
८	१	३	३	५	१	३	१
११	२	४	५	८	२	४	२
१२	३	६	६	९	३	५	३
०	४	९	९	१०	४	८	४
०	५	११	११	११	५	९	५
०	८	१२	०	०	८	१०	८
०	९	०	०	०	९	११	९
०	११	०	०	०	१०	०	११
	१२				११		

शंनेरष्टकवर्गः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल
१	३	३	६	५	६	३	१
२	६	५	८	६	११	५	३
४	११	६	९	११	१२	६	४
७	०	१०	१०	१२	०	११	६
८	०	११	११	०	०	०	१०
१०	०	१२	१२	०	०	०	११
११	०	०	०	०	०		०
०		०	०				

लग्नाष्टकवर्गः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल
३	३	१	१	१	१	१	३
४	६	३	२	२	२	३	६
६	१०	६	४	४	३	४	१०
१०	११	१०	६	५	४	६	११
११	१२	११	८	६	५	१०	०
१२	०	०	१०	७	८	११	०
०	०	०	११	९	९	०	०
०			०	१०	०		
				११			

इसी प्रकार राहुके पूर्वोक्त अंकोंका चक्र बनता है जिसके ४३ अंक है किसीके मतसे २५ भी हैं । अत्रोदाहरणार्थं कस्यचिज्जन्मसमये ग्रहाः ।

राहोरष्टकवर्गः ।

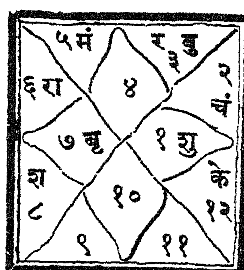
र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल
१	१	२	२	१	६	३	३
२	३	३	४	३	५	५	४
३	५	५	७	४	७	७	५
५	७	१२	८	६	११	१०	९
७ ८	८ ९	०	१२	८	१२	११	१२
१०	१०	०	०	०	०	१२	०

स्पष्टतराः ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	रा	ल
२	१	४	२	६	०	७	५	३
४	८	७	७	१६	२०	८	५	८
२८	१५	३३	२	११	१५	४६	५५	४५
१	७	१	१	१	१	१	४४	१
५६	८५३	३२	११३	४	३७	४	३	०
५६	३८	२६	३८	१	३४	३२	११	०

तत्रेष्टम्, ६ । १९ दिनमानम् ३३ । १४, नतम् १० । १८ । उन्नतम् १९ । ४२ लग्नस्य बलं स्पष्टम् ६ । ४ । १८ रूपात्मकम् ।

जन्मकुंडली ।

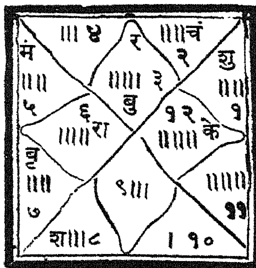


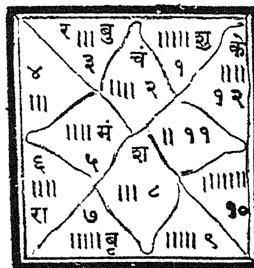
रव्यादीनां षड्बलानि ल. ब. ६। ४। ८।

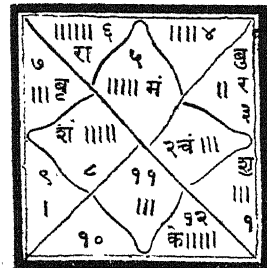
र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ग्रह
४ ४० ११	३ २० ४५	२ ३ १२	२ ३८ २६	३ ४ १६	४ ३ ३३	४ ११ ३०	स्थान.
० ३८ ४३	० ११ ३३	० १९ ४०	० ४० २६	० २७ ३१	० ५ ३३	० ४१ १०	दिग्ब.
१ ३० २८	३ ८ २८	१ ११ ४०	३ ३६ ४	१ ४८ २०	० ४८ २०	५ ५६ ४०	काल.
१ ० ०	९ ५१ २५	० १७ ८	० २५ ४२	० ३ ४७	० ४१ ५१	० ८ ३४	निस.
१ ५१ २८	० ५ २९	१ २४ २८	१ १ २७	१ ५९ ३९	१ २९ ३४	१ ४८ १२	चेष्टा.
० २ ४५	० ४ ४०	० २३ २०	० ४ ३	० ७ ४५	० ४ २०	० २२ १४	दृग्ब.
१ १० ३५	५ ५ २०	५ ५१ ४८	९ ३५ १८	७ ३३ १८	६ १४ ८	९ २३ ४२	षड्बलैक्य

उदाहरणार्थमष्टकवर्गरेखान्यासः।

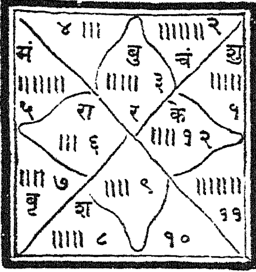
सू० अ० व० ४८. चं० अ० व० ४९. मं० अ० व० ४९.



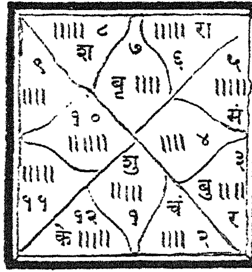




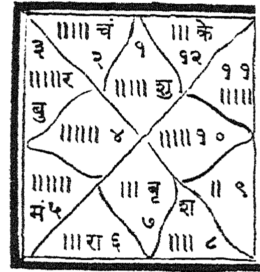
बु० अ० व० ५४.



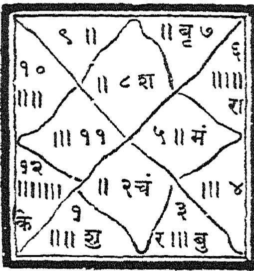
बृ० अ० व० ५६.



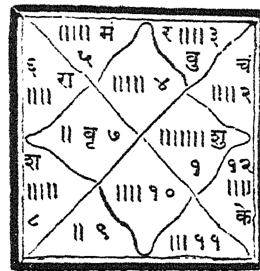
शु० अ० व० ५२.



श० अ० व० ३९.



ल० अ० व० ४९.



त्रिकोणैकाधिपत्यशोधनार्थमन्यच्चक्रम् ।

उदाहरणार्थं रवेरष्टकवर्गचक्रम् ।

मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	मे	वृ	राशि
र बु	ल	मं	०	वृ	श	०	०	०	०	श	चं	ग्रह
।	।	०	।	०	०	।	।	।	।	।	०	सू
०	।	०	०	।	०	०	०	।	।	०	०	चं
।	०	।	।	०	।	०	०	।	।	।	।	मं
०	०	।	०	।	।	०	०	।	।	।	।	बु
।	०	।	०	०	०	०	०	।	।	०	०	बृ
०	०	०	।	।	०	०	०	०	।	०	०	शु
।	।	।	।	०	।	।	०	।	०	०	।	श
।	०	०	।	।	०	।	०	०	०	।	।	ल
५	३	४	५	४	३	३	१	६	६	४	४	रे. यो
३	५	४	३	४	५	५	७	२	२	४	४	बिं. यो

एवमेवान्येषां ग्रहाणां लिखित्वा रेखाबिंदुयोगं कुर्यात् तस्मात्त्रि-कोणैकाधिपत्यशोधनं कुर्यात् ।

अथ त्रिकोणैकाधिपत्यशोधनम् ।

राशिचक्रं यथामार्गं निक्षिप्याष्टग्रहस्य च । त्रिकोणशोधनं कुर्यादादौ सर्वेषु राशिषु ॥ १३ ॥ त्रिकोणं तु कथं प्रोक्तं मेषसिंहहयक्रमात् । वृषकन्यामृगाख्येषु युग्मतौलिघटेषु च ॥ १४ ॥ कार्किवृश्चिकमीनास्ते त्रिकोणाः स्युः परस्परम् । त्रिकोणेषु च यन्न्यूनं तत्तुल्यं त्रिषु शोधयेत् ॥ १५ ॥ एकस्मिन् भवने शून्ये तत्त्रिकोणं न शोधयेत् । समत्वे सर्वगेहेषु सर्वं संशोधयेद्बुधः ॥ १६ ॥ एवं त्रिकोणं संशोध्य पश्चादेकाधिपत्यता । क्षेत्रद्वयफलानि स्युस्तदा संशोधयेद्बुधः ॥१७॥ क्षीणेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद्ग्रहवर्जिते । ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके ॥ १८ ॥ अनेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद्ग्रहवर्जिते। फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन्सर्वमुत्सृजेत्॥१९॥ उभयोर्ग्रहसंयुक्ते न संशोध्यः कदाचन । उभयोर्ग्रहहीनाभ्यां समत्वे सकलं त्यजेत् ॥ २० ॥ सग्रहा ग्रहतुल्यत्वात्सर्वं संशोध्यमग्रहात् । कुलीरसिंहयो राश्योः पृथक्क्षेत्रं पृथक्फलम् ॥ २१ ॥ शोध्यावशेषं संस्थाप्य राशिमानेन वर्द्धयेत् । ग्रहयुक्तेऽपि तद्राशौ ग्रहमानेन वर्द्धयेत् ॥ २२ ॥

त्रिकोणैकाधिपत्यशोधनप्रकार कहते हैं कि, पहिले प्रत्येक ग्रहकी कुण्डली लिखके पूर्वोक्त अंकोंके अनुसार रेखा और बिंदु स्थापन करके योग प्रत्येक राशिके नीचे लिखना तब प्रथमत्रिकोण शोधन करना वह त्रिकोण राशी १ । ५ । ९ एक, २ । ६ । १० दो, ३ । ७ । ११ तीन, ४ । ८ । १२ ये चार हैं । इन त्रिकोणके तीनोंमेंसे जो न्यून अंक हो वह तीनों स्थानोंमें घटाना जैसे सूर्याष्टकवर्गमें मिथुनके नीचे रेखा योग ५, तुलाके नीचे ४, कुंभके नीचे ६ है । इनमें न्यूनांक ४ तीनों जगह घटाया तो मिथुनके नीचे १, तुलाके नीचे ०, कुंभके नीचे २, त्रिकोणशोधितांक हुए । तथा कर्कके नीचे ३, वृश्चिकके नीचे ३, मीनके नीचे ६ हैं । न्यूनांक तीनोंमें

घटाया तो कर्कके नीचे०, वृश्चिकके नीचे०, मीनके नीचे ३ पाये ऐसेही सबका त्रिकोणशोधन करना, विस्तारसे चक्रमें लिखेंगे । त्रिकोणके तीनोंमेंसे एकमें शून्य होवै तो त्रिकोणशोधन न करना, शून्य घटानेसे यथास्थितही रहता है । यदि तीनों स्थानोंमें तुल्य अंक होवै तो सबका शोधन करनेसे तीनोंमें शून्य होजाता है । जैसे गुरुके अष्टवर्गमें मिथुन ४, तुला ४, कुंभ ४ हैं शोधन करनेसे मिथुनके नीचे० तुलाके नीचे० कुंभके नीचे० भया इस प्रकार त्रिकोणशोधन करके तब एकाधिपत्य शोधन करना । तिसकी विधि है कि, भौमादियोंके दो २ राशि हैं तब विचार है कि, एक ग्रहके दो राशियोंमें एक ग्रहयुक्त राशिफल हीन हो, दूसरी ग्रहहीन राशि फलाधिक हो तब ऊन फल अन्यत्र ग्रहरहित अधिकफलक्षेत्रमें शोधना । शोधनेसे अवशिष्ट ग्रहरहित क्षेत्रमें स्थापन करना । यहां कल्पित उदाहरण है कि, चंद्राष्टकवर्गमें मिथुन ग्रहसहित, त्रिकोणशोधित फल १, कन्याग्रहरहित त्रिकोणशोधित फल ४ में घटाया शेष ३, तब मिथुनके नीचे १, कन्याके नचिे ३ स्थापन किया । यदि एक ग्रहकी एक राशि फलाधिक एवं ग्रहयुक्त हो दूसरी राशि ग्रहरहित एवं फलमें न्यून हो तो फलाधिक ग्रहयुक्त राशिमें उसके नीचे जो त्रिकोणशोधित फल है वह स्थापन करना, ग्रहरहित न्यूनफलवाली राशिके नीचे शून्य रखना जैसे बुधाष्टकवर्गमें मिथुन ग्रहसहित फलाधिक १, कन्या ग्रहरहित फल न्यून० है तो मिथुनके नीचे यथास्थित १ और कन्याके नीचे० स्थापन किया । यदि दोनों राशियोंमें ग्रह हो तो तहाँ शोधनभी न करना । जैसे चंद्राष्टकवर्गमें वृष ग्रहसहित त्रिकोणफल ३, तुलाभी ग्रहसहित त्रिकोणफल०, जैसाका तैसा । वृषके नीचे ३, तुलाके नीचे० एकाधिपत्यशोधनमें भया । यदि एक ग्रहकी दोनों राशि ग्रहरहित और फलमें तुल्य हो तो सबको छोडके दोनों जगह शून्य रखना जैसे शुक्राष्टकवर्गमें मकर कुम्भ ग्रहरहित और फल २ । २ समान है तो मकरके नीचे०, कुम्भके नचिे शून्य० भया । अथवा एक जगह फल दूसरेमें शून्य हो तोभी फलके नीचे शून्य, शून्यके नीचेभी शून्यही रखना । यदि एक जगह फल अधिक दूसरी जगह न्यून हो तो न्यूनफलसे अधिक फल शोधके

शेष स्थापना करना। जैसे किसी अष्टकवर्गमें वृषके नीचे ३, तुलाके नीचे १ शोधन करनेसे वृषके नीचे २ तुलाके नीचे १ होगा। यदि एक राशि ग्रह-सहित दूसरी ग्रहरहित हो और दोनोंका फल तुल्य हो तो ग्रहसहित राशिमें यथास्थित और ग्रहरहितमें० शून्य रखना जैसे लग्नाष्टकवर्गमें मिथुन ग्रह-सहितं कन्या ग्रहरहित फलमें १। १ बराबर है तो ग्रहसहित मिथुनके नीचे यथास्थित १ और ग्रहरहित कन्याके नीचे० शून्य भया। कर्क सिंह एक २ ग्रहकी १। १ राशि हैं इस लिये इनमें शोधन नहीं है यथास्थित स्थापना करना ऐसा सर्वत्र जानना। शोधन करके शेष स्थापना करना तब राशिगुणक "गोसिंहौ दशगुणितौ" इत्यादि राशिगुणकसे गुनना और ग्रहसहितराशि ग्रहगुणकसे भी गुनना ॥ १३–२२ ॥

चन्द्राष्टकवर्गः।

चं	र. बु.	ल	मं		ब	श					शु	ग्रहाः
वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	मे	राशयः
४	३	३	४	४	५	३	५	६	२	४	६	रेखायोगः
०	१	०	०	०	३	०	१	२	०	१	२	त्रिकोणशो०
०	०	०	०	०	३	०	०	२	०	०	२	एकाधिपत्यशो०

चं० अ० व० राशिपिंडः ५३ ग्रहपिंडः ५४ योगपिंडः १०७

सूर्याष्टकवर्गः।

र. बु.	ल	मं		बृ	श					शु	चं	ग्रहाः
मि	क	सिं	क		वृ	ध	म	कुं	मी	मे		राशयः
५	३	४		४	३	३	१	६	६	४	४	रेखायोगः
१	०	१	४	०	०	०	०	०	३	१	३	त्रिको० शो०
१	०	१	३	०	०	०	०	०	३	१	३	एकाधिप० शो०

सू० अ० व० राशिपिंडः १२८ ग्रहपिंडः ४० योगपिंडः १६८

भौमाष्टकवर्गः ।

मं		बृ	श				शु	चं	सू	बु	ल	ग्रहाः
सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	मे	वृ	मि	क	राशयः
५	५	३	५	१	०	३	५	३	३	२	४	रेखायोगः
४	५	१	१	०	०	१	१	२	३	०	०	त्रिको० शो०
४	५	१	१	०	०	१	१	२	२	०	०	एकाधि० शो०

भौ० अ० व० राशिपिंडः १४० ग्रहपिंडः ७६ योगपिंडः २१६

बुधाष्टकवर्गः ।

र. बु.	ल	मं		बृ	श					शु	चं	ग्रहाः
मि.	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	मे	वृ	राशयः
५	३	७	३	५	५	४	०	७	३	५	७	रेखायोगः
०	०	३	३	०	२	०	०	२	०	५	७	त्रिको० शो०
०	०	३	३	०	२	०	०	२	०	०	७	एकाधि० शो०

बुधाष्टकवर्ग राशिपिंडः १६० ग्रहपिंडः ७६ यो० पि० २३६

गुरोरष्टकवर्गः ।

बृ	श					शु	चं	र बु	ल	मं		ग्रहाः
तु	वृ	ध	म	कुं	मी	मे	वृ	मि	क	सिं	क	राशयः
४	५	४	६	४	६	५	४	४	४	५	५	रेखायोगः
०	१	०	२	०	२	१	०	०	७	१	१	त्रिकोणशो०
०	१	०	२	०	२	१	०	०	०	१	१	एका० शा०

गु० अ० व० राशिपिंडः ६४ ग्रहपिंडः २० योगपिंडः ८४

शुक्राष्टकवर्गः ।

शु	चं	र बु	ल	मं		बृ	श					ग्रहाः
मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	राशयः
५	५	५	६	६	३	३	३	३	५	५	३	रेखायोगः
२	२	२	३	३	०	०	०	०	२	२	०	त्रिकोणशो०
२	२	२	३	३	०	०	०	०	०	०	०	एका० शो०

शु० अ० व० राशिपिंडः ९२ ग्रहपिंडः ६८ योगपिंडः १६०

शनेरष्टकवर्गः ।

श					शु	चं	रबु	ल	मं		बृ	ग्रहाः
वृ	ध	म	कुं	मी	म	वृ	मि	क	सिं	क	तु	राशयः
१	३	४	३	६	४	३	२	४	१	५	३	रेखायोगः
०	२	१	१	५	३	०	०	३	०	२	१	त्रिकोणशो०
०	२	०	०	३	३	०	०	३	१	२	१	एकाधि० शो०

श० अ० व० राशिपिंडः १०४ ग्रहपिंडः ३१ यो० पिं०१३५

लग्नाष्टकवर्गः ।

	मं		बृ	श					शु	चं	रबु	ग्रहाः
क	सिं	क	तु		ध	म	कुं	मी	म	वृ	मि	राशय
४	५	४	३	५	२	४	५	४	६	४	४	रेखायोग
०	३	१	०	१	०	०	१	०	४	०	१	त्रिको० शो०
०	३	०	०	१	०	०	१	०	४	०	१	एकाधि० शो०

ल० अ० व० राशिपिंड: ८९ ग्रहपिंड: ६७ यो० पिं० १५२

राशिग्रहगुणकाः । पिण्डायुर्दायानयनं च ।

गोसिंहौ दशगुणितौ वसुभिर्मिथुनालिनौ । वणिङ्मेषौ तु मुनिभिः कन्यकामकरौ शरैः ॥ २३ ॥ शेषाः स्वमानगुणिता राशिमाना इमे क्रमात् । जीवारशुक्रसौम्यानां दशवसुमुनीन्द्रियैः ॥ २४ ॥ शेषाणां पंच कथिता गुणकांकाः पृथक् पृथक् । राशिग्रहगुणाकारैः फलानि गुणयेत्पृथक् ॥ २५ ॥ ग्रहेण यत्र युक्तः स्यात्तद्गुणेनापि वर्द्धयेत् । एवं संगुण्य संयोज्य सप्तभिर्गुणयेत्पुनः ॥ २६ ॥ सप्तविंशोद्धृताल्लब्धं वर्षाण्यत्र भवंति हि । द्वादशादिगुणैर्लब्धं मासाहर्घटिकाः स्मृताः ॥२७॥

राशिगुणकाः । ग्रहगुणकाः ।

रा.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	र.	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ग्र.
गु.	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२	५	५	८	५	१०	७	५	गु.

राशियोंके तथा ग्रहोंके गुणांक चक्रमें लिखे हैं इनसे प्रत्येक फल त्रिकोण

शोधनके तथा एकाधिपत्य शोधनके गुणने राशिगुणकोंसे सभी और ग्रहगुणकोंसे वही फल जिसमें ग्रह हो गुनना । इस प्रकार गुणके सबका योग करना सात ७ से गुनना २७ से भाग लेना वर्ष मिलते हैं । शेषको १२ से गुनके २७ से भाग लेके महीने, शेषको ३० से गुणके २७ से भाग लेके दिन, शेषको ६० से गुणके २७ से भाग लेके घटी ऐसेही पला मिलती हैं। इस प्रकार सभी ग्रहोंके वर्षादि आयु मिलती हैं । राशिपिण्ड बनानेका उदाहरण है कि, एकाधिपत्यशोधित सिद्ध भये अंकोंमें उन उनके नीचे स्थित अंकोंको उन उन राशियोंके गुणकोंसे गुणके एकत्र जोडै तो राशिपिण्ड होता है । ग्रहगुणकोंसे गुणके जोड करना ग्रहपिण्ड होता है, जैसे यहाँ सूर्याष्टकवर्गमें मिथुनके नीचे १ मिथुनके गुणक ८ से गुना ८ भया, सिंहके नीचे १ को सिंहराशिके गुणक १० से गुना १० भया, कन्यामें ३ रा० गु० ५ से गुना, १५ कुंभमें २ रा० गु० ११ से गुना २२, मीनमें ३ मी० रा० गु० १२ से गुना ३६, मेषमें १ मे० रा० गु० ७ से गुणा ७ भया। वृषके नीचे ३ वृ० रा० गु० १० से गुणा ३० भया इस प्रकार सभी गुणितांकोंका योग १२८ यह राशिपिण्ड हुआ ऐसेही सभीका करना । ग्रहपिण्डके लिये एकाधिपत्य शोधित सिद्ध भये अंक जिस जिस राशिमें ग्रह है उसके नीचेके अंक उस ग्रहके गुणकसे गुनके सबका योग ग्रहपिंड होता है जैसे यहां सूर्याष्टकवर्गमें मिथुनमें सूर्य, बुध हैं मिथुनके नीचे शोधितांक १ सूर्यका गुणक पांचसे गुना ५, बुधगुणक ५ से गुना ५ भया । मंगल सिंहमें है इसके नीचे १ भौमगुणक ८ से गुना ८ भया शुक्रयुक्तमेषके नीचे १ शुक्रगुणक ७ से गुना ७, चन्द्रयुतराशि वृषके नीचे ३ चन्द्रगुणक ५ से गुना १५ भया इनका योग ४० यह ग्रहपिंड भया । राशियुणकगुणित राश्यंक राशिपिण्ड १२८ ग्रहगुणकगुणित राश्यंक ४० इसका योग १६८ यह योगपिण्ड भया इसीसे आगे वर्षादि मिलेंगे यह सूर्यका पिंड है । ऐसेही चन्द्रादियोंकाभी जानना । दशा वर्षादि लानेका उदाहरण है कि, सूर्यका योगपिंड १६८ को सातसे गुना ११७६ सताईससे भाग लिया लब्धि ४३

रा. गु. ग्र. गु. गुणितांकाः।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल	ग्रहाः
१२८	५३	१४७	१६०	६४	९२	१०४	८५	रा. गुणि.
४०	५०	७६	७६	२०	६८	३१	६७	ग्र. गुणि.
१६८	१०३	२२३	२३६	८४	१६०	१३५	१५२	योगपिं०

वर्ष पाये। शेष १५ को द्वादशगुणित कर १८० सप्तविंशतिसे भाग लिया लाभ ६ महीने पाये, शेष १८ तीससे ५४० गुना २७ से भाग लिया २० दिन मिले, शेष षष्टिगुणित हार भाजित ० घटी भई ऐसेही पला ० मिली यह सूर्यकी मध्यायु व० ४३ मा० ६ दिन २० घटी ० पला ० हुई। ऐसेही चंद्रादियोंका जानना ॥ २३-२७॥

मण्डलनिर्णयः।

सप्तविंशतिवर्षाणि मंडलं परिकीर्तितम्।
तदूर्ध्वं भूमिभिः शोध्यं त्यजेद्भूमिं तदूर्ध्वके ॥ २८ ॥
कुजाधिके भवेद्यत्र मण्डलाच्छोधयेत्ततः ॥ २९ ॥

मंडल २७ वर्षका होता है २७ से न्यूनायु यथास्थित रखनी इससे अधिक हो तो भूमि ५४ में घटाना इससे ऊपर ८१ के भीतर हो तो उसमें ५४ घटाय देना कुज ८१ से अधिक हो तो मंडल १०८ में शोधन करना तब मण्डल शुद्धायु होती है। उदाहरण-सूर्यमध्यायु ४३। ६।२०।०।० मंडल २७ से अधिक होनेसे ५४ में घटाया १०।५।१०।०।० सूर्यकी मंडल शुद्धायु हुई। चंद्रमा २७। ८।२६।४० मंडलाधिक होनेसे ५४ में घटाया २६। ३। ३।२७। ० हुआ। मंगलके ५७ वर्ष है ५४ से अधिक होनेसे इसमें ५४ घटाया ३।९।२३।२०। ० भया। बुधके ६१ में ५४ घटाया ७।२। ६।४०। ० रहा गुरुके २७ से कम होनेसे यथास्थित रहा। ऐसाही सबका जानना जो चक्रमें भी लिखा है ॥ २८ ॥ २९ ॥

रव्यादीनां मध्यमायुः ।

र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	ग्रहाः
४३	२७	५७	६१	२१	४१	३५	३९	वर्ष
६	८	९	२	९	५	०	४	मास
२०	२६	२३	६	१०	२३	०	२६	दिन
०	४०	२०	४०	०	२०	०	४०	घटी
०	०	०	०	०	०	०	०	पला

सूर्यादीनां मण्डलशुद्धायुः ।

र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	ग्रहाः
१०	२६	३	७	२१	१२	१९	१४	वर्ष
५	३	९	२	९	६	०	७	मास
१०	३०	२३	६	१०	६	०	३	दिन
०	२०	२०	४०	०	४०	०	२०	घटी
०	०	०	०	०	०	०	०	पला

चक्रार्द्धादिहानिः ।

अन्योन्यादर्धहरणं ग्रहयुक्तं तु कारयेत् ।
नीचेऽर्धमस्तगेऽप्यर्धं हरणं तेषु कारयेत् ॥ ३० ॥
शत्रुक्षेत्रे त्रिभागोनं दृश्यांगहरणं तथा ।
रणभंगे तु त्र्यंशोनमर्केन्द्वोः पातसंश्रयात् ॥
बहुत्वहरणे प्राप्ते कारयेद्बलवत्तरम् ॥ ३१ ॥

हानि संस्कार कहते हैं कि, जहां दो तीन आदि ग्रह एक स्थानमें हों तहां अन्योन्य अर्ध हरण होता है । नीचगत तथा अस्तंगत ग्रहकी मण्डलशुद्धायुमें आधा घटता है । शत्रुराशिगत ग्रहका तीसरा भाग घटता है । जो युद्धमें हार गया हो उसकाभी तीसरा भाग घटता है । ऐसेही सूर्य, चंद्र, राहुके योगमेंभी त्र्यंशोन होता है । दृश्यांग (लग्नके उदितनवांश) से वाम (पीछे) १२ । ११ । १० । ९ । ८ और सप्तमभावके लग्नतुल्यांशपर्यंत दृश्यांग कहाता है । यहां १२ से ७ पर्यंत क्रमसे सर्व, अर्ध, तृतीयांश, चतुर्थांश, पंचमांश, षष्ठांश घटता है । यह नियम पापग्रहके लिये है और शुभग्रह हो तो उक्तभागका आधा घटता है । यदि एक भावमें बहुत ग्रह हों तो उनमेंसे जो बलाधिक है वही घटेगा अन्य नहीं । उदाहरण—सूर्यकी मंडलशुद्धायु १० । ५ । १० । ० । ० यहां बारहवां होनेसे सर्वहानि पाई, बुधभी १२ में है शुभग्रह होनेसे अर्ध हरण पाया यहां दोकी हानि प्राप्त हुईमें अधिक हरण सूर्य द्वादशगत पाप होनेसे सर्वहरण भया तो सूर्यकी हानि संस्कृतायु ० । ० । ० । ० । ० हुई । बुधका आयु ७ । २ । ६।४०।०

यह है। यहां सूर्ययुक्त होनेसे अर्ध हरण, द्वादश शुभग्रह होनेसे भी अर्धहानि पायी, दो हरणप्राप्तिमें एक हरण किया तो ३ । ७ । ३ । २० । ० बुधकी हानि संस्कृत आयु हुई । चंद्रमाकी आयु २६ । ३ । ३ । २० । ० इसकी हानि नहीं है केवल एकादशमें होनेसे अर्धहानिके जगह शुभग्रह होनेसे चतुर्थांश ६ । ६ । २३ । २० । ० घटाया तो ये आयु १९ । ८ । १० । ० । ० भई । शुक्रकी मण्डलशुद्ध आयु १२ । ६ । ६ । ४० शुक्रके शत्रुक्षेत्रमें होनेसे तृतीयांश दशमशुभ होनेसे तृतीयांशके जगह षष्ठांश हरण पाया दो हानिकी प्राप्तिमें अधिक हरण तृतीयांश हानि हुई तो शुक्रकी हानि संस्कृत आयु ८ । ४ । ४ । २६ । ४० भई गुरुके । २१ । ९ । १० । ० । ० शत्रुक्षेत्रगत होनेसे तृतीयांश ७ । ३ । ३ । २० । ० घटाया तो हानि संस्कृत आयु १४ । ६ । ६ । ४० । ० हुई । मंगलकी कोई हरण प्राप्त न होनेसे यथास्थित रहा ऐसाही शनिभी है । तथा लग्नभी हानिसंस्काराभाव होनेसे यथास्थित रहा यह हानिसंस्कृतोदाहरण भया ॥ ३० ॥ ३१ ॥

ग्रहाणां हानिसंस्कृतायुः ।

र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	ग्रहाः
०	१८	३	३	१४	८	१९	१४	
०	८	९	०	६	४	०	७	वर्षादि
०	१०	२३	३	६	४	०	३	
०	०	२०	२०	४०	२६	०	२०	
०	०	०	०	०	४०	०	०	

शुद्धायुः ।

पश्चात्तान्सकलान्कृत्वा वरांगेन विवर्द्धयेत् ।
मातंगलब्धं शुद्धायुर्भवतीति न संशयः ॥ ३२ ॥
पूर्ववद्दिनमासाद्य कृत्वा तस्य दशा भवेत् ।
एवं ग्रहाणां सर्वेषां दशां कुर्यात्पृथक्पृथक् ॥ ३३ ॥

ग्रहोंके हानिसंस्कृतायु वर्षादिको वरांग ३२४ से गुनके मातंग ३६५ से भाग लेकर वर्षादि पूर्ववत् लेनेसे शुद्धायु मिलती है । उदाहरण—सूर्य तो ० । ० । ० । ० । ० ही है, चंद्र १९ । ८ । १० । ० । ० को वरांग ३२४ से

गुना मातंग ३६५ से भाग लिया लब्धि १७ वर्ष शेष १७६ मासमान १२से गुना हारसे भाग लिया ५ मास पाये । शेष २८७ तीससे गुना ८६१० हारसे भाग लिया तो २३ दिन शेष २१५ षष्टिगुण १२९०० हारभाजित फल ३५ घटी, शेष १२५ षष्टिगुण हारसे भाजित २० पला पायी ऐसेही भौमादि लग्नपर्यंतकाभी जानना ॥ ३२ ॥ ३३ ॥

शुद्धदशाविभागायुः ।							
र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.
०	१७	३	३	१२	७	१६	१२
०	५	४	२	१०	४	१०	११
०	२३	१९	८	१९	२६	११	१३
०	३५	४	३	२३	५७	४०	१३
०	२०	६	१०	४२	३२	१५	५८

लग्नायुषि संस्कारविशेषः ।

राशितुल्यानि वर्षाणि प्रयच्छन्त्युदयस्य च ।
शेषान्मासदिनाद्यं च लग्नादायुर्विनिर्दिशेत् ॥ ३४ ॥

लग्नमें विशेष संस्कार कहते हैं कि, भिन्नायुमें जो लग्नायु मिली उसमें जितनी लग्नराशि है उतने वर्ष शुद्धायुमें जोडने अंशादियोंका त्रैराशिकानुपातसे मासादि लेके मासादियोंमें जोडने । उदाहरण—शुद्धायु १२ । ११ । १३ । ५८ लग्नस्पष्ट ३ । ८ । ४५ । १० यहां राशितुल्य ३ वर्षमें जोड-दिये १५ हुए शेष अंशादि ८ । ४५ । ० इसमें त्रैराशिकानुपात है कि ३० अंशमें १२ महीने मिलते हैं तो ८ अंशमें कितने मिलेंगे सजातीय अधिकांश ३० भागहार भया शेष १२ मेंसे एकगुण दूसरा गुणक रहै । गुणक और भाजकको ६ से अपवर्त्तन किया तो गुणक १२ के स्थानमें २ भाजक ३० के स्थानमें ५ भया अंशादिशेषको २ से गुने १७ । ३० । ० । ० हार ५ से भाग लिया ३ महीने मिले, शेष २ । ३० । ० । ० को ३० से गुना ७५ । ० हार ५ से भाग लिया १५ दिन मिले शेष० रहनेसे घटी पल ० । ० मिली यह मासादियोंमें जोडनेसे लग्नस्पष्टायु १६ । २ । २८ । १३ । ५८ हुई ॥ ३४ ॥

स्पष्टादशा. भि० अ० व० ।

र	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल	यो
०	१०७	३	३	१२	७	१६	१६	७७
०	१५	४	२	४०	४	१०	२	५
०	२३	१८	८	१९	२६	११	२८	१७
०	३५	४	२	३७	५७	४०	१३	८
०	२०	६	१७	४२	३२	१६	५८	११

अथ समुदायाष्टकवर्गायुः ।

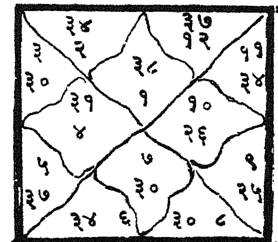
अष्टवर्गं समुद्धृत्य ग्रहाणां राशिमण्डले । एकस्मिन्मण्डलाधिक्ये शोधयेच्चक्रमण्डलम् ॥ ३५ ॥ द्वादशादौ तु गृह्णीयादेवं सर्वेषु राशिषु । प्राग्वत्त्रिकोणं संशोध्य पश्चादेकाधिपत्यता ॥ ३६ ॥ पूर्वोक्तगुणकारैश्च वर्द्धयेच्च पृथक्पृथक् । एकीकृत्य तु तत्सर्वं सप्तभिर्गुणयेत्पुनः ॥ ३७ ॥ सप्तविंशतिभिर्लब्धमायुःपिण्डं प्रदृश्यते । द्वादशादिगुणैर्लब्धा मासाहर्घटिकाः स्मृताः ॥ ३८ ॥

मेषादिराशिमंडलमें लग्नसहित सूर्यादिग्रहोंके रेखाओंका योग करना १२ से अधिक हो तो उसमें १२ घटायके राशिमंडलमें रखना, जैसे सूर्याष्टकवर्गमें मेषमें रेखा ४ चंद्राष्टकवर्गमें मेषमें रेखा ६ एवं मं० ३ बु० ५ बृ० ५ शु० ५ श० ४ ल० ६ योग ३८ मेषमें हुआ ऐसे वृषादिमें करना इस योगसे शुभाशुभ फल आगे कहा जायगा। मेषमें रेखायोग ३८ मंडल १२ से शुद्ध किया शेष २ मेषके नीचे लिखा इत्यादि । उदाहरणार्थ चक्र है—

मंडलशुद्धसमुदायाष्टकवर्गरेखान्यासः ।

बृ	चं	रबु	ल	मं	०	शु	श	०	०	०	०	ग्रहाः
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	राशयः
२	१०	६	७	१	१०	६	६	१	२	१०	१	रेखा
१	८	०	६	०	८	०	५	०	०	४	०	त्रि.शो.
१	८	०	६	०	८	०	५	०	०	४	०	ऐ. शो.

समुदायाष्टवर्गकुंडली ।



मेषादिराशिमंडलमें जो सब ग्रहोंका रेखायोग किया उसको १२ से अधिक होनेसे मंडल १२ से शुद्ध करके पूर्ववत् त्रिकोणैकाधिपत्यशोधन करके पूर्वोक्त

राशिगुणकको ग्रहगुणकोंसे गुनके राशिपिण्ड ग्रहपिण्डका योगपिण्ड करना उसे ० से गुनके २७ से भाजके वर्षादि पलापर्यंत लेने ॥ ३५–३८ ॥

शताधिकपिण्डविशेषः ।

शतादूर्ध्वं तु तत्पिण्डं मण्डलं शोधयेत्ततः ।
शतमेकं तु गृह्णीयाद्दीर्घायुर्योगसंभवम् ॥ ३९ ॥

यदि २७ से भाग लेनेमें वर्षपिण्ड १०० से अधिक आवै तो मंडलशुद्ध करना अर्थात् यहां मंडल १०० को समझकर यह उसमें घटाय देना शेष समुदायायु समझनी । यदि पूर्ण १०० मिले तो दीर्घायु जाननी वही १०० आयु लेनी । उदाहरण–पूर्वोक्त राशिगुणकगुणित त्रिकोणैकाधिपत्यशोधित फलैक्यसे भया राशिपिण्ड २३५ ऐसेही ग्रहगुणकगुणितसे भया ग्रहपिण्ड ७२ दोनोंका योग योगपिंड ३०७ इसको ७ से गुना २१४९ भाजक २७ से भाग लिया लब्धि ७९ वर्ष पाये, शेष १६ मास १२ से गुना २७ से भागलिया ७ महीना ऐसेही दिनादि लेकर समुदायायु मध्यम आयु हुई । ७९ । ७ । ३ ।२०।० यह १०० से कम होनेसे ऐसीही रही, १०० से अधिक होती तो १०० कम करना था मध्यमायुमें पूर्वोक्तरीतिसे स्पष्टी-करण करके समुदायायु ७९ । ७ । ३ । २०।० वरांग ३२४ से गुणकर २५७८८ मातंग ३६५ से भाग लिया ७० वर्ष मिले, शेषसे पूर्वोक्त रीति करके मासादि लिये स्पष्टायु ७० । ७ । २४ । ४४ । २३ सब ग्रहोंकी पिंडरूप जाननी प्रत्येक ग्रहका विभाग मिश्रव्यवहारकी रीतिसे करना॥ ३९॥

ग्रहाणां दशाविभागः ।

ग्रहाणां तु विभागार्थमुपायः कथ्यतेऽधुना ।
भिन्नाऽष्टकवर्गजाश्च स्वस्वखेटेन संगुणाः ॥ ४० ॥
समुदायेन भिन्नायुर्योगात्तं स्वदशा भवेत् ।
एवं ग्रहाणां सर्वेषां दशायुश्च पृथक् पृथक् ॥ ४१ ॥
समुदायदशामार्गे ह्येवं कर्म समीरितम् ।
अष्टवर्गदशामार्गः सर्वेषामुत्तमोत्तमः ॥ ४२ ॥

समुदायायुसे प्रत्येक ग्रहकी भिन्नायु गुननी सब ग्रहोंके भिन्नायु योगसे भाग लेना प्रत्येक ग्रहकी दशाविभागायु होती है । " प्रक्षेपका मिश्रहता विभक्ताः प्रक्षेपयोगेन पृथक् फलानि " इस मिश्रव्यवहारकी रीतिसे करना । अथवा त्रैराशिक है कि, यदि भिन्नाष्टकवर्गायुयोगसे ग्रहोंकी प्रत्येक भिन्नायु मिलती है तो समुदायायुमें क्या मिलेंगी ? तब समुदायायु गुणक, प्रत्येक ग्रहकी भिन्नायु गुण्य और भिन्नाष्टकवर्गायुयोग हार भया। उदाहरण—चंद्र-भिन्नायु १७।५।२३।३५।२०, समुदायायु ७०।७।२४।४४।२३ से गोमूत्रिका विधिसे गुना १२३४।११।४६।२४ भाज्य भया, भिन्नायुयोग ७७।५।१७।८।११ भाजक भया, इनको सवर्णित (विकलापिंड) किया तो भाज्य १६००४९४३८४ भाजक १००३-९३६९१ भाजकसे भाग लिया १५।११।९।११।६ चन्द्रमाके दशाविभागायु वर्षादि भये। ऐसे ही भौमादियोंका करना। सूर्यके वर्षादि शून्य होनेसे उदाहरण नहीं औरोंका चक्रमें लिखा है ॥ ४०–४२ ॥

ग्रहाः	चं.	मं.	बु.
भाज्य	१६००४९४३८४	३१००७१६२२७	२९१९०१९३०
भाजक	१००३९३६९१	१००३९३६९१	१००३९३६९१
ग्रहाः	बृ.	शु.	श.
भाज्य	११७९५८५८४	६७८०७८०८	१५४३८५४१६३
भाजक	१००३९३६९१	१००३९३६९१	१००३९३६९१

ग्र.	ल.	स्पष्टायु.
भाज्य	१४८७३४१५९३	७०।७।२४।४४।२३
भाजक	१००३९३३९१	७०।७।२६।४५।५१

यहां २ दिन ११ घटी २८ पलका फर्क है सो स्वल्पांतर होनेसे दोष नहीं.

ग्रहाणां दशाविभागार्थम् उपायोदाहरणम् ।

शु	चं	र बु	ल	मं	०	गु	श	०	०	०	०	ग्रहाः
मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	राशयः
१	८	०	६	०	८	०	५	०	०	४	०	एका० शो.
७	१०	८	४	१०	५	९	८	९	५	११	१२	रा० गुन.
७	८०	०	२४	०	४०	०	४०	०	०	४४	०	रा० गुणित
७	५	५५	०	८	०	११	५	०	०	०	४	रा० गुणित
७	४०	०	०	०	०	०	२५	०	०	०	०	ग्रहगुणित

भिन्नायुर्व्यवस्था ।

न केन्द्रगेन्दौ बलसंयुतेऽन्यैः सकंटकस्थैरधियोग उक्तैः ।
भिन्नाष्टवर्गेण दशायुषं स्यादतोऽन्यथा चेत्समुदायकेऽपि ॥ ४३ ॥
केन्द्रादन्यतरस्थे च शशिनि ग्रहसंयुते ।
अष्टवर्गेण भिन्नायुर्दशमस्थैः शुभाशुभैः ॥ ४४ ॥

जन्मलग्नसे बलवान् चन्द्रमा केंद्रमें न होवै, अन्य बलवान् ग्रह केंद्रमें हों तो भिन्नाष्टकवर्गायु लेनी, केंद्रसे अन्यस्थानमें चन्द्रमा ग्रहयुक्त हो, दशममें शुभाशुभ हो तो भिन्नायु लेनी, इससे अन्यथा हों तो समुदायायु साधन करना चाहिये ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

समुदायायुर्व्यवस्था ।

ग्रहान्विते शीतकरे सकेंद्रे यदाऽन्यखेटैर्विबलैरकेंद्रैः ।
कृतः खगैस्तत्समुदायमार्गं विचिन्तयेज्जातककौशलज्ञः ॥ ४५ ॥
ग्रहसहिते केन्द्रस्थे चन्द्रे केन्द्राद्बहिः स्थितैः शेषैः ।
समुदायाष्टकविधिना ग्रहदायं चिन्तयेन्मणित्थोक्तिः ॥ ४६ ॥

जन्मलग्नमें चन्द्रमा ग्रहसहित केन्द्रमें सवीर्य होवै अन्य ग्रह केन्द्ररहित स्थानमें हीनवीर्य हों तो समुदायाष्टवर्गसे आयु साधन करना । यदि चंद्रमा केन्द्रमें सवीर्य हो अन्य ग्रह केन्द्ररहित सवीर्य ही हों तो मिश्रायु अर्थात् भिन्नायु समुदायायुका योग करके आधा करना । यहांभी पूर्वोक्त रीतिसे दशाविभाग करना यदि चन्द्रमा केन्द्रमें न हो अन्य ग्रहभी केंद्रमें न हों तब चन्द्र तथा अन्य ग्रहोंमें जो बलाधिक हो उसकी आयु साधनी । चन्द्रमा बलवान् हो तो समुदायायु साधन करना, अन्य ग्रह बली हों तो भिन्नायु लेनी ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

समुदायायुर्दशाविभागः ।

सू	चं	मं	बु	बृ	शु	श	ल	यो.
०	१५	३	२	११	६	१५	१४	७०
०	११	१	१०	८	९	४	२	७
०	०	९	२६	२९	९	१९	२३	२४
०	११	५२	४३	५०	३६	४	२५	४४
०	६	४९	४४	४४	५३	४८	५७	२३

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुंजराजोदिते च ।
होरासारे शंभुहोराप्रकाशे पूर्णं चैतद्ध्यष्टवर्गोद्भवायुः ॥ ४७ ॥

इति श्रीपुंजराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे अष्टवर्गायुस्साधनाध्यायोऽष्टमः ॥ ८॥

इस श्लोककी टीका पूर्व प्रतिपादित है, शेष अष्टवर्गायु दशासाधनाध्याय पूर्ण भया ॥ ४७ ॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायाम् अष्टवर्गायुस्साधनाध्यायोऽष्टमः ॥ ८ ॥

अथाष्टकवर्गफलाध्यायः ९ ।

तत्र दशान्यासः ।

यदायुर्यस्य खेटस्य तत्तस्यैव दशा भवेत् ।
यथाशास्त्रप्रकारेण प्रवक्ष्यामि समासतः ॥ १ ॥
लग्नेन्द्वर्काणां च यो वीर्ययुक्तस्तस्य ज्ञेयाऽऽद्या दशा बुद्धिमद्भिः ।
तस्मात्केन्द्रादिस्थितानामनल्पाश्चेदेकस्था वीर्ययुक्ताः क्रमेण ॥ २ ॥

लग्न चन्द्र सूर्यमेंसे जो बली हो उसकी दशा प्रथम, तब उससे केन्द्र पणफर आपोक्लिमवालेकी क्रमसे बुद्धिमनोंने जाननी । यदि एक स्थानमें दो तीन ग्रह हों तो अधिक बलानुसार प्रथम लिखना । उदाहरण—सूर्यका षड्बल १० । १ । ३५, चं० ५ । ३ । ०, ल० ६ । ४ । ८ इनमेंसे सूर्य बलाधिक होनेसे प्रथम, तब सूर्यसे केंद्रस्थ बुध, तब सूर्यसे पणफर गत बृ० शु० ल० की ये यथाक्रम बलोन हैं इसलिये यथाक्रम लिखे । आपोक्लिममें श० मं० चं० यथोत्तर बलहीन होनेसे यथाक्रम लिखे । जब एकस्थानगत ग्रह बलमें समान हों तो अधिकायुवाला प्रथम, यह केन्द्रादि विचार साधा-

रण कुंडलीसे है । भावकुंडलीसे नहीं । जब लग्नकी प्रथम दशा होनेमें अपने भावज फलोंसे पूर्वानीत षड्बल गुनके लग्नादि दशाक्रमसे वह बलस्थ होनेमें जो कहे हैं वे अंश पिण्ड निसर्गायुमें जानना । यहाँ तो यथागणितागतही षड्बल होते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

दशाक्रमः ।

र.	बु.	बृ.	शु.	ल.	श.	मं.	चं.	यो.
०	३	१२	७	१६	१६	३	१७	७७
०	२	१०	४	२	१०	४	५	५
०	८	१६	२६	२८	११	११	३३	१४
०	३	३३	५७	१३	४०	४	३५	८
०	२०	४१	३२	५८	१६	६	२	११

अथान्तर्दशा ।

एकर्क्षेऽर्द्धं त्र्यंशकं वै त्रिकोणे द्यूनेऽद्व्यंशं पाचयत्येव खेटः ।
तुर्यांशं वै रन्ध्रबन्धुस्थयोश्च चेदेकर्क्षे द्व्यादयो यो बली सः ॥ ३ ॥
द्वित्र्यादयश्चेद् द्युचरा भवन्ति द्यूने त्रिकोणे चतुरस्रके वा ।
वीर्यक्रमेणैव हि पाचकाः स्युरेवं लयं तत्र विदुः पुराणाः ॥ ४ ॥

मूलदशापतिके साथ जो ग्रह हो वह मूल दशापतिके आधा दशाका पाचक होता है । उससे त्रिकोण ९ । ५ वाला तीसरे भागका, सप्तमवाला ७ सातवें भागका, ८ । ४ वाला चौथे भागका, एक राशिकेंद्रपणफरापोक्लिमगत दो तीन आदि ग्रह हों तो उनमें बलाधिक ही पाचक होता है सभी नहीं होते ॥ ३ ॥ ४ ॥

समच्छेदप्रकारः ।

निघ्नावन्योन्यं च हारैर्हरांशावेवं राश्योश्छेदसाम्यं भवेद्वै ।
सच्छिष्याणां सम्यगेवं मयाऽत्र बोधायैतत्प्रोक्तमन्तर्दशासु ॥ ५ ॥

हर और अंशको परस्पर हारसे गुनने अर्थात् प्रथमके हरसे दूसरेके हर अंशको गुने और दूसरेके हरसे पहिलेवालेके हर अंशको गुने ऐसा करनेसे राशियोंके छेदतुल्य हो जाते हैं ॥ ५ ॥

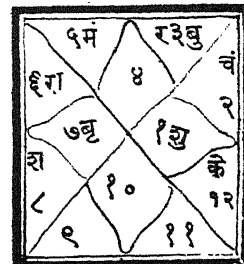
सदा लवादौ कुरु रूपमत्र साम्यं विधेयं विलयं दिछ्रां च ।
स्वांशाहता स्वीयदशा भवेत्साप्यंतर्दशा संविहृतांशयुत्या ॥ ६ ॥

समच्छेदानयन कहते हैं—मूलदशा प्रथम रखके तब जो पाचकांश हैं वे हारसहित स्थापन करने "निघ्नावन्योन्यमित्यादि" समच्छेदरीतिसे छेद-समता करके छेदोंको नाश करके मूल दशाको अपने अंशोंसे गुनके अंश-योगसे भाग लेनेसे अपनी २ अंतर्दशा होती हैं। उदाहरण—बुधके साथ सूर्य है इससे आधा दशाका पाचक भया, त्रिकोणगत गुरु तृतीयांशका पाचक है ४। ८। ७ में कोई नहीं है इससे बुधदशामें पाचक सू० बृ० मात्र रहे इनका समच्छेद करना है, अंश हार रखके गुरुके हार ३ से सू० बु० के हार अंश गुने तथा सूर्यके हार २ से बु० बृ० के हारांश गुने तो समच्छेद भया, यहां छेदका नाश करके जो अंश रहे वे गुणक हुए, ऐसेही गुणकके योग करनेसे हार ११ हुआ, बुधकी मूल दशायु ३। २। ८। ३। १७ बुधके गुणक ६ से गुना १। १८। १९। ४२ हार ११ से भाग लिया १। ८। २६। १२। ४२ यह बुधकी अंतर्दशा हुई। बुधकी मूलदशा ३। २। ८। ३। १७ सूर्यके गुणक ३ से गुना ११ से भाग लिया ०। १०। १३। ६। २१ यह सूर्यकी अंतर्दशा हुई। वही बुधदशा गुरु-गुणक ११ से गुनी हार २ से भाग लिया ०। ६। २८। ४४। १४ गुरुकी अंतर्दशा हुई। इसी प्रकार सबकी अंतर्दशा करनी उदाहरणार्थ चक्रमें सबकी दशा है। यहां जन्मकुण्डलीमें चंद्रमा केन्द्रमें नहीं है। गुरु शुक्र केन्द्रमें हैं इससे भिन्नाष्टकवर्गदशा यहां है॥ ६॥

दशास्थापनक्रमः।

र	बु	बृ	शु	ल	श	म	चं	ग्रहाः
०	३	१२	७	१६	१६	३	१७	वर्षाणि
०	२	१०	४	२	१०	४	५	मासाः
०	८	१६	२६	२८	११	१९	२३	दिनानि
०	३	३३	५७	१३	४०	४	३५	घट्यः
०	१७	५२	३२	५८	१६	६	३०	पलानि

जन्मकुण्डली।



बुधसमच्छेदाः गुणकाः।

बु	र	बृ		बु	र	बृ		बु	र	बृ
१	१	१		६	३	२		६	३	२
१	२	३		६	६	६		०	०	०

बुधांतर्दशायोगः ११. बृ. अं. द. यो. १४५. शु. अं. द. यो. १४५

बु	र	बृ	
१	१	१	सम-
१	२	२	च्छेदार्थ
६	३	२	गुण
६	६	६	हार

बृ	र	शु	चं	यो.
१	१	१	१	सम-
१	३	७	४	च्छेदार्थ
८४	२८	१२	२१	गुण
८४	८४	८४	८४	हार

शु	मं	बृ	श	ग्र.
१	१	१	१	सम-
१	३	७	४	च्छेदार्थ
८४	२८	१२	२१	गुण
८४	८४	८४	८४	हार

ल. अं. द्. यो. १९ श. अं. द्. यो. १४५ मं. अं. द. यो. १९

ल	श	बृ	ग्र.
१	१	१	सम-
१	३	४	च्छेदार्थ
१२	४	२	गुण
१२	१२	१२	हार

श	ल	चं	र	
१	१	१	१	सम-
१	३	७	४	च्छेदार्थ
८४	२८	१२	२१	गुण
८४	८४	८४	८४	हार

मं	शु	श	ग्र.
१	१	१	सम-
१	३	४	च्छेदार्थ
१२	४	३	गुण
१२	१२	१२	हार

चं. अं. द. यो. ३९ बुधमध्येऽन्तर्दशा. गुरुमध्येऽन्तर्दशा. शुक्रमध्येऽन्तर्दशा.

चं	श	मं	ग्र.
१	१	१	सम-
१	७	४	च्छेदार्थ
२८	४	७	गुण
२८	२८	२८	हार

ग्र.	बु	सू	बृ	यो.	बृ	र	शु	मं	यो.	शु	मं	बृ	श	यो.
वर्ष	१	०	०	३	७	२	१	१	१२	४	१	०	१	७
मास	८	१०	६	२	५	५	०	१०	१०	३	५	७	०	४
दिन	२६	१३	२८	८	१७	२५	२३	११	१६	१४	४	१०	२६	२६
घटी	१२	६	४४	३	४४	५४	५७	५६	३३	५९	५९	५२	१४	५७
पल	४२	२१	१४	१७	४६	५५	५९	१२	५३	८८	५६	५०	५८	३२

लग्नमध्येऽन्तर्दशा. शनिमध्येऽन्तर्दशा. भौममध्येऽन्तर्दशा. चंद्रमध्येऽन्तर्दशा.

ल	श	बृ	यो.	श	ल	चं	र	यो.	मं	शु	श	यो.	चं	श	मं	यो.
१०	३	२	१६	९	३	१	२	१६	२	०	०	३	१२	१	३	१७
३	६	६	२	९	३	४	५	१०	१	८	६	४	६	१९	१	५
३	१	२३	२८	७	२	२२	९	११	२२	१६	१२	१९	१८	१५	१९	२३
३७	१२	२४	१३	२२	२७	२८	४०	४०	५६	३०	२५	४	२८	२९	३७	३५
१५	२५	१८	५८	५५	३८	५९	४४	१६	१७	४५	४	६	३५	४७	८	३०

अथाष्टकवर्गफलानि ।

अथाष्टवर्गवाक्यानि सूर्यादीनां यथाक्रमम् । गृहप्रभृति संस्थानं निर्दिशेदक्षरक्रमात् ॥७॥ राशिचक्रं लिखेद्भूमौ संयोज्याक्षरसंख्यया । शून्याक्षरेण दशमं निर्दिशेदक्षरक्रमात् ॥ ८ ॥

सूर्यादिलग्नपर्यंतमेतैर्वाक्यैर्विनिर्दिशेत् । क्षितैस्त्वष्टकवर्गेषु ग्रहाणां च पृथक् पृथक् ॥९॥ दशा द्वादशसञ्छिन्ना योजये- त्तत्र तत्र भे । ग्रहादीनां फलं ज्ञात्वा निर्दिशेच्च पृथक् पृथक् ॥१०॥

इन ४ श्लोकोंके प्रयोजनसे अष्टकवर्गचक्र बनता है जिनका तात्पर्य पहिले लिखा गया है ॥ ७-१० ॥

एकादिरेखाफलानि ।

दशायाः शून्यभागे तु शत्रुनीचगृहेषु च । व्याध्यध्वदुःखरोगा- दींल्लँभते नात्र संशयः ॥ ११॥ एकद्वित्रिफले यस्मिन्धनधान्य- परिक्षयः । चत्वारि मध्यमानि स्युर्दशा तस्य तु मध्यमा ॥ १२ ॥ पंचकादिगुणाधिक्यमष्टकं सर्वसिद्धिदम् । स्वर्क्षो- च्चोपचयस्थाने फलमेतदुदाहृतम् ॥ १३ ॥ जन्मकाले ग्रहा यत्र रेखा तत्र शुभं वदेत् । बिन्दुस्थाने फलं दुष्टं साम्यं बिन्दुफलं यदा ॥ १४ ॥

जहां दशा शून्यभाग हैं वहां तथा शत्रुनीचगत ग्रहदशामें रोग मार्ग दुःखादि निश्चय पाता है ॥ ११ ॥ एक दो तीन फल रेखा जिस राशिमें हों तहां धनधान्य क्षय होता है । चार फल (रेखा) मध्यम है और उसकी दशा भी मध्यम होती है ॥१२॥ पांच आदि गुणाधिक्य और ८ रेखा सर्व सिद्धि देती है। स्वराशि उच्च तथा उपचय स्थानमेंभी यह फल कहा है ॥ १३ ॥ जन्ममें जहां ग्रह है तहां रेखा शुभ होती हैं ऐसा कहना । जहां बिन्दु तहां दुष्टफल और बिन्दुरेखा समान होनेमें फलभी मिश्रित कहना ॥ १४ ॥

बिन्दुमध्ये कला शोध्या कलामध्ये च बिन्दवः । तच्छेषेण फलं ज्ञेयं शुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥ १५ ॥ रेखाष्टके फलं पूर्णं पादोनं रससंख्यया । अर्द्धं रेखाचतुष्केण तदर्द्धं युगलेन च ॥१६॥ एवं बिन्दुप्रभावेण फलं दुष्टं प्रजायते । समसंख्यं फलं साम्यं सामान्येन प्रकीर्तितम् ॥ १७ ॥ दशाप्रवेशसमये ग्रहो रेखाधिको यदि । तदा दशाफलं पूर्णं शुभं मिश्रं तथा भवेत् ॥१८॥

बिन्दुमें रेखा रेखामें बिन्दु घटायके जो शेष रहै उसमें रेखाधिकसे शुभ, बिन्दु अधिकसे अशुभ फल जानना ॥ १५ ॥ ८ रेखामें पूर्ण शुभ फल, ६ में चौथाई कम, ४ में आधा, २ में चौथाई फल होता है ॥ १६॥ ऐसेही बिन्दुसे अशुभ फल, बिन्दु रेखा समान होनेमें फलभी समान जानना, यह सामान्य फल कहे हैं ॥ १७ ॥ दशाप्रवेशसमयमें ग्रह यदि रेखाधिक हो तो दशाफल शुभ पूर्ण होता है, मिश्रितमें मिश्रित जानना ॥ १८ ॥

पुनरेकादिरेखाफलानि ।

कष्टं स्यादेकरेखायां द्वाभ्यामर्थक्षयो भवेत् । त्रिभिः क्लेशं विजानीयाच्चतुर्भिः समता मता ॥ १९ ॥ पंचभिः परमानंदं षड्भिरर्थागमो भवेत् । सप्तभिः सकलं सौख्यमष्टभिः पूर्णकार्यकृत् ॥ २० ॥

एक रेखासे कष्ट, २ से धनक्षय, ३ से क्लेश, ४ से समता, ५ से परम हर्ष, ६ से धनागम, ७ से संपूर्ण सौख्य, ८ रेखा पूर्ण कार्य करनेवाला होता है ॥ १९ ॥ २० ॥

सर्वग्रहाणां रेखैक्यं कुर्यादिष्टदिने ततः । फलं शुभाशुभं ब्रूयात् तत्प्रकारोऽभिधीयते ॥ २१ ॥ सर्वग्रहाणां रेखैक्यं शक्रतुल्यं भवेद्यदा । तदा त्रिवर्गहानिः स्यात्तिथितुल्ये महाऽऽपदः ॥ २२ ॥ भूपतुल्ये भूपभयं नाशः सप्तदशे स्मृतः । अष्टादशे तु रेखैक्ये धनहानिश्च जायते ॥ २३ ॥ कुमतिर्बन्धुपीडा स्यात्तथा चैकोनविंशतौ । रेखैक्ये नखतुल्ये तु व्ययश्च कलहः स्मृतः ॥ २४ ॥ एकविंशतिसंख्यैक्ये हृदि दुःखं प्रजायते । पराभवस्त्वफलता दैन्यं चाकृतिसंख्यके ॥ २५ ॥ त्रयोविंशन्मिते प्रोक्ता हानिर्धर्मार्थयोरपि । अकस्माद्धनहानिः स्याच्चतुर्विंशन्मिते तथा ॥ २६ ॥

दिनफल कहते हैं कि, जिस दिनका फल देखना हो उस दिनका अष्टक वर्ग बनायके प्रत्येक ग्रहकी रेखाओंका योग करके शुभाशुभ फल कहना सो इस तरह है कि ॥ २१ ॥ सर्वग्रहरेखाओंका योग यदि १४ होवै तो धर्म, अर्थ, कामकी हानि होगी, १५ में बडी आपत्ति ॥ २२॥ १६ में

राजभीति, १७ में नाश, १८ में धनहानि होती है ॥ २३ ॥ १९ में कुमति एवं बंधुवर्गसे कष्ट, २० में व्यय कलह ॥ २४ ॥ २१ में हृदयमें दुःख, २२ में पराभव, अपमान, कार्यमें निष्फलता, दीनता ॥ २५ ॥ २३ में धर्म तथा अर्थकी हानि, २४ में अकस्मात् धनहानि ॥ २६ ॥

करस्थितस्य द्रव्यस्य हानिः स्यात्पंचविंशके । षड्विंशके तु कलहः समता धिष्ण्यसंख्यके ॥२७॥ पिण्डे द्रव्यागमश्चैकोनत्रिंशे जनपूज्यता । त्रिंशन्मिते राजपूजा सुकृतं सुखसंयुतम् ॥ २८ ॥ एकत्रिंशन्मिते द्रव्यं सन्मानं च विशेषतः । दंततुल्यैः सर्वसिद्धिर्महालाभोऽमरैः समैः ॥ २९ ॥ चतुरधिकत्रिंशद्धी रेखाभिरभिसंस्थिता । सर्वसंपत्तिसिद्धिः स्यात्सर्वार्थानामतः परम् ॥ ३० ॥ रसशररेखा यावत्फलमुक्तं त्वष्टवर्गजं मुनिभिः । दिनजं फलं विचार्यं त्वनेन विधिना शुभाशुभं पुंसाम् ॥ ३१ ॥ दशाफलस्य ज्ञानाय तथा दिनफलस्य च । प्रोक्तो महाष्टको वर्गः शास्त्राच्च ब्रह्मयामलात् ॥ ३२ ॥

२५ में हस्तगत द्रव्यकी हानि, २६ में कलह, २७ में समता, २८ में धनागम, २९ में मनुष्योंमें पूज्यता, ३० में राजपूज्यता, पुण्य, सुख, ३१ में धन, ३२ में विशेष सम्मान, ३३ में समस्त सिद्धि, बडा लाभ, ३४ में समस्त संपत्तियोंकी सिद्धि, सब अर्थोंकी सिद्धि ऐसेही एक २ वृद्धिसे ५६ पर्यंत एक एक शुभफलकी वृद्धि कही है इस प्रकार मुनिजनोक्त फल विचारके कहना, दशाफल तथा दिन फलके लिये यह महाष्टकवर्ग शिवोक्त ब्रह्मयामलसे कहा २७-३२

द्विगुणफलकथनम् ।

स्वर्क्षोच्चोपचयस्थाने फलमेतदुदाहृतम् । पूर्वोक्तेनैव मार्गेण स्वाष्टवर्गः शुभो यदि ॥३३॥ फलानि द्विगुणान्यत्र दद्युः खेटा न चान्यथा । एवं द्वादशमूर्त्त्यादि स्वेस्वे स्थाने दशाफलम् ॥३४॥

अष्टकवर्गमें पूर्वोक्त मार्गसे ग्रहके शुभ होनेमें यह फल कहा, यदि ग्रह स्वराशि, उच्च वा उपचय स्थानमें होवे तो ग्रह इन फलोंको द्विगुण देते हैं।

अन्यथा होनेमें उसी क्रमसे हीन फल देते हैं। ऐसे ही लग्नादि १२ भावोंमें भी भावोक्त प्रकारसे दशाफल देते हैं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

लग्नादिभावेषु विचार्याणि ।

मूर्त्तौ शरीरसंपत्तिमंगोपांगनिरूपणम् । सत्यसौभाग्यवित्तं च द्वितीयस्थानतो विदुः ॥ ३५ ॥ स्वरं सत्त्वं विक्रमं च भ्रातृस्थानं तृतीयके । सुखं बंधुगृहं चैव मातृचिंता चतुर्थके ॥ ३६ ॥ स्वभावं बुद्धिविस्तारं बुद्धिस्थानं च पंचमे । ज्ञातिशत्रुक्षतादीनां शत्रुस्थाने निरीक्षयेत् ॥ ३७ ॥ प्रवासं दारसौभाग्यं सप्तमस्थानतो विदुः । आधिं व्याधिं मृतिं नाशमष्टमे परिचक्षते ॥ ३८ ॥ भाग्यस्थान गुरुस्थानं धर्मस्थानं च तद्विदुः । कर्मवृत्तिं तु दशमे प्रतापं पौरुषं श्रुतिः ॥ ३९ ॥ कीर्तिश्च जायते तत्र दृष्टादृष्टनिरूपणम् । ऐश्वर्यमर्थलाभं च एकादशगृहात्फलम् ॥४०॥ द्वादशं च व्ययस्थानं पापस्थानं प्रचक्षते । शरीरनाशं देहं च व्ययस्थाने विचिंतयेत् ॥ ४१ ॥

लग्नभावमें शरीरकी मूर्त्याकारादि संपत्ति, अंग प्रत्यंगोंका विचार करना। द्वितीय भावमें सत्य, सौभाग्य, धन । तीसरेमें स्वर, बल, पराक्रम, भ्रातृविचार। चौथेमें सुख, बन्धुवर्ग, घर, मातृपक्षका विचार । पञ्चममें स्वभाव, बुद्धिका विस्तार, विद्या । छठेमें स्वजातीय शत्रु, रोग । सप्तममें यात्रा, स्त्रीसौभाग्य । अष्टममें मानसी पीडा, रोग, मृत्यु, नाश । नवममें भाग्य, गुरु, धर्म । दशममें कर्माजीव, प्रताप, पुरुषार्थ, शास्त्रज्ञान, कीर्ति, दृष्ट अदृष्टका निरूपण । एकादशसे ऐश्वर्य, धनलाभ । द्वादशसे व्यय, पापस्थान, शरीरनाश, देहविकार ॥ ३५-४१ ॥

ग्रहस्थितिवशात्फलविचारः ।

एवं द्वादशभावेषु चिंतयेन्मतिमान्नरः ।
पापान्वितास्तु ये भावास्ते भावा नाशतां ययुः ॥ ४२ ॥
सौम्याः सिद्धिकरा ज्ञेया मिश्रा मिश्रफलप्रदाः ।
षष्ठाष्टमव्ययस्थैश्च विपरीतं शुभाशुभैः ॥ ४३ ॥

मित्रोच्चभवनस्थश्चेत्पापोऽपि शुभमृच्छति ।
अरिनीचगतो मूढः शुभोऽपि क्रूरतामियात् ॥ ४४ ॥
एवमादिफलैः सार्द्धं दशाफलमुदीरयेत् ॥ ४५ ॥

बुद्धिमान् मनुष्यने इस प्रकार बारहों भावोंमें विचारना जो भाव पापयुक्त हैं उनमें जिनका विचार है वह नाश होता है ॥ ४२ ॥ शुभग्रह उनकी सिद्धि करते हैं, मिश्रित ग्रह फल भी मिश्रितही देते हैं, ६ । ८ । १२ भावोंमें शुभाशुभ ग्रह उलटा फल देते हैं ॥ ४३ ॥ मित्रराशि उच्चराशिमें स्थित पापग्रहभी शुभ फल देता है, तैसेही शत्रुराशि नीचराशि अस्तंगत शुभग्रहभी क्रूर होजाता है ॥ ४४ ॥ इत्यादि फल सहित सर्व विचारके फल कहना ॥ ४५ ॥ इति भावचिंता ॥

रव्यादिग्रहवशाद्विचार्याणि ।

आत्मप्रभावशक्तिश्च पितृचिंता रवेः फलम् । मनोबुद्धिप्रसादं च मातृचिंता मृगांकतः ॥४६॥ भ्रातृसत्त्वं गुणं भूमिं भौमेन तु विचिंतयेत् । प्रज्ञावाग्धर्मविज्ञानं बुधेनैव विचिंतयेत् ॥ ४७ ॥ छत्रवाहनकीर्तिं च बहुवर्णांबराणि च । गुरुणा देहपुष्टिं च बुद्धिपुत्रार्थसंपदः ॥ ४८ ॥ शुक्रं विवाहकर्माणि भोगस्थनं च वाहनम् । वेश्यास्त्रीजनगात्राणि शुक्रेणैव निरीक्षयेत् ॥ ४९ ॥ आयुष्यं जीवनोपायं दुःखशोकमहद्भयम् । सर्वक्षणं च मरणं मन्देनैव निरीक्षयेत् ॥ ५० ॥ बलहीना ग्रहा ये स्युर्जन्मकाले नृणां सदा । ग्रहोक्तफलहीनाः स्युर्विपरीतं शनेः फलम् ॥ ५१ ॥ स्वेषु स्वेष्वष्टवर्गेषु ग्रहोक्तफलमादिशेत् । अष्टवर्गाहते तस्मिन् दशा ज्ञातुं न शक्यते ॥५२ ॥

शरीरका प्रभाव सामर्थ्य, पितृपक्षका विचार सूर्यसे । मन बुद्धि, प्रसन्नता, मातृपक्षका विचार चन्द्रमासे ॥ ४६ ॥ भाई, बल, गुण, भूमि मंगलसे । बुद्धिवाणी, धर्म, ज्ञान बुधसे ॥ ४७ ॥ छत्र, वाहन, कीर्ति, अनेक रंगके वस्त्र, शरीरकी पुष्टि,बुद्धि, पुत्र, अर्थ, संपत्ति गुरुसे॥ ४८॥शुक्र धातु,

विवाहकर्म, भोगस्थान, वाहन, वेश्यारति, स्त्रीजनके शरीर शुक्रसे देखने ॥ ४९ ॥ आयु, जीवनका उपाय, दुःख, शोक, बडी भय, सर्वस्व नाश और मरण शनिसे देखना ॥ ५० ॥ मनुष्योंके जन्ममें जो ग्रह बलहीन हों उनका उक्त फलभी हीन ही होता है, शनिका फल उलटा होता है ॥५१॥ अपने २ अष्टकवर्गमें प्रत्येक ग्रहका उक्त फल कहना, अष्टवर्गके विना दशा जानी नहीं जाती ॥ ५२ ॥

अथ गोचराष्टकवर्गफलम् ।

नव रेखा लिखेत्प्राच्यास्तिर्यग्रेखास्त्रयोदश । षण्णवत्येव कोष्ठानि चक्रं भिन्नाष्टकं पुनः॥५३॥रविमन्दगुरूणां च शुक्रभौमबुधस्य च। शीतांशुलग्नयोश्चैव गोचराष्टकवर्गके॥५४॥ आदित्यस्थितराशेश्च तमारभ्याष्टकोष्टके । आदित्यादिग्रहाणां च सप्तानां लग्नकस्य च ॥ ५५ ॥ तत्तद्वाक्योक्तबिन्दूंश्च प्रसार्य च वदेत्फलम् । पश्चिमादिषु कोष्ठेषु प्रागाद्यन्तेषु चैव हि ॥ ५६ ॥ दक्षिणाद्युत्तरांतश्च मार्त्तण्डाद्यष्टके फले । एवं चंद्रस्य राशिं च समारभ्याष्टकोष्ठके ॥ ५७ ॥ तत्तद्राशिफलं चैव वदेदष्टकवर्गके । एवं द्वादशराशीनां ग्रहस्थितिवशाद्बुधः ॥ ५८ ॥ यद्ग्रहस्य तु यद्भावे फलं ज्ञेय यथा तथा । तत्तद्राशीन्समारभ्य तद्ग्रहाद्यष्टकस्य च ॥५९॥ वाक्योक्तबिन्दून् प्रस्तार्य फलं ज्ञात्वा वदेद्बुधः । बिन्दुहीने तु दुःखादीन् विषशस्त्रादिवाक्यतः ॥ ६० ॥ फलाधिक्ये तु कोष्ठे तु पञ्चमाधिक्यवाक्यतः । शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा व्ययषष्ठाष्टमं तथा ॥ ६१ ॥ पापानामुपचयं ज्ञात्वा शुभानां षट्त्रिकांस्तथा । ज्ञात्वैवं बिन्दुरेखां च वदेदेवं फलं बुधः॥६२॥ मध्यादिवाक्यसंप्रोक्तं फलं चैवं वदेत्तथा । मध्यात्फलाधिके लाभो लाभः क्षीणफले व्ययः ॥ ६३ ॥ यस्य व्ययाधिकं लग्नं भोगवानर्थवान् भवेत् । एवं फलं ग्रहाणां तु मासजं दिनजं वदेत् ॥ ६४ ॥

गोचराष्टकवर्गफल कहते हैं कि, ९ रेखा आडी १३ खडी लिखके ९६ कोष्ठ होते हैं। यह भिन्नाष्टकवर्ग है ॥ ५३ ॥ सूर्य, शनि, गुरु, शुक्र, मंगल, बुध, चंद्र, लग्नका गोचराष्टक वर्गमें ॥ ५४ ॥ सूर्यस्थित राशिसे लेके ८ कोष्ठकोंमें सूर्यादि ७ ग्रह और लग्नकाभी उन उनके वाक्योक्त प्रकार बिन्दु स्थापन करके उन २ राशियोंका फल अष्टक वर्गमें कहना । ऐसे १२ राशियोंका फल ग्रहस्थित प्रकारसे पंडितोंने कहना । जिस ग्रहका जिस भावमें जैसा फल है उन २ राशियोंसे लेकर उस ग्रहके अष्टकवर्गके वाक्योक्त बिन्दु लिखके फल विचारके कहना । रेखा बिन्दुसे हीन हो तो दुःखादि विषशस्त्रादि भीति । जहां फल रेखा ५ से अधिक है तहां शुभ फल कहना । शत्रुराशि नीचराशि १२ । ६ । ८ भावोंमें दुष्ट फल कहना। पापग्रह उपचयमें शुभग्रह ६।३ अशुभफल देते हैं, ऐसे बिंदुरेखा विचारके फल कहना । बिंदु आदि ८ रेखा पर्यंत यथोक्त फल कहने, बिन्दुसे लेके जितनी रेखा अधिक हों उतना लाभ अधिक और ऐसेही क्षीणफलमें व्यय जानना । जिसका लग्न व्ययाधिक है वह भोगवान् धनवान् होता है, इस प्रकार सभी ग्रहोंके मासफल दिनफल कहने ॥ ५५-६४ ॥

०	शु	चं	र बु	ल	मं		बृ	श				
०	मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	मं	कुं	मि
र.	।	०	।	।	०	।	०	०	०	।	।	।
चं.	०	०	०	।	०	०	।	०	०	०	।	।
मं.	।	।	।	०	।	।	०	।	०	०	।	।
बु.	।	।	०	०	।	०	।	।	०	०	।	।
बृ.	०	०	।	०	।	०	०	०	०	०	।	।
शु.	०	०	०	०	०	।	।	०	०	०	०	।
श.	०	।	।	।	।	।	०	।	।	।	।	०
ल.	।	।	।	०	०	।	।	०	।	।	०	०
रे. यो.	४	४	५	३	४	५	४	३	२	३	६	६
बि.यो	४	४	३	५	४	३	४	५	६	५	२	२

सूर्याष्टकवर्गफलविचारः ।

आदित्याष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु । अर्कस्थितस्य नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम् ॥ ६५ ॥ तद्राशिफलसंख्याभिर्वर्द्धयेद्योगपिण्डकम् । सप्तविंशोद्धृतं शेषं नक्षत्रं याति भानुजः ॥ ६६ ॥ तस्मिन्काले तस्य तस्य भावस्यार्तिं विनिर्दिशेत् । तस्मिन् काले पितृक्लेशो भवतीति न संशयः ॥ ६७ ॥ तत्त्रिकोणगते वापि पिता पितृसमोऽपि वा । मरणं तस्य जानीयाद्दशाच्छिद्रेषु कल्पयेत् ॥ ६८ ॥ अर्कात्तु तुर्यगे राहौ मन्दे वा भूमिनन्दने । गुरुशुक्रेक्षणमृते पितृहा जायते नरः ॥ ६९ ॥ लग्नाच्चन्द्राद्गुरुस्थाने याते सूर्यसुते यदि । पित्रोर्नाशं तदा कालवीक्षिते पापसंयुते ॥ ७० ॥ दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तमः । लग्नात्सुखेशराशीशदशायां च पितृक्षयः ॥ ७१ ॥ सुखनाथदशायां तु बहुप्राप्तेश्च संशयः पितृजन्माष्टमे जातस्तदीशे लग्नगेऽपि वा ॥ ७२ ॥ तेनैव पितृकार्याणि कारयेन्नात्र संशयः । सुखेशे लाभलग्नस्थे चन्द्रलग्नाद्विशेषतः ॥ ७३ ॥ पितृग्रहसमायुक्ते जातः पितृवशानुगः । तेनैव पितृकार्याणां कर्मशेषं समापयेत् ॥ ७४ ॥ पितृजन्मतृतीयर्क्षे जातः पितृधनाश्रितः । पितृकर्मगृहे जातः पितृतुल्यगुणान्वितः ॥ ७५ ॥ तदीशे लग्नसंस्थेऽपि पितृश्रेष्ठो भवेत्सुतः । सूर्याष्टवर्गे यच्छून्यं मासं संवत्सरं प्रति ॥ ७६ ॥ विवाहव्यवहारादि मासेऽस्मिन्वर्जयेत्सदा । कलहायासदुःखानि शून्यमासे भवन्ति च ॥ ७७ ॥ एवमादिफलं ज्ञात्वा मासं प्रति समाचरेत् । संशोध्य पिण्डं सूर्यस्य रन्ध्रमानेन वर्द्धयेत् ॥ ७८ ॥ द्वादशादिहृताच्छेषं मेषादि गणयेत्पुनः । तस्मिन्मासे मृतिं विन्द्यात्तत्त्रिकोणगतेऽपि वा ॥ ७९ ॥ सूर्यादि कल्पयेत्त्वन्ये परतो भास्करे मृतिः । विशेषं भावसूत्रेऽग्रे पितुर्दायादिकं दिशेत ॥ ८० ॥

सूर्यका अष्टकवर्ग समस्त ग्रहोंमें लिखके [illegible] करना, जिस राशिमें सूर्य है उससे नवम राशि पितृगृह होता है ॥ ६५ ॥ उस राशिमें जितनी रेखा हैं उस संख्यासे योगपिं[illegible] गुनना २७ से [illegible] शेष जो रहै उतने संख्यक नक्षत्रमें जब शनि जावै ॥ ६६ ॥ उस [illegible] जिस भावमें सूर्य है उस भावसंबंधी पीडा उसके पिताको होगी ऐसा कहना ॥ ६७ ॥ उसी समयमें उस राशिके त्रिकोण ५। ९ [illegible] शनिमें पिता अथवा पिताके समानका मरण होगा। विशेषतः विचार उस समय दशाके शून्य भागकाभी करना ॥ ६८ ॥ सूर्यसे चौथा राहु वा शनि वा मंगल हो उसे बृ० शु० न देखें तो मनुष्यका योग पिताके मारनेवाला होता है ॥ ६९ ॥ लग्न वा चंद्रमासे नवम स्थानमें यदि शनि जावै पापयुक्त वा पापदृष्टभी होवै तो माता पिताका नाश होता है ॥ ७० ॥ समय जाननेवालेने यह विचार दशाके तत्फलानुकूल समयमें कहना। स्मरण रखना कि, लग्नसे चतुर्थेशराशिके स्वामीकी दशामें पिताका क्षय होता है ॥ ७१ ॥ चतुर्थेशकी दशामें इत्यादि योगोंकी प्राप्तिमें निस्संदेह यह फल होता है। पिताके जन्मलग्नसे अष्टम लग्नमें जन्म हो अथवा उस राशिका स्वामी लग्नमें हो ॥ ७२ ॥ तो उसी राशिके मासादियोंमें पितृकार्य निःसंदेह करने अर्थात् पितृसंबंधी फल विचार करना। चंद्रमासे या लग्नसे चतुर्थेश ११। १ में हो तो विशेष तरहसे पितृकार्य करै ॥ ७३ ॥ अथवा पितृग्रहसे युक्त हो तो मनुष्य पिताके वशवर्ती होवै। उस राशिके मासादि पितृसंबंधीसे कार्य देखने ॥ ७४ ॥ पिताके जन्मलग्नसे तीसरे लग्नमें जन्म हो तो पिताके धनके आश्रयमें रहै। पिताके लग्नसे दशम लग्नमें जन्म हो तो पिताके तुल्य गुणवान् होवै ॥ ७५ ॥ उस राशिका स्वामी लग्नमें हो तो भी पितासे श्रेष्ठ हो, सूर्याष्टकवर्गमें जहां शून्य हो उस महीने उस वर्षमें विवाहादि मंगल तथा व्यवहारादि सर्वदा वर्जित करने। शून्य मासमें कलह, श्रम, दुःख होते हैं। प्रतिमास इत्यादि फल जानके कार्य करना। सूर्यका पिंडशोधन करके तद्वत बिन्दुप्रमाणसे गुनना। १२ आदिसे भाग लेकर जो शेष बचे उसको पुनः मेषादिसे गिनना जो आवे उस महीनेमें वा उसके त्रिकोणमें मरण जानना। ऐसेही सभी ग्रहो

सूर्याष्टकवर्गफलविचारः ।

आदित्याष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु । अर्कस्थितस्य नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम् ॥ ६५ ॥ तद्राशिफलसंख्याभिर्वर्द्धयेद्योगपिण्डकम् । सप्तविंशोद्धृतं शेषं नक्षत्रं याति भानुजः ॥ ६६ ॥ तस्मिन्काले तस्य तस्य भावस्यार्तिं विनिर्दिशेत् । तस्मिन् काले पितृक्लेशो भवतीति न संशयः ॥ ६७ ॥ तत्रिकोणगते वापि पिता पितृसमोऽपि वा । मरणं तस्य जानीयाद्दशाछिद्रेषु कल्पयेत् ॥ ६८ ॥ अर्कात्तु तुर्यगे राहौ मन्दे वा भूमिनन्दने । गुरुशुक्रेक्षणमृते पितृहा जायते नरः ॥ ६९ ॥ लग्नाच्चन्द्राद्गुरुस्थाने याते सूर्यसुते यदि । पित्रोर्नाशं तदा कालवीक्षिते पापसंयुते ॥ ७० ॥ दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तमः । लग्नात्सुखेशराशीशदशायां च पितृक्षयः ॥ ७१ ॥ सुखनाथदशायां तु बहुप्राप्तेश्च संशयः पितृजन्माष्टमे जातस्तदीशे लग्नगेऽपि वा ॥ ७२ ॥ तेनैव पितृकार्याणि कारयेन्नात्र संशयः । सुखेशे लाभलग्नस्थे चन्द्रलग्नाद्विशेषतः ॥ ७३ ॥ पितृग्रहसमायुक्ते जातः पितृवशानुगः । तेनैव पितृकार्याणां कर्मशेषं समापयेत् ॥ ७४ ॥ पितृजन्मतृतीयर्क्षे जातः पितृधनाश्रितः । पितृकर्मगृहे जातः पितृतुल्यगुणान्वितः ॥ ७५ ॥ तदीशे लग्नसंस्थेऽपि पितृश्रेष्ठो भवेत्सुतः । सूर्याष्टवर्गे यच्छून्यं मासं संवत्सरं प्रति ॥ ७६ ॥ विवाहव्यवहारादि मासेऽस्मिन्वर्जयेत्सदा । कलहायासदुःखानि शून्यमासे भवन्ति च ॥ ७७ ॥ एवमादिफलं ज्ञात्वा मासं प्रति समाचरेत् । संशोध्य पिण्डं सूर्यस्य रन्ध्रमानेन वर्द्धयेत् ॥ ७८ ॥ द्वादशादिहृताच्छेषं मेषादि गणयेत्पुनः । तस्मिन्मासे मृतिं विन्द्यात्तत्त्रिकोणगतेऽपि वा ॥७९॥ सूर्यादि कल्पयेत्त्वन्ये परतो भास्करे मृतिः । विशेषं भावसूत्रेऽग्रे पितुर्दायादिकं दिशेत् ॥ ८० ॥

सूर्यका अष्टकवर्ग समस्त ग्रहोंमें लिखके [illegible] करना, जिस राशिमें सूर्य है उससे नवम राशि पितृगृह होता है ॥ [illegible] उस राशिमें जितनी रेखा हैं उस संख्यासे योगपिं[illegible] गुनना २७ [illegible] शेष जो रहै उतने संख्यक नक्षत्रमें जब शनि जावै ॥ ६६ ॥ उस [illegible] जिस भावमें सूर्य है उस भावसंबंधी पीडा उसके पिताको लगी ऐसा कहना ॥ ६७ ॥ उसी समयमें उस राशिके त्रिकोण ५ । ९ [illegible] पिता अथवा पिताके समानका मरण होगा। विशेषतः विचार उस समय दशाके शून्य भागकाभी करना ॥ ६८ ॥ सूर्यसे चौथा राहु वा शनि वा मंगल हो उसे बृ० शु० न देखें तो मनुष्यका योग पिताके मारनेवाला होता है ॥ ६९ ॥ लग्न वा चंद्रमासे नवम स्थानमें यदि शनि जावै पापयुक्त वा पापदृष्टभी होवै तो माता पिताका नाश होता है ॥ ७० ॥ समय जाननेवालेने यह विचार दशाके तत्फलानुकूल समयमें कहना। स्मरण रखना कि, लग्नसे चतुर्थेशराशिके स्वामीकी दशामें पिताका क्षय होता है ॥ ७१ ॥ चतुर्थेशकी दशामें इत्यादि योगोंकी प्राप्तिमें निस्संदेह यह फल होता है। पिताके जन्मलग्नसे अष्टम लग्नमें जन्म हो अथवा उस राशिका स्वामी लग्नमें हो ॥ ७२ ॥ तो उसी राशिके मासादियोंमें पितृकार्य निःसंदेह करने अर्थात् पितृसंबंधी फल विचार करना। चंद्रमासे या लग्नसे चतुर्थेश ११ । १ में हो तो विशेष तरहसे पितृकार्य करै ॥ ७३ ॥ अथवा पितृग्रहसे युक्त हो तो मनुष्य पिताके वशवर्ती होवै। उस राशिके मासादि पितृसंबंधीसे कार्य देखने ॥ ७४ ॥ पिताके जन्मलग्नसे तीसरे लग्नमें जन्म हो तो पिताके धनके आश्रयमें रहै। पिताके लग्नसे दशम लग्नमें जन्म हो तो पिताके तुल्य गुणवान् होवै ॥ ७५ ॥ उस राशिका स्वामी लग्नमें हो तो भी पितासे श्रेष्ठ हो, सूर्याष्टकवर्गमें जहां शून्य हो उस महीने उस वर्षमें विवाहादि मंगल तथा व्यवहारादि सर्वदा वर्जित करने। शून्य मासमें कलह, श्रम, दुःख होते हैं। प्रतिमास इत्यादि फल जानके कार्य करना। सूर्यका पिंडशोधन करके तद्गत बिन्दुप्रमाणसे गुनना। १२ आदिसे भाग लेकर जो शेष बचे उसको पुनः मेषादिसे गिनना जो आवै उस महीनेमें वा उसके त्रिकोणमें मरण जानना। ऐसेही सभी ग्रहों

करके सबका संयोग जब आवै तब मृत्यु होती है । विशेषतः आगे भाव-सूत्रमें पितृदशादिकमें कहना । उदाहरण–" अर्कस्थितस्य नवमो राशि" इत्यादि । यहां सूर्य मिथुनका है इससे नवम कुम्भमें फल ६ सूर्यका संशोधित योगपिंड १६८ कुंभका फल ६ से गुना १००८हुए २७से भाग लिया शेष ९ आश्लेषा नक्षत्र उसके त्रिकोण ज्येष्ठा रेवतीमें पितृकष्ट कहना । अथवा सू० पिं० १६८ कुंभस्थ बिन्दुमान २ से गुना ३३६ भाग १२ से लिया शेष० मीनराशि सत्रिकोण १२।४।८ राशियोंमें जब शनि जावै तब पितृ-कष्ट पिताको अभावमें तत्तुल्यको कष्ट होगा ऐसा जानना ॥ ७९–८० ॥

चन्द्राष्टकवर्गफलम् ।

चन्द्राच्चतुर्थतो मातुः प्रासादग्रामचिन्तनम् । चन्द्राष्टवर्गे निक्षिप्य शून्यराशिगते विधौ ॥ ८१ ॥ तन्नक्षत्रं परित्यज्य शुभकर्माणि कारयेत् । चन्द्राष्टमेशनक्षत्रत्रितयेषु विशेषतः ॥ ८२ ॥ आयामव्याधिदुःखादि लभते नात्र संशयः ॥८३॥ चन्द्रात्सुखफलात्पिंडं वर्द्धयेच्छोध्य पूर्ववत् । शेषमृक्षे शनौ याते मातृहानिं विनिर्दिशेत् । तत्रिकोणेषु वा केचिद्दशा-छिद्रेषु कल्पयेत् ॥ ८४ ॥ चंद्राल्लग्नात्सुखस्थाने भौमे वा भास्करात्मजे । दृश्यते वा तयोः स्थानं पूर्वोक्ते कालसंगते ॥ ८५ ॥ तदभावे स्वयं मृत्युर्देशांतरगतेऽपि वा । चंद्रा-त्सुखेऽष्टमे सारे त्रिकोणे दिवसाधिपे ॥ ८६ ॥ मातुर्वियोग-मस्तीति निर्दिशेल्लग्नतः पितुः । पितुर्वा मातृचिंतायां भास्क-रादि प्रकल्पयेत् ॥ ८७ ॥

चंद्राष्टकवर्गफल कहते हैं–चंद्रमाके चतुर्थसे माता, मकान, महल, ग्रामका विचार करना । चंद्राष्टक लिखके शून्यराशिमें जब चंद्रमा जाय उस नक्षत्रमें शुभकार्य करने, विशेषतः चन्द्रमासे अष्टम भावस्वामी जिस नक्षत्रमें हो उससे ३ नक्षत्रोंमें श्रम, रोग, दुःखादि निस्संशय पाता है । चंद्रमासे चतुर्थ भावके फलसे पिण्डको गुनके पूर्ववत् शोधन करना । जो शेष रहै उस नक्षत्रमें जब शनि जावै तब माताकी हानि कहनी अथवा उसके त्रिकोणमें जहां दशाका

शून्यभाग हो तहां कहनी । चंद्रमासे वा लग्नसे चौथे स्थानमें जब मंगल वा शनि जावै वा भावको देखें और पूर्वोक्त प्रकार शून्य दशाभी होवै तो उस समयमें माताकी मृत्यु होवै, माता न हो तो अपनेको मृत्यु होवै । अथवा देशांतर गमन करै तहां मृत्यु होवै । चंद्रमासे ४ । ८ भावमें मंगल, ५ । ९ में सूर्य होवै तो माताका वियोग कहना, लग्नसे ऐसा योग हो तो पिताका मरण कहना, ऐसे माता पिताका विचार चंद्र सूर्यसे करना । उदाहरण–चंद्रमा वृषराशिमें है इससे अष्टम धनराशिका स्वामी गुरु स्वाती नक्षत्रमें है तो स्वाती, शतभिषा, आर्द्रा नक्षत्रोंमें आयाम व्याधिदुःखादि होंगे । इनमें शुभकर्म न करने । तथा चंद्रमासे चौथे सिंहमें फल ४ से चंद्रका शुद्ध योगपिंड १०७ गुना ४२८ भाग २७ से लेकर शेष २३ धनिष्ठा इसके त्रिकोण मृगशिर चित्रामें जब शनि जावै तब माताका कष्ट होगा । माताके अभावमें माताके तुल्यको जानना ॥ ८१–८७ ॥

अथ भौमाष्टकवर्गफलम् ।

भौमाष्टवर्गे संचिंत्य भ्रातृविक्रमधैर्यकम् । भौमस्थितस्य सहजो राशिर्भ्रातृगृहं स्मृतम् । त्रिकोणशोधनं कृत्वा यत्र भूयांसि तत्र च ॥ ८८ ॥ भूमिर्भवति भार्या वा ग्रहगेहोऽथवा यदि । भौमोऽपि बलहीनश्चेद्दीर्घायुर्भ्रातरो भवेत् । फलानि यत्र क्षीयंते तत्र भूमिहराः स्मृताः ॥ ८९ ॥ तद्राशिफलसंख्यैश्च वर्द्धयेच्छोध्य पूर्ववत् । शेषमृक्षं शनौ याते भ्रातृहानिर्विनिर्दिशेत् ॥ ९० ॥

भौमाष्टकवर्गमें भाई पराक्रम धैर्यका विचार है, भौम जिस भावमें है उससे तीसरा स्थान भ्रातृस्थान होता है, त्रिकोणशोधन करके जहाँ बहुत रेखा हों तहां भूमि, स्त्री, गृह, परिवारकी वृद्धि होय । शून्य बाहुल्यमें उनकी हानि होती है । मंगलको बलहीन होनेमें भी रेखाबाहुल्यसे भाई दीर्घायु होता है, जहां फलक्षीण हो तहां भूमि आदिका क्षय होता है ॥८८॥८९॥ उसकी राशि फलसंख्यासे गुनके पूर्ववत् शोधन करना शेष जो नक्षत्र आवै उसमें जब शनि आवै तो भ्रातृहानि कहनी । उदाहरण–भौम ५ राशिमें है

इससे तीसरी तुलामें फल ३ है इससे भौमका योगपिंड २२३ गुना ६६९ हार २७ से भाग लिया शेष २१ उत्तराषाढा इसके त्रिकोण उत्तराषाढा कृत्तिका उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रगत शनिमें भ्रातृकष्ट होगा। अथवा भौमयोगपिंड २२३ बिन्दुमान ५ से गुना १११५ भाग १२ से लिया शेष ११ राशि सत्रिकोण ११ । ३ । ७ राशिगत शनिमें भ्रातृकष्ट होगा ॥ ९० ॥

अथ बुधाष्टकवर्गफलम् ।

बुधात्तुर्यं कुटुंबं च धनपुत्रादिमातुलाः । तत्पंचमे मंत्रविद्यालिपिबुद्ध्यादि चिंतयेत् ॥ ९१ ॥ बुधाष्टवर्गं संशोध्य शेषमृक्षं गते शनौ । बंधुमित्रविनाशादीँल्लभते नात्र संशयः ॥ ९२ ॥

बुधाष्टकवर्गमें बुधसे चौथे भावमें कुटुंब, धन, पुत्रादि, मामा, बुधसे पंचममें मंत्र विद्या लिपि बुद्धि आदिका विचार करना, बुधका अष्टकवर्ग शोधन करके जो शेष नक्षत्र रहैं उसमें जब शनि आवै तब निस्संशय बंधु मित्रादिका विनाश मिलता है । उदाहरण—बुध मिथुनमें है इससे चौथे कन्यामें फल ३ इससे बुधका योगपिंड २३६ गुना ७०८ भाग २७से लिया शेष ६ आर्द्रा स्वाती शतभिषा नक्षत्रके शनिमें बंधु मित्रादि कष्ट होगा । अथवा योगपिंड २३६ बिंदुमान ५ से गुना ११८० भाग १२ से लिया शेष ४ कर्क वृश्चिक मीनगत शनिमें बंधु मित्रादिसे कष्ट कहना तथा योगपिंड२३६ पंचम तुलाराशिस्थित फलसे गुना २७से शेष किया १९ रहा मूल अश्विनी मघानक्षत्रगत शनिमें बुद्ध्यादिसंबंधी कष्ट होगा तथा यो० पिं० २३६ बिन्दुमान ३ से गुणा १२ से शेष किया शेष० मीन कर्क वृश्चिक राशिगत शनिमें बुद्ध्यादि कष्ट कहना ॥ ९१ ॥ ९२ ॥

गुर्वष्टकवर्गफलम् ।

जीवात्पंचमतो ज्ञानं पुत्रधर्मधनादिकम् । गुरोरष्टकवर्गेषु संतानमपि कल्पयेत् ॥ ९३ ॥ गुरुस्थितसुतस्थाने यावता विद्यते फलम् । शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा तावंतश्च सुताः स्मृताः ॥ ९४ ॥ संख्या नवांशतुल्या वा तदीशस्याथवा पुनः। सुतभेशनवांशैश्च समाना वापि कल्पयेत् ॥ ९५ ॥ गुरो-

रष्टकवर्गेषु शोध्य शेषफलानि च । क्रूराश्रितफलं त्यक्त्वा शेषास्तस्यात्मजाः स्मृताः ॥ ९६ ॥ व्ययार्थसुतसंस्थैश्च पापैः स्यात्क्षीणसंततिः । गुरोरष्टकवर्गेषु सुतराशिस्थितं समम् ॥ ९७ ॥ अल्पात्मजः स विज्ञेयो गुरौ पंचमगेऽपि वा । तदीशयोगदृष्टे वा तदा पुत्रान् समादिशेत् ॥ ९८ ॥ एतैर्बहुप्रकारैश्च कल्पयेत्कालवित्तमः । बहुलक्षणसंयोगे तदा तस्मिन् समादिशेत् ॥९९॥ वंशक्षयादियोगश्च पुरस्ताद्वक्ष्यते मया । पूर्वोक्तलक्षणेनात्र वंशभर्त्तुः समादिशेत् ॥ १०० ॥

बृहस्पतिके पंचमसे ज्ञान पुत्र धर्म धनादि और इसके अष्टकवर्गसे सन्तानका विचार भी करना ॥ ९३ ॥ गुरुस्थित राशिसे पंचममें जितनी रेखा हैं उतनी संतान होती हैं परंतु शत्रु नीचादियोंमें ग्रह फल नहीं होता ॥ ९४ ॥ अथवा पंचमेशस्थित नवांश संख्याके तुल्य यद्वा गुरुसे पंचमेशस्थित नवांशतुल्य कल्पना करनी ॥ ९५ ॥ गुरुके अष्टकवर्ग शोधनसे शेष फलोंमें पापयुक्त फल छोडके शेष संख्या उसके पुत्रोंकी होती है ॥ ९६ ॥ पापग्रह १२। २। ५ स्थानोंमें हो तो संतति क्षीण होती है। गुरुके अष्टकवर्गमें पंचमराशिगत समफल होवै ॥ ९७ ॥ यद्वा बृहस्पति पंचम होवै तो वह मनुष्य अल्पपुत्रवाला जानना। यदि भावेशसे युक्त वा दृष्ट हो तो बहुत पुत्र कहने ॥९८॥ ज्योतिषीने ऐसे बहुत प्रकारोंसे संतान कल्पना करनी, जहां अधिक लक्षण मिलै तहां अधिक फल कहना ॥ ९९ ॥ इस भावसंबंधी वंशच्छेत्तादि योग आगे कहूंगा। पूर्वोक्त लक्षणोंसे वंशपालक कहना। उदाहरण—गुरु तुलामें है इससे पंचम ११ में फल ४ है इससे गुरुयोगपिंड ८४ को गुना ३३६ भाग २७ से लिया शेष १२ उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, कृत्तिकानक्षत्रगत शनिमें संतानकष्ट होगा। अथवा यो० पिं० ८४ रंध्रमान ४ से गुना १२ से भाग लिया शेष ० रहा तो १२।४।८ राशिगत शनिमें संतानकष्ट होगा॥ १००॥

शुक्राष्टकवर्गफलम् ।

भृगोरष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु । येषु येषु फलानि स्युर्भूयांसि किल तत्र तु ॥ १०१ ॥ भूमिं कलत्रं वित्तं च

तद्देशे निर्दिशेन्नृणाम् । शुक्राज्जामित्रतो लग्धिदारेशान्वित-
दिग्भवा ॥ १०२ ॥ दाराधिपस्थितं क्षेत्रं दारजन्मर्क्षकं
विदुः । तस्योच्चनीचराशौ वा केचिदिच्छन्ति तद्विदः
॥ १०३ ॥ तस्यांशकत्रिकोणे वा भार्याया जन्मभं वदेत् ।
लग्नेन्द्वोर्भाग्यभं जन्मलग्नभं परिकीर्तितम् ॥ १०४ ॥ तयोः
समागमर्क्षं च कल्पयेत्तत्र बुद्धिमान् । स्वक्षेत्रस्वोच्चगो
वाऽपि स्वमित्रर्क्षगतोऽपि वा ॥ १०५ ॥ स्वमित्रांशगतो
वापि वक्तव्यं दारलक्षणम् । शुक्रजामित्रतो लग्धित्रिकोणा-
देशदिक्स्त्रियाः ॥ १०६ ॥ प्रोक्तराशिर्यदा दारजन्मर्क्षं
सन्ततिस्तदा । अनुक्तराशिजन्मर्क्षमस्ति चेन्नास्ति संततिः
॥१०७॥ भृगुदारेशयुक्तर्क्षं फलसंख्याः स्त्रियो विदुः। क्षेत्रस्त्री-
ग्रहणे साम्यं नृपस्य द्विगुणं तथा ॥ १०८ ॥ मन्दांशे मन्द-
संयुक्ते मंदक्षेत्रेऽथ वा भृगौ । नीचांशे पापसंयुक्ते नीचस्त्री-
भोगमिच्छति ॥ १०९ ॥ मेदिनीतनयभागनिवासी मेदिनी-
भवसदालययुक्तः । मंगलेक्षणयुतो भृगुपुत्रोऽत्यंतसुंदरपर-
प्रमदाप्तः ॥ ११० ॥ जामित्रे मन्दभौमांशे तदीशे मन्द-
भौमगे । वेश्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न संशयः
॥ १११ ॥ पापानूढांशगे चन्द्रे जामित्रे व्ययगेऽपि वा ।
पापग्रहान्विते शुक्रे स्त्रीहेतोः शुचमावहेत् ॥ ११२ ॥ शुक्रां-
शकसमाना स्त्री वर्णरूपगुणान्विता । भवेच्छशांकतुल्या वा
दारेशस्य गुणान्विता ॥ ११३ ॥ सपापगेऽशके विधौ व्यये-
ऽङ्गनालयेऽपि चेत् । सपापभार्गवेऽङ्गनानिमित्ततः शुचापदम्
॥ ११४ ॥ सितांशकप्रमाणिकाः स्त्रियो भवंति सद्गुणाः ।
तथा चरांशसंमिताः स्वनाथतुल्यसद्गुणाः ॥ ११५ ॥ शुक्रा-
न्मन्दे त्रिकोणस्थे नेष्टं जीवे सुखप्रदम् । तेषां बलाबलत्वेन
भार्याया लक्षणं वदेत् ॥ ११६ ॥

शुक्राष्टकवर्ग सभी ग्रहोंमें स्थापन करके जिस २ राशिमें रेखा अधिक हों तहां २ ॥ १०१ ॥ भूमि, स्त्री, धन उस २ देशसे कहना। शुक्रसे सप्तम भावगत राशिसे वह अथवा सप्तमेशकी दिशासे स्त्रीलाभ कहना ॥ १०२ ॥ सप्तमेश जिस राशिमें है वह स्त्रीकी जन्मराशि जानते हैं कोई ज्योतिषी सप्तमेशकी उच्च वा नीच राशि मानते हैं ॥ १०३ ॥ अथवा सप्तममें जिसकी अंशक है उसके त्रिकोण राशि स्त्रीकी जन्मराशि होती है। लग्न वा चंद्रमासे नवमराशि स्त्रीका जन्मलग्न कहा है ॥ १०४ ॥ तहां बुद्धिमान्ने उनके समागम राशि कल्पना करनी। सप्तमेश अपनी राशि उच्च वा मित्रराशि, मित्रांशकमें जैसा हो वैसाही स्त्रीके लक्षण कहना। शुक्रके सप्तम राशिसे स्त्री-लाभ त्रिकोणराशीश दिशासे कहना ॥१०५॥१०६॥ यदि उक्त राशियोंमेंसे कोई राशि स्त्रीकी हो तो संतति होगी और उसका जन्मर्क्ष अनुक्त राशिमें हो तो संतति नहीं है ॥ १०७ ॥ शुक्र तथा सप्तमेशगत राशिमें जितने फल हैं उतनी स्त्री होती हैं। राशिफलसंख्या स्त्रीसंख्या ग्रहणमें औरोंकी अपेक्षा राजाको द्विगुण कहना ॥ १०८ ॥ शुक्र शनिके अंशमें शनिसे युक्त शनिके राशिमें नीचांशकमें पापयुक्त होवै तो नीच स्त्रीसे भोग करता है ॥१०९॥ शुक्र भौमराशिमें भौमांशकमें भौमसे युक्त वा दृष्ट हो तो अत्यंत सुंदरी पर-स्त्रीमें आसक्त रहै ॥ ११० ॥ सप्तममें शनि वा भौमका अंशक हो, शनि भौमसे दृष्ट वा युक्त हो, सप्तमेश शनि मंगलसे युक्त हो तो उसकी स्त्री वेश्या अथवा जारिणी होय ॥ १११ ॥ चंद्रमा पापानूढांशमें सप्तम वा व्यय-भावमें हो शुक्र पापयुत हो तो स्त्रीके कारण शोक भोगेगा ॥ ११२ ॥ शुक्र जिसके अंशकमें हो उसके रूपवर्णादि समान अथवा चंद्रनवांशेशके समान स्त्री होती है तथा सप्तमेशके गुणोंसे युक्त होती है ॥ ११३ ॥ पापांशमें पापयुक्त चंद्रमा १२ वा ७ भावमें हो शुक्रभी सपाप हो तो स्त्रीनिमित्त शोक एवम् आपत्ति होवै ॥११४॥ शुक्रके अंशतुल्य स्त्री सद्गुणा होती है, इन-मेंभी चरांशकी गणना है अंशेशके सदृश सुगुण जाननी ॥ ११५ ॥ शुक्रसे ५। ९ में शनि वा गुरु होवै तो शुभ नहीं होती, स्त्रियोंसे सुख नहीं होता, इन योगोंके बलाबलसे स्त्रीके लक्षण कहने। उदाहरण—शुक्रका योगपिण्ड

तद्देशे निर्दिशेन्नृणाम् । शुक्राज्जामित्रतो लब्धिदारेशान्वित-
दिग्भवा ॥ १०२ ॥ दाराधिपस्थितं क्षेत्रं दारजन्मर्क्षकं
विदुः । तस्योच्चनीचराशौ वा केचिदिच्छन्ति तद्विदः
॥ १०३ ॥ तस्यांशकत्रिकोणे वा भार्याया जन्मभं वदेत् ।
लग्नेन्द्वोर्भाग्यभं जन्मलग्नभं परिकीर्तितम् ॥ १०४ ॥ तयोः
समागमर्क्षं च कल्पयेत्तत्र बुद्धिमान् । स्वक्षेत्रस्वोच्चगो
वाऽपि स्वमित्रर्क्षगतोऽपि वा ॥ १०५ ॥ स्वमित्रांशगतो
वापि वक्तव्यं दारलक्षणम् । शुक्रजामित्रतो लब्धिस्त्रिकोणा-
देशदिक्स्त्रियाः ॥ १०६ ॥ प्रोक्तराशिर्यदा दारजन्मर्क्षं
सन्ततिस्तदा । अनुक्तराशिजन्मर्क्षमस्ति चेन्नास्ति संतातिः
॥१०७॥ भृगुदारेशयुक्तर्क्षं फलसंख्याः स्त्रियो विदुः । क्षेत्रस्त्री-
ग्रहणे साम्यं नृपस्य द्विगुणं तथा ॥ १०८ ॥ मन्दांशे मन्द-
संयुक्ते मंदक्षेत्रेऽथ वा भृगौ । नीचांशे पापसंयुक्ते नीचस्त्री-
भोगमिच्छति ॥ १०९ ॥ मेदिनीतनयभागनिवासी मेदिनी-
भवसदालययुक्तः । मंगलेक्षणयुतो भृगुपुत्रोऽत्यंतसुंदरपर-
प्रमदाप्तः ॥ ११० ॥ जामित्रे मन्दभौमांशे तदीशे मन्द-
भौमगे । वेश्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न संशयः
॥ १११ ॥ पापानूढांशगे चन्द्रे जामित्रे व्ययगेऽपि वा ।
पापग्रहान्विते शुक्रे स्त्रीहेतोः शुचमावहेत् ॥ ११२ ॥ शुक्रां-
शकसमाना स्त्री वर्णरूपगुणान्विता । भवेच्छशांकतुल्या वा
दारेशस्य गुणान्विता ॥ ११३ ॥ सपापगेंऽशके विधौ व्यये-
ऽङ्गनालयेऽपि चेत् । सपापभार्गवेऽङ्गनानिमित्ततः शुचापदम्
॥ ११४ ॥ सितांशकप्रमाणिकाः स्त्रियो भवंति सद्गुणाः ।
तथा चरांशसंमिताः स्वनाथतुल्यसद्गुणाः ॥ ११५ ॥ शुक्रा-
न्मन्दे त्रिकोणस्थे नेष्टं जीवे सुखप्रदम् । तेषां बलाबलत्वेन
भार्याया लक्षणं वदेत् ॥ ११६ ॥

शुक्राष्टकवर्ग सभी ग्रहोंमें स्थापन करके जिस २ राशिमें रेखा अधिक हों तहां २ ॥ १०१ ॥ भूमि, स्त्री, धन उस २ देशसे कहना । शुक्रसे सप्तम भावगत राशिसे वह अथवा सप्तमेशकी दिशासे स्त्रीलाभ कहना ॥ १०२ ॥ सप्तमेश जिस राशिमें है वह स्त्रीकी जन्मराशि जानते हैं कोई ज्योतिषी सप्तमेशकी उच्च वा नीच राशि मानते हैं ॥ १०३ ॥ अथवा सप्तममें जिसकी अंशक है उसके त्रिकोण राशि स्त्रीकी जन्मराशि होती है। लग्न वा चंद्रमासे नवमराशि स्त्रीका जन्मलग्न कहा है ॥ १०४ ॥ तहां बुद्धिमान्ने उनके समागम राशि कल्पना करनी । सप्तमेश अपनी राशि उच्च वा मित्रराशि, मित्रांशकमें जैसा हो वैसाही स्त्रीके लक्षण कहना । शुक्रके सप्तम राशिसे स्त्रीलाभ त्रिकोणराशीश दिशासे कहना ॥१०५॥१०६॥ यदि उक्त राशियोंमेंसे कोई राशि स्त्रीकी हो तो संतति होगी और उसका जन्मर्क्ष अनुक्त राशिमें हो तो संतति नहीं है ॥ १०७ ॥ शुक्र तथा सप्तमेशगत राशिमें जितने फल हैं उतनी स्त्री होती हैं । राशिफलसंख्या स्त्रीसंख्या ग्रहणमें औरोंकी अपेक्षा राजाको द्विगुण कहना ॥ १०८ ॥ शुक्र शनिके अंशमें शनिसे युक्त शनिके राशिमें नीचांशकमें पापयुक्त होवै तो नीच स्त्रीसे भोग करता है ॥१०९॥ शुक्र भौमराशिमें भौमांशकमें भौमसे युक्त वा दृष्ट हो तो अत्यंत सुंदरी परस्त्रीमें आसक्त रहै ॥ ११० ॥ सप्तममें शनि वा भौमका अंशक हो, शनि भौमसे दृष्ट वा युक्त हो, सप्तमेश शनि मंगलसे युक्त हो तो उसकी स्त्री वेश्या अथवा जारिणी होय ॥ १११ ॥ चंद्रमा पापानूढांशमें सप्तम वा व्ययभावमें हो शुक्र पापयुत हो तो स्त्रीके कारण शोक भोगेगा ॥ ११२ ॥ शुक्र जिसके अंशकमें हो उसके रूपवर्णादि समान अथवा चंद्रनवांशेशके समान स्त्री होती है तथा सप्तमेशके गुणोंसे युक्त होती है ॥ ११३ ॥ पापांशमें पापयुक्त चंद्रमा १२ वा ७ भावमें हो शुक्रभी सपाप हो तो स्त्रीनिमित्त शोक एवम् आपत्ति होवै ॥११४॥ शुक्रके अंशतुल्य स्त्री सद्गुणा होती है, इनमेंभी चरांशकी गणना है अंशेशके सदृश सुगुण जाननी ॥ ११५ ॥ शुक्रसे ५ । ९ में शनि वा गुरु होवै तो शुभ नहीं होती, स्त्रियोंसे सुख नहीं होता, इन योगोंके बलाबलसे स्त्रीके लक्षण कहने । उदाहरण—शुक्रका योगपिण्ड

१६० शुक्रसे सप्तम तुलागत [illegible] ३ से गुना, २७ से भाग लिया शेष २१ उत्तराषाढा कृत्तिका उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रगत शनिमें स्त्रीकष्ट होगा । अथवा यो० पिं० १६० बिन्दुमान ५ से गुना १२ से भाग लिया शेष ८ वृश्चिक मीन कर्क राशिगत शनिमें [illegible]कष्ट होगा ॥ ११६ ॥

शन्यष्टकवर्गफलम् ।

शनैश्चरस्थितस्थानादष्टमं मृतिरुच्यते । शनेरष्टकवर्गे च स्वस्यायुष्यं विनिर्दिशेत् ॥ ११७ ॥ लग्नात्प्रभृति मंदान्तं फलान्येकत्र कारयेत् । लग्नादिफलतुल्याब्दे व्याधिवैरे समादिशेत् ॥ ११८ ॥ मन्दादिलग्नपर्यंतं फलान्येकत्र संयुतम् । मन्दादिफलतुल्याब्दे व्याधिं तस्य समादिशेत् ॥ ११९ ॥ तयोर्योगसमाब्दे तु मृत्युयोगं प्रचक्षते । शोध्यादिगुणनं कृत्वा पिण्डं संस्थाप्य यत्नतः ॥ १२० ॥ अष्टमस्थफलैर्हत्वा सप्तविंशतिभाजितम् । शतादूर्ध्वं तु तत्पिण्डं शतमेव त्यजेत्ततः ॥ १२१ ॥ आयुःपिण्डं तु जानीयात्प्राग्वद्वेलां तु कल्पयेत् । त्रिकोणैकाधिपत्यर्क्षशोधनं विरचय्य च ॥ १२२ ॥ पिण्डं संस्थाप्य गुणयेल्लग्नादष्टमगैः फलैः । सप्तविंशतिहृच्छेषं मृत्युकालं वदेद्बुधः ॥ १२३ ॥ समूलाष्टकवर्गे च यत्र नास्ति फलं गृहे । तत्र नास्ति फलं तत्र यदा याति शनैश्चरः ॥१२४॥ तद्वद्रविचन्द्रौ चेद्दशाछिद्रे मृतिं वदेत् । दशाछिद्रसमायोगे मृत्युरेव न संशयः ॥ १२५ ॥ मंदाष्टवर्गराशीनां हीनराशौ क्षयो भवेत् । तद्गते भास्करे मंदे तस्मिन्काले मृतिं वदेत् ॥ १२६ ॥

शनि जिस स्थानमें है उससे अष्टम मृत्युस्थान कहाता है, शनिके अष्टकवर्गसे आयु कहनी ॥ ११७ ॥ लग्नसे शनिपर्यंतके फल जोडके लग्नादिफलतुल्य वर्षमें रोग तथा वैर कहना ॥ ११८ ॥ लग्नादि शनिपर्यंत फल तथा शन्यादि लग्नपर्यंत फल जोडके तत्तुल्य वर्षमें मनुष्यको रोग कहना॥ ११९॥

उन दोनोंके योगतुल्य वर्षमें मृत्युयोग कहते हैं। यदि उस समय हीनबलीकी दशा भी हो शोधन गुणन करके यत्नसे पिंड स्थापन करके ॥ १२०॥ अष्टम-भावस्थ रेखाओंसे गुनना २७ से भाग लेना सौसे अधिक हो तो उसमेंसे १०० घटाय देने ॥ १२१ ॥ यह आयुःपिण्ड जानना इसमें पूर्ववत् कार्य करना तथा त्रिकोणैकाधिपत्य शोधनभी करके ॥ १२२ ॥ पिण्डको लग्नसे अष्टम-गत फलोंसे गुनके २७ से भाग लेना शेष मृत्युकाल कहना ॥ १२३ ॥ मूलाष्टकवर्गमें जहां फल नहीं है तहां जब शनि आवे और उस भावमें सूर्य चन्द्रमा आवैं तो दशाके शून्यभागमें मृत्यु कहनी, दशाछिद्रके योगमें निःसन्देह मृति होती है ॥ १२४ ॥ १२५ ॥ शन्यष्टवर्गराशियोंकी जो हीन राशि है उसमें क्षय होता है, जब तहां सूर्य शनि आवै तब मृत्यु कहनी। उदाहरण—लग्नसे शनिपर्यंत फल ४। १। ५। ३ इनका योग १३ वर्षमें रोग होगा। शनिसे लग्नपर्यंत फल १। ३। ४। ३। ६। ४। ३। २ इनका योग २६ वर्षमें रोग मृत्यु वा परदेश गमन धनक्षय होंगे। अथवा दोनोंके योग ३९ वर्षमें उक्त फल कहने इसमें हीनबलीकी दशा होनेमें मृत्यु कही है। यहां उदाहरणमें उस समय लग्नदशा वर्तमान है उसका बल ६। ४। ८ " त्र्यल्पे हीनबली ज्ञेयो बली षडधिके स्मृतः " इससे लग्न बलवान् होनेसे ३९ वर्षमें मृत्यु नहीं होगी तब उदाहरण हैं कि, लग्न ४ शनि ८ के बीचमें फल १३ को सात ७ से गुने ९१ भ २७ से शेष किया बाकी १० मघानक्षत्रगत शनिमें सुखकी हानि एवं धनकी हानि होगी। तदनंतर लग्नसे अष्टमस्थित फल ३ से शनिका पिंड १३५ गुना ४०५ भ २७ से तष्ट किया शेष० एतन्मित रेवती सत्रिकोण आश्लेषा ज्येष्ठा नक्षत्रगत शनिमें सुखहानि धनहानि होगी। शनिके अष्टकवर्गमें जहां शून्य हो उस राशिगत शनिमें यदि दशारिष्ट और दुष्ट दशाभी हो उस समयमें निश्चय मरण कहना। उसके त्रिकोणगत शनिमेंभी दुष्ट दशा होनेमें मरण कहते हैं ॥ १२६ ॥

प्रयांति वियदङ्कके सति दशाद्यरिष्टे भृशं तदा मरणनिश्चयं

निगदितं त्विदं नो मृषा । त्रिकोणभवने ततोऽपि सति दुष्ट-
पाकोदये प्रयाति मरणं पुमानपि च रक्षकश्चेच्छिवः ॥ १२७ ॥

शन्यष्टकवर्गमें जिस राशिमें शून्य होय उस राशिमें जब शनि प्राप्त होय और दुष्ट दशाभी प्राप्त होय तो उस वर्षमें महादेवजी रक्षा करनेवाले हों तथापि मरणको प्राप्त होता है ॥ १२७ ॥

भौमान्तं तनुतः कुजात्तनुलयं योगे फलानां तथा
तत्तुल्यं शरदीह कष्टमनिशं शस्त्रानलोत्थं भयम् ।
मन्दाराङ्गभयोः फलैक्यकमिते सौम्योज्झिते शस्त्रभी-
र्मंदारैक्यमिते फले क्षतिभयं राहोः सुखानां क्षतिम् ॥ १२८ ॥

भौमाष्टकवर्गमें लग्नसे भौमांतफलैक्य ४ से भौमसे लग्नांत फलैक्य ३५ इस वर्षमें शस्त्राग्निभय होगा, शनिसे लग्नपर्यंत २६, लग्नसे शन्यंत १३ इनमें शस्त्रभीति वा सुखहानि होगी। यहां लग्न शुभ ग्रहरहित है भौम लग्नांत गत फलैक्य ३५ इस वर्षमें जानना तथा शनिके अष्टकवर्गमें राहुके लग्नांत-फलैक्य ३४ इस वर्षमें सुखहानि होगी ॥ १२८ ॥

शुभखचरफलैक्यात्प्राप्तवर्गे नितान्तं धनतनयसुखानां भाजनं
स्यान्मनुष्यः । धरणितनयवर्गे बिन्दुसंज्ञातयोगे तनुलयमिह
वर्षे पापगे मृत्युभीतिः ॥ १२९ ॥

शुभग्रहोंके फलैक्यसे धनपुत्रसुखादिका भोक्ता मनुष्य होता है और मंगल वर्गसे मृत्युभीति होती है । उदाहरण—चन्द्राष्टकवर्गमें चन्द्रफल ४, लग्नफल ३, फलैक्य ७, लग्न ४ से चन्द्रांतफलैक्य ४२ वर्षमें धन, पुत्र, सुखादि प्राप्ति होगी। बुधाष्टकवर्गमें बुधसे ३ लग्नांत रेखैक्य ८ लग्नसे बुधपर्यन्त रेखैक्य ४९ इस वर्षमेंभी वही फल । गुरुके अष्टकवर्गमें गुरुसे ७ लग्नांत ४ फलैक्य ४२ लग्नसे गुरुपर्यंत १४ इस वर्षमेंभी वही फल । शुक्राष्टकवर्गमें शुक्रसे लग्नपर्यंत फलैक्य १५ लग्नसे शुक्रपर्यंत ३७ इसमेंभी वही फल । लग्नाष्टकवर्गमें लग्नसे भौमांत ४ भौमसे लग्नांत ४५ इस वर्षमें पापफल

होनेसे अशुभ फल होगा। लग्नाष्टकवर्गमें लग्नसे गुरुपर्यंत फल १३ गुरुसे लग्न-पर्यंत ३६ में शुभ फल होगा। सूर्याष्टकवर्गमें सूर्यसे लग्नपर्यंत ५ लग्नसे सूर्यपर्यंत ४३ इस वर्षमें रोगादि फल होंगे। भौमाष्टकवर्गमें भौमसे लग्नपर्यंत ४३ इसमें पापभी है इससे मृत्युभीति होगी। इस प्रकार शुभाशुभ विचारके बुद्धिमानोंने कहना ॥ १२९ ॥

मार्तण्डपुत्राष्टकवर्गमध्ये यद्यद्गृहे शून्यफलं भवेच्च। तत्तद्गमध्ये रविजेऽथ सूर्ये तदा शरीरामयपीडनं स्यात् ॥ १३० ॥

शनिके अष्टकवर्गमें जहां २ शून्य है उस २ राशिमें सूर्य वा शनि वा दोनों आवैं उस समयमें शरीर रोगपीडित होगा। यहां उदाहरणमें शन्यष्टक-वर्गमें शून्य नहीं है ॥ १३० ॥

लग्नाष्टकवर्गफलम्।

विलग्नादथो द्वादशस्थानजातं फलं जातकादौ फलं किंचि-दुक्तम्। परं निश्चयान्नोक्तमेवं विदित्वा कविर्विश्वनाथः स्फुटं तत्प्रवक्ष्ये ॥ १३१ ॥ सर्वाष्टकग्रहफलैः सुवियोज्य चक्रं मृत्त्यादिगुण्यमशुभं शुभमेव तत्र। जन्मादितः फल-समैव दशा समीक्ष्य यात्राविवाहसमये बहुमृत्युयुक्तः ॥ १३२ ॥ मेषादिभानां सकलाष्टवर्ग उत्पन्नरेखागणमेव कुर्यात् ॥ धृत्यादितत्त्वांतमितं कनिष्ठं त्रिंशावसानं किल मध्यवीर्याः ॥ १३३ ॥ त्रिंशाधिकं तूत्तमवीर्यदाः स्युः शरीरसौख्यार्थयशोविशेषः। स्वस्वाष्टवर्गे यदि वेदहीनाः क्लेशाय सौख्याय च वेदपुष्टाः ॥ १३४ ॥

१३१ वां श्लोक स्पष्टार्थ है। चक्रमें मेषादिराशियोंके जिस जिस ग्रहा-ष्टकवर्गमें है सबका योग स्थापन करके शुभाशुभ दशादिमें विचारके विवा-हादि शुभकार्य हीन फलमें न करना शून्य फलमें मृत्यु फल है। मेषादि राशियोंके समस्ताष्टकवर्ग उत्पन्न रेखायोग १८ से २५ तक हो तो कनिष्ठ ३० तक मध्यम तीससे अधिक उत्तम वीर्य शरीर सौख्य, धन, यशादि

विशेष होते हैं। अपने २ प्रत्येक अष्टकवर्गमें यदि ४ से हीन हो तो क्लेश ४ से ऊपर सुख देते हैं। उदाहरण–धनराशिके रेखा मान अष्टकवर्गमें १८। १९। २०। २१। २२। २३। २४। २५ हैं इससे ९ राशि शुभ-कार्योंमें कनिष्ठ हैं। मकरमें २६ मध्यम। मिथुन, तुला, वृश्चिकमें ये मध्यम शुभ हैं। कर्क, कुम्भ, कन्या, वृषभमें ३१। ३४। ३४। ३४ क्रमसे हैं तो कर्क शुभ और कन्या, कुम्भ, वृषभ अति शुभ हैं ये मध्यम शुभ हैं। सिंह ३७, मीन ३७, मेष ३८ उत्तमोत्तम हैं॥ १३१-१३४॥

दशमभवनरेखाभ्योऽधिकं लाभमानं भवति यदि विहीनं
स्याद्व्ययाख्यं ततोऽपि। अधिकतरविलग्नं भोगसंपत्तिभोक्ता
विनिमयवशतस्तद्वैपरीत्यं जनस्य॥ १३५॥

दशम स्थानसे लग्नपर्यंत अधिक फल होनेसे लाभ मानादि अधिक मध्यमसे मध्यम हीन फलसे भोग संपत्तिकी हानि। सबसे लग्नका फल अधिक होनेमें भोगवान् धनवान् होता है। विपरीत हो तो उस मनुष्यको उलटा फल होता है। उदाहरण–दशमें रेखा ३८ एकादशमें ३४ हीन होनेसे व्ययाधिक होगा लग्नमें रेखा ३१ अधिक होनेसे भोगवान् धनवान् होगा॥ १३५॥

प्रादक्षिण्यादिभानां सकलफलयुतिं दिक्चतुष्कक्रमेण
कृत्वा तद्भागतो यः समधिकफलतः शोभनं हानिमल्पात्।
सौम्याः स्वोच्चस्वगेहोदितखचरयुतैर्दिग्विभागे स्वकार्यं
वित्तेशाशासु वित्तं मृतिपतिगतदिग्भागगे देहनाशः॥ १३६॥

लग्नादि १२ राशियोंका सव्यमार्गसे पूर्वादिक्रमसे तीन२ राशि पूर्वादिदिशामें जाननी, जैसे १। १२। ११ पूर्व, १०। ९। ८ दक्षिण, ७। ६। ५ पश्चिम, ४। ३। २ उत्तर। प्रत्येक दिशाके ३ राशिगत फलका योग जहां अधिक हो उस दिशासे शुभ जहां हीन फल हो तहां अशुभ जानना।

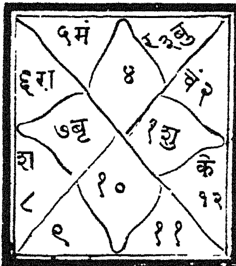
---

१ सिद्धसेनः–" मध्यात्फलाधिको लाभो मध्यात्क्षीणफलो व्ययः। यस्य रेखाधिकं लग्नं भोगवानर्थवान्भवेत्॥ " इति।

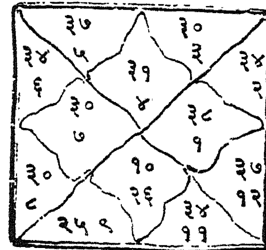
यहां फल मान त्रिगुण करना १८ । २५ । ३० त्रिगुण ५४ से ७५ पर्यंत क्षीणफल, ७५ से ९० मध्यम, ९० से ऊपर उत्तम फल जैसे लग्नादि ३ राशियोंके फल ३१ । ३० । ३४ योग ९४ नव्वेसे अधिक है पूर्वदिशामें शुभ होगा । दशमादिका योग १०९ नव्वेसे अधिक दक्षिण दिशा शुभ । सप्तमादिका ७१ पश्चिममें मध्यम चतुर्थादिका १०१ उत्तरमें शुभ जिस दिशामें भागाधिक है तहां स्वोच्चादिगत ग्रहभी हों तो उस दिशामें कार्यसिद्धि होगी । जैसे यहां पूर्वमें बुध स्वगृही सूर्ययुत चंद्रमा मूलत्रिकोणमें है तो पूर्वदिशामें कार्यसिद्धि मध्यम तथा हानिभी होगी । शुक्र स्वांशकी दक्षिणमें है तहां कार्यसिद्धि होगी इत्यादि । धनेश जिस दिशामें हो तहांसे धनलाभ अष्टकमें जहां हो उस दिशासे मृत्यु होगी ॥ १३६ ॥

भावं विलोक्य सदसत्फलदायकं तु तद्राशिसंभवफलैश्च तदुक्तपिण्डम् । निघ्नं भभक्तपरिशेषकभे प्रयाति सौरिस्तदा भवति भावफलस्य नाशः ॥ १३७ ॥

जन्मकुंडली ।



समुदायाष्टकवर्गः ।



सर्वदा शुभाशुभ फल भाव देखके उस राशिगत फलसे तदुक्त पिंड लग्नपिंड गुनके २७ से भाग लेना शेष जो बचे उस नक्षत्रमें जब शनि आवै तब उस भावोक्त फलका नाश होता है । उदाहरण—लग्नका उक्तपिंड १५२ लग्नोक्त फल ४ से गुना ६०८ और २७ से भाग लिया शेष १४ अश्विनीसे वर्तमान गणनासे चित्रागत, वर्त्तमान स्वाति इनमें जब शनि आवै तब लग्न पापग्रह-

रहित होनेसे देहकष्टमात्र होगा । तथा तृतीयभावफलभी उतनाही है तीसरे भावमें राहु है इससे चित्रा स्वातीगत शनिमें भ्रातृनाश, स्त्रीमरण होगा । ९ । ११।१२ भाव लग्नफल ४ के तुल्य हैं । सप्तम अष्टम नवम भाव पापरहित हैं इस लिये इस भाव सम्बन्धी कष्टमात्र होगा ११ भावमें ऐसाही है इससे तहांभी ऐसाही फल जानना । १२ भावमें सूर्य बुध पाप शुभ दोनोंके होनेसे मिश्र फल है । द्वितीय और पञ्चम भावस्थ फल ५ से लग्नपिंड १५२ गुना ७६० और २७ से भाजके शेष ४ रोहिणी मृगशिर नक्षत्रगत शनिमें धन, संतानकष्ट होगा । सुखस्थफल ४ से गुना ८०८ और २७ से तष्ट करके शेष २४ शतभिषा नक्षत्रगत शनिमें गृह ग्रामादि कष्ट होगा । रिपुभावस्थ फल २ से पूर्ववत् करके शेष ७ पुनर्वसु नक्षत्रगत शनिमें शत्रुसे कष्ट मिलेगा। कर्मभावस्थ फल ४ से पूर्ववत् करके शेष २१ उत्तराषाढागत शनिमें कर्म व्यापारादि कष्ट होंगे ॥ १३७ ॥

पूर्वैरुक्तं सौरिनक्षत्रकाले रिष्टं राशौ विश्वनाथस्तमाह । पिंडे रेखाताडिते भावशेषे राशौ तस्मिन् याति सौरिः समायाम् ॥ १३८ ॥ यस्यां तत्तद्भावहानिं च विंद्यात्प्राहुर्वर्षे वाथवा तत्त्रिकोणे । कृत्वा बिंदुभ्यस्तु कालं सुधीमान् तस्माद्वाच्यः प्राप्तिकालः शुभत्वे ॥ १३९ ॥

लग्नपिंड भावफलसे गुणके १२ से तष्ट करना शेष राशि सत्रिकोणगत शनिमें उस भावकी हानी जाननी । अथवा बिन्दुसे शुभत्वमें वह प्राप्तिकाल कहना । उदाहरण-लग्नपिंड १५२ लग्नस्थफल ४ से गुना ६०८ राशि १२ से भाग लिया शेष ८ सत्रिकोण ८ । १२ । ४ राशि शनिमें देहकष्ट होगा । ऐसेही धनादिभावोंकाभी फल साधन करना ॥ १३८ ॥ १३९ ॥

मृत्युभावेशभात्कोणनिघ्नं फलं मृत्युजं सूर्यशेषर्क्षगे भास्करे नाशनम् । तत्त्रिकोणेऽथवा रिष्टमासं वदेत्तातमातुर्गृहाद्येऽथवा कल्पयेत् ॥ १४० ॥ सूर्यजाल्लग्नमृत्य्वीश्वरांतं च तत्पिण्डकं

ताडितं मृत्युमानेन च । सूर्यशेषर्क्षगे भास्करे नाशनं तत्त्रिकोणेऽथवा स्याद्विधिः सर्वतः ॥ १४१ ॥

अष्टमेश जिस राशिमें है उसके त्रिकोणशोधित फलसे अष्टमस्थ गुनना १२ से शेष करना, शेष राशि तत्रिकोणसहित मासमें अरिष्ट कहना । अथवा मातृपितृभावसे करना जैसे अष्टमेश शनि वृश्चिकमें है इसके त्रिकोणशोधन फल १ से अष्टमस्थ फल ४ गुना ४ राशि तष्ट शेष ४ सत्रिकोण ४ । ८ । १२ राशिगत सूर्यमें अरिष्ट मास कहना ॥ १४० ॥ शनिसे लग्न अष्टमेशके अंतर्गत फल जोडके मृत्युभावस्थ फलसे गुनना १२ से तष्ट करके शेष राशि सत्रिकोणगत सूर्यमें नाश कहना । सर्वत्र ऐसा जानना । उदाहरण—सूर्यज (शनि) से लग्न और मृतीश्वर शनिही है इस लिये तत्रस्थ पिण्डित फल ५ मृत्युभाव फल ४ से गुना २० सूर्य १२ से शेष किया तो ८ रहा सत्रिकोण ८ । १२ । ४ राशिगत सूर्यमें रिष्ट होगा ॥ १४१ ॥

मीनाद्यं मिथुनांतकं प्रथमकं प्रोक्तं वयः प्राक्तनैः
कर्काद्यं वणिजांतकं तरुणतासंज्ञं च मध्यं बुधैः ।
कुम्भांतं स्थविरान्तकं च बहुभिर्यत्सत्फलैः संयुतं
तत्सौख्यार्थविशेषकं बलयुतेनायं विशेषाच्छुभम् ॥ १४२ ॥

मीनादिसे मिथुनान्तपर्यंत १२ । १ । २ । ३ प्रथमावस्था, ४ । ५ । ६ । ७ तरुणावस्था, ८ । ९ । १० । ११ वृद्धावस्था जाननी, जो जो राशि रेखाविशेषवाली है उसके उक्त अवस्थामें सौख्य धनादि विशेष जानने । जिसमें बली ग्रहभी हो उसमें औरभी विशेष शुभ जानना । जैसे मीनादिसे मिथुनांततक रेखायोग १३९ यह परमायुक्षेपक १२० से अधिक होनेसे पहिली अवस्थामें सौख्यार्थ विशेष होंगे तथा शु० चं० बु० सू० से युक्त होनेसे औरभी विशेष होगा तथा कर्कादिसे तुलांततकका फलैक्य ११५ परमायु १२० में कम किया तो उत्तर वयमें सौख्यार्थ मध्यम होंगे ॥ १४२ ॥

राहुयुक्तगुरुराशिगे गुरौ तत्त्रिकोणमपि रिष्टकारकम् ।
अल्पमृत्युरिपुनायकयोगर्क्षे शनौ मरणयोगसंभवः ॥ १४३ ॥

जिसके जन्मलग्नमें ९ । १२ राशिका राहु हो तो उस राशिमें जब गुरु जावै तब अरिष्ट संभव कहना, उसके त्रिकोणमें भी विकल्पसे जानना । अथवा जिस किसी राशिमें राहुयुक्त गुरु हो उस राशि सत्रिकोणगत शनिमें अरिष्ट संभव कहना । षष्ठेश जिस राशि नक्षत्रमें है उस राशि नक्षत्र सत्रिकोणगत शनिमें मरण संभव कहना । उदाहरण—यहां षष्ठेश गुरु तुला राशि, स्वाती नक्षत्रमें है तुला स्वातीगत शनिमें सत्रिकोणमें अल्पमृत्यु संभव कहना । उक्त मृत्युसमयमें यदि कोई प्रबल दीर्घायु योग हो जिससे अल्पमृत्यु न होसके तो अपने समान किसीकी मृत्यु होगी ऐसा कहना ॥ १४३ ॥

लग्नेन्दुतस्त्रिंशतिमे दृकाणे गुरौ त्रिकोणेऽपि तदीश्वरस्य ।
वर्षे विवादं परदेशयानं शरीरपीडा मृतिसन्निभा स्यात् ॥ १४४ ॥

यदि चन्द्रमासे या लग्नसे तीसवें द्रेष्काणमें गुरु हो तो उस द्रेष्काणका जो अधिपति है उसके त्रिकोणमें जब शनि जावै उस वर्षमें विवाद, परदेश-गमन, शरीरपीडा मृत्युतुल्य होती है ॥ १४४ ॥

मृत्युपद्वादशांशत्रिकोणेऽसुरो मृत्युनाथस्त्रिकोणस्थसूर्ये मृतिः ।
अर्कलिप्ताहतो राहुलिप्तागणश्चक्रलिप्ताप्तयुक्तो रविर्मृत्युदः
॥ १४५ ॥ भौममार्तण्डलिप्ताहतिः कारयेच्चक्रलिप्ताहताल्लब्ध-
युक्तो रविः । याति यस्मिंस्तदा तत्त्रिकोणेऽपि वा क्लेशमाहुः
क्षयं मासि धीमान् वदेत् ॥ १४६ ॥

अष्टमेश जिस द्वादशांशमें है उसके त्रिकोणमें राहु जब जावै उस अवसरमें अष्टमेशगत राशिके त्रिकोणस्थ सूर्यमें मृत्यु कहनी और कहते हैं कि, राहुका लिप्तापिंडको सूर्यके लिप्तापिंडसे गुनना चक्रलिप्तासे भाग देनेसे जो मिले वह सूर्यलिप्तापिंडमें जोडना उसके राश्यादि करके उसके तुल्य सूर्यमें मरण होगा।

उदाहरण—जन्मलग्नसे अष्टमेश शनि पांचवें मीनके द्वादशांशमें है इसके त्रिकोण १२ । ४ । ८ में जब राहु आवै तब अष्टमेशगत राशि त्रिकोण ८।१२।४ राशिके सूर्यमें मृत्यु होगी और सू० २ । ४ । २८ । ० लिप्ता-पिंड ३८६८ से राहु लिप्तापिंडको ९३५६ गुना ३६१८९००८ चक्र-लिप्ता २१६०० (१२ राशिकी लिप्ता) से भाग लिया १६७५ कला मिली शेष ९००८ षष्टिगुणित ५४०४८० चक्रलिप्तासे भाग लिया २५ विकला हुई कलादिफल १६७५ । २५ में अर्कलिप्तापिंड ३८६८ मिलाया ५५ । ४३ । २५ इसके राश्यादि ३ । २ । २३ । २५ इस स्पष्टमें जब सूर्य आवैगा तब मृत्यु होगी । भौममार्तंडेति सूर्य लिप्ता ३८६८ भौमलिप्ता ७६७७ इनका गुणन २९६१७२७६ चक्रलिप्ता २१६०० से भाग लिया १३७१।१० कलादि मिले यह अर्कलिप्ता ३८६८ में जोडा ५२३९।१० राश्यादि २ । २७ । १९ । १० इस स्पष्टतुल्य सूर्यमें क्लेश एवं क्षय होगा अथवा उसके त्रिकोणमें होगा ॥ १४५ ॥ १४६ ॥

निधनेशद्वादशांशत्रिकोणे भास्करे मृतिः ।
निधनेशत्रिकोणे वा सूर्यादिष्वागतेष्वपि ॥ १४७ ॥
षष्ठाष्टमव्ययेशानां स्फुटयोगगते शनौ ।
मृतिं तत्र विजानीयात्तत्रिकोणगतेऽपिवा ॥ १३८ ॥

लग्नसे अष्टमेशके द्वादशांशके त्रिकोणमें जब सूर्य जावै तब मरण होगा। अथवा अष्टमेशके त्रिकोणगतमें होगा ॥ १४७ ॥ षष्ठाष्टमव्ययभावेशोंके स्पष्ट योगमें जब शनि हो तब अथवा उससे त्रिकोणगतमें मरण जानना ॥ १४८ ॥

अष्टमेशत्रिकोणे विधुः स्याद्यदा योगमिन्दौ तथा तन्नवांशे-ऽपिवा । तत्रिकोणे प्रयाते मृतिं निर्दिशेन्निश्चयात्स्वल्परेखो-द्भवे वासरे ॥ १४९ ॥

अष्टमेशके त्रिकोणमें जब चन्द्रमा योग करे अथवा अष्टमेशगत नवांशके त्रिकोणमें चन्द्रमा जावै उस दिन अल्प रेखाभी होवै तो मृत्यु निश्चय कहनी ॥ १४९ ॥

निधनलग्नमाह ।

जन्मलग्नेन्दुगा नंदभागा क्रमाद्वेदषष्ट्यंशराशौ प्रयाते तनौ ।
मृत्युजन्मांगनीचोदये शून्यगे दुष्टपाकोदये देहमुक्तिर्भवेत् ॥१५०॥

मरणलग्न कहते हैं-कि, जन्मलग्न जन्मचंद्रके नवांशक क्रमसे ६४ नवांशतुल्य राशिमें जब लग्न वा चन्द्रमा जावै तब शरीर छूटेगा अथवा उच्चसे सप्तम नीच होता है मृत्युनीचोदय सिंह जन्मलग्न नीचोदय सप्तम मकर यहां जब लग्न आवै उस समय लग्नमें फल शून्य हो तथा दुष्टग्रहकी दशाभी हो तब शरीर छूटेगा । उदाहरण-ल० ३।८।५।५।० चं० १।८। १५।० नवांश ३।२० मान ६० से गुना २०० अंश ३० से भाजे तो राशि ७ इससे युक्त लग्न १०।८।४५।० चंद्र ८।८।१५।० लग्नका ६५वाँ नवांश ११ चंद्रका ९ इनमेंसे किसी लग्नमें मृत्यु होगी अथवा लग्नसे अष्टम राशि ११ इससे सप्तमसिंहमें तथा जन्मलग्न ४ इससे सप्तम १० लग्नमें मृत्यु होगी यहां उदाहरणमें दोनों स्थानोंमें शून्यफल नहीं होनेसे यहाँ यह मृत्युलग्न संभव नहीं है ॥ १५० ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुंजराजोदिते च ।
होरासारे शंभुहोराप्रकाशे सम्पूर्णेयं ह्यष्टवर्गे फलोक्तिः ॥ १५१ ॥

इति श्रीपुंजराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशेऽष्टकवर्गफलाध्यायो नवमः ॥ ९ ॥

इस श्लोकका अर्थ पूर्वप्रतिपादितही है विशेष अष्टवर्गफलाध्याय पूर्ण भया ॥ १५१ ॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायामष्टकवर्गफलाध्यायो नवमः ॥ ९ ॥

अथ दशान्तर्दशाफलाध्यायः १० ।

यद्राजयोगजनितं त्वथ भावजातं यद्दिष्टयोगजफलं गदितं पुराणैः ॥ सर्वं च तत्किल दशाफलगं भवेच्च तेनाऽधुना फलमलं कथयामि सम्यक् ॥ २ ॥ आद्या दशा चेत्किल

भास्करस्य तातांबिकाविघ्नकरी नराणाम् । तथा तनोः क्लेशकरी नितांतं ज्ञानार्थदात्री शशिनो दशाऽऽद्या ॥ २ ॥ लाभत्रिषट्स्थानगतैः समस्तैः शुभैः सुखार्थाश्च भवन्ति बाल्ये । तत्रस्थपापैर्वयसा विरामे भवन्ति जायार्थसुखानि सम्यक् ॥ ३ ॥

जो पूर्वाचार्योंने राजयोगसे भावफलसे अरिष्टयोगसे ग्रहोंके फल कहे हैं उन सबका फल दशामें होता है, इससे दशाफल इस समय कहताहूं ॥ १ ॥ यदि प्रथमा दशा सूर्यकी होवै तो मनुष्योंके पितामाताको विघ्न करनेवाली होती है, लग्नदशा प्रथमा होवै तो बराबर क्लेश करती है, यदि चंद्रदशा प्रथमा हो तो ज्ञान एवं धन देनेवाली होती है ॥ २ ॥ यदि ११।३।६ स्थानोंमें शुभग्रह सभी होवैं तो सुख धनादि बाल्यावस्थामें होते हैं, इन स्थानोंमें पाप ग्रह हों तो पिछली अवस्थामें स्त्री धन सुख अच्छे प्रकारसे होते हैं ॥ ३ ॥

स्वोच्चे स्वर्क्षे वा त्रिकोणे स्ववर्गे मित्रर्क्षे वा संस्थितः कंटके वा ।
नास्तं यातो नाशुभैर्दृष्टयुक्तो जन्मेशः स्याच्छोभनः स्वीयपाके ॥४॥
नीचारिराशिस्थितखेचरस्य स्वर्क्षोच्चमित्रांशगतस्य नूनम् ।
आद्ये दले मिश्रफला दशा सा पुंसां परार्द्धेऽप्यतिशोभना स्यात्॥५॥

जन्मलग्नेश अपने उच्च स्वराशि मूलत्रिकोण नवांश मित्रर्क्ष वा केन्द्रमें हो अस्तंगत वा पापयुक्त दृष्ट न हो तो अपनी दशामें शुभ फल देता है ॥ ४ ॥ जो नीच शत्रु राशिमें हो तथा अपने राशि उच्च मित्रांशकमें हो तो पूर्वार्द्धमें मिश्रित फल परार्द्धमें अतिशुभ फल मनुष्योंको देता है ॥ ५ ॥

स्वर्क्षस्वमित्रोच्चगृहस्थितानां नीचारिभागस्थितखेचराणाम् ।
पूर्वे विभागे तु शुभा भवेत्सा दशा परार्द्धे मनुजस्य मिश्रा ॥ ६ ॥
पंकेरुहेशस्य दशाफलानां द्विजाधिराजः खलु बोधकर्ता ।
विकर्त्तनेन्द्वोर्वशगाश्च सर्वे ताराग्रहाः स्युः सदसत्फलाय ॥ ७ ॥
स्वोच्चादिमित्रस्वगृहस्थितस्य यद्वा नवांशत्रिलवोपगस्य ।
षष्ठाष्टमद्वादशवर्जितस्य पाके ग्रहस्याखिलकार्यसिद्धिः ॥ ८ ॥

स्वराशि, मित्र, उच्च राशिगत ग्रह यदि नीच शत्रु अंशकोंमें हो तो दशा पूर्वार्द्धमें मनुष्यकी शुभ परार्द्धमें मिश्र होती है ॥ ६ ॥ सूर्यकी दशाफलोंका (बोध) उत्तेजन करनेवाला चन्द्रमा है, सूर्य चन्द्रमाके वशीभूत शुभाशुभ फलके लिये सभी ग्रह हैं ॥ ७ ॥ जो ग्रह उच्चादिमें यद्वा मित्रस्वगृहगत वा स्वीयनवांश द्रेष्काणमें है ६ । ८ । १२ भावमें नहीं है उसकी दशामें समस्त कार्योंकी सिद्धि होती है ॥ ८ ॥

चन्द्रादिकानामखिलग्रहाणां दशा तु मूढांशपरिच्युतानाम् ।
शुभा स्मृता तद्विपरीतगानां होरागमज्ञैरतिदुःखदा सा ॥ ९ ॥
अस्ताधिरूढस्युचरस्य पाके धनस्य नाशं रिपुरोगभीतिम् ।
लोके महत्त्वापचयत्वमेव दुःखान्यनेकानि भवंति नूनम् ॥ १० ॥
खेटस्य मूढांशपरिच्युतस्य पाके नराणां बहुसाहसत्वम् ।
हर्षोदयं भूमिपतेः प्रसादं धनागमं कांतिविवर्धनं च ॥ ११ ॥
अर्यध्यरिक्षेत्रनवांशगस्य ग्रहस्य पाके रिपुरोगभीतिः ।
भवेन्नृपात्तस्करतः कलेर्वा धनस्य नाशः परदेशयानम् ॥ १२ ॥

अस्तांशरहित चन्द्रादियोंकी दशा शुभ, उससे विपरीत गतोंकी दशा अतिःदुख देनेवाली कही है ॥ ९ ॥ अस्तंगत ग्रहकी दशामें धननाश, रिपु रोग-भय, संसारमें अवनति, अनेक दुःख निश्चय होते हैं ॥ १० ॥ जो ग्रह उदय हो गया है उसकी दशामें बहुत साहसता, हर्षका उदय, राजप्रसाद, धनागम और कांतिवृद्धि होती है ॥ ११ ॥ शत्रु अधिशत्रु नवांशगत ग्रहदशामें रिपुरोगभीति तथा राजा, चोर वा कलहसे धननाश और परदेशगमन होता है ॥ १२ ॥

स्वर्क्षादिमित्रोच्चगृहस्थितस्य यद्वापि तन्नंदलवोपगस्य ।
ग्रहस्य पाकेऽभिमतार्थसिद्धिर्भूपप्रसादो धनधान्यवृद्धिः ॥ १३ ॥
स्वर्क्षे स्वतुंगे तनुगः सुरेज्यो दुश्चिक्यधर्मायगतः प्रसूतौ ।
करोति राज्यं स्वकुलानुमानादुत्कर्षयुक्तं निजपाककाले ॥ १४ ॥
स्त्रीपुत्रमित्रोपचयं च कर्म कुलीरगोऽब्जः कुरुते दशायाम् ।
त्रिदोषकारी निधने कुजर्क्षे जायापशूनां निधनोपकीर्तिः ॥१५ ॥

सन्मित्रविद्याधिषणाधिकत्वं करोति यानं शशिजस्य राशौ।
गुरोर्गृहे मानसुखास्पदार्थलाभं दशायां कुरुते मृगांकः॥ १६॥
ग्रहस्य पाकेऽप्यनुलोमगस्य सौभाग्यसन्मानयशःप्रवृद्धिः।
कांतासुतप्रीतिरतीव नित्यं देवद्विजार्चा नृपतिप्रसादः॥ १७॥

स्वराश्यादिगत मित्र उच्च राशि यद्वा उसके नवांशगत ग्रहकी दशामें अगणित अर्थ (प्रयोजन) सिद्धि, राजप्रसाद, धन, अन्नकी वृद्धि होती है॥ १३॥ स्वराशि स्वोच्चगत गुरु लग्नमें वा ३।९।११ भावमें हो तो दशामें अपने कुलानुमान राज्य बडप्पनयुक्त करता है॥ १४॥ कर्कका चंद्रमा स्वदशामें स्त्री पुत्र मित्र वृद्धि, उत्तम कर्म करता है। मंगलकी राशिमें अष्टम हो तो त्रिदोष तथा स्त्री पशु मरण और अपकीर्ति करता है॥ १५॥ बुधकी राशिमें सन्मित्र विद्या बुद्धिकी अधिकता तथा सवारी देता है। गुरुकी राशिमें हो तो स्वदशामें मान, सुख, गृह, धनका लाभ करता है॥ १६॥ यदि वह वक्री ग्रह उच्चादि राशिगत होवै तो सौभाग्य (उत्तम ऐश्वर्य), सन्मान, यशकी वृद्धि, स्त्रीपुत्रप्रीति, नित्य देव ब्राह्मणपूजन, राजप्रसाद मिलते हैं॥ १७॥

कांताविलासं विविधार्थलाभं प्रीतिं च सौख्यं भृगुजस्य राशौ।
स्त्रीपुत्रवादं विविधार्थलाभं करोति चंद्रः खलु सूर्यगेहे॥ १८॥
दुर्गारण्यनिवासं च निर्माणं गोगृहस्य च।
कुर्यान्मन्दगृहे चन्द्रः समीरजनितव्यथाम्॥ १९॥

शुक्रराशिका चन्द्रमा अपनी दशामें स्त्रीविलास, अनेक प्रकार धनलाभ, प्रसन्नता, सुख देता है। सूर्यकी राशिमें स्त्री पुत्रोंसे विवाद, अनेक प्रकार धनलाभ करता है॥ १८॥ शनिराशिका चंद्रमा स्वदशामें किला वनका वास, गोशालाका निर्माण और वायुरोगजनित पीडा करता है॥ १९॥

वक्रोपयातद्युचरस्य पाके सन्मानसौख्यापचयं करोति।
निजस्थलाच्चंचलनत्वमेति सुहृद्विरोधं परदेशयानम्॥ २०॥

नीचर्क्षयातस्य विलोमगस्य पाके कुकर्माभिरतिर्मनुष्यः ।
प्रवासशीलो निजबंधुवर्गैस्त्यक्तो भवेदग्निहताभियुक्तः ॥ २१ ॥
खेटस्य सिंहीसुतसंयुतस्य शुभा दशा साप्यतिरिष्टदा स्यात् ।
दशावसाने परदेशयानं दुःखानि हानिर्ननु मानवानाम् ॥ २२ ॥

वक्री ग्रहकी दशामें सन्मान, सुखकी हानि, अपने स्थानसे चंचलता, मित्रविरोध तथा परदेशगमन होता है ॥ २० ॥ नीचराशिगत वक्री ग्रहकी दशामें मनुष्य कुकर्ममें रति रखता है, प्रवासमें रहता है, निज बन्धुसे त्यक्त, अग्निसे पीडित रहता है ॥ २१ ॥ राहुयुक्त ग्रहकी दशा शुभभी अरिष्ट देती है, दशाके अंत्यमें परदेशवास दुःख, हानि मनुष्योंको होते हैं ॥ २२ ॥

लग्नाधिनाथस्य मृतिस्थितस्य स्यात्तद्दशायामतिपीडनं च ।
पाकावसानेऽपि मनूद्भवानामायुः प्रपूर्णत्वमुपैति नूनम् ॥ २३ ॥
स्वमित्रतुंगोपचयत्रिकोणे वा सप्तमस्थः कुरुते मृगांकः ।
पाकेश्वरात्सत्फलदां दशां च होरागमज्ञैः परिचिंतनीयम् ॥ २४ ॥
अनुक्तकस्थानगतः कलावान् पाकेश्वरादत्र नरस्य सूतौ ।
स्वोच्चादिसत्स्थानगतस्य वापि न पूजिता तस्य भवेद्दशा सा ॥२५॥

अष्टमगत लग्नेशकी दशामें अतिपीडन तथा मनुष्यकी दशाके अंतमें निश्चय आयुभी पूर्ण होती है ॥ २३ ॥ अपने मित्र, उच्च, उपचय, त्रिकोण, अथवा सप्तममें दशेशसे चन्द्रमा होवै तो दशाको शुभफल देनेवाली करता है ॥ २४ ॥ यदि दशेशसे चंद्र उक्त स्थानोंसे अन्यमें होवै तो उच्चादि शुभस्थानगतकी भी शुभ नहीं होती ॥ २५ ॥

पाकवेशे स्फुटाः खेचराः सांगकाः कारयेत्तत्र पाकेश्वरः स्याद्यदा ।
लग्नदुश्चिक्यखायारिभस्थस्तनोर्मित्रवर्गस्थितःशोभना सा दशा॥२६
कीर्तितं वत्सराद्यैर्दशावेशके यैस्तु सम्यक्फलं लग्नखेटोद्भवम् ।
लिप्तया पंचमांशोनघस्रद्वयं चायुरायाति तेभ्यो महद्भ्यो नमः ॥२७॥

स्वस्ववर्गाष्टके यत्र राशिस्थितः खेचरस्तत्र रेखाफलं स्याद्यदा ।
पंचमाद्यष्टमांतं तदा तद्दशा शोभना कीर्तिता सिद्धसेनादिभिः२८॥
वेदतुल्यं समा तद्विहीनेऽशुभा शून्यराशौ भवेच्छून्यरूपा दशा ।
इष्टकष्टाधिके शोभना निंदिता चेष्टकष्टस्य साम्ये स्मृता मध्यमा२९

दशाप्रवेशसमयके लग्न सहित सब ग्रहोंके स्पष्ट करके दशेश १ । ३ । १० । ११ । ६ में मित्रके वर्गमें हो तो दशा शुभ होती है ॥ २६ ॥ दशा एक कलाभें पंचमांश कम दो दिन ग्रहायु आती है, ऐसी स्थितिमें जिन आचार्योंने प्रवेशमें वर्षादिसे लग्नग्रहोद्भव फल सम्यक् कहे हैं उन महानुभावोंको नमस्कार है ॥२७॥ अपने २ अष्टकवर्गमें जिस राशिमें ग्रह हैं उसमें यदि रेखाफल ५ से ८ तक हो तो वह दशा सिद्धसेनादियोंने शुभ कही है ॥२८॥ यदि रेखाफल ४ हों तो समफल और चारसे न्यून हो तो अशुभ तथा शून्यमें शून्यरूपादशा होती है, इसी तरह इष्ट अधिक होनेमें शुभ तथा कष्ट अधिक होनेमें अशुभ और इष्टकष्टके समान होनेमें दशा मध्यम होती है॥ २९॥

भ्रष्टस्य तुंगादवरोहिसंज्ञा आरोहिणी निम्नपरिच्युतस्य ।
दशा ग्रहाणामशुभा शुभाख्या नीचारिभांशेऽपि च कष्टदात्री॥३०॥
वलक्षपक्षाद्यतिथेर्हिमांशोः पूर्णांतमारोहिणिका निरुक्ता ।
मणित्थपूर्वैश्च सितेतरादेरमांतकं साप्यवरोहिणी स्यात् ॥ ३१ ॥
एकद्विषट्कोणगता ग्रहेन्द्रा अधोमुखास्तेऽप्यवरोहसंज्ञाः ।
तथोर्द्ध्ववक्त्राः परषट्कसंस्था आरोहसंज्ञाः कथिताः पुराणैः ॥ ३२ ॥
आरोहिणी स्यादनुलोमगानां विलोमगानामवरोहिणी च ।
ताराग्रहाणामपि सम्यगेवं भेदं पुराणैस्त्रिविधं निरुक्तम् ॥ ३३ ॥

या साऽऽरोहावरोहाख्या खेटानां द्विविधा दशा ।
सिद्धसेनमणित्थाद्यैः प्रागुत्तरफला स्मृता ॥ ३४ ॥

नूनमारोहिणी खेचराणां दशा मानवानां विशेषार्थसिद्धिप्रदा ।
एवमत्रावरोहा विलंबप्रदा बुद्धिमांद्यं च सर्वेषु कार्येष्वपि ॥ ३५ ॥

उच्चसे उतर गया जो ग्रह उसकी अवरोही और नीचेसे चला जो ग्रह उसकी आरोही संज्ञा है, आरोही शुभा अवरोही अशुभा दशा होती है, नीच और शत्रुके अंशमें स्थित ग्रहकी दशा कष्ट देती है ॥ ३० ॥ यह सामान्यारोहावरोह कहा, चंद्रमाका विशेष है कि, शुक्लप्रतिपदासे पूर्णमासी पर्यंत आरोही और कृष्णप्रतिपदा १ से अमापर्यंत अवरोही होती है ॥ ३१ ॥ अन्य ग्रहोंका विशेष कि, जो ग्रह सूर्य आद्य षट्क प्रथम ६ भावोंमें हैं वे अधोमुख अवरोही और उत्तरषट्कगत ऊर्ध्वमुख वा आरोहसंज्ञक कहे हैं॥ ३२॥ जो ग्रह वक्री है वह अवरोही और जो मार्गी है वह आरोही होता है अर्थात् वक्री ग्रह आरोहीके जगह अवरोही, अवरोहीके जगह आरोही होता है, ये तीन भेद पुराणाचार्य्योंने कहे हैं ॥ ३३ ॥ यह जो आरोहा और अवरोहा दो प्रकारकी दशा है सो आरोही पूर्व और अवरोही पिछे फल देनेवाली सिद्धसेन मणित्थादिकोंसे कही गई है ॥ ३४ ॥ निश्चय है कि, आरोहिणी ग्रहदशा मनुष्योंको विशेषकरके अर्थ सिद्धि देती है; ऐसेही अवरोहिणी विलंबसे फल तथा सब कामोंमें बुद्धि मंद करती है ॥ ३५ ॥

इति सामान्यशुभाशुभदशाविचारः ।

अथ सूर्यदशाफलम् ।

पङ्केरुहेशस्य दशाविपाके भवेन्नराणां परदेशवासः ।
भूपाललक्ष्म्यायुधविप्रवर्यैर्भैषज्यतो वा बहुधा धनाप्तिः ॥ ३६ ॥
मंत्राभिचारादिरतो नितांतं भूमीपतेः सख्यविधिर्विशेषात् ।
विख्यातधर्माभिरुचिर्मतिः स्याद्बहुप्रजल्पे समरे च चिन्ता ॥ ३७ ॥
ऋणं च नेत्रोदरदन्तपीडा स्त्रीपुत्रमित्रादिवियोगचिन्ता ।
भूपारिचौरानलबंधुवर्गैः स्याद्वा कलिः स्वीयकुलोद्भवैश्च ॥ ३८ ॥

सूर्यदशाके सामान्य फल हैं कि, इसकी दशामें परदेशवास, राजा, धन-व्यापार, आयुध, ब्राह्मणश्रेष्ठ, औषधिसे बहुधा धनप्राप्ति होवै ॥ ३६ ॥ सर्वदा

मंत्राभिचार (जादूगरी) में तत्पर रहे, राजासे [illegible], विख्याति, धर्म-रुचि, बहुत [illegible]की वुद्धि मिले, संग्राममें चिंता होवे ॥ ३७ ॥ ऋण हो, नेत्र, पेट, [illegible] पीडा । स्त्री, पुत्र, मित्रादियोंका वियोग चिन्ता, राजा, शत्रु, चोर, [illegible] भय, बंधुवर्ग तथा अपने कुलवालोंसे कलह होवै॥ ३८॥

प्रद्योतनस्योच्चगतस्य पाके स्त्रीपुत्रसौख्यं निजलब्धवित्तम् ।
स्याद्धर्मकर्माभिरुचिर्विशेषात्तातार्जितस्थानधनादिलाभः ॥ ३९ ॥
उच्चान्निवृत्तस्य दशा खरांशोः शिरोक्षिरोगं स्वजनैर्विरोधम् ।
हानिं पशूनां नृपतेर्भयं च करोति कष्टं विविधं नराणाम् ॥ ४० ॥
रवेर्दशायां वृषभस्थितस्य चतुष्पदस्त्रीसुतसौख्यहानिः ।
हृद्रोगनेत्रामयसंयुतः स्यात्सुहृद्विरोधानुरतोऽभिमानी ॥ ४१ ॥

उच्चगत सूर्य जबतक आरोही मेषके १० अंशके भीतर है तबतक उसकी दशामें स्त्री, पुत्र, एवं अपने कमाये धनका सुख, धर्म कर्ममें रुचि, विशेषतः पिताके कमाये स्थान धन आदिका लाभ होवै ॥ ३९ ॥ उच्च मेषके १० अंशसे उतरे सूर्यकी दशामें शिर नेत्ररोग, अपने मनुष्योंसे विरोध, पशुहानि, राजासे भय और अनेक कष्ट मनुष्योंको करता है ॥ ४० ॥ वृषगत सूर्य-दशा चतुष्पद, सुत, स्त्रीके सुखसे हीन, हृदय नेत्र रोग, मित्रविरोधमें तत्परता और अभिमान देती है ॥ ४१ ॥

सच्छास्त्रसत्काव्यकलाकलापे सद्वाग्विलासे नितरां प्रवीणः ।
सदर्थसद्वाहनधान्ययुक्तो युग्मोपयातस्य रवेर्दशायाम् ॥ ४२ ॥
भूपालसम्मानधनो विनीतस्तातांबिकाबंधुजनैर्वियुक्तः ।
स्त्रीनिर्जितः स्यान्मनुजोऽनिलात्मा कर्कोपयातस्य रवेर्दशायाम् ४३
हंसस्य कंठीरवगस्य पाके भूपालतुल्यः सुतदारतुष्टः ।
नरो विनीतो विविधार्थयुक् स्यादारण्यदुर्गाच्च कृषिक्रियादेः ॥ ४४ ॥

मिथुनगत रविदशामें अच्छे शास्त्र सुकाव्य कलासमूहमें सद्वाणीके विला-समें अत्यन्त प्रवीणता रहै, सद्धन सुवाहन अन्नसे युक्त रहै ॥ ४२ ॥ कर्क-

गत सूर्यदशामें राजसम्मान धनसे युक्त, नम्र, माता पिता बंधु वर्गसे पृथक्ता तथा स्त्रीसे जीता रहे, वायुप्रकृति होवै ॥ ४३ ॥ सिंहगत रविदशामें राजतुल्य होवै, स्त्री पुत्रोंकरके प्रसन्न रहे, नम्र होवै, अनेक प्रकार धन वन, किला, कृषिकर्म आदिसे मिले ॥ ४४ ॥

योषाजने मान्यपरो नितांतं तुर्याङ्घ्रिकन्याजननार्थयुक्तः ।
देवद्विजार्चाभिरतो दशायां कन्याधिरूढस्य सरोजबन्धोः ॥ ४५ ॥
नीचाधिरूढस्य रवेर्दशायां जायासुतक्षेत्रधनादिचिंता ।
भयं च चौरानलजं नराणां नीचत्वमुच्चैः परदेशयानम् ॥ ४६ ॥
दशा रवेर्नीचपरिच्युतस्य धनं नृपालात्परवंचनं च ।
करोति जायाजनितं च दुःखं नीचैः सखित्वं खलु मानवानाम् ॥४७॥

कन्यागत सूर्यदशामें स्त्रीजनसे मान्यतामें सर्वदा तत्पर रहै, कन्याजन्म, धनयुत, देवब्राह्मण पूजनमें तत्पर रहे ॥ ४५ ॥ तुलाके १० अंश भीतरगत रविदशामें स्त्री, पुत्र, खेती आदिकी चिंता, चोर अग्निसे भय तथा मनुष्योंको नीचता और परदेशगमन मिले ॥ ४६ ॥ तुला १० अंशसे ऊपरकी रविदशा राजासे धन, परायोंको ठगना, स्त्रीसे उत्पन्न दुःख, नीचजनोंसे मैत्री निश्चय मनुष्योंको करती है ॥ ४७ ॥

सरीसृपस्थस्य रवेर्दशायां तेजोधिकः स्यान्मनुजः प्रतापी ।
गरानलाद्यैः परिपीडनं च तातेन मात्रा गतचित्तशुद्धिः ॥ ४८ ॥
संगीतशास्त्रश्रुतिनिष्ठचित्तः स्याद्गौरवं भूपकुलाद्द्विजेभ्यः ।
स्त्रीपुत्रमित्रद्रविणादिसौख्यं शरासनस्थस्य रवेर्दशायाम् ॥ ४९ ॥
कलत्रपुत्रद्रविणादिचिंता भवेत्त्रिदोषामयसंभवश्च ।
परस्य कार्याभिरतिर्नराणां रवेर्दशायां मकरस्थितस्य ॥ ५० ॥
पाके घटस्थस्य विकर्तनस्य पैशुन्यहृद्रोगयुतोऽल्पवित्तः ।
परान्नभुक् स्त्रीसुतबंधुवर्गैर्भवेन्नराणां कलहो नितांतम् ॥ ५१ ॥
पाके झषस्थस्य सहस्ररश्मेः स्त्रीपक्षलब्धं धनमानसौख्यम् ।
स्याद्दाहनाशिर्नृपतेः सुतानां चिंता नराणां विषमज्वरार्तिः ॥ ५२ ॥

वृश्चिकगत सूर्यदशामें मनुष्य प्रतापी तेजस्वी होवै । विषाग्नि आदि पीडा और माता पितासे चित्तशुद्धि होवै ॥ ४८ ॥ धनगत रविदशामें गायनशास्त्र वेदमें चित्तकी निष्ठा रहै, राजकुल तथा ब्राह्मणोंसे गुरुता मिले, स्त्री पुत्र मित्र धनका सुख होवै ॥ ४९ ॥ मकरगत रविदशामें स्त्री पुत्र धनादि चिंता, त्रिदोष रोग, परकार्य करनेमें प्रीति होवै ॥ ५० ॥ कुंभगत रविदशामें पिशुनता, हृदयरोग, अल्पधनता, परान्नभोजन, स्त्री पुत्र बंधुसे विरोध सर्वदा होवै ॥ ५१ ॥ मीनगत रविदशामें स्त्रीपक्षसे धन मान सुख, राजासे वाहनका लाभ और पुत्रपक्षकी चिन्ता, विषमज्वरकी पीडा होवै ॥ ५२ ॥

स्वोच्चोपयातस्य मृतिस्थितस्य रवेर्दशा दोषकरी नराणाम् ।
षष्ठस्थितस्य व्रणजातपीडा ताताम्बिकादोषविवृद्धिकर्त्री ॥ ५३ ॥
नीचस्थितस्याष्टमभागवस्य भानोर्दशा रिष्टकरी नितांतम् ।
व्रणादिपीडा रिपुभावगस्य पित्रोश्च पीडा विविधाऽवगम्या ॥५४॥

उच्चस्थ अष्टम रविकी दशामें मनुष्योंको दोष करती है । छठेमें उच्चका होवै तो उसकी दशामें व्रणसे उत्पन्न पीडा और माता पिताका दोष बढाती है ॥ ५३ ॥ नीचराशि अष्टमभावगत रविदशा निरंतर रोग करती है । छठा हो तो व्रणादि पीडा तथा माता पिताको अनेक प्रकारकी पीडा जाननी॥५४॥

अथ चंद्रदशाफलम् ।

द्विजाधिपे प्राप्तबलाधिरूढे द्विजेश्वरारोहगता ग्रहेंद्राः ।
असत्फलास्ते शुभमेव दद्युस्त्वेवं रवेः शीतकरो यथैव ॥ ५५ ॥
आदित्यशीतद्युतियोगकाले मंत्री भवेद्भूपसमोऽतिमानी ।
भूदेववृन्दारकमंत्रमुख्यैर्द्धनी कलाज्ञो विभवैः समेतः ॥ ५६ ॥
आरोहत्रितययुता दशा हिमांशोः सर्वार्थोपचयकरी तु संप्रदिष्टा ।
मर्त्यानां सकलजनेषु मानदात्री भूपालाद्युवतिजनाच्च वित्तकर्त्री॥५७
चंद्रस्याधिकृतमयूखपाककाले सन्मानं विविधमलं भवेन्नराणाम् ।
मंत्रित्वं धरणिपतेः प्रसन्नता च भूदेवादितितनयार्चनप्रवृत्तिः ॥५८॥

सद्गन्धैश्च तिलैः फलैः प्रसूनैर्यद्वा भूमिरुहैर्धनोपलब्धिः ।
सद्धर्मश्च जलाश्रयादिकर्ता सन्मन्त्रागमशास्त्रविद्विनीतः ॥ ५९ ॥
संचलनत्वमितस्ततो मृदुत्वं संचलनत्वमिहापि कन्यकानाम् ।
स्यात्कृष्यादिकृतिः परोपकर्ता निद्रालस्यकफान्वितोऽनिलात्मा ६०
क्रौर्यत्वं च शिरोरुजं च जाड्यं नूनं स्वीयजनैः कलिर्नितांतम् ।
सत्कार्ये न मनस्थितिः कदाचित्सामान्याच्च पुरातनैः प्रणीतम् ॥ ६१ ॥

चन्द्रमा बलाधिरूढ हो अन्यग्रह चन्द्रमाके आरोहगत हों तो असत्फल देनेवाले ग्रहभी शुभ फल देते हैं। इसी प्रकार सूर्यसे चंद्रमाभी है ॥ ५५ ॥ सूर्य चंद्रमाके दशायोगमें मनुष्य मंत्री, राजाके समान अतिमानवाला होवै। ब्राह्मण, देवता, मुख्य मंत्रादिसे धनवान् होवै, कला जाने, ऐश्वर्ययुक्त रहे ॥ ५६ ॥ तीन प्रकार आरोही दशा चंद्रमाकी संपूर्ण धनवृद्धि करनेवाली कही है, मनुष्योंको संपूर्ण मनुष्योंमें मान देनेवाली, राजासे तथा स्त्रीसे धन देनेवाली होती है ॥ ५७ ॥ पूर्ण चंद्रमाकी दशासे मनुष्योंको अनेक प्रकार सम्मान राजमंत्रिता तथा प्रसन्नता और देवब्राह्मणपूजनमें प्रवृत्ति होती है ॥ ५८ ॥ उत्तम गंध, तिल, फल, पुष्प यद्वा वृक्षजातिसे धन मिले। उत्तम धर्म, जलाशय करनेवाला होवै, मंत्र वेदशास्त्र जाने, नम्र होवै ॥ ५९ ॥ इधर उधर गमन, कोमलता, कन्याजननत्व, कृषिकर्म करना, परोपकार और निद्रा आलस्य मिले, कफ वायु शरीरमें होवै ॥ ६० ॥ क्रूरता, शिरमें रोग, जडता, वारंवार अपनेमें कलह होवै, उत्तम कार्यमें मनकी स्थिति कदाचित्भी न होवै इतने फल चंद्रदशाके सामान्यतासे पूर्वोदित कहे हैं ॥ ६१ ॥

पाके क्रियस्थस्य तुषाररश्मेर्विलासिनीनंदनजातदोषः ।
पुंसां विदेशाभिरतिर्व्ययः स्यात्कलिः शिरोरुक् सहजादिबाधः ॥ ६२ ॥
उच्चोपयातस्य विधोर्दशायां राज्योपलब्धिः स्वकुलानुमानात् ।
सद्रत्नसौख्यात्मजगोतुरंगगजादिवृद्धिर्वनितावशित्वम् ॥ ६३ ॥

पाककाले तु मूलत्रिकोणे विधोः स्याद्विदेशागमः स्वीयवर्गे कलिः।
मंधवाहात्कफात्पीडनं वै तनौ विक्रयाद्वापि कृष्यादितोऽर्थागमः ६४
वृषस्य मध्यत्रिलवे हिमांशोर्दशाप्रवेशे धनवाहनानि ।
भवेन्नराणां द्विजदेवमंत्रभावैर्धनाप्तिर्वनिताप्रियत्वम् ॥ ६५ ॥
पूर्वार्द्धगः पापयुतो हिमांशुर्वृषस्य मृत्युं कुरुते जनन्याः ।
तथा परार्द्धे जनकस्य सौम्येक्षितो युतो मृत्युसमानरोगम् ॥ ६६ ॥
इन्दोर्दशा वैणिकसंस्थितस्य स्थानांतरे संचलनं करोति ।
देवद्विजार्चाधनभोगसंपद्वस्त्रादिलाभं धिषणावरेण्यम् ॥ ६७ ॥

मेषगत चन्द्रदशामें स्त्रीपुत्र सुख, विदेशमें प्रीति, व्यय, कलह, शिरमें रोग, भ्रातृपीडा मनुष्योंको होती है ॥ ६२ ॥ उच्चगत चन्द्रदशामें कुलानुमानसे राज्यलाभ, उत्तम रत्नलाभ, सुख, पुत्र, गौ, घोडे, हाथी आदिकी वृद्धि, स्त्रीवशित्व होते हैं ॥ ६३ ॥ मूलत्रिकोणगत चन्द्रदशामें विदेशगमन, अपने मनुष्योंमें कलह, वायु कफसे पीडा, व्यापार वा कृषिसे धनागम होता है ॥ ६४ ॥ वृषमध्यद्रेष्काणगत चन्द्रकी दशा प्रवेशमें धन, वाहनलाभ, ब्राह्मण, देवता, मन्त्रप्रभावसे धनप्राप्ति, स्त्री प्रिय होती है ॥ ६५ ॥ वृषपूर्वार्द्धमें पापयुक्त चन्द्रमाकी दशा माताकी मृत्यु करती है, वृषपरार्द्धमें हो तो पिताकी मृत्यु करती है। यदि शुभग्रहयुक्त दृष्ट होवै तो मृत्युसमान रोग उनको करता है ॥ ६६ ॥ मिथुनगत चन्द्रमाकी दशा स्थानांतर चालन, देवब्राह्मणपूजन, धन, भोग, संपत्ति, वस्त्रादिलाभ और बुद्धि श्रेष्ठ करती है ॥ ६७ ॥

इन्दोः कुलीरोपगतस्य पाके भवेत्कृषिद्रव्यपशुप्रवृद्धिः ।
गुप्तामयश्चापि कलाधिकत्वं वनाद्रिदुर्गाभिरुचिर्नराणाम् ॥ ६८ ॥
हरिस्थितस्येन्दुदशाप्रवेशे विनष्टमर्थं लभते मनुष्यः ।
बुद्ध्याधिकत्वं स्वजनाधिपत्यं वैकल्यमंगेऽपि च पंचबाणैः ॥ ६९ ॥

कर्कके चन्द्रमाकी दशामें धन, कृषि, पशुकी वृद्धि, गुप्तरोग और कलाओंकी अधिकता, वन, पर्वत, किलाओंकी इच्छा मनुष्योंको होवै ॥ ६८ ॥ सिंहस्थ चंद्रदशामें मनुष्य नष्टद्रव्यको पाता है, बुद्धि अधिक होती है, अपने मनुष्योंमें श्रेष्ठता मिलती है तथा अंगमें कामपीडाभी होती है ॥ ६९ ॥

कन्याधिरूढस्य विधोर्दशायां विदेशयानं प्रमदोपलब्धिः ।
मतिश्च सत्काव्यकलाकलापे स्वल्पार्थसिद्धिर्ननु मानवानाम् ॥७०॥
पाके हिमांशोर्वणिजस्थितस्य कांताविलासश्चपलं मनः स्यात् ।
उत्साहभंगो धनहीनता च नीचप्रसंगोऽन्यजनैर्विरोधः ॥ ७१ ॥
नीचत्वमुच्चैर्विविधामयः स्यादनल्पचिंता स्वजनैर्विरोधः ।
सद्बुद्धिमानापहतिर्नराणां नीचोपयातस्य विधोर्दशायाम् ॥ ७२ ॥
नीचान्निवृत्तस्य कलानिधेः स्यात्पाके धनाप्तिः क्रयविक्रयाभ्याम् ।
मर्मव्यथास्त्रीजनमित्रवर्गैः सख्याल्पता धर्महतिर्नराणाम् ॥ ७३ ॥
कोदण्डसंस्थस्य तुषाररश्मेः पाके भवेत्कुञ्जरवाजिलब्धिः ।
पूर्वार्जितद्रव्यहतिर्नराणामन्यत्र वित्तागमनं सुखं च ॥ ७४ ॥

कन्याके चन्द्रमाकी दशामें विदेशगमन, स्त्रीप्राप्ति, उत्तम काव्यके कलापमें बुद्धि और मनुष्योंको अर्थसिद्धि अल्प होती है ॥ ७० ॥ तुलाके चंद्रमाकी दशामें स्त्रीविलास, मन चञ्चल, उत्साहभंग, धनहीनता, नीचजनसे प्रसंग, अन्यमनुष्योंसे विरोध होवै ॥७१॥ नीचगत चन्द्रदशामें बडी नीचता, अनेक रोग, बडी चिंता, अपने मनुष्योंसे विरोध, उत्तम बुद्धि, एवं मानका नाश मनुष्योंको होता है ॥ ७२ ॥ परमनीचांशकसे जब चन्द्रमा उतर गया हो उसकी दशामें व्यापारसे धनप्राप्ति, मर्मस्थानमें रोग, स्त्री मित्रवर्गके साथ अल्प मैत्री और धर्महानि मनुष्योंको होती है ॥ ७३ ॥ धनके चंद्रकी दशामें हाथी घोडेका लाभ, पहिले कमाये धनका नाश तथा अन्यत्रसे धनला० सुख होते हैं ॥ ७४ ॥

पाके निशेशस्य मृगस्थितस्य न हर्म्यवासोऽनुदिनं कदाचित् ॥
सुखात्मजस्त्रीद्रविणोपलब्धिरुन्मादवातामयपीडितः स्यात् ॥ ७५ ॥
क्रोडोदरार्तिव्यसनानि पुंसामृणोपलब्धिः कृशता शरीरे ।
कुस्त्रीरतिश्चञ्चलता नितांतं पाके हिमांशोः कलशस्थितस्य ॥७६॥
वर्गोत्तमस्थस्य घटे हिमांशोः पाकेऽर्थहीनो बलिभिर्विरोधी ।
दन्ताक्षिकर्णामययुङ्नरः स्यात्त्यक्तः स्वदारात्मजबन्धुवर्गैः ॥७७॥

मीनोपयातस्य विधोर्दशायां भवेन्नराणां सलिलोद्भवार्थः ।
शत्रुक्षयः स्याच्च मतिप्रवृद्धिः कलत्रपुत्रादिसुखादि नूनम् ॥ ७८ ॥
मीनसंस्थस्य वर्गोत्तमे शीतगोः पाककाले भवेत्संग्रहार्थागमः ।
सन्मतित्वं च पुत्रादिसौख्यं रिपोर्नाशनं कुञ्जराश्वादिकं मानवः७९॥

मकरकी चंद्रमाकी दशामें नित्य घरमें रहना कदापि न होवै, सुख, पुत्र, स्त्री धन मिलै, धन मिले । उन्मादरोग, वातरोगसे पीडित रहे ॥ ७५ ॥ कुंभके चंद्रकी दशामें नाभिके ऊपर तथा नीचे पीडा, व्यसन, ऋणलाभ, शरीरमें कृशता, निंद्यस्त्रीके साथ रति, निरंतर चंचलता होती है ॥ ७६ ॥ कुंभगत चंद्रमा यदि वर्गोत्तममें होवै तो उसकी दशामें धनहीन, बलवानोंसे विरोध, दांत नेत्र कानोंके रोगसे युक्त और अपने स्त्री, पुत्र, बंधु वर्गसे त्यक्त रहे ॥ ७७ ॥ मीनगत चंद्रमाकी दशामें जलसे उत्पन्न धन मिले, शत्रुक्षय होवैं, बुद्धि बढ़े, स्त्री पुत्र आदिके सुख निश्चय होवै ॥७८॥ मीनका चंद्रमा वर्गोत्तमी होवै तो उसकी दशामें अर्थागम धनसंग्रह होवै, सद्बुद्धि होवै, पुत्रादि सुख, शत्रुनाश, हाथी, घोडे आदिभी मनुष्यको मिलते हैं ॥ ७९ ॥

वर्गोत्तमे शीतरुचेरनुक्तस्थानेष्वभीष्टार्थयुतोऽतिविद्वान् ।
धीमान्नरः स्वीयकुले वरिष्ठो नीरादिसद्धर्मपरो भवेत्सः॥८०॥
व्ययोपयातस्य विधोर्दशायां पापार्जितद्रव्यसमुद्भवः स्यात् ।
नीचारिगस्थे च कृशे पुरोक्तं लब्धं धनं नाशमुपैति शीघ्रम् ॥८१॥ पाकेऽष्टमस्थस्य च नीचगस्य शीतद्युतेः संलभतेऽतिरोगम् । ज्ञातिच्युतिं पापयुतो मृतिं वा षष्ठोपगस्य व्यसनं मनुष्यः॥ ८२॥ क्षीणाष्टमस्थस्य विधोर्दशायां नानामयाद्यैः परिपीडनं च । यद्वापि कांताकृतदोषहेतोर्नूनं नरेंद्रं लभते मनुष्यः ॥ ८३ ॥ पाकेऽष्टमस्थस्य च मूढगस्य विधोर्नरः संलभतेऽतिदुःखम् । नानामयाद्यैः परिपीडनं च राज्यच्युतिं नीरभवं भयं च॥८४॥ षष्ठोपगस्य च दशा व्यसनाभिकर्त्री क्षीणे स्वबंधुजननाशकरी नराणाम् । पूर्णे तथोदयगते खलु राज्यकर्त्री स्त्रीकर्मकृद्दशमगेऽपि च सिन्धुजाते ॥ ८५ ॥

वर्गोत्तमी चंद्रमा अनुक्तस्थानमें भी होवै तो उसकी दशामें मनुष्य मनोवांछित फलवाला विद्वान् बुद्धिमान् अपने कुलमें श्रेष्ठ और जलाशयादि उत्तमधर्म करनेमें तत्पर होता है ॥ ८० ॥ व्ययगत चंद्रदशामें पापसे कमाया धन आवै, नीचमें शत्रुराशिमें होय वा क्षीण होवै तो पूर्वोक्त धन शीघ्र नाश होवै ॥ ८१ ॥ नीचका चन्द्रमा अष्टममें हो तो उसकी दशामें अतिरोग जातिसे उतरना होय पापयुक्तभी होवै तो मृत्युपर्यंत कष्ट और ऐसा चन्द्रमा छठा होवै तो व्यसनयुक्त होता है ॥ ८२ ॥ अष्टमगत क्षीणचंद्रमाकी दशामें अनेक रोगोंसे पीडन यद्वा स्त्रीके दोषके कारण राजसभामें निश्चय मनुष्य खडा होवै ॥ ८३ ॥ अस्तंगत अष्टमचन्द्रमाकी दशामें अतिदुःख, अनेक रोगादिसे पीडन, राज्यभ्रष्टता, जलसंबन्धी भय पावै ॥ ८४ ॥ छठे चन्द्रमाकी दशा व्यसन करती है । क्षीणभी हो तो मनुष्योंको अपने बंधुजनका नाश करती है । पूर्ण होवै तथा लग्नगत होवै तो निश्चय राज्य करती है, यदि दशम हो तो स्त्रीके सदृश कार्य करनेवाला होता है ॥ ८५ ॥

अथ भौमदशाफलम् ।

वक्रानुवक्रं तरणेश्च पूर्वापरं च षट्कं द्वितयं समीक्ष्य ।
ताराग्रहाणामपि नीचतुंगं सम्यग्विचारेण फलं प्रवाच्यम् ॥ ८६ ॥
स्वोच्चस्वराश्यादिनवांशसंस्था विलोमगाश्चास्तगता यदि स्युः ।
ताराग्रहाः स्वीयफलं विमिश्रं यच्छंति नूनं निजपाककाले ॥ ८७ ॥
पाकप्रवेशे क्षितिनंदनस्य तत्साहसैः स्याद्विविधोद्यमैश्च ।
भूपालशस्त्रानलतः कलेर्वा चतुष्पदादेर्विविधा धनाप्तिः ॥ ८८ ॥
भूपालचोरानलशत्रुभीतिः पित्तज्वरासृक्परिपीडनं च ।
नीतिच्युतिर्द्रव्यहतिर्नराणां भवेत्कलिः स्त्रीसुतबंधुवर्गैः ॥ ८९ ॥

भौमादिग्रहोंका विचार सूर्यसे आगे वक्र पीछे मार्ग, यद्वा पीछे वक्र आगे मार्ग अर्थात् अस्तके समान बालवृद्ध और सूर्यके जितने अंश हों वहांसे सूर्यसे सप्तमके उतनेही अंश पर्यंत पूर्वषट्क और सूर्यांशतुल्य सूर्यके सप्तमसे लेकर सूर्यांश पर्यंत परषट्क तथा नीच उच्च ऐसे विचारसे फल कहना ॥ ८६ ॥

अपने उच्च, स्वराशि, स्वनवांशकी वक्रगति अस्तभी भौमादि हो तो अपनी दशामें मिश्रित फल देते हैं ॥ ८७ ॥ मंगलकी दशामें अच्छे साहससे, अनेक उद्यमोंसे, राजा, शस्त्र, अग्निसे वा कलहसे, चतुष्पदसे धन मिलता है ॥ ८८ ॥ हीनस्थानादिमें होनेसे राजा, चोर, अग्नि, शत्रुसे भय, पित्त-ज्वर, रुधिररोगसे पीडा, नीतिसे गिरना, धनहानि, स्त्री, पुत्र, बंधुवर्गमें कलह होते हैं, ये भौमदशाके सामान्य फल हैं ॥ ८९ ॥

लोहितांगस्य मूलत्रिकोणे नृणां पाककाले विशेषाद्रणे सद्यशः ।
पुत्रजायादिसौख्यं महोग्रा मतिः साहसेनार्थलब्धिर्नितांतं भवेत् ९०॥
मेषस्थितस्यावनिनंदनस्य पाके महोत्साहधनानि पुंसाम् ।
ख्यातिर्मतिः साहसमग्निबाधा नानाविधारातिसमुद्भमः स्यात् ॥९१॥
वृषस्थितस्यावनिजस्य पाके स्थित्या विहीनः शुचिरोगतप्तः ।
अनल्पजल्पः परवित्तयुक्तः परोपकारी गुरुदेवभक्तः ॥ ९२ ॥
द्वन्द्वस्थितस्यावनिजस्य पाके विदेशवासी कुटिलो व्ययार्त्तः ।
पित्तानिलार्त्तः स्वजनैर्विरोधी कलाविधिज्ञो बधिरो नरः स्यात् ।९३॥
भौमस्य कर्कोपगतस्य पाके धनंजयोद्यानभवार्थयुक्तः ।
क्लेशान्वितः स्त्रीसुतबंधुवर्गैर्दूरे नरः स्याद्विकलो विकृष्टः ॥ ९४ ॥
वृथाटनत्वं विगताधिकत्वं नीचत्वमुच्चैर्मनसो विषादः ।
फलोन्मुखं कार्यमतीव दूरे भौमस्य नीचांशगतस्य पाके ॥ ९५ ॥
वक्रस्य नीचांशपरिच्युतस्य पाके नरः सर्वगुणोपपन्नः ।
ख्यातो गजाश्वादियुतो बलाढ्यो गुह्यामयार्त्तो नृपवर्गशत्रुः ॥९६॥
भौमस्य कंठीरवसंस्थितस्य पाके नराणां बहुनायकत्वम् ।
स्त्रीपुत्रवित्तादिवियोगता च बाधा भवेच्छस्त्रहुताशजाता ॥ ९७ ॥

मूलत्रिकोणगत भौमकी दशामें विशेषतः रणमें यश मिले, स्त्री पुत्र सुख, उग्र बुद्धि और साहससे बराबर धनलाभ होवै ॥ ९० ॥ मेषगत भौमदशामें पुरुषोंको बडे उत्साह, धन, ख्याति, साहस, बुद्धि, अग्निपीडा, अनेक प्रका-

रके शत्रुका उदय होवै ॥ ९१ ॥ वृषगत भौमदशामें स्थितिसे रहितता, रोगसे संततता, बहुत बोलना, पराया धन लाभ, परोपकारिता गुरुदेवभक्ति होवै ॥९२॥ मिथुनगत भौमदशामें विदेशवासी, कुटिल, खर्चसे पीडित, पित्त-वायुसे पीडित, अपने मनुष्योंसे विरोधी, कलाविधि जाननेवाला, कानका बहरा मनुष्य होवै ॥ ९३ ॥ कर्कगत भौमदशामें अग्नि वा बाग बगीचा संबंधी धनसे युक्त होवै । क्लेशयुक्त तथा स्त्री, पुत्र, बंधुवर्गसे दूर रहे, कला-रहित होवै ॥ ९४ ॥ नीचांशगत भौमदशामें व्यर्थ फिरना होवै, श्रेष्ठता न रहे, बडी नीचता, मनका विषाद रहे, फल देनेको तयार हुआ कार्यभी दूर चला जावै ॥ ९५ ॥ परमनीचांशसे उतरे भौमदशामें मनुष्य समस्तगुणोंसे युक्त, विख्यात, हाथी घोडाओंसे युक्त, बलवान् रहे, तथा गुह्यस्थानके रोगसे पीडित और राजवर्गका शत्रु होवै ॥ ९६ ॥ सिंहगत भौमदशामें बहुत मनुष्योंकी अफ्सरी मिले तथा स्त्री पुत्र, धनसे वियोग शस्त्राग्निपीडाभी होवै ॥ ९७ ॥

कन्याश्रितक्ष्मातनयस्य पाके यज्ञक्रियायां निपुणो मनुष्यः ।
भवेत्सदाचारपरो विनीतः स्त्रीपुत्रधात्रीधनधान्यसौख्यः ॥ ९८ ॥
भौमस्य जूकोपगतस्य पाके स्त्रीवित्तहीनो विकलांगयष्टिः ।
हतोत्सवो ना कलहप्रसंगैर्दुष्टो भवेद्वै पशुना वियुक्तः ॥ ९९ ॥
अंगारकस्यालिगतस्य पाके कृषिक्रियाधान्यधनैः समृद्धः ।
द्वेषी बहूनामतिजल्पकः स्याद्विषाग्निशस्त्रादिभयाभितप्तः ॥ १०० ॥
चापस्थितस्य क्षितिजस्य पाके भवेन्नराणां द्विजदेवभक्तिः ।
मनोरथाप्तिर्नृपतेर्नितांतमुत्साहभंगः कलहप्रसंगात् ॥ १०१ ॥
आकोकेरस्थस्य पाके कुजस्य राज्यप्राप्तिः स्वीयवंशानुमानात् ।
युद्धे वादे स्याज्जयो वाहनानि भूमीपालात्स्वर्णरत्नादिलाभः ॥ १०२ ॥
उच्चातिक्रांतस्य भूमीसुतस्य पाके यत्नात्कार्यसिद्धिर्धनाप्तिः ॥
शस्त्रात्पुंसां चापदादेश्च भीतिस्तोषाल्पत्वं स्यान्महत्साहसं च १०३

कन्यागत भौमदशामें मनुष्य यज्ञक्रियामें निपुण, सदाचारमें तत्पर, नम्र, स्त्री, पुत्र, भूमि, धन अन्नके सुखयुक्त होता है ॥ ९८ ॥ तुलागत भौमदशामें

स्त्रीसे धनसे हीन, विकल शरीर, उत्सवरहित, कलहप्रसंगसे दूषित और पशुसे रहित होवै ॥ ९९ ॥ वृश्चिकगत भौमदशामें कृषिकर्म, अन्न धनसे सम्पन्न, बहुतोंका द्वेषी, बहुत बोलनेवाला, विष, अग्नि, शस्त्र आदिकी भयसे संतप्त होवै ॥ १०० ॥ धनगत भौमदशामें मनुष्योंको देव ब्राह्मणभक्ति, राजासे मनोरथ प्राप्ति होती है, कलहप्रसंगसे उत्साहभंग होता है ॥१०१॥ मकरगत भौमदशामें अपने कुलानुमानसे राज्यप्राप्ति होती है तथा युद्धमें विवादमें जय, राजासे वाहन, सुवर्ण रत्नादि मिलें ॥ १०२ ॥ उच्चसे उतरे भौमकी दशामें यत्नसे कार्यसिद्धि, धनप्राप्ति, शत्रुकी और आपत्ति आदिकी भय, सन्तोष अल्प और बडा साहसभी होता है ॥ १०३ ॥

कुजस्य कुंभोपगतस्य पाके दुर्मार्गताऽऽचारविहीनता च ।
दारिद्र्यदुःखामयजातपीडा व्ययो बहुस्त्रीतनयादिचिंता ॥ १०४ ॥
वक्रस्य मीनोपगतस्य पाके ऋणोपलब्धिस्तनयादिचिंता ।
विचर्चिपामाव्रणजातपीडा व्ययामयत्वं हि विदेशवासः ॥ १०५ ॥
भौमस्य वर्गोत्तमगस्य पाके संग्रामसंप्राप्तजयाधिकत्वम् ।
बलाधिकत्वं च गुणाधिकत्वं विख्यातकीर्तिं लभते मनुष्यः॥१०६॥
धात्रीसुतस्यास्तमयोपगस्य पाके किलोपद्रवकैरनेकैः ।
मतिप्रणाशोऽखिलकार्यहानिर्भवेन्नराणां विकलत्वमङ्गे ॥ १०७ ॥
भूमीसुतस्याष्टमभावगस्य दशा विवादं विविधं विरोधम् ।
करोति विघ्नं निजबंधुहेतोः सम्मानहानिं च रुजोदयं च ॥ १०८ ॥
कुजस्योच्चमूलत्रिकोणर्क्षगस्य दशाऽऽयस्थितस्यापि पाके नराणाम् ।
भवेद्राज्यलब्धिश्च युद्धेऽरिवर्गाज्जयो वित्तरत्नादिसद्वाहनानाम् १०९॥

कुम्भगत भौमदशामें दुष्टमार्ग चलना, आचारहीनता, दरिद्रता, दुःख, रोगसे पीडा, बहुत खर्च, स्त्रीपुत्रादिचिंता होती है ॥ १०४ ॥ मीनगत भौमदशामें ऋण मिले, पुत्रादिचिंता, विसूचिका रोग, अपची, खुजली, फोडाओंसे पीडा, खर्च, रोग और विदेशवास होता है॥१०५॥ वर्गोत्तमगत भौमदशामें संग्राममें मिली विजय बढे, गुण बढे, मनुष्य विख्यातकीर्तिकोभी

पाता है ॥ १०६ ॥ अस्तंगत भौमदशामें निश्चय अनेक उपद्रवोंसे बुद्धि मारी जावै, संपूर्णकार्य्योंकी हानि होवै तथा मनुष्योंके अंगमें विकलता भी होवै ॥ १०७ ॥ अष्टमगत भौमदशा कलह, अनेक प्रकार विरोध, अपने बंधुजनके हेतु विघ्न, सम्मानकी हानि और रोगका उदयभी करती है ॥ १०८ ॥ अपने उच्च, मूलत्रिकोण, स्वराशिगत एकादशस्थ भौमकी दशामें राज्यप्राप्ति, युद्धमें शत्रुसे विजय, धनरत्न, उत्तमवाहनोंकी प्राप्ति होती है ॥ १०९ ॥

अथ बुधदशाफलम् ।

विद्याविवेकविभुता कृषिकर्मयुक्तोधर्मक्रियाविविधयज्ञविधान-चित्तः । वित्तान्वितश्च विविधोद्यमवृत्तियोगाच्छिल्पादिकर्म-कुशलो विविधोत्सवाढ्यः ॥ ११० ॥ संगीतनर्त्तनकुतूहल-हास्यहर्षैः कालक्रमत्वमतिसद्विनयोपलब्धिः । आचार्य-सज्जनमतत्वमथो नवान्नसद्भाण्डभूषणगृहादिविनिर्मितत्वम् ॥ १११ ॥ पुंसां कलत्रतनयादिसुखोपलब्धिः पाके बुधस्य कफपित्तसमीरपीडा । हानिर्धनस्य सुधियाऽत्र बलाबलत्वं पूर्वं विचिन्त्य सदसत्फलमेव वाच्यम् ॥ ११२ ॥

उत्तमबली बुधकी दशामें विद्या ज्ञान, सामर्थ्यता, कृषिकर्मसे युक्त होता है । धर्मकृत्य और अनेक यज्ञ करनेमें मन रहता है । अनेक प्रकार उद्यम वृत्तियोगसे धनयुक्त होता है । शिल्पादि कामोंमें चतुर और अनेक उत्सवोंसे युक्त होता है ॥ ११० ॥ मध्यबली बुधकी दशामें गीत, नृत्य, खेल, हँसी, खुशी आदिसे समय बीतताहै । उत्तम विनय मिलता है, आचार्यता, सज्जनोंमें संमत होता है, उत्तम (भांड) बासन, भूषण, घर आदिका बनाना होता है ॥ १११ ॥ हीनबली बुधकी दशामें मनुष्योंको स्त्री पुत्रादि सुख मिलते हैं तथा कफ, वात, पित्तकी पीडा, धनकी हानि होती है, बुद्धिमान्को बलाबल देखके शुभाशुभ फल कहना चाहिये ॥ ११२ ॥

मेषस्थितस्येन्दुसुतस्य पाके धीमाञ्छुभांगः परभाग्यनिष्ठः । द्यूतानृतस्तेयशठत्वयुक्तो भवेत्स सौजन्यधनेन हीनः ॥ ११३ ॥

वृषस्थितस्येन्दुसुतस्य पाके मातुस्त्वनिष्टश्च धनी यशस्वी ।
गुणान्वितः स्यान्मनुजः कलत्रात्मजादिचिंता गरलार्तियुक्तः ॥११४
नृयुग्मसंस्थस्य बुधस्य पाके त्वनेककर्माभिरतोऽतिजल्पः ।
स्त्रीपुत्रमित्रादिसुखोपपन्नो नरो भवेन्मातृसुखेन हीनः ॥ ११५ ॥
कुलीरसंस्थस्य बुधस्य पाके मित्रैश्च सत्काव्यकलार्जितार्थः ।
विदेशवासी व्यवसाययुक्तः सौख्याल्पको बन्धुजनैर्विरोधी ॥ ११६ ॥
हरिस्थितस्येन्दुसुतस्य पाके पुंसां भवेज्ज्ञानयशोर्थनाशः ।
स्वबन्धुमित्रात्मजकामिनीभिः सौख्याल्पता सन्मतिहीनता च११७

मेषगत बुधकी दशामें मनुष्य बुद्धिमान् सुंदर अंगवाला तथा पराये भाग्यके भरोसेपर रहनेवाला, जुआ, झूठ, चोरी, ठगीसे युक्त और सज्जनता एवं धनसे हीन होवै ॥ ११३ ॥ वृषगत बुधकी दशामें माताकी बुराई करे, धनवान्, यशस्वी, गुणयुक्त, स्त्री पुत्रादि चिंता, विषकी पीडासे युक्त होवै ॥ ११४ ॥ मिथुनगत बुधकी दशामें अनेक कामोंमें तत्पर रहे, बहुत बोले, स्त्री पुत्र मित्रादियोंका सुख मिले तथा मनुष्य मातृसुखसे हीन होवै ॥११५॥ कर्कटगत बुधकी दशामें मित्रोंसे तथा उत्तम काव्यकलासे धन कमावे, विदेशमें रहे, व्यापारी होवै, सुख अल्प मिले, बंधुजनोंसे विरोधी होवै॥११६॥ सिंहगत बुधकी दशामें पुरुषोंके ज्ञान, यश, धनका नाश, अपने बंधु, मित्र, पुत्र स्त्रीसे सुख अल्प और बुद्धि हीनता होवै ॥ ११७ ॥

सुलिपिलेखनकाव्यकलांतरं प्रकुरुते बहुवैभवयुङ् नरम् । विनयनीतिपरं जितवैरिणं बुधदशा निजतुंगगतस्य च ॥ ११८ ॥ मूलत्रिकोणस्य च सौम्यपाके विदेशयानानुरतो विधिज्ञः। पराक्रमेणाप्तधनो नरः स्यात्क्षमान्वितः ख्यातगुणैः प्रपूर्णः ॥ ११९ ॥ उच्चत्रिकोणांशपरिच्युतस्य ज्ञपाककाले पशुसौख्यहानिः । कालिप्रसंगो विकलत्वमंगे स्वबंधुवैरं च भवेन्नराणाम् ॥१२०॥ जूकोपयातस्य बुधस्य पाके क्षणेक्षणे शांतमतिः प्रचंडः । शिल्पादिकर्मण्यतिनैपुणः स्याद्वाणि-

ज्यतोऽर्थः पशुना वियुक्तः ॥१२१॥ कीटस्थितस्येन्दुसुतस्य पाके प्रेष्यांगनासक्तिपरोऽल्पतुष्टः । नरः सदाचारविवर्जितः स्याद्व्ययेन युक्तः स्वजनैर्वियुक्तः ॥ १२२ ॥ चापोपयातस्य बुधस्य पाके मंत्री च नामद्वययुङ्मनुष्यः । कृषिक्रियायाः पशुभिश्च वित्तयुक्तो नितान्तं बहुनायकः स्यात् ॥ १२३ ॥ बुधस्य नक्रोपगतस्य पाके ऋणोपलब्धिर्मतिवैपरीत्यम् । नीचैश्च सख्यं कपटत्वमुच्चैर्बह्वाटनं स्यान्मनुजस्य नूनम्॥१२४॥

उच्चगत बुधकी दशा मनुष्योंको उत्तम लिपी लेखन, काव्यकलासे युक्त, बहुत ऐश्वर्ययुक्त, नम्रता, नीति तत्परता युक्त और शत्रु जीतनेवाला करती है ॥ ११८ ॥ मूलत्रिकोणगत बुधदशामें विदेशगमनमें तत्पर, विधि जाननेवाला, पराक्रमसे धनवान्, क्षमायुक्त, ख्यात गुणोंसे पूर्ण करती है॥ ११९॥ उच्चांशक, त्रिकोणांशकसे उतरे बुधकी दशामें पशु सुखकी हानि, कलहका प्रसंग, अंगमें विकलता, अपने बंधुजनोंसे मनुष्योंका वैर होता है ॥१२०॥ तुलागत बुधकी दशामें क्षणमें शान्त स्वभाव, क्षणमें प्रचंड बुद्धि होवै, शिल्प आदि कर्ममें अतिनिपुण होवै, व्यापारसे धन मिले, पशुसे वियुक्त रहे ॥१२१॥ वृश्चिक गत बुध दशामें दूती, दासी आदिमें आसक्त रहे, थोडेमें प्रसन्न होजावै, सदाचारसे रहित, व्ययुक्त रहे और मनुष्य अपने मनुष्योंसे भी जुदा रहै ॥१२२॥ धनगत बुधदशामें मनुष्य मंत्री होवै, एक नाम पहिला दूसरा नाम उपाधिका पावै, कृषिकर्म तथा पशुओंसे युक्त, सर्वदा बहुतोंका अधिपति होवै ॥ १२३ ॥ मकरगतबुधकी दशामें कर्ज मिले, बुद्धि विपरीत होजावै, नीचजनोंसे मित्रता होवै, बडी कपटता आवै और मनुष्यको निश्चय बहुत फिरना पडे ॥ १२४ ॥

चान्द्रेर्दशायां कलशस्थितस्य तेजोविहीनो व्यसनानुरक्तः । स्वबंधुपीडापरिपीडितात्मा विदेशयानानुरतोऽतिनिःस्वः ॥१२५॥ बुधस्य नीचोपगतस्य पाके विदेशगः सत्त्वगुणैर्विहीनः । कृशोऽतिनिःस्वोऽन्यगृहाश्रितः स्यान्नरो भवेद्बंधुजनै-

विहीनः॥१२६॥ नीचान्निवृत्तस्य बुधस्य पाके विषाग्निशस्त्रैश्च चतुष्पदाद्यैः। प्रपीडितः स्यान्मनुजो नितान्तं नित्यं कुकर्माभिरतोऽल्पतुष्टः ॥ १२७ ॥ अस्तोपयातस्य बुधस्य पाके हित्वा निजर्क्षं मनुजोऽतिदुःखी। कासामयाद्यैः परिपीडितः स्यात्क्षमान्वितो वै द्रविणेन हीनः॥१२८॥ वर्गोत्तमस्थे हिमरश्मिपुत्रे शुभाशुभैर्युक्तनिरीक्षिते च। दशाफलं मध्यममेव तत्र सर्वत्र सौम्यस्य दशा विमिश्रा॥१२९॥स्वर्क्षादिसंस्थस्य च लग्नबंधुकर्मोपयातस्य दशा बुधस्य। ज्ञानं धनं स्वीयकलाधिकत्वं करोति सौख्यं ननु मानवानाम् ॥ १३० ॥

कुम्भगत बुधदशामें तेजरहित, व्यसनोंमें तत्पर, बंधुपीडासे पीडित शरीर, विदेश जानेमें तत्पर और अतिनिर्धन रहै ॥ १२५ ॥ नीच १२ गत बुधदशामें विदेशवासी, सत्त्व और गुणोंसे हीन, कृश शरीर, अतिनिर्धन, पराये घरमें निवासी तथा मनुष्य बंधुजनोंसे हीन रहै ॥ १२६ ॥ परम नीचांशकसे निवृत्त हुये बुधकी दशामें विष अग्नि शस्त्र तथा चौपायों आदिसे पीडित, नित्य कुकर्मोंमें तत्पर और थोडेमें संतुष्ट रहै ॥ १२७ ॥ अपनी राशिसे अन्य राशियोंमें अस्तंगत बुधकी दशामें मनुष्य अतिदुःखी खांसी आदि रोगोंसे पीडित श्रमयुक्त और धनहीन रहै ॥ १२८ ॥ वर्गोत्तमगत बुध शुभपापोंसे युत दृष्ट होवै तो उसकी दशाका फल मध्यम होता है, विशेषतः बुधकी दशाही मिश्रित फल देती है ॥ १२९ ॥ स्वराशि आदिका बुध यदि १। ४। १० भावोंमें होवै तो उसकी दशा ज्ञान धन अपनी कलाकी अधिकता और मनुष्योंको निश्चय सुख करती है ॥ १३० ॥

अथ गुरुदशाफलम्।

वृत्रारिपूज्यस्य दशाप्रवेशे सद्धर्मशास्त्रानुरतो विनीतः।
भूपप्रसादाप्तमनोरथाप्तः सत्कर्मयज्ञाभिरुचिः सुशीलः॥ १३१ ॥
देवद्विजाचार्यविभुतासमेतो मेधान्वितोऽत्यंतधनैः प्रपूर्णः।
सुवर्णरत्नाम्बरवाहनाद्यैः कलत्रपुत्रादिसुखैः समेतः ॥१३२॥

सत्संगयुक् स्वीयकुले वरिष्ठोऽत्यर्थं नरः सत्त्वगुणान्वितः स्यात् ।
गुल्मोदरप्लीहगलामयाद्यैः प्रपीडितश्चिन्त्यमिदं विरुद्धात् ॥ १३३ ॥

गुरुकी दशामें सद्धर्म सच्छास्त्रोंमें तत्पर, नम्र, राजप्रसादसे मनोरथ प्राप्त, सुकर्म, यज्ञ आदिमें रुचि, सुंदर शील होवै ॥ १३१ ॥ देव ब्राह्मण पूजन, प्रभुतासे युक्त, बुद्धियुक्त, अत्यंत धनोंसे पूर्ण रहै । सुवर्ण, रत्न, वस्त्र, वाहन आदि, स्त्री पुत्रादि सुखोंसे युक्त रहै ॥ १३२॥ सत्संगसे युक्त, अपने कुलमें श्रेष्ठ तथा मनुष्य अत्यन्त सत्त्व गुणसे युक्त होवै । इतने फल शुभ भाव राश्यादियोंके हैं, विरुद्ध स्थानादिमें होवै तो गुल्मरोग, प्लीहा, कंठरोग आदियोंसे पीडित रहै ॥ १३३ ॥

मेषोपयातस्य सुरार्चितस्य पाके नराणां बहुनायकत्वम् ।
ज्ञानोदयं स्यान्नृपतेर्धनं च स्त्रीपुत्रमित्रादिसुखोपलब्धिः
॥ १३४ ॥ पाके गुरोस्तावुरिसंस्थितस्य दुःखैश्च रोगैः परि-
पीडितः स्यात् । विदेशवासी द्रविणेन हीनो हृतोत्सवः साहस-
युङ्मनुष्यः॥१३५॥ जीवस्य युग्मोपगतस्य पाके मातुस्त्वनिष्टो
निजगोत्रवर्गे। भवेद्विरोधी वनिताविवादात्संतप्तचित्तो मनुजो-
ऽल्पवित्तः ॥ १३६ ॥ उच्चोपयातस्य गुरोर्दशायां राज्योप-
लब्धिर्बहुवैभवं च । विशिष्टनाम्ना प्रथितत्वमुच्चैर्भवेन्नराणां
नृपतेश्च सख्यम् ॥ १३७ ॥

मेषगत गुरुकी दशामें मनुष्योंको बहुत मनुष्योंमें श्रेष्ठता (अफ्सरी) मिलती है । ज्ञानका उदय, राजासे धन, स्त्री, पुत्र, मित्र आदियोंका सुख मिलता है ॥ १३४ ॥ वृषगत गुरुकी दशामें दुःख तथा रोगोंसे भी पीडित, विदेशमें निवासी, धनसे हीन, मंगल उत्सवोंसे हीन और साहससे युक्त होता है ॥ १३५ ॥ मिथुनगत गुरुकी दशामें माताकी बुराई करनेवाला, अपने जात भाइयोंमें विरोधी, स्त्रीविवादसे संतप्त चित्त और अल्प धन होवै ॥ १३६॥ उच्च ४ गत गुरुदशामें राज्य लाभ, बहुत ऐश्वर्य, विशेष नामकरके प्रसिद्धि, राजासे मैत्री होती है ॥ १३७ ॥

उच्चच्युतस्यामरपूजितस्य पाके नरः स्यात्पितृमातृदुःखी । प्रागर्जितद्रव्यचयक्षयेन तप्तो नितान्तं व्यसनाभिभूतः ॥ १३८ ॥ कण्ठीरवस्थस्य गुरोर्दशायां भूपातमानो मनुजो वदान्यः । कलत्रपुत्रानुजजातहर्षोऽत्यर्थं मनुष्यो द्रविणेन युक्तः ॥ १३९ ॥ पाथोनसंस्थस्य गुरोर्दशायां भूपालदारा-श्रयतो धनाप्तिः । शूद्रादिनीचैः कलहप्रसंगो नूनं भवेत्सं-भ्रमणं च पुंसाम् ॥ १४० ॥ तुलाश्रितस्यामरपूज्यपाके दुष्टव्रणार्त्तः सुतदारशत्रुः । मन्दोत्सवः स्यात्प्रमितान्नभोक्ता विवेकहीनो मनुजोऽरिहंता ॥१४१॥ कौर्प्यस्थदंभोलिभृदी-ज्यपाके प्राज्ञः समर्थो धिषणावरेण्यः । नरः सुतोत्साहयुतो-ऽनृणी स्याद्रोगाभिभूतो नियमेन हीनः ॥ १४२ ॥ प्राग्दि-ग्लवेषु धनुषः स्थितगीष्पतेश्च मूलत्रिकोणभवने च भवेद्दशा-याम् । मंत्री पुमान् मतिवरस्त्वथ मांडलीकः पित्रादिक-स्वयुवतीवचनानुरक्तः ॥ १४३ ॥ दिगंशकेभ्यः परतश्च चापस्थितस्य वाचस्पतिपाकवेशे । यज्ञादिसिद्धिं कृषिगो-धनानि सुखं प्रवासाल्लभते मनुष्यः ॥ १४४ ॥

उच्चसे उतरे गुरुकी दशामें माता पिताको दुःख, पहिले कमाये धनके क्षयसे मनुष्य नित्य संतप्त रहै, व्यसनोंसे दबा रहे ॥ १३८ ॥ सिंहगत गुरुदशामें मनुष्यको राजासे मान, स्त्री, पुत्र, भाइयोंका हर्ष होता है । धनयुक्त, तथा (दाता) मुझसे मांगो ऐसा कहनेवाला होता है॥ १३९ ॥ कन्यागत गुरुदशामें राजाकी रानीके आश्रयसे धनप्राप्ति, शूद्र आदि नीचोंसे कलहकी चर्चा और पुरुषोंको भ्रमणभी होता है ॥१४० ॥ तुलागत गुरुदशामें खोटे फोडाओंसे पीडित, पुत्र स्त्रीका शत्रु, उत्सवहीनता, मित भोजन करनेवाला, विवेक-रहित तथा मनुष्य शत्रु मारनेवाला होता है ॥ १४१ ॥ वृश्चिकगत इन्द्र-पूज्यकी दशामें प्राज्ञ, सामर्थ्यवाला बुद्धिश्रेष्ठ, पुत्रके उत्साहयुक्त तथा मनुष्य कर्ज रहित, रोगवाला और नियमसे हीन होता है ॥ १४२ ॥ धनके

प्रथम दशांशमें गत गुरु यदि त्रिकोणगतभी हो तो सेनापति, मंत्री, श्रेष्ठबुद्धि अथवा कुछ ग्रामोंका राजा, पिता आदिके तथा स्त्रीके वचनोंमें तत्पर रहै ॥ १४३ ॥ धनके १० अंशके ऊपर गत गुरुदशामें यज्ञ आदियोंकी सिद्धि, खेती, गौ, धन और परदेशवाससे मनुष्य धन पाता है॥ १४४॥

नक्रे च नीचांशगतस्य पाके बृहस्पतेर्वै परकार्यकर्ता । भवेन्नरो जाठरकर्णगुह्यामयी विशेषान्मतिवित्तहीनः ॥ १४५ ॥ गुरोर्दशा नीचलवच्युतस्य कुर्यान्निषादात्कृषितोपलब्धिम् । स्ववाक्यदोषाज्जनवंचनाद्वा वृथा कलिं वै पिशुनत्वमुच्चैः ॥ १४६ ॥ दशा गुरोः कुम्भधरास्थितस्य सद्बुद्धिविद्यानुरतं कलाज्ञम् । कलत्रवित्तादिसुखोपलब्धिं करोति मर्त्यं नृपलब्धमानम् ॥ १४७ ॥ मीनस्थितस्यामरपूज्यपाके कलाधिकः स्यान्मनुजोऽतिधीमान् । विद्याप्रसंगाप्तधनो विनीतो विलासिनीप्रेमभरः सहर्षः ॥ १४८ ॥ वर्गोत्तमांशस्थितजीवपाके लोकेऽतिपूज्यः सुतदारसौख्यः । अत्यर्थसम्पत्तियुतः सहर्षो भवेद्विनीतो मनुजः कृशांगः ॥ १४९ ॥ मूढाश्रितस्यामरपूज्यपाके भवेन्नराणां च सुखासुखत्वम् । नीचारिभांशेषु च वित्तदारपरिक्षयं चामयपीडितं च ॥ १५० ॥

मकरके नीचांशक गत गुरुकी दशामें पराये काम करनेवाला मनुष्य होवै उदर, कान, गुह्यस्थानमें रोगी होवै, विशेषतः बुद्धि एवं धनसे हीन होवै, ॥ १४५ ॥ नीचांशकसे उतरे मकरके गुरुदशामें निषादसे कृषिसे लाभ करता है । अपने वचनके दोषसे अथवा किसी मनुष्यके ठगनेसे व्यर्थ कलह और बडी पिशुनता (दुर्जनता) होवै ॥ १४६ ॥ कुंभगत गुरुकी दशा मनुष्यको बुद्धि विद्यासे युक्त, कला जाननेवाला, स्त्री धन आदिके सुख युक्त और राजासे मान प्राप्त करती है ॥ १४७ ॥ मीनगतगुरुकी दशामें मनुष्य कलामें अधिक बुद्धिमान्, विद्या प्रसंगसे प्राप्त धनवाला, नम्र, स्त्रीके पूरा प्रेमसे युक्त, हर्षसहित होता है ॥ १४८ ॥ वर्गोत्तमांश गत गुरुदशामें

लोकमें अतिपूजनीय, पुत्र स्त्री सुख अति संपत्तिसे युक्त, सहर्ष, नम्र और कृशांगवालाभी मनुष्य होता है ॥ १४९ ॥ अस्तंगत गुरुकी दशामें मनुष्योंको सुख तथा दुःखभी होते हैं, नीच शत्रु अंशकगत गुरुकी दशामें धन स्त्रीका क्षय तथा रोगपीडा भी होती है ॥ १५० ॥

अथ शुक्रदशाफलम् ।

स्यात्पाके भृगुजस्य रत्नयुवतीसद्वस्त्रभूषागमः सम्मानं विविधं जनेषु मदनस्याप्युद्गमत्वं नृणाम् । गीते नर्तनवाद्यकेऽधि-करुचिः सच्छीलशास्त्रादिके दाने साधुजने मतिश्च नितरां सद्विक्रये वा क्रये ॥ १५१ ॥ पूर्वोपार्जितवित्तलब्धिरतुला गोवाहनेभ्यः सुखं पुत्रेभ्यश्च कलिः कुले चपलता स्थाना-द्भवेन्निश्चयात् । वैकल्यं पवनात्कफान्निजतनौ चिन्तादितप्तं मनो वैरं नीचजनैः फलं समुदितं सामान्यमेतद् भृगोः ॥१५२ ॥

उत्तम बली शुक्रकी दशामें रत्न, स्त्री, उत्तम वस्त्र, भूषण मिलें, मनुष्योंमें अनेक प्रकार सम्मान मिलें तथा मनुष्योंको कामदेवका उदय होवै, गायन नाच बाजेमें रुचि होवै, उत्तम शील (स्वभाव) शास्त्रादिमें साधुजनमें और दानमें व्यापारमें अच्छी मति होवै ॥ १५१ ॥ मध्यबली शुक्रकी दशामें पहिले कमाये धनकी अगणित प्राप्ति, गौ एवं वाहनोंसे सुख, पुत्रोंसे सुख, कुलमें कलह, स्थानसे चालन निश्चय होवै । हीनबली शुक्रदशामें अपने शरीरमें वायु कफसे विकलता होवै, चिन्ता आदिसे मन संतप्त रहै, नीच जनोंसे वैर होवै इतने शुक्रके सामान्य फल हैं ॥ १५२ ॥

लोलं मनः संभ्रमणं विशेषादुद्वेगता स्युर्व्यसनानि पुंसाम् ।
स्त्रीवित्तसौख्यापचयत्वमुच्चैर्मेषोपयातस्य भृगोर्दशायाम् ॥ १५३ ॥
पाके वृषस्थस्य भृगोः सुतस्य सच्छास्त्रदानानुरतो विनीतः ।
कृषिक्रियासत्पशुसौख्ययुक्तः कन्याप्रजः स्यान्मनुजो धनाढ्यः१५४
भृगुसुतस्य दशा मिथुनस्थितेर्विविधकाव्यकलोत्सवयुङ्नरम् ।
परमविस्मयहास्यकथांतरं धनचयं परदेशगमोत्सुकम् ॥ १५५ ॥

कर्कंगामिभृगुजस्य दशायां स्वीयकार्यकुशलोऽतिकृतज्ञः ।
उद्यमाद्द्रविणभूषणशाली स्यान्नरो हि वनितान्तरचित्तः ॥ १५६ ॥
सिंहोपयातस्य भृगोर्दशायां भार्याप्तवित्तोऽन्यधनोपजीवी ।
नरो हि पश्वादिगणान्वितः स्यात्पुत्राऽल्पसौख्यो धिषणावरेण्यः १५७
कन्याश्रितस्योशनसो दशायां भग्नोत्सवो वित्तसुखेन हीनः ।
विदेशवासी चपलो नरः स्यात्त्यक्तः स्वदारात्मजबंधुवर्गैः ॥ १५८ ॥

मेषगत शुक्रदशामें पुरुषोंको मनकी चञ्चलता, विदेश भ्रमण, विशेषतः उद्वेगता और व्यसन होवै । स्त्री, धन, सुखकी हानि विशेष होवै ॥ १५३॥ वृषगत शुक्रदशामें मनुष्य उत्तम शास्त्रमें, दानमें तत्पर रहे, नम्र होवै, कृषि-कर्म, उत्तम पशुके सुखसे युक्त, कन्या संतानवान् और धनवान् होवै॥ १५४॥ मिथुनगत शुक्रदशामें अनेक प्रकारकी काव्यकलाके उत्सवोंसे युक्त, परम आश्चर्यजनक, हाँसी कथांतरयुक्त, धनसमूहयुक्त और मनुष्यको परदेश गमनमें उद्यत करती है ॥ १५५॥ कर्कगत शुक्रदशामें अपने कार्यमें अभिज्ञ, अति-कृतज्ञ, उद्यमसे धन भूषणवान् और अन्य स्त्रियोंमें मन लगानेवाला मनुष्य होवै ॥ १५६ ॥ सिंहगत शुक्रदशामें स्त्रीसे धन पावै, पराये धनसे आजीवन करै, पशु आदिके समूहसे युक्त, पुत्रसे अल्पसौख्य और बुद्धिश्रेष्ठ मनुष्य होवै ॥ १५७॥ कन्यागत शुक्रदशामें उत्सवरहित, धनसुख करके हीन, परदेश-वासी, चपल और अपनी स्त्री, पुत्र, बन्धुवर्गसे मनुष्य त्यागा रहै ॥ १५८॥

कन्यानवांशस्थितभार्गवस्य पाके नृपात्तस्करतोऽर्थहानिः ।
वृथाऽटनं नीचजनैश्च सख्यं भिक्षाटनं वा ननु मानवानाम्
॥ १५९ ॥ स्वर्क्षे त्रिकोणे भृगुजस्य पाके विशिष्टनाम्ना
प्रथितो नरः स्यात् । कृषिक्रियासत्यसुधान्यवित्तैर्युक्तो-
ऽथवा ज्ञातिजनैर्धनाढ्यः ॥ १६० ॥ कीटोपयातस्य भृगो-
र्दशायां सदाटनो वै स नरः प्रतापी । परस्य कार्ये निरतो-
ऽनृणी स्यात्क्लेशानुरक्तः क्रयवित्तयुक्तः ॥ १६१ ॥ शराशन-
स्थस्य भृगोर्दशायां नरो भवेत्काव्यकलाप्रवीणः । क्लेशा-

ऽन्वितः शत्रुजनैर्विशेषान्नृपात्तमानः सुतदारतुष्टः॥ १६२ ॥
शुक्रस्य नक्रोपगतस्य पाके कुस्त्रीरतः क्लेशपरः सहिष्णुः।
कुटुम्बचिन्तासहितोऽरिहन्ता नरो भवेद्वातकफार्तियुक्तः
॥ १६३ ॥ कवेर्दशायां कलशस्थितस्य नरः कुकर्माभिरतः
कुशीलः। व्रतोपहन्ता व्यसनाभिभूतो रोगार्दितः स्यादनृतो-
क्तियुक्तः ॥ १६४ ॥ भृगोर्दशायां शफरस्थितस्य ज्ञानी
नरेन्द्राप्तधनः प्रधानः । कृषिक्रियावित्तविलासयुक्तो नरो
भवेद्वंशधरः समर्थः ॥ १६५ ॥ वर्गोत्तमे झषगतस्य भृगो-
र्दशायां मर्त्यः स्वनामगुणशौर्य्यधनोपपन्नः। नीरादिकार्य-
करणेऽतिकृतप्रयत्नो नूनं भवेत्कफसमीरविनिर्जितात्मा
॥१६६॥ स्वोच्चस्थितो भृगुसुतस्तनुकर्मगो वा लाभेऽपि वा
न सहितो न च पापदृष्टः। स्थानान्नृपालविषये बहुरत्न-
पूर्णोधीमान्विशालनयनो निजवंशनाथः ॥ १६७ ॥

कन्यानवांशमें स्थित शुक्रदशामें राजासे चोरसे धनहानि, व्यर्थ भ्रमण, नीच जनोंसे मैत्री वा मनुष्योंको निश्चय भीख मांगनी पडे ॥ १५९॥ तुला-गत शुक्रदशामें मनुष्य विशेष नाम (उपनाम) से विख्यात होवै। कृषिकर्म, सत्य, उत्तम अन्न, धनोंसे अथवा जात भाइयोंसे धनाढ्य होवै ॥ १६० ॥ वृश्चिकस्थ शुक्रदशामें सर्वत्र फिरता रहै, अत्यंत प्रतापी होवै और परकार्यमें तत्पर, अनृणी, क्लेशसे युक्त तथा खरीदसे, धनयुक्त होवै ॥१६१॥ धनगत शुक्रदशामें मनुष्य काव्यकलामें प्रवीण, शत्रुजनसे विशेष क्लेशयुक्त रहै, राजासे मान मिले, स्त्री पुत्रोंसे प्रसन्न रहै ॥ १६२ ॥ मकरगत शुक्रदशामें दुष्ट स्त्रीमें आसक्त, क्लेशमें तत्पर (सहनेवाला), कुटुंबकी चिंतायुक्त, शत्रुहंता और वात कफकी बाधायुक्त रहै ॥ १६३ ॥ कुंभगत शुक्रदशामें कुकर्मोंमें तत्पर, दुष्टस्वभाव, नियम तोडनेवाला, व्यसनोंसे दबाया रहै, रोगसे पीडित रहे, झूँठ बोले ॥ १६४ ॥ मीनगत शुक्रदशामें ज्ञानी होवै, राजासे धन मिले, प्रधान होवै, कृषिकर्म, धन, विलासयुक्त रहे तथा मनुष्य अपने वंशको बढानेवाला समर्थ होवै ॥१६५॥मीन मीनांशकगत शुक्रदशामें मनुष्य अपने नाम, गुण,

पराक्रम, धनसे युक्त रहे । जलसंबंधी काम करनेमें बडा प्रयत्नवान् होवै तथा कफ, वायुसे निश्चय रहित होवै ॥ १६६ ॥ शुक्र अपने उच्चमें लग्न, दशम, लाभमेंसे किसीमें पाप योग दृष्टि रहित होवै तो उसकी दशामें राजाके राज्यमें अधिकारी स्थान पावै, बहुतसे रत्नोंसे पूर्ण रहै, बुद्धिमान्, विशाल नेत्र, अपने वंशमें श्रेष्ठ होवै ॥ १६७ ॥

अथ शनिदशाफलम् ।

स्यात्पाके नलिनीशजस्य मनुजः श्रीमान्प्रतापाऽधिको नूनं ग्रामपुराधिकारसहितो देवद्विजार्चारतः । सद्धेमांबरवाजि-कुञ्जरमुखैः सद्वाहनैः संयुतोऽत्यंतं काव्यकलाकलापकुशलः सच्छीलकीर्त्याधिकः ॥ १६८ ॥ प्राक्स्थानागमसौख्ययुक् कुलवरोऽत्यंतं विनीतः पुमान् भूदेवामरगेहतत्फलमिदं सामा-न्यतः कीर्तितम् । निद्रालस्यकफानिलोष्णजरुजासंपीडितः स्यात्तनौ कण्डूदद्रुविचर्चिकादिभिरथो वृद्धांगनालालसः १६९॥

उत्तम बलादि युक्त शनिकी दशामें मनुष्य धनवान्, प्रतापमें अधिक, ग्राम नगरके अधिकार युक्त निश्चय होवै । देवता ब्राह्मणके पूजनमें तत्पर रहै, उत्तम सुवर्ण, वस्त्र, घोडे, हाथी आदि वाहानोंसे युक्त, काव्यकलाओंमें अत्यत चतुर और उत्तम कीर्त्ति, उत्तम स्वभावमें अधिक गणनामें युक्त होवै ॥ १६८ ॥ मध्यबलीकी दशामें पहिले स्थानके आगमनसे सुखयुक्त रहे । अपने कुलमें श्रेष्ठ होवै, अत्यंत नम्र वह मनुष्य होवै । ब्राह्मण देवता-गारसे सामान्य फल पावै अर्थात् उनकी सेवा करे परन्तु फल सामान्य मिले । हीनबलादिगत शनिदशामें निद्रा, आलस्य, कफ, वायुरोग, पित्तरोगसे पीडित शरीर तथा खुजली, पामा, दाद, हैजा आदिसे पीडित होवै और बूढी स्त्रीसे संगकी इच्छा रक्खे ॥ १६९ ॥ इति शनिदशासामान्यफलम् ॥

मेषस्थितस्यार्कसुतस्य पाके प्रवासशीलो मनुजः स्वतंत्रः ।
स्यान्मर्मचर्मामयपीडितांगस्त्यक्तः स्वमात्रा निजबंधुवर्गैः॥ १७०॥
पाके शनेर्नीचलवोज्झितस्य निरुद्यमः स्यात्पवनाप्तदुःखः ।
कलिप्रसंगान्मनुजोऽतिनिःस्वो विचर्चिकाद्यामयतः कृशांगः॥१७१॥

पाके वृषस्थस्य खरांशुसूनोर्भूपालसम्मानविराजमानः। रणाङ्गणप्राप्तयशोविशेषो मेधाऽन्वितो धर्मरतो नरः स्यात् ॥ १७२ ॥ द्वन्द्वोपयातस्य शनेर्दशायां सुतार्थभोगाऽभिरतस्त्वशान्तः। ऋणाभिघातः परकार्यरक्तः स्त्रीचौरतः स्यात्पुरुषोऽतिनिःस्वः ॥ १७३ ॥ कर्काधिरूढस्य शनेर्दशायां नरः स्वतंत्रो धिषणावरेण्यः। चिन्ताऽऽतुरो वा सुतबंधुहीनः कर्णाक्षिपीडामयतः कृशांगः ॥ १७४ ॥ पंचाननस्थस्य शनेर्दशायां रोगादिबाधा बहुधा नराणाम्। कलिः कलत्रात्मजबंधुवर्गैश्चतुष्पदैर्दासजनैरसौख्यम् ॥ १७५ ॥ पाथोनसंस्थस्य शनेर्दशायां भूनीरगेहादिविधानाचित्तः। विद्याप्रसंगाप्तधनस्तथोच्चप्रदेशतः स्याद्द्विजदेवभक्तः ॥ १७६ ॥ पाके तुलाश्रितशनेर्गजवाजिरत्नहेमाम्बराद्यभिगमः स्वकुलाऽनुमानात्। ख्यातं जनेषु विजयो वनिताविलासः सौख्यं भवेच्च विविधं खलु मानवानाम् ॥ १७७ ॥

मेषगत शनिकी दशामें मनुष्य प्रवासमें रहे, स्वतंत्र होवै, मर्मस्थानमें तथा चमडेमें रोग रहनेसे अंग पीडित रहै, अपनी माता तथा बंधुगणसे त्यक्त रहै ॥ १७० ॥ नीचांशकसे उतरे शनिकी दशामें निरुद्यमी, वायुपीडायुक्त, कलहप्रसंगसे अतिनिर्द्धन और वमन दस्त आदि रोगसे शरीर कृश होवै ॥ १७१ ॥ वृषगत शनिकी दशामें राजसन्मानसे विराजे, रणभूमिमें विशेष यश पावै, बुद्धिमान् तथा धर्ममें तत्पर मनुष्य होवै ॥ १७२ ॥ मिथुनगत शनिकी दशामें सुत धन भोगमें तत्पर रहै, शांत न होवै, ऋणसे पीडित, पराया काम करनेवाला तथा स्त्रीसे चोरसे पुरुष अतिनिर्द्धन होवै ॥ १७३ ॥ कर्कगत शनिकी दशामें मनुष्य स्वतंत्र रहै, बुद्धि श्रेष्ठ होवै, चिन्तासे आतुर अथवा पुत्रसे बांधवोंसे हीन रहै, कान नेत्रके रोगसे कृश अंग होवै ॥ १७४ ॥ सिंहगत शनिकी दशामें मनुष्योंको बहुधा रोग आदिकी पीडा होती है, स्त्री, पुत्र, बंधुवर्गमें कलह, चौपाया एवं दासजनसे दुःख

मिले॥ १७५ ॥ कन्यागत शनिकी दशामें भूमि, जलाशय, मकान बनानेमें चित्त रहै । विद्याप्रसंगसे तथा ऊंचे स्थानसे धन पावै, देव ब्राह्मणोंका भक्त होवै ॥ १७६ ॥ तुलागत शनिकी दशामें हाथी, घोडे, रत्न, सुवर्ण, वस्त्रोंकी प्राप्ति कुलानुरूप होवै । मनुष्योंमें विख्याति, विजय, स्त्रीविलास और अनेक प्रकारके सुख मनुष्योंको मिलते हैं ॥ १७७ ॥

कौर्प्योपयातस्य शनेर्दशायां वृथाऽटनः साहसकर्मयुक्तः । दयाविहीनः कृपणोऽनृतश्च नीचानुयातः परजीवनः स्यात् ॥ १७८ ॥ शरासनस्थस्य शनेर्दशायां नरेन्द्रमंत्री चतुरंघ्रियुक्तः । कान्तासुतानन्दभरो नरः स्याद्रणांगणप्राप्तयशावरेण्यः ॥ १७९ ॥ नक्रोपयातस्य शनेर्दशायां श्रमाप्तवित्तं सुभगत्वमुच्चैः । वृद्धांगनाक्लीबजनैः सखित्वं विश्वासघातेन धनच्युतिर्वा ॥ १८० ॥ शनेर्दशायां कलशस्थितस्य महत्प्रतिष्ठः स्वकुले वरिष्ठः । कृषिक्रियापुत्रधनादियुक्तो नरो भवेत्सर्वसुखैः प्रपूर्णः ॥ १८१ ॥ मीनस्थितस्यार्कसुतस्य पाके श्रेणीपुरग्रामकृताधिकारः । भवेन्नराणां द्रविणांगनाभ्यः सुखं तथोत्साहविनीतता च ॥ १८२ ॥ तुल्यं व्ययायं प्रकरोति मूढः शनिः स्वपाके रणभंगुरं च । संतोषकीर्त्त्या वियुतं मनुष्यं क्लेशैरनेकैः परितप्तचित्तम् ॥ १८३ ॥ नवांशराशिक्रममेवमुक्तं तयोर्निरुक्तं बलवत्तरं च । अत्रैव राश्यंशकवीर्यसाम्ये समानरूपं प्रवदेद्यथावत् ॥ १८४ ॥ एवं ग्रहाणां विविधैः प्रकारैर्दशाफलान्यब्जभुवेरितानि । ज्ञात्वा नराणां प्रकृतिस्वभावं समादिशेत्तस्य समानरूपम् ॥ १८५ ॥

वृश्चिकगत शनिकी दशामें व्यर्थ भ्रमण, साहसी काम, दयाहीनता, कृपणता, झूठ बोलना, नीचसंगति, परान्नादिसे आजीवन होते हैं ॥ १७८ ॥ धनगत, शनिकी दशामें मनुष्य राजमंत्री होवै । पशु वाहन युत, स्त्री पुत्रके आनंदसे परिपूर्ण, रणभूमिमें यश प्राप्ति और श्रेष्ठता मिले ॥ १७९ ॥ मकर गत

शनिकी दशामें कष्टसे धन प्राप्ति, बडा ऐश्वर्य, बूढी स्त्री तथा नपुंसक मनुष्योंसे मित्रता अथवा विश्वासघातसे धनहानि होवै ॥ १८० ॥ कुंभगत शनिकी दशामें मनुष्य बडी प्रतिष्ठावाला, अपने कुलमें श्रेष्ठ, कृषिकर्म, पुत्र, धन आदिसे युक्त, समस्त सुखोंसे पूर्ण होता है ॥ १८१ ॥ मीनगत शनिकी दशामें नगर, ग्राम, सीमाका अधिकार मिले, स्त्रियोंसे धनागम होवै, सुख मिले तथा उत्साह और नम्रता होवै ॥ १८२ ॥ अस्तंगत शनिकी दशामें आमद खर्च बराबर, रणमें भग्नता, संतोष एवं कीर्तिसे युक्त, अनेक क्लेशोंसे संतप्त चित्त करता है ॥ १८३ ॥ यह दशाफल नवांश और राशिक्रमसे कहा है, इन राशि-नवांशकोंमेंसे जो विशेष बलवान् हो उसका फल विशेष होता है, दोनोंका बल समान होनेमें समान फल कहना ॥ १८४ ॥ इस प्रकार ग्रहोंके अनेक प्रकार दशाफल ब्रह्माके कहे हुए जानने, उसमें मनुष्योंका स्वभाव प्रकृति, जाति, कुल, देशादि स्वबुद्धिसे विचारके यथावत् फल कहना ॥ १८५ ॥

लग्नदशाफलम् ।

तनोर्दशा स्यात्त्रिलवक्रमेण चरे शुभा मध्यफलाऽधमा च ।
कष्टा शुभा मध्यफला स्थिरे च द्व्यंगेऽधमा मध्यफलोत्तमा च॥१८६
शुभमध्याधमकान्यथो फलानि लग्नेशस्य दशोदितानि तानि ।
कल्प्यानीह तथा बलानुमानाल्लग्नस्याधिपतेस्तु बुद्धिमद्भिः॥१८७॥

लग्नदशाका फल कहते हैं कि—चर लग्न हो तो प्रथम द्रेष्काणमें शुभ, दूसरेमें मध्यम, तीसरेमें अधम । स्थिर लग्नमें प्रथममें कष्ट, दूसरेमें शुभ, तीसरेमें मध्यम । द्विस्वभावमें प्रथममें कष्ट, दूसरेमें मध्यम, तीसरेमें उत्तम फल देती है ॥ १८६ ॥ यहां बुद्धिमानोंने लग्नेशके बलानुसार शुभ, मध्यम और अधम फल लग्नेशके सदृश लग्नदशामेंभी कहने ॥ १८७ ॥

अथाष्टकवर्गदशायामंतर्दशाक्रमः ।

एकर्क्षेऽर्द्धं त्र्यंशकं वै त्रिकोणे तुर्यं भागं रन्ध्रबंधुस्थयोश्च ।
द्यूनेऽद्र्यंशं पाचयत्येव खेटश्चेदेकर्क्षे द्व्यादयो यो बली सः ॥१८८॥

दशापतिके साथ जो ग्रह हो वह आधेका पाचक होता है उससे त्रिकोण-गत तीसरे भागका, ४ । ८ भाववाला चौथाईका, सप्तमगत ग्रह सप्तमांशका पाचक होता है। यदि एक स्थानमें दो आदि ग्रह होवें तो जो उनमेंसे बल-वान् है वही पाचक होता है सभी नहीं होते। इसका विस्तार समच्छेदक्रमसे पहिले खुलासा लिखा है ॥ १८८ ॥

सिंहीपुत्रेणाऽन्वितं चेद्विलग्नं प्रोक्तस्थानेष्वन्यखेटा न चैवम् । हृता राहुः सौरितुल्यं फलं तद्वाच्यं नूनं तत्र चांतर्दशायाम् ॥१८९॥ अंतर्दशाविभागे तु रवीन्द्वो राहुना सह । यमतुल्य-फलं ज्ञेयं नैवान्येषां क्वचिज्जगुः॥१९०॥ अर्केन्दुपृथ्वीतनया-ऽर्कजेभ्यः सिंहीसुतस्यैव दशाऽपहारे। मृतिं रुजं मृत्युसमं शुभं चेद्दशाफलं तत्र वदोद्धिमिश्रम् ॥ १९१॥ यस्यिन् भावे सैंहिकेयस्तु यस्य पुंसः सूतौ स्यात्तदीशस्य पाके । मृत्यु-र्वाच्यस्तद्विषोऽन्तर्दशायां होराविद्भिर्निश्चितं तस्य यद्वा॥१९२॥

पूर्वाचार्योंने राहुकीभी अंतर्दशा कही है, उनका मत कहते हैं कि, राहु लग्नमें हो, पूर्वस्थानोंमें अन्य ग्रह न होवै तो पाचकभी राहुही होता है। इसका फल निश्चय करके अंतर्दशामें शनिके तुल्य कहना ॥ १८९ ॥ अंतर्दशाविभागमें सूर्य चंद्रमाका राहुके साथ होनेमें शनिके समान कहना अन्यका नहीं, ऐसा किसी आचार्योंका मत है ॥ १९० ॥ राहुदशामें सूर्य, चन्द्रमा, मंगल, शनिके अंतर्दशा मृत्यु वा मृत्युतुल्य रोग करते हैं। यदि वह अंतर्दशेश शुभ होवै तो मिश्रित फल कहना ॥ १९१ ॥ जिस पुरुषका राहु जिस भावमें है उस भावस्वामीकी दशामें उसके शत्रुकी अन्तर्दशामें ज्योतिषज्ञोंने निश्चय उसकी मृत्यु कहनी ॥ १९२ ॥

लग्नस्य पाके यदि लग्नपस्य भवेत्सपत्नस्य दशापहारे। स्यान्मानवानां निधनं त्ववश्यं लग्नं शुभाख्यैः सहितं न चेत्स्यात् ॥ १९३ ॥ विलग्नजन्माधिपतिर्नभोगः षडष्टक-

श्चाष्टकवर्गके च। शून्यर्क्षगस्तस्य दशाविभागे भवेदवश्यं निधनं नरस्य ॥ १९४ ॥ नीचास्थितश्चेत्तनुनायकोऽपि व्ययस्थितो वा निधनस्थितो वा । स्यात्तद्दशायां निधनं त्ववश्यं क्रूरग्रहैश्चेत्सहितं विलग्नम् ॥ १९५ ॥ विलग्नजन्माष्टमभे यदा वा विलग्नजन्मोदयके तथैव। विलग्ननीचोदयकेऽपि तेषां शून्ये फले चेन्निधनं प्रवाच्यम् ॥ १९६ ॥ जाता नरा ये ह्युभयत्र योगेऽप्यंतर्दशायां प्रवदेदरिष्टम् । तेषां सुधीभिर्ननु जातकज्ञैः शांतिं ग्रहाणां जपहोमदानैः ॥ १९७ ॥ यस्मिन्नवांशे वनिताधिनाथो भवेत्प्रसूतौ ननु मानवानाम् । याते तदीशस्य दशांतराले जायाधिपे तत्र कलत्रयोगम्॥१९८॥

लग्नदशामें लग्नेशके शत्रुका अंतर होवै तो मनुष्योंकी उसमें अवश्य मृत्यु होती है परंतु यदि लग्नमें शुभग्रह न हों ॥ १९३ ॥ लग्नेश छठा वा आठवां हो अष्टकवर्गमें भी शून्य राशिमें होवै तो उसकी दशा दशातरमें मनुष्यकी अवश्य मृत्यु होती है ॥ १९४ ॥ लग्नेश नीचराशिगत १२ वा ८ भावमें होवै तो उसकी दशा अंतरदशामें अवश्य मनुष्यकी मृत्यु होती है। परंतु यदि लग्नमें पापग्रहभी हों ॥ १९५ ॥ जन्मलग्नसे अष्टम लग्नमें और लग्ननीचमें अष्टकवर्गके शून्य फल होवैं तो लग्नेशदशा दशांतरमें मृत्यु होती है॥ १९६ ॥ जो मनुष्य उक्त प्रकारके मृत्युयोग एवं पूर्वोक्त दीर्घायु योगमें भी जन्मे हैं उनको अरिष्टदायमें अरिष्टमात्र होता है। उनकी शान्ति बुद्धिमान् ज्योतिषियोंने नव ग्रहजप, हवन, दानसे करानी ॥ १९७ ॥ जिस नवांशकमें सप्तमेश है उसके स्वामीके दशा दशांतरमें मनुष्योंको अवश्य स्त्री प्राप्ति होती है ॥ १९८ ॥

दशाधिपे नैधनभावसंस्थे रणांगणे चेद्रिपुणा हते च । स्यात्तद्दशायां निधनं त्ववश्यमशंकितं ज्योतिषिकैरिहोक्तम् ॥ १९९ ॥ जन्मर्क्षनाथो निजलग्ननाथः शत्रोर्दशायां मतिविभ्रमं च। रिपोर्भयं राज्यपरिच्युतिश्च कलिः खलैः स्याद्बलहीनता च ॥ २०० ॥ यदि खलद्युचरस्य दशांतरे

खलखगस्य किलांतरजा दशा । प्रकुरुते निधनं द्रविणक्षयं तनुभृतां नितरां च रिपूदयम् ॥ २०१ ॥ अंतर्दशा चैकगृहस्थितानां द्वित्र्यादिकानामशुभग्रहाणाम् । करोति दैन्यं च रुजं विवादं धनक्षयं शत्रुभयं नराणाम् ॥ २०२ ॥

दशेश अष्टम भावमें हो अथवा युद्धमें हारा हो तो उसकी दशामें अवश्य ज्योतिषियोंने मृत्यु कही है ॥१९९॥ जन्मराशिका स्वामी वा जन्मलग्नका स्वामी शत्रुकी दशाके अंतरमें बुद्धिभ्रम, शत्रुका भय, राज्यसे च्युति, दुष्टजनोंसे कलह और निर्बलता करती है ॥ २०० ॥ यदि पापग्रहकी दशामें पापग्रहका अंतर होवै तो मृत्यु, धनक्षय और शत्रुका उदय इनमेंसे कोई मनुष्योंको निरंतर करता है ॥ २०१ ॥ दो तीन आदि एक राशिस्थित पापग्रहोंके दशा और अंतरदशा दीनता, रोग, कलह, धनहानि और शत्रुभय मनुष्योंको करती है ॥ २०२ ॥

अंतर्दशा चैकगृहस्थितानां सतां निजोच्चर्क्षविवर्जितानाम् । प्रेष्यं मनुष्यं द्रविणेन हीनं करोति दीनं च विरोधयुक्तम् ॥ २०३ ॥ जामित्रगानां गगनेचराणामंतर्दशायां मरणं गृहिण्याः । धनक्षयः स्यात्कलहादिसंगो रोगः कुभोगः खलु नीचसंगः ॥ २०४ ॥ रन्ध्रस्थितानां गगनेचराणामंतर्दशाऽरिष्टसमुद्भवं च । द्रव्यस्य नाशं व्यसनानि पुंसां शत्रूदयं चामयपीडनं च ॥ २०५ ॥ व्योमौकसां पंचनवर्क्षगानामन्तर्दशा संजनयेच्च वित्तम् । विलासिनीनंदनजाततोषं हर्षोदयं कांतिविवर्द्धनं च ॥ २०६ ॥ सुखस्थितानां च नभश्चराणामन्तर्दशा सौख्यमतीव नित्यम् । स्त्रीपुत्रमित्रद्रविणादिकानां निरोगितां मानसमुन्नतिं च ॥ २०७ ॥

एक भावगत शुभग्रह जो उच्च स्वराशिके न हों तो उनकी दशान्तर्दशा मनुष्यको पराया प्रेष्य, धनहीन, दीन और विरोधयुक्त करती है ॥ २०३ ॥ सप्तमगत पापग्रहोंकी अंतर्दशामें स्त्रीका मरण, धनक्षय, कलहादिका संयोग, रोग, निन्द्य भोग और नीच संग निश्चय होता है ॥२०४॥ अष्टमगत ग्रहोंकी

अंतर्दशामें अरिष्टकी उत्पत्ति, धनका नाश, व्यसन, शत्रुका उदय और रोगसे पीडन पुरुषोंको होते हैं ॥ २०५ ॥ पंचम नवमगत ग्रहोंकी अंतर्दशामें धन देती है, स्त्री पुत्रपक्षसे हर्ष, कांतिवृद्धि होती है ॥ २०६ ॥ चतुर्थस्थानगत ग्रहोंकी अंतर्दशामें नित्य स्त्री, पुत्र, मित्र, धनादियोंका अतिशय सौख्य होता है तथा निरोगिता और मानोन्नति होती है ॥ २०७ ॥

अथ रवेरंतर्दशाफलानि ।

पङ्केरुहेशस्य दशांतराले पङ्केरुहेशः कुरुते नराणाम् ।
सन्मित्रपुत्रद्रविणादिसौख्यं कान्ताविलासं शुभदा दशा चेत्॥२०८॥
सरोजिनीशस्य दशांतराले नक्षत्रनाथः कुरुते नराणाम् ।
प्रसादमद्भ्यो ग्रहणीं च पाण्डुं क्षयं यदा कष्टफला दशा चेत्॥२०९॥
महीसुतः सूर्यदशान्तराले सद्रत्नहेमाम्बरजातसौख्यम् ।
विख्यातकीर्तिं विपुलप्रतापं पित्तानलार्त्तिं नृपवित्तलब्धिम् ॥२१०॥
भानोर्दशायां शशिजे मनुष्यो भग्नोद्यमः स्याच्चपलः प्रमादी ।
विचर्चिकादद्रुविकारपूर्णैः प्रपीडिताऽङ्गो द्रविणेन हीनः ॥ २११ ॥
स्यान्मतिर्द्विजसुरार्चनेऽमला धान्यवस्त्रपरिसंग्रहेषु च ।
मानवाहनधनागमो नृपाद्गीष्पतौ रविदशान्तरे नृणाम् ॥ २१२ ॥
शूलं च शीर्षोदरकर्णदेशे विदेशयानं कलहाकुलत्वम् ।
करोति तीव्रं ज्वरमस्वतंत्रंदैत्यार्चितो भानुदशां प्रयातः ॥ २१३ ॥
नीचतस्करभयं जलभीतिं वैरितां वितनुते निजमित्रैः ।
भानुजः कमलिनीशदशायां दद्रुतश्च नृपतेरतिदुःखम् ॥ २१४ ॥

सूर्यदशामें सूर्यका अंतर मनुष्योंको अच्छे मित्र, पुत्र, धन आदिका सुख, स्त्री विलास करता है, यदि सूर्य शुभद हो ॥२०८॥ सूर्यदशामें चंद्रमा मनुष्योंको जलसंबंधी कामसे लाभादि तथा अतिसार, पांडु, क्षयरोग करता है, यदि चन्द्रमा कष्ट फलवाला हो ॥ २०९ ॥ सूर्यमें मंगलका अंतर उत्तम रत्न, सुवर्ण, वस्त्रसे उत्पन्न सौख्य, विख्यात कीर्ति, बडा प्रताप, राजासे धनलाभ और पित्त वातरोगसे पीडा करता है ॥ २१० ॥ सूर्यगत बुधांतरमें मनुष्य निरुद्यमी, चपल, प्रमादवाला, हैजा, दाद आदि विकारोंसे पीडित

शरीर और धनहीन होता है ॥ २११ ॥ सूर्यदशागत गुरुके अंतरमें देव-ब्राह्मणके पूजनमें बुद्धि, निर्मल अन्न वस्त्र संग्रहमें भी तत्परता तथा मनुष्योंको राजासे मान, वाहन, धन मिलते हैं ॥ २१२ ॥ सूर्यदशामें शुक्रांतरमें शिर, पेट, कानमें शूल, विदेश गमन, कलहसे आकुलता, तीव्रज्वर, स्वतंत्रतासे रहित करता है ॥ २१३ ॥ सूर्यमें शनि नीचसे चोरसे जलसे भय, मित्रोंमें वैर, दाद रोगसे तथा राजासे अति दुःख करता है ॥ २१४ ॥

अथ चंद्रान्तर्दशाफलानि ।

क्षयामयार्तिं प्रकृतेर्विकारं विदेशयानं कलहं स्वकीयैः ।
सद्धर्मकर्मद्रविणेन हीनं विधोर्दशायां कुरुते दिनेशः ॥ २१५ ॥
मुक्ताफलैः सद्द्रविणैः समेतो लाभान्वितो वारिजकर्मणा च ।
भवेन्मनुष्यो वनितादिसौख्ययुतः शशांके यदि चंद्रदाये ॥ २१६ ॥
रक्तपित्तकलिसंभ्रमदोषं शत्रुतां वितनुते स्थलहानिम् ।
मंगलः कुमुदिनीशदशायां पीडनं च जननीपितृवर्गे ॥ २१७ ॥
गोगजाश्वधनभूमिविद्यया संयुतो हि मनुजः क्षमान्वितः ।
विश्रुतोऽन्यविषये पृथुस्त्वयं बोधने शशिदशांतरस्थिते ॥ २१८ ॥
गोगजाश्वधनभूसुतोत्सवैः सद्विलासवरधर्मविद्यया ।
संयुतो भवति लोकविश्रुतो वाक्पतौ शशिदशांतरे गते ॥ २१९ ॥
सद्विलासविविधांगनाजनैर्मौक्तिकैर्विविधभूषणैर्धनैः ।
संयुतः शशिदशांतरे सिते धान्यकैः कृषिजलोद्भवैः पुमान् ॥ २२० ॥
चौरभूपरिपुवह्निजं भयं मानवस्य वनितात्मजं सुखम् ।
रुक्चयं व्यसनतां करोत्यलं पिंगलः शशिदशांतरस्थितः ॥ २२१ ॥

चंद्रदशामें सूर्यका अंतर मनुष्यको क्षयरोग पीडा, स्वाभाविक विकार, विदेश गमन, अपने मनुष्योंसे कलह, उत्तम धर्म कर्म तथा धनसे हीन करता है ॥ २१५ ॥ चंद्रदशा चंद्रांतरमें मनुष्य मोती उत्तम धनसे युक्त रहता है, जल-संबंधी काममें लाभ होता है, स्त्री आदिका सुख मिलता है ॥ २१६ ॥ चंद्र-दशामें मंगलांतर रक्त पित्तदोष, कलह, संभ्रम, शत्रुता, भूमि हानि और मातृ-

पितृपक्षमें पीडन करता है ॥ २१७ ॥ चन्द्रमागत बुधमें गौ, हाथी, घोडा, भूमि, विद्यासे संयुक्त, क्षमावान्, अन्य देशोंमें बडे नामसे विख्यात मनुष्य होता है ॥ २१८ ॥ चन्द्र दशागत गुरुके अन्तरमें मनुष्य गौ, हाथी, घोडे, धन भूमि पुत्रोत्सवसे युक्त श्रेष्ठ विद्या, एवं धर्मसे उत्तम विलाससे युक्त, लोकमें विख्यात होता है ॥ २१९ ॥ चन्द्रदशागत शुक्रांतरमें मनुष्य अनेक प्रकारकी स्त्रियोंसे, उत्तम विलाससे, मोती अनेक भूषण धनसे संयुक्त रहता है ॥ २२० ॥ चन्द्र दशागत शन्यंतरमें मनुष्यको चोरसे राजासे अग्निसे भय, स्त्री पुत्रोंका सुख, रोगोंका पुंज और व्यसनता करता है ॥ २२१ ॥

अथ भौमांतर्दशाफलानि ।

दुर्गादरण्यान्नृपतेर्धनाढ्यस्तुल्यो भवेन्ना पितृबंधुवर्गैः । ज्ञानी प्रचण्डो विजयाधिशाली विकर्तने भौमदशांतरस्थे ॥२२२॥ गतोत्सवः पित्तकफाधिकः स्यान्नानाजनानां हरणेऽतिदक्षः । बहुप्रकारैरुपजीवनार्थं द्विजाधिपो भौमदशांतरस्थः॥२२३॥ सद्वित्तभूषाम्बरमौक्तिकानि नित्योत्सवानंदमहत्पदानि । करोत्यलं पित्तकफार्तिमिंदुः कुजस्य पाके प्रवदंति केचित् ॥ २२४ ॥ वैरितस्करनृपामयार्दितः पीडितो हि मनुजो गतोत्सवः । वर्जितः सुतविलासिनीधनैश्चन्द्रजे कुजदशांतरस्थिते ॥ २२५ ॥ गोहयादिवरवाहनैर्युतः पुत्रमित्रवनितादिसत्सुखैः । धर्मविन्नृपधनः कुलाधिकः स्यान्नरः कुजदशांतरे गुरौ ॥ २२६ ॥ चलमनाः श्वसनव्यसनाकुलो निजजनैर्द्रविणैः परिवर्जितः । हतबलः परदेशरतः पुमान् भृगुसुतेऽवनिजस्य दशांतरे ॥ २२७ ॥ स्थानभ्रंशो मृत्युतुल्यप्रपीडा कांतापुत्रस्वीयवर्गेषु पीडा । क्लेशोऽत्यंतं मानहानिर्नराणां धात्रीपुत्रस्यांतरालेऽर्कसूनौ ॥ २२८ ॥

मंगलदशाके सूर्यांतरमें मनुष्य किला वन और राजासे धनवान् होता है, पिता एवं बन्धुवर्गके तुल्य होवै, ज्ञानी, प्रचंड विजयी होवै ॥ २२२ ॥ भौम

चन्द्रमें उत्सवरहित होवै, पित्त कफ अधिक, अनेक मनुष्योंके अनेक प्रकारसे गुजरके लिये ठगनेमें अति चतुर होवै ॥ २२३ ॥ किसीका मत है कि, इसमें उत्तम धन, भूषण, वस्त्र, मोती, नित्य उत्सवोंसे आनन्द, बडे पद और पित्तकफसे पीडा करता है ॥ २२४ ॥ मं० बु० में शत्रु चोर राजा रोगसे पीडित रहै, उत्सव न होवै, पुत्र स्त्री और धनसे रहित रहै ॥ २२५ ॥ मं० गु० में गौ घोडा आदि श्रेष्ठ वाहनोंसे पुत्र मित्र स्त्री सुखसे युक्त रहै । धर्म जानै, राजासे धन पावै, अपने कुलमें वह मनुष्य अधिक श्रेष्ठ होवै ॥ २२६ ॥ मं० शु० में मन चञ्चल रहै, वायुरोगव्यसनसे व्याकुल होवै, अपने मनुष्य तथा धनसे वर्जित रहै, बलहीन होवै और मनुष्य परदेशवासी होवै ॥ २२७ ॥ मं० श० में स्थानभ्रष्ट होवै, मृत्युतुल्य पीडा, स्त्री पुत्रादि अपने मनुष्योंको पीडा होवै, अत्यन्त क्लेश एवं मानहानि होवै ॥ २२८ ॥

अथ बुधांतर्दशाफलानि ।

स्वस्थानतः संचलनं करोति नानामयैः पीडनकं त्वकस्मात् धनागमं धर्मचयं नराणां विकर्तनः सौम्यदशां प्रविष्टः ॥ २२९ ॥ सद्वारणानां च तुरंगहेम्नां सदंबराणां च सुविद्रुमाणाम् । भवेद्वातिर्बहुवैभवानां सूर्ये ज्ञपाके प्रवदंति केचित् ॥ २३० ॥ मृतप्रजासंभवमल्पतोषं पामामयार्तिं पशुपीडनं च । कुस्त्रीरतिं ज्ञातिजनाप्तवित्तमिन्दुर्ज्ञपाके कुरुते नराणाम् ॥ २३१ ॥ ऊर्ध्वाङ्गगुह्यामयपीडितः स्याद्बहुव्ययार्त्तः सुतदारहीनः । विलुप्तधर्मोऽन्यजनेषु तुष्टो बुधस्य मध्ये वसुधातनूजे ॥ २३२ ॥ कांतासुतानंदयुतोऽरिहन्ता सद्धर्मकर्माभिरतो विनीतः । मंत्री नरः स्यात्पितृमातृदुःखी बृहस्पतौ सौम्यदशांतरस्थे ॥ २३३ ॥ विविधभूषणवस्त्रधनान्वितः सुधिषणो द्विजदेवसमर्चने । विबुधसाधुजनेष्वतिसादरो बुधदशांतरगे दनुजार्चिते ॥ २३४ ॥ नानायासैश्चापि संरोधनैर्वा कुर्यान्नित्यं निश्चयं देहभाजाम् । नानाबाधामिन्दुपुत्रस्य

पाके दैत्यामात्यः संवदंतीह केचित् ॥ २३५ ॥ कदन्न-पानासुखयुक् प्रतापी नीचप्रियोऽत्यंतमृदुस्वभावः । सद्धर्म-कान्ताद्रविणेन हीनो नरोऽर्कजे सौम्यदशांतरस्थे ॥ २३६ ॥

बुधदशान्तर सूर्यांतरदशामें स्थानचालन, अकस्मात् अनेक रोगोंसे पीडन, धनकी आमद, धर्मका समूह करता है ॥ २२९ ॥ किसीका मत है कि, उत्तम हाथी, घोडे, सुवर्ण, वस्त्र, मूंगाओंकी प्राप्ति, बहुत ऐश्वर्य होवै ॥ २३० ॥ बु०चं०में मरी संतान होनेसे अप्रसन्नता, खुजली, फुन्सीसे पीडा, निंद्यस्त्रीसे रति और जात विरादरीसे धन होवै ॥ २३१ ॥ मस्तक और गुह्यस्थानमें रोगसे पीडित रहै। बहुत खर्चसे पीडित, स्त्री पुत्रोंसे हीन रहै। धर्म लोप होवै, अन्य मनुष्योंमें खुश रहै ॥२३२॥ बु० बृ० में स्त्री पुत्रोंके आनन्दसे युक्त रहै, शत्रुको मारे, उत्तम धर्म कर्ममें तत्पर रहे, नम्र होवै, मन्त्री होवै तथा मनुष्य पिता माताको दुःख करै ॥ २३३ ॥ बु० शु० में अनेक अनेक प्रकारके भूषण, वस्त्र, धनसे युक्त होवै, देव ब्राह्मण पूजनमें सद्बुद्धि होवै । देवता एवं साधुजनोंमें आदरसहित रहै ॥२३४॥ किसीका मत है कि, अनेक कष्टोंसे अथवा कैदसे निश्चय नित्य अनेकप्रकारका कष्ट मनुष्योंको करता है ॥ २३५ ॥ बु० श० में कोदौ साँवा आदि निन्द्य अन्न पानसे असुख रहे । प्रतापी होवै परन्तु नीचजनोंको प्यारा माने, मृदु स्वभाव होवै, उत्तम धर्म, स्त्री और धनसे हीन होवै ॥ २३६ ॥

अथ गुर्वन्तर्दशांतरफलानि ।

नरेशमान्यः सुखभोगवित्तयुक्तः सभायां सुजनेषु पूज्यः । विशिष्टनाम्ना प्रथितो नरः स्याद्भानौ सुराचार्यदशांतरस्थे ॥ २३७ ॥ कांतासुतप्रीतिकरो विनीतः ख्यातो धनी भूपति-लब्धमानः। विद्यामहोत्साहपरो नरः स्यात्कलाधरे जीवदशां-तरस्थे ॥ २३८॥ शिरोऽक्षिगुह्यामययुङ्मनुष्यो विदेशवासी विबलोऽल्पवित्तः । पराश्रयी स्यात्कलहानुरक्तो भौमे सुरे-ज्यस्य दशांतरस्थे ॥ २३९ ॥ सौख्यार्थसद्रोगयुतो नरः

स्यात्संग्रामसंप्राप्तयशोविशेषः । प्रौढप्रतापी धिषणस्य पाके भौमे प्रविष्टे प्रवदंति केचित् ॥ २४० ॥ मंदोत्सवः स्यात्सलिलप्रमादी विदेशवासी चपलो विवादी । अधर्मयुङ्मस्तकपीडितो ना चन्द्रात्मजे जीवदशांतरस्थे ॥ २४१ ॥ स्त्रीपुत्रवित्तालयवाहनानां सद्बुद्धिकौशल्यसुरार्चनानाम् । करोति लाभं शशिजः सुरेज्यदशां प्रविष्टः प्रवदंति केचित् ॥२४२॥ सद्वस्त्रसस्यग्रहणेऽतिशीलः सद्धर्मविद्यास्वपि वह्निदीप्तः । नूनं नरो वातकफार्दितः स्याद्दैत्यार्चिते जीवदशांतरस्थे ॥ २४३ ॥ स्याद्धनैर्निजजनैर्विवर्जितः श्लेष्मवातकलहैः प्रपीडितः । स्यान्नरो व्यसनयुक्तवौ गुरोरंतरे च जगदुः क्वचिद्विदः ॥ २४४ ॥ पामाविषाद्यैः परिपीडितः स्यान्नरो विरोधी पशुवित्तयुक्तः । कुस्त्रीरतः प्रेष्यजनाभितप्तो मन्दे सुराचार्यदशां प्रयाते ॥ २४५ ॥

गुरुदशागत सूर्यके अन्तरमें राजमान, सुख, भोग, धनसे युक्त होता है। सभामें सज्जनोंमें पूज्य विशेष नाम (उपाधि) से विख्यात होवै ॥ २३७॥ बृ० चं में स्त्री पुत्रसे प्रसन्नता, नम्रता मिले, विख्यात, धनवान्, राजासे सम्मान, विद्या बडे उत्साहमें तत्पर मनुष्य रहे ॥ २३८॥ बृ० मं० में शिर नेत्र गुह्यस्थानमें रोगी, विदेशवासी, निर्बल, अल्पधनी, पराये आश्रयमें रहना तथा कलहमें अनुरक्त मनुष्य रहता है ॥२३९॥ किसीका मत है कि, सुख धन उत्तम भोगयुक्त मनुष्य होता है । संग्राममें यश विशेष पावै, बडा प्रताप होवै, ये दो प्रकारके फल गुरु मंगलके शुभाशुभतासे होते हैं॥२४०॥बृ०बु० में उत्सव मन्द होवै, जलसंबंधी प्रमाद होवै, विदेशवास, चपल, झगडालू, अधर्मयुक्त होवै, शिरमें पीडा मनुष्यके रहै॥२४१॥ किसीका मत है कि, स्त्री, पुत्र, धन, घर, वाहनोंका तथा उत्तम बुद्धिकी चातुर्यता, देवतार्चनोंका लाभ करता है ॥ २४२ ॥ बृ० शु० में उत्तम वस्त्र अन्न लेनेमें आसक्त, उत्तम विद्यामेंभी आसक्त रहै, अग्नि बलवान् रहै और मनुष्य वात कफ रोगसे पीडितभी

निश्चय रहे ॥२४३॥ किसीका मत है कि, धन और अपने मनुष्योंसे वर्जित रहै। श्लेष्म, वात तथा कलहसे पीडित रहै और व्यसनयुक्तभी मनुष्य रहै ॥ २४४ ॥ बृ० श० में खुजली विष आदिसे पीडित, विरोधी, पशुधनसे युक्त, कुस्त्रीमें आसक्त, दूतजनसे संतप्त मनुष्य रहता है ॥ २४५ ॥

अथ शुक्रांतर्दशाफलानि ।

नृपभयं निजबंधुनिमित्तजं धनविनाशनकं कुरुते नृणाम् । गुदविलोचनशूलमरेः कलिं भृगुदशांतरगः खरदीधितिः ॥ २४६ ॥ मौलिदंतनखपीडितः पुमान् पित्तकामलगरार्दितो भवेत् । श्वापदाच्च नृपतेर्भयार्दितो भार्गवांतरगते तुहिनांशौ ॥ २४७ ॥ रिपुगणाद्विजयो हि रणांगणे द्विजसुरार्चनदान-मतिर्नृणाम् । नृपतितः प्रमदाश्रयतो धनं ह्युशनसोऽन्तरगे हिमगौ क्वचित् ॥ २४८ ॥ रुधिरपित्तरुजा विकला तनुः क्षतरदामययुग्विगतोत्सवः । धरणिजे भृगुजस्य दशांतरे कुवनिताजनसंगपरो नरः ॥ २४९ ॥ विविधमानधनागमनं भवेत्तनुभृतां नृपतेश्च धरागमम् । धरणिजे भृगुजस्य दशांतरे विविधवस्तुसुखं जगदुः क्वचित् ॥ २५० ॥ वृक्षात्फलाढ्ये पशुतो धनाढ्यः कांताविलासी नृपलब्धमानः । दूरं तु कार्याभिरतोऽभिमानी चन्द्रात्मजे शुक्रदशांतरस्थे ॥ २५१ ॥ मखमहोत्सवपुण्यपरो नरः सुवनितात्मजबंधुजनान्वितः । उशनसोंऽतरगेऽमरपूजिते सुवचसा नृपलब्धमहत्पदः ॥२५२॥ रिपुक्षयं ग्रामपुराधिपत्यं मित्रोन्नतिं वित्तसमागमं च । करोति नूनं प्रमदाविलासं भानोः सुतः काव्यदशां प्रविष्टः ॥२५३॥

शुक्रदशागत शनिके अंतरमें अपने बंधुनिमित्त राजासे भय होवै तथा मनुष्योंका धन नाश करता है । गुदा नेत्रमें शूल, शत्रुसे कलह करता है ॥२४६॥ शु० चं० में शिर दांत नखोंमें पीडा, पित्त, कामला रोगसे पीडित रहै। कुत्ता, व्याघ्र आदि दुष्ट जंतुसे तथा राजासे भय पीडित रहै ॥२४७॥

मतांतर है कि, रणमें शत्रुसे जय, देव ब्राह्मण पूजनमें मनुष्योंकी बुद्धि होवै। राजासे तथा स्त्रीके आश्रयसे धन होवै ॥ २४८ ॥ शु० मं०में रुधिर पित्तरोगसे शरीर विकल रहे, चोट लगनेसे तथा दंतरोगसे युक्त रहे, खुशी न होवै और कुस्त्रीसंगमें तत्पर रहै ॥ २४९ ॥ मतांतर है कि, अनेक प्रकार मान, धनका आगम होवै । राजासे भूमि मिले तथा मनुष्योंको अनेक वस्तुका सुख होवै ॥ २५० ॥ शु० बु० में वृक्षसंबंधी फलसंबंधी कृत्यसे पशुसे धन, वाहन युक्त होवै । स्त्री विलास और राजासे मान मिले, दूरस्थानमें कार्यरत रहै, अभिमानी होवै ॥ २५१॥ शु० बृ० में यज्ञ महोत्सव और पुण्यमें मनुष्य तत्पर रहै । उत्तम स्त्री, पुत्र, बंधु, जनसे युक्त रहै, अच्छी वाणी करके राजासे बडा पद पावै ॥ २५२ ॥ शु० श० में शत्रुक्षय होवै, ग्राम नगरका आधिपत्य मिले, मित्रोंकी उन्नति, धनका समागम होवै और बूढी स्त्रीसे विलास करै तथा काव्यमें प्रवीण रहै ॥ २५३ ॥

अथ शन्यन्तर्दशाफलानि ।

सुखधनप्रमदात्मजवर्जितो रिपुजनामयतस्त्वतिपीडितः ।
दिनकरे रविजस्य दशांतरे कलहकृत्परदेशरतः पुमान् ॥ २५४ ॥
हतोत्सवं बंधुविरोधयुक्तं कांतामृतिं वा हरणं करोति ।
दयाविहीनं कलहानुरक्तं निशाकरो मंददशां प्रविष्टः ॥ २५५ ॥
सुखधनात्मजवित्तसुखक्षतिं तनुभृतां चलनं च निजस्थलात् ।
विकलतामतिमानहतिं करोत्यवनिजोऽर्कसुतांतरसंस्थितः ॥२५६॥
सुतधनात्मजवित्तसमुन्नतो नृपतिलब्धधनोऽतिविचक्षणः ।
कफसमीरणपीडनयुङ्नरः शशिसुते रविजस्य दशां गते ॥२५७ ॥
विविधकाव्यकलोत्सवभोगयुङ्नृपधनो बहुसज्जनपूजितः ।
सुवदनामदनानुभवः पुमान् सुरगुरौ रविजस्य दशां गते ॥ २५८ ॥
सुवदनात्मजभूषणसद्यशःसुसहितो धनधर्मसुखैर्नरः ।
हतरिपुर्ननु देशपुराऽधिपः कमलिनीशसुतांतरगे भृगौ ॥ २५९ ॥
कमलिनीशसुतस्य दशांतरे कुतनयस्य यदांतरजा दशा ।
तनुभृतां निधनं च भवेत्तदा ध्रुवमहो यदि रक्षणकृद्विधिः ॥ २६० ॥

शनिदशागत सूर्योंतरमें मनुष्य सुख, धन, स्त्री, पुत्रोंसे वर्जित, शत्रु एवं रोगसे अतिपीडित, कलह करनेवाला और परदेशवासी होता है ॥ २५४ ॥ श० चं० में उत्सवरहित, बंधुविरोधयुत, स्त्रीमरण वा स्त्रीहरण करता है। दयारहित, कलहमें तत्पर मनुष्यको करता है ॥ २५५ ॥ श०मं० में मनुष्यको सुख, धन, पुत्रकी हानि, स्थानभ्रष्टता, विकलता, मानहानि करता है ॥ २५६ ॥ श० बु० में पुत्र, धन, सुख, वित्तसे परिपूर्ण, राजासे प्राप्त धन, अतिचतुरता, कफ वायुकी पीडासे युक्त मनुष्य रहै ॥ २५७ ॥ श० बृ० में मनुष्य अनेक काव्यकला उत्सव, उत्तम भोग राजासे प्राप्त धनसे युक्त रहै। सुंदर मुखवाली स्त्रीसे कामदेवका अनुभव करै ॥२५८॥ श० शु० में मनुष्य सुंदर स्त्री, पुत्र, भूषण, सुंदर यश, धन, धर्म, सुखोंसे युक्त रहै, शत्रु मारे जावैं, देश नगरका स्वामी होवै ॥२५९॥ जब शनिदशामें मंगलका अंतर हो तो मनुष्योंको यदि विधाता भी रक्षा करै तौ भी मृत्यु होती है॥२६०॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुंजराजोदिते च ।
होरासारे शंभुहोराप्रकाशे पाकाध्यायः पूर्ण आसीत्फलानाम्२६१॥

इति श्रीपुंजराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे पाकाध्यायो दशमः ॥ १० ॥

विद्वद्रम्येत्यादि श्लोकसे दशाफलाध्याय पूर्ण भया ॥ २६१ ॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां दशांतर्दशाफलाध्यायो दशमः ॥ १० ॥

अथ रश्मिफलाध्यायः ११ ।

येषां सूतौ रश्मयश्चैकतश्चेत्स्युर्बाणांतं नीचवंशाः खलाश्च । मर्त्यास्ते वै दुःखदारिद्र्यभाजो दीनाकारा नीचसंगानुयाताः ॥ १ ॥ येषां पुंसां पंचतो वै दशांतं यावत्स्युश्चेद्रश्मयस्ते भवंति । दीनाकारास्त्वन्यदेशाभियाताः क्लेशैर्युक्ता भाग्यहीनाः प्रसूतौ ॥ २ ॥ यावत्तिथ्यंतं दशभ्यो मयूखा येषां सूतौ मानवास्तेऽल्पवित्ताः । धर्मोपेताः सौख्ययुक्ताः सुवेषा जायंते वै स्वीयवंशानुमानात् ॥ ३ ॥ पञ्चेन्दुभ्यः पाणिजातं

च यावद्येषां सूतौ मानवास्तेऽल्पशीलाः । धीरा मर्त्याः स्वीयवंशावतंसाः सत्कीर्त्त्याढ्याः कौशलाः सत्कलासु ॥४॥ नखमितकिरणेभ्योऽनुक्रमेणैव यावत्समधिकफलमेतत्पंचवर्गांतकं च । जनुषि ननु नरास्ते भाग्यवंतः सुधीरा विविधधनसुखाढ्याः शीलयुक्ता भवन्ति ॥ ५ ॥ तत्त्वादितास्त्रिंशमितास्तु यावद्येषां प्रसूतौ किरणा नराणाम् । भूमीपतेर्लब्धसुखाः प्रधाना नानाचमूनां पतयोऽथवा स्युः ॥ ६ ॥

अब रश्मि फल कहते हैं कि, जिन मनुष्योंके जन्ममें रश्मि १ से ५ तक होवैं तो नीचवंशज, खल, दुःख, दरिद्र भोगनेवाले, दीनाकार और नीचसंगी होते हैं ॥ १ ॥ पांचसे १० तक रश्मिवाले दीनाकार परदेशवासी, क्लेशयुक्त, ऐश्वर्य हीन होते हैं ॥ २ ॥ दशसे १५ पर्यंत रश्मिवाले मनुष्य अल्पधनवान्, धर्मयुक्त, सौख्ययुक्त, सुंदर वेषवाले, अपने वंशानुमान होते हैं ॥ ३ ॥ १५ से २० तक जिन मनुष्योंके जन्ममें रश्मि होवै अल्पशील, धीर, अपने वंशमें श्रेष्ठ, उत्तम कीर्तिवाले उत्तम कलाओंमें चतुर होते हैं॥४॥ बीससे२५पर्यंत रश्मिवाले पूर्वोक्तफलसे अधिक फलवाले, भाग्यवान्, पंडित, अनेकप्रकार धन सुख शीलसे युक्त होते हैं ॥ ५ ॥ पचीससे ३० तक रश्मिवाले राजासे सुख प्राप्त, प्रधान अथवा अनेक सेनाओंके पति होते हैं६

येषां प्रसूतावपि मानवानामेकाधिकास्त्रिंशमिता मयूखाः । ख्याताश्च ते राजसमाः प्रधाना नानाचमूनां पतयो भवंति ॥ ७॥ यस्य प्रसूतौ खलुमानवस्य द्विजप्रमाणा यदि रश्मयः स्युः । नानापुराणामथ पर्वतानां स्वामी भवेद्ग्रामशतस्य वापि ॥ ८ ॥ गीर्वाणैर्वा वेदरामैर्मयूखैः पुंसो यस्य स्यात्प्रसूतिर्यदा वा । पाति ग्रामाणां सहस्रं क्रमेण केचित्प्रोचुर्वा सहस्रत्रयाणाम् ॥ ९ ॥ पंचपावकमितैर्गभस्तिभिर्मानवो भवति मण्डलेश्वरः । तेजसत्त्वविभवैर्जयैः सदा संयुतो विशदकीर्त्तिभिस्तथा ॥ १० ॥ अंगाग्निभिर्नगगुणैः किरणै-

रभिन्नैः पुंसो यदा हि जननं खलु यत्क्रमेण। ग्रामान् स याति नियतं सदलं तु लक्षं हंता भवेद्रिपुकुलस्य महाप्रतापः॥ ११॥ अष्टत्रिसंख्यैः किरणैस्तु यस्य भवेत्प्रसूतिर्मनुजो महौजाः। धात्रीपतिर्लक्षचतुष्टयं हि ग्रामान् स पातीन्द्रसमानसंपत् ॥१२॥

जिन मनुष्योंके जन्ममें ३१ रश्मि होवैं वे राजाके तुल्य विख्यात प्रधान अनेक सेनाओंके पति होते हैं॥७॥ जिनके जन्ममें ३२ रश्मि होवैं वे अनेक ग्राम, पर्वतोंके अथवा सौ ग्रामोंके अधिपति होते हैं ॥ ८ ॥ जिनके जन्ममें ३३ वा ३४ किरण होवैं वे हजार ग्रामोंके मालिक होते हैं, कोई तीन सहस्रके पति कहते हैं ॥ ९ ॥ जिनको ३५ रश्मि होवैं वह मनुष्य मण्डलका स्वामी, तेज, बल, ऐश्वर्य, विजयसे सर्वदा संयुक्त रहता है, बडी कीर्तिवाला होता है ॥ १० ॥ छत्तीस सैंतीस रश्मियोंमें जिस मनुष्यका जन्म हो वह डेढलाख ग्रामोंके पति, शत्रुहंता, बडे प्रतापवाला होता है ॥ ११॥ जिसका जन्म ३८ किरणोंमें हो वह बडा तेजस्वी, ४ लक्ष ग्रामोंका पति, इन्द्रके समान संपत्तिवाला होता है ॥ १२ ॥

नन्दत्रिसंख्याः किरणाः प्रसूतौ प्रौढप्रतापी नृपतिर्भवेत्सः। विख्यातकीर्तिर्मनुजो महौजा दुर्दर्पसर्पारिगणेशताक्ष्यः॥१३॥ खाब्धिप्रमाणैः प्रसवस्तु यस्य क्षोणीपतेस्तद्विजयप्रयाणे। सेना भवंति नितरां गजगर्जितैस्तु तुल्यस्वनाश्च गगने घनगर्जितानाम् ॥ १४ ॥ एकाब्धितुल्याः किरणाः प्रसूतौ चेद्यस्य पुंसः स भवेदिलायाः। आवारिराशिं परिगीतकीर्तिर्नूनं नरेन्द्रः परिपालकश्च ॥ १५ ॥ पुंसो यदा यमयुगैस्त्रियुगैरभिन्नैर्यद्वा करैः प्रजननं भवतीह यस्य। संत्रासितारिनिचयोऽतुलवीर्यशाली स्यादाब्धिसागरमिलापरिपालकः सः ॥ १६ ॥ वेदाब्धितुल्याः किरणा नरस्य यस्य प्रसूतौ स तु सार्वभौमः। तद्यानकाले जलधिं गजादिसेनाध्वजाद्यास्तारिवत्तरंति ॥ १७ ॥ पंचाब्धितश्च परतः किरणा भवंति येषां

प्रसूतिसमये खलु मानवानाम् । ते दुर्जयास्त्वतितरामपि देव-
तानां द्वीपांतरे च परिगीतयशोविशेषाः ॥ १८ ॥

जिसके जन्ममें ३९ रश्मि हों वह बडा प्रतापी राजा होता है । विख्यात कीर्ति, बडा तेजस्वी, कठिन घमंडवाले शत्रुरूपी सर्पगणमें गरुड जैसा होता है ॥ १३ ॥ जिसके जन्ममें ४० रश्मि हों उस राजाके विजयार्थ ऐसी सेना होती है कि, जिनके हाथियोंके गर्जन एवं सेनाके गर्जन मेघ गर्जनाके समान होते हैं ॥ १४ ॥ जिसके जन्ममें ४१ रश्मि हों वह समुद्रपर्यंत विख्यात कीर्त्तिवाला, परिपालक राजा निश्चय होता है ॥ १५ ॥ जिसके ४२ वा ४३ रश्मि जन्ममें हों वह शत्रुको त्रासित करता है । अतुल वीर्यवाला, चारों समुद्रपर्यन्त पृथ्वीका पालन करता है ॥ १६ ॥ जिस मनुष्यके जन्ममें ४४ रश्मि हों वह सम्राट् (बादशाह) होता है, उसकी सवारी निकलनेमें हाथी आदि चतुरंगसेना ध्वजादि सहित नावके समान समुद्रको तरती है ॥ १७ ॥ जिनके जन्ममें ४५ से ऊपर रश्मि होती हैं वे मनुष्य देवताओंसे भी अजेय होते हैं, अन्य द्वीपांतरोंमें भी उसका यश विशेष गाया जाता है ॥ १८ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च ।
होराशास्त्रे शंभुहोराप्रकाशे सम्पूर्णोऽयं गोफलाध्याय आसीत् ॥ १९ ॥

इति श्रीपुञ्जराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे रश्मिफलाध्याय एकादशः ॥ ११ ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है ॥ १९ ॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां रश्मिफलाध्याय एकादशः ॥ ११ ॥

अथ बलफलाध्यायः १२ ।

विभूतिं परां गौरवं भूमिपालाद्विचित्रं धनं कौशलत्वं करोति ।
बलाधिक्यतां वीर्यहानिं रिपूणां नराणां ग्रहः स्थानवीर्यो-
पपन्नः ॥ १ ॥ प्रकृष्टं दिशावीर्यकं यस्य चेत्स्यात्स्वकाष्ठां
ग्रहो मानवं चैव नीत्वा । दशायां महन्मानवृद्धिं विचित्र-
धनस्यागमं सौख्यवृद्धिं करोति ॥ २ ॥ रिपोर्नाशनं भूगजा-

ऽश्वादिवृद्धिं सुरत्नांबरद्रव्यलाभं करोति। विशालप्रकीर्तिं च लीलाविलासं बलं कालवीर्याधिशाली नभोगः ॥ ३ ॥ शुभाचारसच्छौचसत्याभियुक्ता द्विजामर्त्यभक्ताः कृतज्ञाः सुरूपाः । नराः पुष्पभूषांबरप्रेमयुक्ताः शुभैः खेचरैर्वीर्ययुक्तैर्भवन्ति ॥ ४ ॥ स्वकार्यनिष्ठा मलिनाः खलाश्च तमोगुणाढ्या मलिनाः कृतघ्नाः । सुज्ञद्विषः स्युः कलहाभियुक्ताः क्रूरग्रहैर्वीर्ययुतैर्मनुष्याः ॥ ५ ॥ द्वौ वा त्रयो बलयुताः खचरा भवन्ति तेषां फलं मतिवरैर्विबुधैर्विचिन्त्यम् । राज्यं क्वचिच्च विभवं क्वचिदेव पूजां चेष्टाबलेन सहितः खचरो ददाति ॥ ६ ॥ दुष्टप्रदो दिविचरः शुभवीक्षितश्चेद्दुष्टं फलं च सकलं न ददाति नूनम् । क्रूरेक्षितः शुभफलः खचरो न सौम्यं दिग्वीर्यसंभवफलं प्रविचारणीयम् ॥ ७ ॥

स्थानबली ग्रह मनुष्योंको परम ऐश्वर्य, गुरुता, राजासे अनेक प्रकार धन, कुशलता (इल्मियत) बलवृद्धि, शत्रुओंकी बलहानि करता है ॥ १ ॥ दिग्बलाधिक ग्रह अपनी दशामें अपनी दिशामें ले जायके बडी मानवृद्धि अनेक प्रकारके धनकी आमद और सौख्य वृद्धि करता है ॥ २ ॥ कालवीर्याधिक ग्रह शत्रुनाश, भूमि, हाथी, घोडे आदियोंकी वृद्धि, उत्तम रत्न, वस्त्र, धनका लाभ, बडी कीर्ति, खेल कौतुकादि विलास करता है ॥ ३ ॥ शुभग्रहोंके बलशाली होनेमें शुभाचार, अच्छा शौच, सत्यता, देवब्राह्मणभक्त, कृतज्ञ, सुरूप, पुष्प, भूषण, वस्त्र इतनी वस्तुओंसे मनुष्यको प्रेमयुक्त करता है ॥ ४ ॥ क्रूरग्रह बलशाली हों तो मनुष्य अपने कार्यमें तत्पर, खल, तमोगुणयुक्त, मलिन, कृतघ्न, ज्ञानियोंके द्वेषी, कलह युक्त होते हैं ॥ ५ ॥ दो वा तीन ग्रह बलवान् हों तो विद्वानोंने फल उतनाही अधिक विचारना, कहीं तो राज्य कहीं ऐश्वर्य कहीं पूजा (मान) चेष्टा बली ग्रह देता है ॥ ६ ॥ दुष्टफल देनेवाला ग्रह शुभग्रह दृष्ट होवै तो पूरा दुष्ट फल नहीं

देता । शुभफल देनेवाला ग्रह पापदृष्ट होनेमें शुभफल पूर्ण नहीं देता इस प्रकार दिग्वीर्य ग्रहफल विचारना ॥ ७ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च ।
होरासारे शम्भुहोराप्रकाशे आसीत्पूर्णं वै बलानां फलं च ॥८॥

इति श्रीपुञ्जराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे बलफलाध्यायो द्वादशः ॥ १२ ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है ॥ ८ ॥

इति श्रीशंभुहोराप्रकाशे माहीवरीभाषाटीकायां बलफलाध्यायो द्वादशः ॥ १२ ॥

अथ रविचन्द्रयोगाध्यायः १३ ।

वोशिश्चांत्यगतैर्ग्रहैर्द्रविणगैर्वेशिः शशांकोज्झितैर्भानोस्तूभयगैस्तदोभयचरी योगः स्मृतः प्राक्तनैः । किंचित्तद्वचनेषु नैव नियमः पश्यंत्यधश्चानृतोऽत्यंतं कष्टकरो नरश्च मृदुहृक् स्याद्वोशियोगोद्भवः ॥ १ ॥ तिर्यग्दृष्टिः सत्त्वसत्यानुकंपी मर्त्योऽत्यर्थं दीर्घकायोऽलसश्च । सूतौ यस्य स्याद्यदा वेशियोगस्त्वल्पद्रव्यो वाग्विलासाधिशाली ॥ २ ॥ यस्य स्याज्जनने किलोभयचरी योगस्य चेत्संभवः सोऽत्यंतं समवायवानपि तदा मर्त्यो भवेत्सद्यशाः । नात्युच्चः प्रबलामलाब्धितनयायुक्तः समृद्धः सदा चात्यर्थं स्थिरमानसः सरलहृक् सार्वसहः सन्मतिः ॥ ३ ॥ भानोर्वीर्यात्खेचरस्यानुसारात्सर्वं चिंत्यं वापि राश्यंशयोगात् । न्यूनं मिश्रं श्रेष्ठकं तत्फलं वा पुंसां सर्वं चिंतनीयं सुधीभिः ॥ ४ ॥ यस्य वेशिस्थिताः सद्ग्रहाः संभवेत्तद्विलग्ने नृपो याति जेतुं रिपून् । तत्प्रकोपानलो याति शांतिं तदा द्वेषियोषाश्रुनीरप्रवाहैर्भृशम् ॥ ५ ॥

अब सूर्ययोग कहते हैं कि, सूर्यसे १२ वें स्थानमें चंद्ररहित कोई ग्रह होवै तो वोशि, दूसरा होवै तो वेशि योग होता है, यदि २ । १२ दोनों जगह ग्रह हों तो उभयचरी योग होता है। वोशियोगवाले मनुष्यके बोलनेमें थोडाभी

नियम न होवै, दृष्टि नीची, झूठ बोलनेवाला, अत्यंत कष्ट करनेवाला, मृदु दृष्टि होती है ॥ १ ॥ वेशि योगवाला तिर्छी दृष्टि हो, दया सब जीवोंपर रक्खे, दीर्घ शरीर, आलस्ययुक्त, अल्पधनी, वाणीके विलासवाला होवै ॥ २ ॥ जिसके जन्ममें उभयचरी योग हो वह मनुष्य अत्यन्त समवायी (कुटुंबी) वा बहुत मनुष्योंसे युक्त रहै । उत्तम यशवाला होवै, शरीर अति ऊंचा न होवै, प्रबल निर्मल लक्ष्मीसे युक्त रहै, सर्वदा सम्पन्न रहै, अत्यंत मन स्थिर रहै, सरल दृष्टि होवै, पृथ्वीका राजा होवै और सद्बुद्धि होता है ॥ ३ ॥ इन योगोंमें सूर्य एवं योगकर्त्ता ग्रहके अथवा राशि अंशके अनुसार फलोंमें न्यूनाधिकता विचारनी ॥ ४ ॥ जिसके वेशिस्थानमें शुभग्रह हों उस लग्नमें राजा शत्रु जीतनेको जावै तो उसकी कोपाग्नि शत्रुकी स्त्रियोंके अश्रु प्रवाहसे अत्यर्थ बुझती है ॥ ५ ॥

अथ चंद्रयोगः ।

शीतांशोर्द्रविणे स्थितैश्च सुनफायोगोऽनफाऽन्त्यस्थितैः स्वान्त्यस्थैः खचरैर्भवेद्दुरधरा पंकेरुहेशोज्झितैः । चेद्वित्तव्ययगा न चेद्दिविचराः केमद्रुमः स्यात्तदा प्राचीनैर्मुनिभिः स्मृताः श्रुतिमिता योगाः शशांकोद्भवाः ॥ ६ ॥ भूमीपतेश्च सचिवः सुकृती कृती च नूनं भवेन्निजभुजार्जितवित्तयुक्तः । ख्यातः सदाऽखिलजनेषु विशालकीर्त्या बुद्ध्याधिकश्च मनुजः सुनफाभिधाने ॥ ७ ॥ प्रभुर्विनीतः शुभवाग्विलासः सच्छीलशाली गुणपूर्तियुक्तः । उदारकीर्तिः स्मरतुष्टचित्तो नित्यं नरः स्यादनफाभिधाने ॥ ८ ॥ सद्वित्तसद्वारणवाहधात्रीसौख्याभियुक्तः सततं हतारिः । कांतासुनेत्राञ्चललालसः स्याद्योगे सदा दौरधरे मनुष्यः ॥ ९ ॥ सद्वित्तसूनुवनितात्मजनैर्विहीनः प्रेष्यो भवेत्तु मनुजो हि विदेशवासी । नित्यं विशुद्धधिषणो मलिनः कुवेषः केमद्रुमे च मनुजाधिपतेः सुतोऽपि ॥ १० ॥

चंद्रमासे दूसरे सूर्यरहित कोई ग्रह हो तो सुनफा, बारहवां होवै तो अनफा, दोनों स्थानोंमें हों तो दुरधरा और इन दोनोंमें कोई न हो तो केम-

द्रुम, ये ४ योग चंद्रमाके प्राचीनाचार्योंने कहे हैं ॥ ६ ॥ सुनफायोगवाला मनुष्य राजमंत्री, पुण्यवान्, विद्वान्, अपने बाहुबलसे कमाये धनसे धनवान्, संपूर्ण मनुष्योंमें बडी कीर्तिसे विख्यात, बुद्धिमें अधिक निश्चय होता है ॥ ७ ॥ अनफायोगवाला समर्थ, नम्र, सुंदरवाणीके विलासवाला, उत्तम स्वभाववाला, गुणोंसे परिपूर्ण, उदार कीर्ति, कामदेवसे संतुष्ट मन मनुष्यका नित्य रहता है ॥ ८ ॥ दुरधरायोगमें मनुष्यको उत्तम धन, हाथी, वाहन, भूमिके सुखसे युक्त, बराबर शत्रुको मारता रहे, सुंदर नेत्रवाली स्त्रीका अंचलकी अभिलाष होवै ॥ ९ ॥ केमद्रुममें राजपुत्रभी मनुष्य उत्तम धन, पुत्र, स्त्री, निज मनुष्योंसे हीन, दूसरेका दूत, विदेशवासी, नित्य शुद्ध बुद्धि, मलिन कुवेषी अर्थात् विरूप वेषवाला होता है ॥ १० ॥

अनफा वै सुनफा च दौर्द्धरश्च प्रवदाम्यत्र पृथक् फलानि सम्यक् । क्षितिजस्तस्करकं तथा प्रचण्डं कुरुते क्रूरतरं खलं मनुष्यम् ॥११॥ निपुणं ज्ञानयुतं महाधनाढ्यं मनुजं वै कुरुते शशांकजन्मा । पूज्यं राजकुलेषु सद्गुणाढ्यं धर्मिष्ठं च सुरार्चितः करोति ॥ १२ ॥ ऐश्वर्यं च धनं जनप्रसिद्धं सौख्याढ्यं च नरं करोति शुक्रः । गुणवृद्धं बहुभृत्यकं च शूरं बह्वारंभकरं शनिः प्रपूज्यम् ॥ १३ ॥

चंद्रमाके अनफा सुनफा दुरधरा योगोंके पृथक् फल कहते हैं कि, मंगलका अनफा चोर, प्रचण्ड, अतिक्रूर और खल मनुष्यको करता है । बुध–निपुण, ज्ञानयुक्त, महाधनवान् करता है। बृहस्पति–राजकुलोंमें पूज्य, उत्तम गुणयुक्त, धर्मनिष्ठ करता है । शुक्र–ऐश्वर्य, धन, लोकमें प्रसिद्धि, सुखयुक्त करता है । शनि–गुणोंसे बडा, बहुत सेवक, शूरमा, बहुत कामोंका आरंभ करनेवाला और पूज्य करता है ॥ ११–१३ ॥

कण्टकाद्युपगतः कुमुदेशः पद्मकाननपतेः प्रकरोति । ज्ञानमानमतिनैपुणतान्यानिष्टमध्यवरतायुतकानि ॥ १४ ॥ प्रालेयांशुः सूतिकाले यदा वा सर्वैः खेटैर्वीक्ष्यमाणः करोति ।

दीर्घायुष्यं सार्वभौमं मनुष्यं सत्कोशाढ्यं हंति केमद्रुमं च ॥ १९ ॥ सर्वे खेटाः केन्द्रतुर्यें च संस्था दुष्टो योगश्चापि केमद्रुमोऽयम् । दुष्टं सर्वं स्वं फलं संविहाय कुर्यात्पुंसां सत्फलं वै विचित्रम् ॥१६॥ सूतौ तुलाधरगते क्षितिजे सजीवे कन्यागते दिनकरेऽत्र विधुः क्रियस्थः । नो वीक्षितोऽन्य-खचरैर्जनयत्यवश्यं केमद्रुमं परिहरत्यवनीपतीन्द्रम् ॥ १७॥

अब केमद्रुम योगका भंग कहते हैं कि, यदि चन्द्रमा सूर्यसे केन्द्र पणफर आपोक्लिममें क्रमसे होवै तो ज्ञान, मान, निपुणता अनिष्ट, मध्यम, श्रेष्ठ क्रमसे होते हैं अर्थात् सूर्यसे चन्द्रमा केन्द्रमें हो तो ज्ञान मान और बुद्धिकी निपुणता, अनिष्ट (अधम) होती है, पणफरमें हो तो पूर्वोक्त ज्ञान मानादि मध्यम, आपोक्लिममें हो तो श्रेष्ठ होती है ॥ १४ ॥ जन्ममें चन्द्रमा यदि समस्त ग्रहोंसे देखा जावै तो केमद्रुमको नाश करके मनुष्यको दीर्घायु चक्रवर्ती और उत्तम खजानासे परिपूर्ण करता है ॥ १५ ॥ यदि सभी ग्रह चारों केन्द्रमें हों तो केमद्रुमसंज्ञक दुष्टयोगभी अपने समस्त दुष्टफलको छोडके मनुष्योंको अनेक प्रकारके शुभ फल देता है ॥ १६ ॥ जितने जन्मकालमें मंगल और गुरु तुलामें हों, सूर्य कन्यामें और चन्द्रमा मेषमें किसीभी अन्यग्रहसे नहीं देखा जाता हो तो केमद्रुमको नाश करके राजाओंमें श्रेष्ठ करता है ॥ १७ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च । होरासारे शम्भुहोराप्रकाशेऽध्यायः पूर्णः सूर्यचन्द्रोत्थयोगः ॥१८॥

इति श्रीपुंजराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे सूर्यचन्द्रयोगा-ध्यायस्त्रयोदशः ॥ १३ ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है ॥ १८ ॥

इति श्रीशंभुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां सूर्यचन्द्रयोगाध्यायस्त्रयोदशः ॥१३॥

अथ विविधयोगाध्यायः १४।

अवौ शुभ्ररश्मिर्घटे सूर्यजश्चेद्भृगुर्नक्रगश्चापगः पद्मिनीशः । न भुंक्ते धनं पैतृकं ना कदापि स्वदोर्दण्डवीर्येण स स्याद् वरेण्यः ॥ १ ॥ शुभग्रहाः केन्द्रचतुर्षु संस्था धनस्थिताः पापनभश्चरेन्द्राः । सदा दरिद्रो नितरां नरः स्याद्भीतिप्रदः स्वीयकुलोद्भवानाम् ॥ २ ॥ लग्नस्थितो वाऽऽत्मजभावसंस्थो वाचस्पतिर्व्योमगतः शशांकः । जितेन्द्रियः स्यान्मनुजस्तपस्वी सद्राजचिह्नैश्च विराजमानः ॥ ३ ॥

जिसके जन्ममें मेषमें चन्द्रमा, कुम्भमें शनि, मकरका शुक्र, धनुषमें सूर्य होवै तो मनुष्य पिताके धनको कदापि नहीं भोगता, अपने बाहुबलसे कमाये धनसे श्रेष्ठ होता है ॥ १ ॥ शुभग्रह चारों केन्द्रोंमें, धनस्थानमें पापग्रह हो तो मनुष्य सर्वदा दरिद्री और अपने कुलवालोंको भय देनेवाला होता है ॥ २ ॥ लग्नमें अथवा पंचममें बृहस्पति, दशममें चन्द्रमा जिसका होवै वह मनुष्य जितेंद्रिय, तपस्वी होता है तथा उत्तम राजचिह्नोंसे विराजमान रहता है ३

जीवो जूके कन्यकायां च शुक्रो गोस्थः खे वै ज्ञस्त्वलौ सौम्यदृष्टः । वंशश्रेष्ठोदारबुद्धिर्गुणज्ञो नित्यानन्दो वित्तयुक्तोऽतिसुज्ञः ॥ ४ ॥ शुक्रो यदा तावुरिसंस्थितश्चेत्सौम्यस्तथा वृश्चिकराशिसंस्थः । कथं भवेतामिति चिंतनीयं मुनिप्रणीतं कथितं मया स्यात् ॥ ५ ॥ सबलौ रिपुगौ सौम्यभौमौ चौर्यपरो नरः । भवेत्स्वकर्मसामर्थ्याच्छिनत्त्यंघ्रिकरान् स्वकान् ॥ ६ ॥ कर्केऽर्कजो मृगे भौमः सूतौ चौर्य्यप्रसंगतः । दण्डाच्छाखादिखण्डानि तस्य जंतोर्भवंति हि ॥७॥ कुंभे मीने च कोदण्डे द्वन्द्वे स्युः पापखेचराः । कुचेष्टितः स्यान्मनुजो वज्रेण मृतिमाप्नुयात् ॥ ८ ॥ यस्य सूतौ नैधनस्थः सौम्यः सौम्यनिरीक्षितः । तस्य तीर्थान्यनेकानि भवंत्यत्र न संशयः ॥९॥

जिसके जन्ममें गुरु तुला या कन्याका हो, शुक्र वृषके दशममें हों, वृश्चिकका बुध शुभदृष्ट हो वह अपने वंशमें श्रेष्ठ, उदारबुद्धि, गुणज्ञ, नित्य प्रसन्न, धनवान् और सुज्ञ होता है ॥ ४ ॥ पूर्वोक्त योगमें शुक्र वृषमें, बुध वृश्चिकमें होता है परंतु शुक्रसे सप्तम बुधका होना असंभव है यह ग्रंथकर्त्ताने केवल पूर्वमुनिके कथित होनेसे कहा है। इसमें भाषाकारकी राय है कि, सूर्यसे २ वा ३ राशिसे अलग बुध शुक्र कभी नहीं होते " चतुर्थेभवने सूर्याज्ज्ञसितौ भवतः कथम् " यह वराहमिहिरोक्तभी है। परंतु जिन देशोंमें अक्षांश शून्य० के समीप होता है उन देशोंके पलभाओंसे जब स्पष्ट बनाया तो सूर्यसे चौथी राशिपर्यंत आगे पीछे बुध शुक्र हो सकते हैं, ऐसी व्यवस्थामें शुक्रसे सप्तम बुध होना संभव है ॥ ५ ॥ बुध मंगल बलवान् हो तथा छठे भावमें हों तो वह मनुष्य चोर होवै तथा उसीके कामसे उसके हाथ पैर कटें ॥ ६ ॥ जिसके जन्मसमयमें कर्कमें शनि, मकरमें मंगल हो वह चोरीके प्रसंगसें दण्ड करके हाथ पैर काटे होवें ॥ ७ ॥ कुंभ, मीन, धन और मिथुनमे पापग्रह हों तो वह मनुष्य कुचेष्टावाला होवै और वज्रसे मृत्यु उसकी कहनी ॥ ८ ॥ जिसके जन्ममें शुभदृष्ट शुभग्रह अष्टममें हो उसके निःसंदेह अनेकतीर्थ होते हैं अर्थात् अनेक तीर्थोंवाला होता है ॥९॥

अथ जलयोगाः।

केन्द्रस्थिताः सूर्यशशांकमन्दा व्ययस्थिताः पुण्यगृहस्थिता वा।
जलाभिधं तं जनयंति योगमन्ये ग्रहाश्चेद्बलास्तदानीम् ॥ १० ॥
ऐश्वर्यविज्ञानधनैर्विहीनः परान्नकांक्षी चपलोऽतिदुःखी।
लुब्धो भवेन्ना च जलप्रकृत्या युक्तो भवेद्ध जलयोगजन्मा ॥ ११ ॥

जलयोग कहते हैं कि, सूर्य चन्द्रमा शनि केन्द्रमें हों अथवा १२ वा ९ भावमें हों और अन्य ग्रह निर्बल हों तो जलनामका योग होता है ॥ १० ॥ इस योगमें जन्मा मनुष्य ऐश्वर्य, ज्ञान, धनसे हीन, पराया अन्न चाहनेवाला, चपल, अतिदुःखी, लोभी होता है। तथा (जल) शीतप्रकृतिवाला होता है ॥ ११ ॥

अथ केमद्रुमयोगः ।

भाग्याधिनाथे व्ययभावसंस्थे बलोज्झिते वित्तगते व्ययेशे ।
दुश्चिक्यसंस्थैर्यदि पापखेटैः केमद्रुमो योग इति प्रदिष्टः ॥ १२ ॥
परान्नकांक्षी मनुजो नितान्तं कुधर्मकर्माभिरतोऽल्पवित्तः ।
पराङ्गनासंगपरोत्तमर्णी केमद्रुमे जाततनुर्भवेत्सः ॥ १३ ॥
केन्द्रस्थिता गीष्पतिमंदचन्द्रा व्ययाष्टपुत्रोपगतौ यमारौ ।
केमद्रुमाख्यस्त्वपरोऽत्र जातः स्वजन्मभूम्या रहितो नरः स्यात् १४॥

भाग्येश व्ययभावमें व्ययेश धनभावमें निर्बल हो, तीसरे भावमें पापग्रह हो तो यहभी केमद्रुम योग कहा है ॥ १२ ॥ इस योगवाला मनुष्य पराया अन्न वारंवार चाहनेवाला रहता है, कुधर्म कुकर्मोंमें तत्पर, अल्पवित्त, परस्त्रीसंगमें तत्पर, करजदार (ऋणी) होता है ॥ १३ ॥ अन्य प्रकारभी केमद्रुम है कि, बृहस्पति शनि, चन्द्रमा केंद्रमें तथा १२।८।५ मेंसे किसी भावमें शनि, मंगल हो तो यह अन्य केमद्रुम योग है । जिसके जन्ममें यह योग हो वह अपनी जन्मभूमिसे रहित होता है ॥ १४ ॥

अथ दारिद्रयोगाः ।

नीचारिभागोपगतैः समस्तैर्नभश्चरैश्चेन्निजतुंगभेऽपि ।
सत्कर्महीनः सततं मनुष्यो भिक्षाटनो नीचजनानुयातः ॥ १५ ॥
होराधिपे प्रांत्यगतेऽम्बरस्थे क्रूरे सराफे क्षणदाधिपे च ।
जातो हि योगे परदेशनिष्ठः सदा दरिद्रो मनुजो भवेत्सः ॥ १६ ॥
शुभग्रहाः केंद्रचतुर्थसंस्था धनास्थिताः पापनभश्चरेन्द्राः ।
सदा दरिद्रो नितरां नरः स्याद्भीतिप्रदः स्वीयकुलोद्भवानाम् ॥१७॥
रवेर्नवांशे यदि यामिनीशः सरोजिनीशः शशिनो नवांशे ।
एकर्क्षसंस्थौ यदि तौ तदानीं दारिद्र्यभाग्वै सततं नरः स्यात् ॥१८॥

समस्त ग्रह शत्रु नीच अंशकोंमें यदि उच्च राशिगतभी हों तो भी मनुष्य सर्वदा सत्कर्महीन, भिक्षा मांगनेवाला और नीचजनोंका अनुयायी होता है ॥ १५ ॥ लग्नेश व्ययभावमें, दशममें पापग्रह, चंद्रमाके साथ इसराफ योग

(शीघ्रधन भाग मंद अल्पभाग) वाला होवै तो इस योगमें जन्मा मनुष्य परदेशवासी और सर्वदा दरिद्री होवै ॥ १६ ॥ शुभग्रह केन्द्रोंमें, पापग्रह धन-भावमें होवै तो मनुष्य सर्वदा दरिद्री और अपने कुलवालोंको भय देनेवाला होता है ॥ १७ ॥ सूर्य चंद्रमाके, चंद्रमा सूर्यके नवांशकमें एक राशिमें हो तो मनुष्य सर्वदा दरिद्रभागी होता है ॥ १८ ॥

अथ नीचवृत्तियोगाः ।

चेत्प्राग्विलग्नेऽर्कसुतस्य दृक्के केन्द्रस्थचंद्रेण निरीक्षिते च ।
भूपाऽन्वये यद्यपि जातजन्मा स्यान्नीचकर्मा पुरुषो भवेत्सः ॥ १९ ॥
भाग्याधिपे सूर्यसुते धनस्थे सुतास्थिते वा ह्यशुभग्रदृष्टे ।
यदा सपापे रिपुभावसंस्थे स्याज्जीवनं तस्य च नीचवृत्त्या ॥ २० ॥
कलानिधेः कर्मगतेऽर्कपुत्रे लग्नात्सुते धर्मगते धने वा ।
मृत्युस्थितैः पापनभश्चरेन्द्रैः स्याज्जीवनं तस्य च नीचवृत्त्या ॥२१॥
शुक्ले वीर्याढ्यः सुधांशुः प्रपश्येल्लग्नाधीशं दुर्बलं स्यात्तपस्वी ।
निःस्वो मर्त्यो दुःखितः शोकतप्तःस्वाप्तैर्हीनो नैकलब्धान्नपानः ॥२२
ताराधीशे सौम्यभागेऽधिवीर्ये वोच्चस्थानेऽन्ये खगा वा यदि स्युः ।
पश्येच्चन्द्रं सूर्यजः प्राप्तवीर्यः कुर्यान्मर्त्यं तापसं दुःखभाजम् ॥२३ ॥

नीचवृत्तियोग कहते हैं—यदि लग्नमें शनिको द्रेष्काण हो उसे केंद्रगत चन्द्रमा देखे तो राजवंशमें भी जन्म भया हो तो भी वह पुरुष नीचकर्मसे आजीवन करे ॥ १९ ॥ नवमेश शनि धनभावमें अथवा पंचमभावमें पाप दृष्ट हो अथवा पापसहित छठे भावमें हो तो उस मनुष्यका आजीवन नीच-वृत्तिसे होवै ॥ २० ॥ शनि चन्द्रमासे दशम तथा लग्नसे पंचम, नवम वा धनभावमें हो और अष्टममें पापग्रह हों तो उसका आजीवन (गुजारा) नीच वृत्तिसे होवै ॥ २१ ॥ शुक्लपक्षका बलवान् चंद्रमा लग्नेशको देखे, लग्नेश निर्बल होवै तो मनुष्य तपस्वी, निर्धन, दुःखित और शोकसे संतप्त रहै ॥ २२ ॥ चन्द्रमा अधिक बली शुभांशकमें हो अथवा उच्चराशिमें हो यद्वा अन्य ग्रह उच्चगत हों और बलवान् शनि चन्द्रमाको देखे तो मनुष्यको दुःख भोगनेवाला तपस्वी करता है ॥ २३ ॥

सूतौ त्रिकस्थानगताः खलाख्या ज्ञातिच्युतिं ते मनुजस्य कुर्युः ।
चतुष्टयस्था यदि वापि दुःखं दारिद्र्यमात्मीयजनच्युतिं च ॥ २४ ॥
भाग्याधिनाथे व्ययभावसंस्थे पापान्वितौ जन्मपलग्ननाथौ ।
अस्तंगतौ जन्मनि वा स्ववंशध्वंसी भवेन्ना गतपुत्रदारः ॥ २५ ॥
विलग्नधर्मात्मजगौ रवींदू केन्द्रे तृतीये यदि वा सुरेज्ये ।
यमाऽऽरहोरादिवसे प्रजातो मर्त्यश्च सोन्माद इवाद्भुतः स्यात् ॥२६॥
स्यात्पातकी लग्नगते सुरेज्ये द्यूनस्थिते भानुसुते मनुष्यः ।
सोन्मादको लग्नगते सुरेज्ये जामित्रसंस्थे रुधिरेऽथवा स्यात् ॥२७॥

जन्ममें पापग्रह त्रिकस्थान ६ । ८ । १२ में मनुष्यको जातिसे बहिष्कृत करते हैं, यदि केंद्रोंमें हो तो दुःख दरिद्र और अपने मनुष्योंसे च्युति करते हैं ॥ २४ ॥ नवमेश व्ययभावमें हो, चन्द्रराशीश और लग्नेश पापयुक्त हों अथवा अस्तगत हों तो मनुष्य अपने कुलका विध्वंस करनेवाला होवै और उसके स्त्री पुत्रभी न होवै ॥ २५ ॥ सूर्य और चन्द्रमा १।९।५ मेंसे किसीमें हो वा केन्द्र १।४।७।१० और ३में बृहस्पति हो, शनि वा मंगलकी होरामें दिनका जन्म हो तो मनुष्य बावलासा अद्भुत ढंगकाहोवै ॥ २६ ॥ लग्नमें गुरु, सप्तममें शनि होवै तो मनुष्य बावला होवै, पातकवाला अथवा लग्नगत गुरु, सप्तम मंगल होवै तो भी वही फल जानना ॥ २७ ॥

अथ चांडालयोगः ।

केंद्रे यदैकत्र गताः सितज्ञसुधांशवो राहुयुते विलग्ने ।
चांडालयोगे खलु यः प्रसूतो भवेन्मनुष्यो निजकर्महीनः ॥ २८ ॥

केंद्रमें एक साथ शुक्र, बुध, चन्द्रमा हो, राहु लग्नमें हो तो चांडालयोग होता है, इसमें जन्मा मनुष्य अपने कर्म धर्मसे हीन होता है ॥ २८ ॥

अथ कुलपांसलयोगाः ।

चतुष्टयस्थैः सदसन्नभोगैर्होराधिपश्चंद्रमसा न दृष्टः । यद्वा
शरांशोपगतैः शुभाख्यैर्योगः स्मृतोऽयं कुलपांसलाख्यः ॥२९॥

केंद्रोंमें शुभाशुभ ग्रह हों, लग्नेशको चन्द्रमा न देखे अथवा शुभग्रह पंचमांशकमें हो तो यह कुलपांसल योग है कुलको मलिन करता है ॥ २९ ॥

विदेशवासी स्वगृहच्युतश्च सदा दरिद्रो गतपुत्रदारः । नरो भवेद्दोषगणाभिभूतो यो वै प्रजातः कुलपांसलाख्ये ॥ ३० ॥ ग्रस्ते लग्ने संस्थितेन्दौ च पापा धीधर्मस्था मानवः स्यात् पिशाचः । ग्रस्ते भानौ लग्नसंस्थे तथैव चक्षुर्घातः सर्वथा कल्पनीयः ॥ ३१ ॥ सोन्मादको लग्नगतेऽर्कपुत्रे मन्दत्रिकोणेऽवनिजे नरः स्यात् । क्षीणे विधौ सूर्यसुतेन युक्ते व्ययोपयाते धिषणे च यद्वा ॥ ३२ ॥

कुलपांसल योगमें जन्मा मनुष्य विदेशवासी, अपने घरसे भ्रष्ट, सर्वदा दरिद्री, स्त्रीपुत्ररहित, दोषोंके समूहसे पीडित होता है ॥ ३० ॥ ग्रहणवाला चन्द्रमा लग्नमें पापग्रह ५ । ९ में होवै तो मनुष्य पिशाचसमान होवै । ग्रहणका सूर्य लग्नमें हो तो भी वही फल करता है और नेत्रघात भी सर्वथा कल्पना करनी ॥ ३१ ॥ लग्नमें शनि, सप्तम और नवमपञ्चममें मंगल होवैं वा क्षीण चन्द्रमा शनि सहित बारहवें भावमें हो या गुरु हो तो भी बावला होता है ॥ ३२ ॥

अथ म्लेच्छयोगाः ।

लग्ने मन्दे भास्करे द्यूनसंस्थे पुण्यस्थे वा विक्रमस्थे च वक्रे ।
नीचत्वं वै श्रेष्ठवर्णः प्रयाति म्लेच्छो नूनं जायते नान्यथाऽत्र ॥३३॥
द्रेष्काणे वा नन्दभागेऽर्कमंदौ त्रिंशांशे वा संस्थितावेकराशौ ।
श्रेष्ठो मर्त्यो नीचयोषानुसंगान्म्लेच्छो नूनं जायते नान्यथात्र ॥३४॥

लग्नमें शनि सप्तम सूर्य ९ अथवा ३ में मंगल होवै तो श्रेष्ठवर्णका मनुष्य नीचताको प्राप्त होवै । निश्चय म्लेच्छ हो जावै ॥ ३३ ॥ सूर्य शनि एकराशिमें एकही द्रेष्काणमें वा एक नवांशक वा एक त्रिंशांशकमें होवै तो श्रेष्ठवर्ण मनुष्य चांडालकी स्त्रीके संसर्गसे निश्चय म्लेच्छ हो जाता है इसमें संदेह नहीं ॥ ३४ ॥

अथ मूकबधिरांधयोगाः ।

सिंहे विलग्ने रविशीतभानू मन्दारदृष्टौ कुरुतेऽन्धकत्वम् । शुभाशुभैर्बुद्बुदनेत्रयुग्मं वामं हिनस्त्यब्ज इनोऽन्त्यगोऽन्यत् ॥ ३५ ॥ धनस्थिते क्रूरयुते सिते चेत्काणोऽथवा मन्दविलोचनश्च । मूको द्वितीये त्रिलवे तृतीये स्खलद्गिरः स्यान्मनुजस्तदानीम् ॥ ३६ ॥ धनव्ययस्थो भृगुजोऽथवाऽऽरः करोति पुंसां श्रवणप्रपीडाम् । तत्र स्थितः शीतमयूखमाली दृग्दोषकारी मुनिभिस्तथोक्तः ॥ ३७ ॥ धनारिरन्ध्रव्ययसंस्थिताश्चेत्सूर्यारसूर्याऽऽत्मजशीतभासः । अन्धं प्रकुर्युः स्वबलानुसारात्खेटस्य दोषान्मनुजं हि नूनम् ॥ ३८ ॥ दुश्चिक्यधर्मात्मजलाभसंस्थाः पापग्रहा नो शुभदृष्टियुक्ताः । कर्णप्रणाशं जनयंति नूनं जामित्रसंस्था दशनाभिघातम् ॥३९॥ त्रिकस्थितः सेन्दुसुतः प्रसूतो भवेन्निशांधः ससितो दिनेशः । सलग्ननाथो जननांधको वा वाच्यो मनुष्यः किल दैवविद्भिः ॥ ४० ॥ एवं निजांबाजनकात्मजस्त्रीसहोदरा मातुलकः पितृव्यः । तत्स्थाननाथैः सहितो यदा स्यात्तेषां प्रवाच्यं हि तदाऽन्धकत्वम् ॥ ४१ ॥

सिंहलग्नमें सूर्य चन्द्रमा हो उन्हें शनि मंगल देखें तो मनुष्यको अंधत्व करते हैं यदि उनपर शुभ और अशुभ दोनों ग्रहोंकी दृष्टि हो अथवा शुभयुक्त हों तो कातर नेत्र (बुद्बुदाकार) होते हैं । बारहवाँ चन्द्रमा वाम नेत्र, द्वादश सूर्य दाहिने नेत्रकी हानि करता है ॥ ३५ ॥ धनस्थानमें पापयुक्त शुक्र होवे तो काणा अथवा मंददृष्टि होवै, वही शुक्र दूसरे द्रेष्काणमें हो तो गूंगा और तीसरे द्रेष्काणमें होवै तो जबान अटकनेवाला (हेकला) होता है ॥ ३६ ॥ धनव्ययभावमें शुक्र वा मंगल पुरुषके कानमें पीडा करता है, तहां चन्द्रमाभी होवै तो नेत्र दोषकारक मुनियोंने कहा है ॥ ३७ ॥ सूर्य, मंगल, शनि, चंद्रमा २ । ६ । ८ । १२ भावोंमें हो तो अपने बल एवं ग्रहके संज्ञाप्रक-

रणोक्त धातुदोषसे अंधा करते हैं ॥ ३८ ॥ पापग्रह ३ । ९ । ५ । ११ भावोंमें शुभदृष्टिरहित हों तो कानका नाश करते हैं, यही ग्रह सप्तम हों तो दांतोंका नाश करते हैं ॥ ३९ ॥ सूर्य, बुधसहित जन्ममें त्रिकस्थानमें हो तो रात्र्यंध करता है, शुक्रयुक्त सूर्य वा लग्नेश सहित सूर्य त्रिकमें हो तो जन्मांध कहना ॥ ४० ॥ इस प्रकारके योग माता, पिता, पुत्र, स्त्री, भाई, मामा, चाचाके भावसे पडें तो उनको अंधादि फल कहना । यद्वा उनके भावेशसे सहित उक्त योग हो तौ भी उन्हीको उक्त फल कहना ॥ ४१ ॥

क्रूरैर्धनस्थैर्वदनेऽथवांसे नेत्रे श्रुतौ वा व्रणकं विघातः । विधुंतुदे वा सवितात्मजे वा तत्रस्थिते ना ग्रहणीरुगार्त्तः ॥४२॥ स्याद्दंतुरो दंतरुजार्दितो वा सिंहीसुते चेद्धनभावसंस्थे । चन्द्रेण युक्ते खलु शीतदोषः स्यात्सन्निपाताश्रययुङ्नरः स्यात् ॥ ४३ ॥ पापांतरेऽब्जे तपने मृगस्थे यद्वाऽर्कसूनौ मदनालयस्थे । श्वासक्षयप्लीहकगुल्मरोगैः प्रपीडितो विद्रधिना मनुष्यः ॥ ४४ ॥ षष्ठाष्टमे चन्द्रसितौ नरः स्यान्मंदाऽनलो वै गुदरोगयुक्तः । साऽऽरे विधौ लग्नपतीक्षिते वा विलोमबुद्धिः क्षयरोगयुक् स्यात् ॥ ४५ ॥

धनभावमें क्रूरग्रह होवै तो मुखमें अथवा कंधा वा नेत्र वा कानमें चोट वा व्रण होवे, राहु वा शनि दूसरा हो तो मनुष्य संग्रहणीरोगसे पीडित रहै ॥ ४२ ॥ राहु दूसरा होवै तो बडे दांतवाला वा दंतरोगी होवै, वह राहु चंद्रमासे युक्त हो तो निश्चय शीतदोष तथा सन्निपातवाला होवै ॥ ४३ ॥ चंद्रमा पापग्रहोंके बीच हो, सूर्य मकरका हो अथवा शनि सप्तम होवै तो श्वासरोग, क्षयरोग, प्लीहारोग अथवा विद्रधिरोगसे मनुष्य पीडित रहै ॥ ४४ ॥ चंद्रमा, शुक्र छठे वा आठवें हों तो मनुष्य मंदाग्निवाला तथा गुदाके रोगसे युक्त रहै । चंद्रमा भौमसहित लग्नेशसे दृष्ट हो तो मनुष्य उलटी बुद्धिवाला एवं क्षयरोगी होवै ॥ ४५ ॥

कुलीरकीटांशगते हिमांशौ पापाऽन्विते गुह्यरुगार्दितः स्यात् । वेशिस्थिते सूर्यसुते कुजेऽस्ते खस्थे विधौ हीनकलेवरः स्यात् ॥ ४६ ॥ सूतौ मिथः क्षेत्रगतौ रविन्दू परस्परांशोपगतौ च यद्वा । शोषं क्षयं तौ कुरुतो नराणामेकैकगेहोपगतौ तथैव ॥ ४७ ॥ लाभस्थितेऽर्के रविजे सुतस्थे क्रूरेऽष्टमस्थे क्षयपीडितः स्यात्। साऽऽरे विधौ कुष्ठभगंदरार्शःपामामयाद्यैर्मनुजो नितांतम् ॥ ४८ ॥ सूर्ये तनुस्थे चतुरस्रगे वा खस्थौ यमाऽऽरौ क्षयपीडितः स्यात्। जामित्रसंस्थैस्तपनारमंदैर्भगंदरार्शोऽनिलशूलरोगः ॥ ४९ ॥ द्यूने यमारौ तनुगौ तमज्ञौ पीडा नराणामतिसाररोगैः । स्वेदं च शैत्यं चरणे च पाणौ बाधिर्यता स्याच्छ्रवणद्वयेऽपि ॥ ५० ॥

पापयुक्त चंद्रमा कर्क या कर्कांशमें हो तो गुदाके रोगसे पीडित रहै, शनि वेशिस्थानमें, मंगल सप्तम, चंद्रमा दशममें हो तो (हीन) क्षीण शरीर रहे ॥ ४६ ॥ जन्ममें सूर्य चंद्रकी राशिमें, चंद्रमा सूर्यकी राशिमें हों अथवा अन्योन्य अंशकोंमें हों तो शोष, क्षय रोग करते हैं । यदि सूर्य चंद्रमा एकही राशिमें हों तौ भी यही फल होगा ॥ ४७ ॥ सूर्य ११ में, शनि ५ में, पापग्रह ८ में हो तो क्षयरोगसे पीडित रहै । चंद्रमा मंगल युक्त होवै तो कुष्ठ, भगंदर, बवासीर, खुजली आदि रोगोंसे मनुष्य बारबार पीडित रहै ॥ ४८ ॥ लग्नमें सूर्य अथवा ४ । ८ में हो दशममें शनि मंगल हों तो मनुष्य क्षयरोगसे पीडित रहै, सप्तममें सूर्य मंगल शनि हों तो भगंदर, बवासीर, वायु, शूलरोग होवै ॥ ४९ ॥ सप्तममें शनि मंगल लग्नमें राहु बुध हो तो मनुष्योंको अतिसाररोगोंसे पीडा होवै, हाथ पैरोंमें पसीना आवै, शीत रहै और दोनों कान बधिर (बहिरे) होवैं ॥ ५० ॥

भानौ सुतस्थे ससितेऽर्कपुत्रे यद्वोदयेऽर्केऽवीनजेऽस्तसंस्थे ।
व्योमेऽथवाऽऽरे शनियुक्तदृष्टे नरः प्रमेहामयपीडितः स्यात् ॥५१॥
कुजेऽस्तसंस्थे खलयुक्तदृष्टे स्यान्मूत्रकृच्छ्री पुरुषत्वहीनः ।
जामित्रसंस्थे तपने सपापे वातोदरासृक्परिपीडितः स्यात् ॥५२॥

त्रिकोणजामित्रगते महीजे तनुस्थिते सूर्यसुते च यद्वा ।
क्षीणेन्दुमन्दौ व्ययभावयातौ भवेत्समीराधिकता नितांतम् ॥५३॥
वृषाजगे क्रूरखगे विलग्ने क्रूरेक्षिते वैकृतदन्तकः स्यात् ।
चापोदये क्रूरयुते खलर्क्षे खल्वाटकोऽन्त्ये खलवीक्षिते वा ॥ ५४ ॥
धीधर्मगेऽर्के ह्यशुभैः प्रदृष्टे भवेन्नरो मन्दविलोचनश्च ।
हीनाङ्गको भूमिसुते च तद्वत्सूर्यात्मजे चेद्विविधामयार्त्तः ॥ ५५ ॥

सूर्य पंचम हो, शनि शुक्रके साथ हो अथवा सूर्य लग्नमें, मंगल सप्तममें हो यद्वा दशम मंगल शनिसे युक्त वा दृष्ट हो तो मनुष्य प्रमेह (धातुक्षीण) रोगसे पीडित रहै ॥ ५१ ॥ सप्तममें मंगल पापयुक्त दृष्ट हो तो मनुष्य मूत्रकृच्छ्र रोगवाला तथा पुरुषत्वसे हीन रहै, सप्तममें पापसहित सूर्य हो तो वातोदर एवं रुधिर रोगसे पीडित होवै ॥ ५२ ॥ मंगल ५ । ९ । ७ मेंसे किसीमें हो अथवा लग्नमें सूर्य हो और क्षीण चंद्रमा तथा शनि व्ययभावमें हो तो सर्वदा वायुरोगकी अधिकता रहै ॥ ५३ ॥ पापग्रह मेष, वृष राशिका लग्नमें पापदृष्ट हो तो दंतविकृत रहै । धनलग्नमें पापग्रह हो यद्वा व्ययभावमें पापराशि पापवीक्षित हो तो खल्वाट (गंजा) होवै ॥ ५४ ॥ सूर्य ५। ९ में पापदृष्ट हो तो मनुष्य मन्ददृष्टिवाला होवै, ऐसा मंगल होतो मनुष्य अंगहीन होवै, शनि ऐसा हो तो मनुष्य अनेक रोगोंसे पीडित रहै॥५५॥

अथ बंधनयोगाः ।

व्ययत्रिकोणार्थगतैरसौम्यैश्चेन्मानवो बन्धनभाग्भवेत्सः ।
लग्नेषु चापाजवृषस्थितेषु स्याद्बन्धनं रज्जुसमुद्भवं तत् ॥ ५६ ॥
नृयुग्मकन्यातुलकुंभभेषु लग्ने स्थिते वा निगडोद्भवं च ।
कर्के हरौ मीनगृहे च दुर्गे रोधोऽथ कीटे किल भूगृहे स्यात् ॥५७॥

पापग्रह १२ । ५ । ९ । २ भावोंमें हों तो मनुष्य बंधन भोगनेवाला होवै, ९।१।२ लग्नोंमें हो तो बंधन रस्सीका होगा ॥ ५६ ॥ पापग्रह ३।७। ११ राशिके लग्नमें हो तो बंधन कैदका होगा । ४ । ५ ।१२ लग्नमें हो तो किलामें कैद होगा, कीटराशि लग्नमें पाप हो तो तैखानेमें कैद होगा ॥५७॥

अथ भृतकयोगाः ।

मंदारसूर्यैः शुभदृष्टिहीनैः कर्मस्थितैः स्याद्भृतको मनुष्यः ।
श्रेष्ठः खगैकेन च मध्यमश्च द्वाभ्यां त्रिभिश्चाधम एव नूनम् ॥ ५८ ॥

शनि, मंगल, सूर्य, इन ग्रहोंपर शुभदृष्टि न हो तथा दशम भावमें हो तो मनुष्य (भृत्य) नौकर होगा । इनमेंसे एक हो तो उत्तम, दो हों तो मध्यम, तीनों हों तो अधम नौकरी करेगा ॥ ५८ ॥

अथ कुष्ठयोगः ।

पापमध्यनवभागगे विधौ मन्दभौमयुतवीक्षितेऽथवा ।
मेषनक्रझषकर्कटांशगे कुष्ठवानपि भवेत्तदा नरः ॥ ५९ ॥
धीधर्मस्था गोकुलीरालिनक्राः क्रूरैः खेटैः संयुता वीक्षिता वा ।
ते वै नूनं सूतिकाले प्रकुर्युर्निःसंदिग्धं मानवं कुष्ठयुक्तम् ॥ ६० ॥
लग्नाधीशे नैधनस्थे प्रसूतौ क्रूरैः खेटैः संयुते वीक्षिते वा ।
पुंसां वह्नेर्मन्दता दद्रुकण्डुपीडा वा स्याच्छ्वेतकुष्ठः शरीरे ॥ ६१ ॥

चंद्रमा पापग्रहोंके बीचके नवांशकमें हो अथवा शनि मंगलसे युक्त वा दृष्ट १ । १० । १२ । ४ राशियोंके अंशकमें हो तो मनुष्य कुष्ठरोगवाला होता है ॥ ५९ ॥ पंचम नवम भावोंमें २ । ४ । ८ । १० राशि पापग्रहोंसे युक्त वा दृष्ट जिसके जन्ममें हो उसको निस्संदेह कुष्ठरोग करते हैं ॥ ६० ॥ जन्ममें लग्नेश अष्टम पापयुत वा दृष्ट हो तो मनुष्योंको मंदाग्नि, दाद, खुजलीकी पीडा वा श्वेतकुष्ठ शरीरमें होवै ॥ ६१ ॥

अथापस्मारयोगाः ।

नक्षत्रेशादित्यवक्रास्तनुस्था मृत्युस्था वा क्रूरदृष्टाः प्रसूतौ ।
नानाव्याधींस्ते शरीरे प्रकुर्युः पीडां मर्त्यानामपस्मारजाताम् ॥ ६२ ॥
पापेक्षितौ केन्द्रगतौ विधुज्ञौ सुतेऽथवा नैधनभे खलाख्याः ।
जातो नरः सत्यमदाख्ययोगे भवेदपस्माररुजार्दितश्च ॥ ६३ ॥
सारे शनौ रन्ध्ररिपुस्थिते च जातो मनुष्यः परिवेषकाले ।
लग्ने त्रिकोणे गुरुवर्जिते चेद्भवेदपस्माररुजार्दितश्च ॥ ६४ ॥

चंद्रमा सूर्य और मंगल ये लग्नग्रह अष्टम भावमें पापदृष्ट हो तो शरीरमें अनेक रोग तथा अपस्मार (मृगी) रोगकी पीडा करते हैं॥ ६२॥ चंद्रमा बुध पापदृष्ट केन्द्रमें हो, पंचम अथवा अष्टम भावमें पापग्रह हों तो सत्यमदनामा योग होता है, इसमें जन्मा मनुष्य मृगी रोगसे पीडित होता है ॥ ६३॥ मंगलसहित शनि ८।६ भावमें हो तथा जन्मसमयमें सूर्य वा चंद्रमापर परिवेष (सौंडल) हो लग्न त्रिकोणमें बृहस्पति न हो तो मृगी रोगसे पीडित होता है ॥ ६४ ॥

अथ वंशोच्छेदादियोगाः ।

वंशोच्छेदकरः सुधांशुभृगुजक्रूरैः खतुर्यास्तगैः
शिल्पी कंटकगार्किणेन्दुजयुतत्र्यंशेऽथ संवीक्षिते ।
अंत्ये दानवपूजितेऽर्कतनयस्यांशे च दासीसुतो
नीचे द्यूनगयोश्च हेल्युडुपयोर्मन्देन संदृष्टयोः ॥ ६५ ॥

चंद्रमा, शुक्र, पापग्रह क्रमसे १०।४।७ भावोंमें हो तो वंशका नाश करनेवाला होता है, केंद्रमें बुधयुक्त शनि हो अथवा बुधयुत द्रेष्काणमें शनि हो, यद्वा बुध शनिको देखे तो शिल्पी (कारीगर) होवै, शुक्र व्ययभावमें शनिके नवांशमें हो तो दासीपुत्र होवै । सूर्य चंद्रमा नीचमें यद्वा सप्तममें शनिदृष्ट हो तो भी दासीपुत्र होगा॥ ६५ ॥

अथ हिल्लाजमतं तत्र नेत्रदोषादि।

रिपुसदनपतौ चेद्वक्रितर्क्षेऽक्षिरोगं तनुसदनगतेऽस्मिन्मंददृष्टे कफात्मा । धरणिज इह जीवे भार्गवे ज्ञे सचन्द्रे परितपनजशोकात्कामतः शस्त्रतो वा ॥ ६६ ॥ दुश्चिक्यगौ रविविधू यदि कंटके वा केन्द्रास्थितेऽवनिसुते खलवेश्मगे वा । दृष्टे खलैर्निधनषड्व्ययगाः शुभाः स्युर्मेषूरणे च भवने तपने तदांधः ॥ ६७॥ अरीशे सिते लग्नगे श्रावणाद्यं विवर्ण्यं भवेत्तुल्यदृष्टेंद्रसाध्वोः । रवीन्द्वोरसदृष्टितो वक्रितर्क्षेऽथवा षष्ठरिष्फस्थयोर्वक्रनेत्रः ॥ ६८ ॥

षष्ठेश वक्री ग्रहके राशिमें हो तो नेत्ररोग होवै, लग्नमें हो और शनिसे दृष्ट हो तो कफप्रकृति होवै। ऐसाही मंगल, वा बृहस्पति, अथवा शुक्र, वा बुध

चंद्र सहित हो तो घाम गर्मीके कारणसे वा उक्त कारणज शोकसे अथवा कामविकारसे वा शस्त्रसे नेत्ररोग होता है ॥ ६६ ॥ सूर्य चन्द्रमा तीसरे वा केन्द्रमें हो, मंगल केंद्रमें वा पापराशिमें हो उसपर पापदृष्टि हो ८।६।१२ में शुभग्रह, दशम सूर्य हो तो अंधा होता है ॥ ६७ ॥ षष्ठेश शुक्र लग्नमें होवै, चंद्रमा एवं पापग्रहकी उसपर पूर्णदृष्टि होवै तो दाहिना कान विरूप वा बधिर होवै । सूर्य चंद्रमा वक्रितग्रहराशिमें अथवा ६।१२ भावमें हो तो टेढी दृष्टि होती है ॥ ६८ ॥

विनष्टे रवौ वक्रराशिस्थिते च कुजाक्रांतिते कर्कटस्थे विधौ वा ।
नवांशांतिमे चापगे वा दिनेशे निशायां भवेदाह्नि मन्देक्षितेऽन्धः॥६९॥

हीनबली सूर्य वक्रित ग्रहके राशिमें हो अथवा मंगलसे आक्रांत कर्कट राशिमें चंद्रमा हो अथवा धनके अंत्यनवांशकमें हो तो अंधायोग है, इन योगोंमें सूर्य दृष्टि हो तो रात्र्यंध, शनिदृष्टि हो तो दिवांध होता है ॥ ६९ ॥

अथ कर्णदोषाः ।

सपत्नपे चन्द्रसुते कुभस्थे मार्तण्डपुत्रेण चतुर्थदृष्ट्या ।
विलोकिते द्वेष्यगृहस्थिते वा शनीक्षिते वा बधिरत्वयोगः ॥ ७० ॥
शशांकजे शत्रुगते रजन्या भृगोस्तनूजे गगनेऽधिसंस्थे ।
उच्चस्वरेण शृणुते मनुष्यो दक्षेतरेण श्रवणेन नूनम् ॥ ७१ ॥

षष्ठेश बुध चौथा हो उसे शनि चतुर्थदृष्टि (शत्रुदृष्टि) से देखे अथवा छठे भावमें शनिसे दृष्ट होवै तो बधिर योग होता है, कानोंसे नहीं सुनता ॥ ७० ॥ बुध छठा हो, शुक्र दशम हो और रात्रिका जन्म हो तो मनुष्य वांये कानसे बडे ऊंचे स्वरसे सुनता है ॥ ७१ ॥

अथ जिह्वादोषाः ।

चन्द्रात्मजे कर्क्यलिमीनसंस्थे भानोरधस्थे शशिनेक्षिते च ।
सपत्नपे पापखगैः प्रदृष्टे गुंगस्वरः स्यान्मनुजस्तदानीम् ॥ ७२ ॥
संवर्धमाने क्षणदाधिनाथे लग्नस्थिते भूमिसुतेन युक्ते ।
गुंगस्वरः स्याद्यदिवाऽरिनाथे सोमात्मजे स्याद्रसनाविनाशः ॥७३॥

आकोकेरस्थिते यद्वा कलशस्थे विधोः सुते ।
पूर्णदृष्ट्या मंदहृष्टे धृतगद्गदवाग्भवेत् ॥ ७४ ॥

बुध ४ । ८ । १२ राशिमेंसे किसीमें हो, सूर्य चौथे भावमें चंद्रमासे दृष्ट हो, षष्ठेश पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो मनुष्य गूँगेस्वरवाला होगा ॥ ७२ ॥ शुक्लपक्षका चंद्रमा लग्नमें मंगल युक्त हो तो मनुष्य गूंगेस्वरवाला (गुनगुना) होवै । यदि षष्ठेश बुधभी हो तो जिह्वा नष्ट होवै ॥ ७३ ॥ बुध ९ वा ११ राशिका शनिसे पूर्णदृष्ट हो तो गद्गद वाणी मनुष्यकी होवै ॥ ७४ ॥

अथ कुब्जदोषः ।

आद्येऽन्त्येंशेऽब्जे तृतीये खलेन दृष्टे भूमीसंस्थमन्दे परस्थे ।
लग्नाधीशेऽथाल्पचक्रालयस्थे धात्रीपुत्रे मानवः स्यात्स कुब्जः ॥७५॥

चन्द्रमा पहिले वा पिछले नवांशकमें तीसरे भावमें हो, शनि चौथा हो, लग्नेश शत्रुराशिका हो और मंगल क्षीण चन्द्रमाके साथ होवै तो मनुष्य कुब्ज (कुबडा) होवै ॥ ७५ ॥

अथ कुष्ठदोषः ।

चन्द्रावनेयासितसंयुतेषु चेदूशनासेवितवारिभेषु । क्रूरार्दिते तेष्वपि लूतकुष्ठं भवेन्नराणां नियतं तदानीम् ॥ ७६ ॥ सिते गीष्पतौ षष्ठपे पापदृष्टे सशोफो मुखेऽन्त्ये शनौ गुप्तदोषी । षडन्त्येऽथवा भूमिपुत्रार्कियोगे शुभादृष्टितो गण्डमाला-व्रणाद्यम् ॥ ७७ ॥ नीचे चरर्क्षे सितचंद्रयोगः खलैः समं स्यात्किल पांडुकुष्ठम् । यद्वा विधौ वारिगृहे सपापे खर्जूरदोषं शनिवीक्षिते च ॥ ७८ ॥

चन्द्रमा, मंगल, शनि और शुक्र जल राशियोंमें पापपीडित हो तो लूता-संज्ञक कुष्ठ अवश्य होवै ॥ ७६ ॥ शुक्र वा बृहस्पति षष्ठेश हो, उसे पाप-ग्रह देखें तो शोफरोग (कुष्ठका भेद) होवै, इस योगमें २ वा १२ भावमें शनिभी होवै तो मनुष्य गुप्तदोषी होवै अथवा ६।१२ भावोंमें मंगल शनि साथ होवै उनपर शुभ दृष्टि होवै तो गंडमाला फोडे आदि रोग होवैं ॥ ७७ ॥

नीचमें वा चरराशिमें शुक्र चन्द्रमाका योग पापसहित होवै तो पाण्डु कुष्ठ-रोग होवै अथवा चंद्रमा जलचर राशिमें पापयुक्त होवै और उसे शनि देखे तो खुजली रोग होवै ॥ ७८ ॥

अथ पातकदोषः ।

भौमाक्रान्ते लग्ननाथे प्रसूतौ षष्ठे चन्द्रे पातकी मानवः स्यात् ।
यद्वा चैकांशस्थितौ क्रूरहत्या चन्द्रादित्यौ चेत्तदा पातकी सः॥७९॥

जन्ममें लग्नेश मंगलके साथ हो और चन्द्रमा छठा होवै तो मनुष्य पातकवाला होवै अथवा चन्द्रमा मंगल एकही अंशकमें हों तो क्रूरहत्या लगे, ऐसे चन्द्रमा सूर्य हो तो पातकी होवै ॥ ७९ ॥

अथांगशूलदोषः ।

खलार्दिते रवौ क्रुधः षडष्टगारमन्दयोः । विकर्त्तनर्क्षगे विधौ सशूलमङ्गजा रुजः ॥८०॥ क्षितिजसकलदृष्ट्याऽभ्यार्दिते देव-पूज्ये यदि दिनजननेऽस्मिन्भूमिपुत्रे विनष्टे । अशुभशुभ-समेते शत्रुनाथेऽलिगेऽर्के प्रभवति किल शूलं चोदरे हृत्प्रदेशे ॥ ८१ ॥ षष्ठेशेऽब्जे पापनिघ्ने विसौम्ये लग्नेशेऽस्ते वासरे सूर्य-पुत्रे । दग्धे भूस्थे कामगे वोष्णशीतप्लीहार्त्तः स्यात्कृष्णपक्षे निशायाम् ॥८२॥ सक्रूरेऽब्जे कंशगे भूस्थिते च क्रोडाक्रांतः स्यात्कफात्फेफसौ रुक् । शुक्रेऽरीशे भौममंदेन पित्तात्सर्व-त्रैवं तुर्यसंपूर्णदृष्ट्या ॥ ८३ ॥ क्रूरान्विते रिपुपतौ दिवसा-ऽधिनाथे स्यादध्वगे रिपुगतेषु शुभग्रहेषु । मन्दावनेयधिषणै-रवनौ च पापी स्यात्कृष्णपित्तविकृतव्रणकं तथांघ्रिः ॥८४॥ वक्रर्क्षगे रिपुपतावुदये च वक्रर्क्षे लग्नपे समुभयोरपि मन्द-दृष्ट्या । रन्ध्रे सितार्कसुतयोरशुभान्वितेऽरौ तस्याधिपे द्युन-गते खलु तुंदरोगः ॥ ८५ ॥

छठे आठवें भावमें स्थित जो मंगल या शनि तीसरे चौथे पाप पीडित सूर्य होवै तो और सूर्यके राशि सिंहमें चन्द्रमा होवै तो शूलरोग शरीरमें

होवै॥८०॥यदि बृहस्पति मंगलसे पूर्ण दृष्ट होवै, मंगल हीनबली हो, दिनका जन्म हो, षष्ठेश शुभपापयुक्त हो, सूर्य वृश्चिक राशिमें हो तो निश्चय पेटमें वा हृदयमें शूलरोग होवै ॥ ८१ ॥ षष्ठेश चन्द्रमा पापयुक्त हो, शुभयुक्त न हो, लग्नेश अस्तंगत हो, दिनका जन्म हो, शनि दग्ध तथा चौथा हो अथवा सप्तम हो तो गर्मी, सर्दी, प्लीह (पिलही) रोगसे पीडित रहे परंतु जब कृष्णपक्षमें रात्रिका जन्म भी हो तब ॥ ८२ ॥ चन्द्रमा पापयुक्त पापांशकमें चौथे भावमें हो तो पेटमें पीडा, कफसे फेंफडेमें रोग होवै, षष्ठेश शुक्र शनि मंगलसे पूर्ण दृष्ट हो तो पित्तसे वह रोग होवै, ऐसे पूर्ण वा पाप दृष्टिके अनुसार सर्वत्र फल कहना ॥८३॥ षष्ठेश सूर्य पापयुक्त नवममें हो, छठे शुभग्रह और शनि, मंगल, गुरु चौथे हो तो मनुष्य पापी होवै तथा कृष्ण रंगके विरूप व्रण होवैं तथा ऐसेही विकृत पैरभी होवैं ॥८४॥ षष्ठेश वक्रीगत ग्रहके राशिमें होकर लग्नमें हो और लग्नेशभी वक्री ग्रहके राशिमें हो इन दोनोंको शनि देखे, शुक्र शनिसे अष्टम या छठे भावमें अशुभ ग्रह हों तथा अष्टमेश और षष्ठेश सप्तम भावमें हो तो मनुष्यको पेट बढनेका रोग होता है ॥ ८५ ॥

अथ षण्ढयोगः।

भार्गवे शनियुतेऽम्बरस्थिते रन्ध्रगे च शुभदृष्टिवर्जिते।
षष्ठगे व्ययगतेऽथवा शनौ नीचभे च खलु षण्ढता भवेत् ॥ ८६ ॥
पुंस्त्रीखेटौ स्त्रीनवांशोपयातौ सूर्यस्याग्रेऽस्तांशगौ वा तयोश्च।
ऊर्ध्वं तेजश्चेन्निजं प्रक्षिपेत मर्त्यो नूनं जायते छिन्नमेढ्रः ॥ ८७॥
वक्रर्क्षस्थे भार्गवे कामगे च लग्नाधीशस्योदयस्थस्य दृष्ट्या।
योगे चंद्रक्रोडयोर्मानवश्च भार्याद्वेष्यः स्यादधीशोऽपरेषाम् ॥ ८८ ॥

शनि सहित शुक्र दशममें अथवा अष्टममें शुभदृष्टिरहित हो अथवा शनि ६।१२ भावमें नीचका हो तो मनुष्य नपुंसक होता है ॥८६॥ स्त्रीग्रह और पुरुषग्रहभी स्त्रीनवांशकमें सूर्यके आगे अस्तांशमें हों, उनका तेज ऊपरको जाता हो अर्थात् शीघ्र ग्रह अल्पांश, मंद बहुश हो तो मनुष्यके अंड न रहै ॥८७॥ शुक्र वक्रर्क्षमें सप्तम भावमें हो लग्नस्थ लग्नेशकी दृष्टिसे तथा चन्द्रमा और क्रोड (शनि)के योगसे स्त्रीका द्वेषी एवं परस्त्रीका स्वामी होवै ॥८८॥

अथ कामातुरयोगः ।

द्वन्द्वापरार्द्धे भृगुजो निजांशे पूर्वार्द्धके सिंहगते कुगेहे ।
कामातुरो मीनगतस्त्वरीशे भौमार्दिते चैव मृताल्पसूतिः ॥८९॥

मिथुनका परार्द्धमें शुक्र स्वांशकी हो अथवा सिंहके पूर्वार्द्धमें चौथे भावमें हो तो मनुष्य कामातुर होवै । षष्ठेश मीन राशिमें भौमसे युक्त होवै तो अल्पसंतान होवै ॥ ८९ ॥

अथार्शोदोषः ।

क्रूरे खेटे मृत्युपे कामसंस्थे सौम्यादृष्टे सम्यगर्शोविकारः ।
यद्वा मन्देऽस्ते ह्यलौ पुण्यसंस्थे धात्रीपुत्रे वासरे वा तदर्शः ॥९० ॥
मन्देऽन्यस्थे लग्ननाथारयोगे द्यूने यद्वा स्यात्तयोर्दृष्टितोऽर्शः ।
भौमेऽलौ कावेज्यदृष्टया विहीने मूर्त्तौ मन्देऽस्ते कुजेऽर्शोविकारः९१

अष्टमेश क्रूरग्रह सप्तम भावमें शुभदृष्टिरहित हो तो पथरीका विकार होता है अथवा सप्तममें वृश्चिकका शनि नवममें मंगल हो और दिनको जन्म हो तो पथरी होवै ॥ ९० ॥ शनि बारहवें भावमें लग्नेश तथा मंगलसे युक्त वा दृष्ट होवै तो पथरी होवै । वृश्चिकका मंगल चौथे भावमें गुरुकी दृष्टिसे रहित हो, लग्नमें शनि, सप्तममें मंगल हो तौभी (अर्श) पथरीका विकार होवै॥ ९१॥

अथ व्रणदोषः ।

लग्नेऽलिगे क्षितिसुते गुरुशुक्रदृष्टया हीने भवेच्च पिटिका-
व्रणयुङ्मनुष्यः । भूमौ तदंशकगते रविजे सकेतौ यद्वा
द्वयोर्युजि तथा मदने व्ययेऽरौ ॥ ९२ ॥

वृश्चिक लग्नमें मंगल गुरु शुक्रसे अदृष्ट हो तो मनुष्य फुन्सी घाव युक्त होवै, चौथे भावमें शनि मंगलके नवांशकका हो और केतुभी साथ हो अथवा ये दोनों साथही ७।१२।६ भावमेंसे किसीमें हो तो भी वही फल होगा॥ ९२॥

अथ दद्रुदोषाण्डदोषौ ।

रूक्षाः प्रोक्ता मेषगोसिंहनक्रकन्याकोदण्डाह्वया राशयश्च ।
एवं स्निग्धा द्वन्द्वकर्कालिजूककुम्भान्त्याख्या यावनैः संप्रदिष्टाः ९३

दोषाधीशे स्निग्धभे द्यूनसंस्थे भूमीभागस्थार्किणा संयुते च ।
आर्त्तौ मर्त्यौ दद्रुणाऽब्जारशुक्रैश्छिद्रांशस्थैः कीटगैश्चाण्डवृद्धिः ९४

रूक्ष राशि १ । २। ५। १० । ६ । ९ और ऐसेही स्निग्ध राशि ३ । ४ । ८ । ७ । ११ । १२ हैं ॥ ९३ ॥ चंद्रमा स्निग्धराशिका सप्तममें हो चौथे नवांशकस्थित शनिसे दृष्ट हो तो मनुष्य दादरोगसे पीडित रहे, चंद्रमा, मंगल, शुक्र छिद्रांशमें कीट राशिमें हों तो अंडवृद्धिका रोग होवै ॥ ९४ ॥

अथ वामनयोगः ।

राशिप्रांत्ये वाऽऽदिमेंशे निशीशे दृष्टे भास्वत्सूनुना तुर्यदृष्ट्या ।
सौम्यादृष्टे वामनत्वं नराणां लग्नाधीशे स्वल्पराशिं गतेऽत्र ॥ ९५ ॥

चन्द्रमा राशिके पहिले वा पिछले अंशमें हो उसे शनि चतुर्थ दृष्टिसे देखे शुभग्रहोंकी दृष्टि न होवै और लग्नेश अल्प राशिमें हो तो मनुष्योंको (वामनता) छोटा शरीर होता है ॥ ९५ ॥

अथ खल्वाटदोषः ।

सिंहचापालिकन्यासु लग्ने कर्कटगे विधौ ।
वीक्षितेऽवनिपुत्रेण भवेत्खल्वाटमस्तकः ॥ ९६ ॥

चंद्रमा ५ । ९ । ८ । ६ । ४ राशिका लग्नमें मंगलसे दृष्ट हो तो खल्वाट (गंजा) होवै ॥ ९६ ॥

अथ मुखदुर्गंधियोगः ।

क्रूरर्क्षस्थे क्रूरहद्दस्थिते वा चन्द्रक्षेत्रे भार्गवे मेषगे वा ।
चंद्रे लग्नस्थे बुधे शत्रुनाथे पुंसां नूनं वक्रदुर्गंधिता स्यात् ॥ ९७ ॥

शुक्र पापराशि पापहद्दामें यद्वा चंद्रक्षेत्रमें वा चन्द्रमा मेषमें हो, षष्ठेश बुध लग्नमें हो तो मनुष्योंके मुखमें दुर्गंधि होवै ॥ ९७ ॥

देहकार्श्ययोगः ।

मेषे शशांके शनिना समेते लग्नेऽन्तिमेऽर्केऽनृजुभाजि लग्ने ।
विमुक्तकेंद्रे धरणीतनूजे भवेन्नराणां तनुता शरीरे ॥ ९८ ॥

मेषका चंद्रमा शनियुक्त हो, बारहवां सूर्य हो, लग्नमें वक्री ग्रह न हों, मंगल केंद्रमें न होवै तो शरीर कृश होवै ॥ ९८ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च ।
होरासारे शम्भुहोराप्रकाशे नानायोगाध्याय आसीत्सुपूर्णः ॥ ९९ ॥

इति श्रीपुञ्जराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे विविधयोगाध्यायश्चतुर्दशः ॥ १४ ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है ॥ ९९ ॥

इति श्रीशंभुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां विविधयोगाध्यायश्चतुर्दशः ॥ १४ ॥

अथ कर्माजीवाध्यायः १५ ।

आजीविका भवेद्येनोपाधिभूतेन कर्मणा ।
तत्प्रवक्ष्ये नृणामत्रोपायं द्रव्यागमस्य च ॥ १ ॥
लग्नेन्द्वर्काणां च यो वीर्ययुक्तस्तस्माद्राशिर्यो हि मेषूरणस्थः ।
तन्नन्दांशाधीश्वरात्कल्पनीया पुंसां होरापारगैः कर्मवृत्तिः ॥ २ ॥
तातांबाऽनुजबन्धोश्च गुरुस्त्रीप्रेष्यजातिभिः ।
लभते खस्थितैर्वित्तं सूर्याद्यैर्वांशभेदतः ॥ ३ ॥
मेषूरणे खेटविवर्जिते चेद्भानोः शशांकाद्बलिनो यथाऽत्र ।
तत्कर्मनाथस्य नवांशनाथस्वभाववृत्त्या ह्युपजीवनं च ॥ ४ ॥

जिस कार्यसे मनुष्योंकी जीविका होती है वह उपाय धनागमका कहताहूं ॥ १ ॥ लग्न, चन्द्र, सूर्यमेंसे जो अधिक बलवान् हो उससे दशम भावमें जो राशिनवांशक हो उसके स्वामीके अनुसार कर्मसे आजीविका ज्योतिषपारंगतोंने कहनी ॥ २ ॥ जैसे सूर्य हो तो पितासे, चंद्रमा हो तो मातासे, मंगल हो तो भाईसे, एवं बुधकी बंधु मित्रसे, गुरुकी गुरुजनोंसे, शुक्रकी स्त्रीसे, शनिकी प्रेष्य (भृत्य) जनोंके संबंधसे कर्माजीविका होती है। यह कर्माजीव सूर्यादियोंसे राशिभेद वा अंशभेदसे जाननी ॥ ३ ॥ यदि दशमस्थानमें कोई भी ग्रह न हो तो सूर्य वा चंद्रमामेंसे जो बलवान् हो उससे दशमभावका स्वामी जिसके नवांशकमें है उस स्वभावानुरूप वृत्तिसे आजीविका होती है ४

सदौषधौघैस्तृणधातुहेमैः सद्विक्रयैः शाठ्यकरैः सशिल्पैः ।
द्यूतानृताद्यैरवनीपतेर्वा सूर्यांशके ना लभते च वित्तम् ॥५॥
निशाकरांशे मणिरूपनीरकृषिक्रियादेर्लभते धनं च ।
सशर्करागोमहिषीप्रसंगाच्चन्द्राननासन्मनुदेवताद्वा ॥ ६ ॥
मंत्रोपदेशकुशलैः खलु साहसैश्च शास्त्रादिभिश्च विविधैर्भिषजाच्च वित्तम् । भौमांशकेऽपि च सदाऽविकविक्रयाद्यैर्वा क्षत्रियादिजनकैर्लभते मनुष्यः ॥ ७ ॥ सुलिपिकाव्यकलाध्ययनादिभिः सुवचनैर्गणितैरनृतादिभिः । ननु नरो द्रविणं लभते सदा सुमतिना कृतिना शशिजांशके ॥ ८ ॥ देवार्चनाध्ययनमन्त्रजपादिभिश्च सद्धर्मयाजनसुखैर्नृपतिप्रसादैः । यानादिभिश्च खलु कालनिमित्तबोधैर्जीवांशके हि मनुजो लभते हि वित्तम् ॥ ९ ॥ तुरगसिंधुरगोमहिषीसुखैः सुनयनांजनभूषणकैर्धनम् । विविधगायननर्त्तनकौशलैः सितलवे लभते च सदौषधैः ॥ १० ॥ सूर्यात्मजांशे फलमूलपत्रैर्भारोद्वहैः प्रेष्यजनैश्च नीचैः । असच्च धान्यक्रयविक्रयैर्वा नूनं नरः संलभते हि वित्तम् ॥ ११ ॥

वह नवांशेश सूर्य हो तो उत्तम औषधि, तृण, धातु, सुवर्ण, वस्तु विक्रय, शठता, शिल्पकर्म, द्यूत, झूठसे वा राजासे मनुष्य धनवाला होता है ॥ ५ ॥ चंद्रांशक होवै तो मणि, चांदी, जल, कृषिकर्म आदिसे तथा शक्कर, गौ, महिषी प्रसंगसे स्त्रीसे एवं उत्तम मंत्र वा देवतासे आजीविका होती है ॥ ६ ॥ भौमांशकमें (मंत्र) सलाहकी चतुराई, साहस, अनेक शास्त्रादियोंसे औषधिसे भेडीके व्यापारसे अथवा क्षत्रियादियोंसे मनुष्य धनलाभी होता है ॥ ७ ॥ बुधांशकमें सुंदर लिखनेके कामसे, काव्यकलापठनादिसे, सुंदरवाणी गणितसे, झूठ आदिसे, सद्बुद्धिसे, चतुराईसे मनुष्य सर्वदा धन कमाता है ॥ ८ ॥ गुरुके अंशकमें देवपूजन, पठन, मंत्र जपादि, उत्तम धर्म, यज्ञ कराना, सुख, राजप्रसाद, सवारी आदिके कामसे वा कालनिमित्त-

ज्ञानसे धन पाता है ॥ ९ ॥ शुक्रांशकमें घोडा, हाथी, गौ, भैंसके सुखसे, सुन्दर नेत्र संबन्धी अञ्जनसे, अलङ्करणसे, अनेक प्रकारके गान और नाचनेकी निपुणतासे, उत्तम औषधीसे लाभ होता है ॥ १० ॥ शनिके अंशमें फल, मूल, पत्तोंके व्यापारसे या भार उठानेसे, दूतका काम और नीचकाम करनेसे, धान्यके कीनने और बेचनेसे निश्चय मनुष्य खराब रीतिसे धनको लाभ करता है ॥ ११ ॥

अंशाधिपश्चेदतिवीर्ययुक्तः फलं यथोक्तं कुरुते च सौख्यम् । नीचादिसंस्थोंऽशपतिस्तदानीं स्वल्पं फलं मिश्रबले विमिश्रम् ॥ १२ ॥ राश्युक्तदिशि भागे तु देशं संचिंतयेद्बुधः । लग्नाद्द्वादशमे राशौ स्वभावविषयं तथा ॥१३॥ स्वस्वामिना दृष्टयुतं स्वदेशे फलप्रदं तन्मुनिभिर्यदुक्तम् । अन्यैः समेतं त्वथ वीक्षितं वा फलप्रदं तद्विषयांतरे च ॥१४॥ यदा तदीशे चरमांशके च प्रवासतोऽर्थागमनं सुखं च । स्वकीयदेशे स्थिरभांशके च द्विदेहसंस्थेऽप्युभयत्र वै स्यात् ॥ १५ ॥ तदीश्वरे वक्रगते यदा स्याद्बहुप्रकारैर्द्रविणोपलब्धिः । भाग्यानुरूपात् खलु सर्वमेतद्विनिर्दिशेत्प्रागुदितं तु विद्भिः ॥ १६ ॥ तुषाररश्मिर्दशमे बलाढ्यश्चन्द्रात्मजः शत्रुयुतो न दृष्टः । दिगन्तकीर्तिर्जनयेत्स्वभोच्चं समाश्रितश्चापि विलग्नतो वा ॥ १७ ॥

अंशेश अतिबलवान् हो तो उक्त फल पूरा करता है तथा सुखभी देता है । नीचादिमें हो तो अल्पफल, मिश्रमें मिश्र फल देता है ॥ १२ ॥ यह कर्माजीव जिस राशिका अंश है उस राशिकी जो दिशा है वह पंडितने विचारना अर्थात् उसी दिशासे लाभ होगा तथा लग्नसे बारहवेंके स्वभावतुल्य देश जानना ॥ १३ ॥ दशमभाव अपने स्वामीसे दृष्ट वा युक्त हो तो अपनेही देशमें और अन्योंसे दृष्टयुत हो तो अन्य देशमें आजीविकाका उक्त फल मिलता है ॥ १४ ॥ दशमेश चरराशि चरांशकमें हो तो परदेशसे धन एवं सुख मिले, स्थिर राश्यंशकमें हो तो स्वदेशमें, द्विस्वभावमें हो तो दोनों

जगहोंसे मिले ॥ १५ ॥ दशमेश वक्रगति हो तो बहुत प्रकारसे धन लाभ होवै, इस प्रकार भाग्यस्थानानुरूप पूर्वोक्त फल बुद्धिमानोंने कहने ॥ १६ ॥ चन्द्रमासे दशम बलवान् बुध हो शत्रुसे युक्त दृष्ट न हो अथवा अपनी राशि वा उच्चका हो तो मनुष्यकी दिगंतकीर्ति करता है । लग्नसेभी ऐसा हो तो वही फल जानना ॥ १७ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च ।
होरासारे शम्भुहोराप्रकाशे कर्माजीवाध्याय आसीत्सुपूर्णः ॥ १८ ॥

इति श्रीपुञ्जराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे कर्माजीवाध्यायः पञ्चदशः ॥ १५ ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है ॥ १८ ॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां कर्माजीवाध्यायः पञ्चदशः ॥ १५ ॥

अथ ग्रहसप्तवर्गफलाध्यायः १६ ।

यन्मित्रस्वगृहे फलं निगदितं तुंगे त्रिकोणेऽपिवा तत्सर्वं विदधाति जन्मसमये षड्वर्गशुद्धो ग्रहः । एकश्छत्रपसार्वभौमनृपतिर्हस्त्यश्वकोशान्वितो द्व्याद्यैः किन्नरशक्रदेवपतयो मर्त्या भवंति ग्रहैः ॥ १ ॥ शुभाः स्वमित्रसौम्योच्चे निंद्या नीचारिपापजाः । एवं पापशुभं वीक्ष्य तद्विशोध्य परस्परम् ॥ २ ॥ वर्गे शुभाधिके क्रूरः शुभः सौम्योऽतिशोभनः । निंद्याधिके शुभः क्रूरः क्रूरोऽतिक्रूरतां व्रजेत् ॥ ३ ॥

जो फल मित्रगृह, स्वगृह, उच्च, मूल त्रिकोणमें कहा है वह समस्त फल एक षड्वर्गशुद्धग्रह जन्ममें देता है, एक ग्रह षड्वर्ग शुद्ध हो तो समस्त भूमंडलका एक छत्रधारी चक्रवर्त्ती राजा हाथी, घोडा, खजानासे युक्त करता है । दो आदि ग्रह ऐसे हों तो मनुष्य किन्नर, इन्द्र, देवपति होते हैं ॥ १ ॥ मित्रवर्ग वा सौम्यवर्ग उच्चगतग्रह हों तो शुभ होते हैं और नीचगत शत्रुवर्ग, पापवर्गमें हों तो अशुभ होते हैं, इनमें पाप वर्ग और शुभवर्गका परस्पर न्यूनाधिक देखके जो अधिक रहे उससे फल जानना, शुभाधिक

वर्गमें क्रूरभी शुभ होता है और शुभ हो तो अति शुभ होता है, निंद्यवर्गाधिकमें शुभभी क्रूर होता है, क्रूर अतिक्रूरताको प्राप्त होता है ॥ २ ॥ ३ ॥

अथ द्विग्रहयोगाः ।

क्रूरक्रियायां निपुणः सगर्वः पाषाणयंत्रक्रयविक्रयेषु ।
कामी नितान्तं च भवेन्मनुष्यो विकर्त्तने चंद्रमसा समेते ॥ ४ ॥
सद्धर्मकर्मद्रविणेन हीनः क्लेशानुरक्तः सततं सकोपः ।
भवेन्मनुष्यो दिवसाधिनाथो यदा धरित्रीतनयेन युक्तः ॥ ५ ॥
प्रियंवदः स्यात्सचिवो नृपाणां सेवार्जितार्थः श्रुततत्परश्च ।
कलाकलापे कुशलो मनुष्यो दिनाधिपे चंद्रसुतेन युक्ते ॥ ६ ॥
पौरोहित्ये नैपुणो भूमिपानां मंत्री सन्मित्राप्तवित्तः समृद्धः ।
चातुर्याढ्यः पूरुषश्चोपकारी घस्राधीशे जीवयुक्ते प्रसूतौ ॥ ७ ॥
सुबुद्धिश्च संगीतवाद्यायुधेषु भवेन्मानवो नेत्रवीर्येण हीनः ।
सुनेत्रानिमित्ताप्तसौहृत्समाजो दिवानायके दानवेज्येन युक्ते ॥ ८ ॥
धर्मप्रीतिः पुण्यबुद्धिर्गुणज्ञो जायापुत्रप्राप्तसौख्यः समृद्धः ।
सूतौ मर्त्त्योऽत्यंतधातुक्रियाढ्यस्तिग्मांशौ चेद्भानुपुत्रेण युक्ते ॥ ९ ॥

द्विग्रहयोगोंके फल कहते हैं–जो सूर्य, चन्द्रमा एक साथ हों तो मनुष्य क्रूरकर्ममें निपुण, घमण्डी, पत्थरके यंत्रादियोंके व्यापारमें चतुर और निरंतर कामी होवै ॥ ४ ॥ सूर्य मंगल युक्त होवै तो मनुष्य उत्तम धर्म कर्म तथा धनसे हीन रहे, क्लेशोंमें तत्पर, निरंतर क्रोधयुक्त रहे ॥ ५ ॥ सूर्य बुधयुक्त होवै तो मनुष्य प्रियवाणीवाला, राजमंत्री, सेवासे धन कमावै, शास्त्रोंमें तत्पर, कलाओंके समूहमें चतुर होवै ॥ ६ ॥ सूर्य गुरुयुक्त होवै तो पुरोहिताईमें चतुर, राजाओंका मंत्री, सुंदर मित्रोंसे पाई वित्तसे संपन्न, चतुराईसे युक्त और उपकारी मनुष्य होवै ॥ ७ ॥ सूर्य शुक्रयुक्त होवै तो सद्बुद्धि, संगीत-बाजे, आयुधकर्ममें निपुण मनुष्य नेत्रशक्तिसे हीन होवै, सुनेत्रा स्त्रीके निमित्त मित्रसमाज प्राप्त रहे ॥ ८ ॥ सूर्य शनियुत होवै तो धर्ममें प्रीति रक्खे, पुण्यबुद्धि गुणज्ञ स्त्रीपुत्रोंसे सुखी, संपन्न, अत्यंत धातु क्रियाओंसे युक्त रहे ॥ ९ ॥

पण्यानुजीवी कुटिलः प्रतापी स्वाचारहीनः कलहानुरक्तः । रोगानुरक्तः किल मातृशत्रुः कलानिधौ वक्रयुते मनुष्यः ॥१०॥ सद्रूपसद्धर्मधनेन युक्तः कांतापरप्रीतिरतोऽतिवक्ता । सद्वाग्विलासश्च कृपार्द्रचेता हीनो नरः सौम्ययुते निशीशे ॥ ११ ॥ विनीतः सदा गाढगूढोऽतिमैत्रो भवेन्मानवश्चोपकारी परेषाम् । समेतः सदा धर्मकर्मादिकैश्च तमिस्राऽधिपे शक्रपूज्येन युक्ते ॥ १२ ॥ सद्गन्धपुष्पोत्तमवस्तुचित्तो वस्त्रादिकानां क्रयविक्रयेषु । दक्षो नरः स्याद्व्यसनी विधिज्ञः प्रालेयरश्मौ कविना समेते ॥ १३॥ परस्त्रीरतो वैश्यवृत्त्याऽनुजीवी सदाचारहीनः परस्यात्मजश्च । भवेन्मानवः पूरुषार्थेन हीनः प्रसूतौ यदा मन्दशीतांशुयोगः ॥ १४ ॥ सद्बाहुयुद्धकुशलो विपुलाङ्गजानां सल्लालसो विविधभेषजपुण्यशीलः । स्याद्धीनलोहविधिवत्सुविभावको ना धात्रीसुते शशिसुतेन युते प्रसूतौ ॥ १५ ॥

चंद्रमा मंगलसे युक्त हो तो मनुष्य पुण्यकर्मसे जीविका करै, कुटिलस्वभाव, प्रतापवान्, अपने आचारसे हीन, कलहमें तत्पर, रोगपीडित, माताका शत्रु होवै ॥ १० ॥ बुधयुक्त चंद्रमा हो तो सुंदररूप, उत्तमधर्म, धनसे युक्त, स्त्रीमें परम आसक्त, अतिबोलनेवाला, उत्तम वाणीके विलासवाला, कृपासे गीला मन और छोटा शरीर होवे ॥ ११ ॥ गुरुयुत चन्द्रमा होवै तो सर्वदा गाढा होवे, गूढबुद्धि, अतिमित्रोंवाला, पराया उपकार करनेवाला और धर्मकर्मादिसे युक्त होवै ॥ १२ ॥ शुक्रयुत चन्द्रमा होवै तो उत्तमगंध पुष्प उत्तम वस्तुमें मन रहे । वस्त्रादिव्यापारमें चतुर, व्यसनवाला, विधिजाननेवाला होवै ॥ १३ ॥ शनियुत चन्द्रमा होवै तो परस्त्रीमें तत्पर, वैश्यवृत्तिसे आजीवन करनेवाला, सदाचारसे हीन, पराया पुत्र और पुरुषार्थसे हीन मनुष्य होवै ॥ १४ ॥ मंगल बुधसे युक्त होवै तो मल्लयुद्धमें चतुर, बहुतपुत्रोंकी अभिलाषावाला, अनेक प्रकारकी औषधिवाला, पुण्यस्वभाव, हीनकर्म लोहकर्मविधि करनेवाला मनुष्य होवै ॥ १५ ॥

मंत्रास्त्रशास्त्रपरिबोधविधौ मनुष्योऽत्यर्थं भवेद्धि निपुणश्च विवेकशीलः । सेनापतिस्तु नृपतिस्त्वथवा पुरेशो ग्रामेश्वरो धरणिजे धिषणेन युक्ते ॥ १६ ॥ प्रपंचानृतद्यूतकर्मप्रियः स्यादनेकाङ्गनाभोगचित्तः सगर्वः । प्रसूतौ नरः सर्ववैरानुकर्ता यदा भूसुते दानवेज्येन युक्ते ॥ १७॥ शस्त्रास्त्रवित्समरकर्मरतो नितान्तं स्तेयानृतप्रियकरः पुरुषोऽल्पवित्तः । सौजन्यताविरहितः खलु सौख्यहीनः स्याद्भूसुतेऽर्कतनयेन युतेऽतिनिन्द्यः ॥१८॥ संगीतज्ञो नीतिनाथो विनीतः सौख्याधिक्यः सद्गुणैः स्यात्प्रपूर्णः । धीरः सौगंधिप्रियः स्यादुदारः सूतौ जीवे सौम्ययुक्ते मनुष्यः ॥ १९ ॥ सद्वाग्विलासो गुणवान् विवेकी सदा सहर्षः स्वकुलाऽधिशाली । नरः सुवेषो बहुनायकः स्याच्छुक्रान्विते सोमसुते प्रसूतौ ॥ २० ॥ कलिप्रियश्चञ्चलचित्तवृत्तिः कलाकलापे कुशलो नरः स्यात् । भर्त्ता बहूनां परमः सुशीलः प्रसूतिकाले बुधमन्दयोगे ॥२१॥ नित्यं कांतावित्तमित्रात्मजाद्यैः सौख्यं मर्त्यो विद्यया पंडितः स्यात् । वादाधिक्यं पण्डितार्यैः करोति गीर्वाणेज्ये दानवेज्येन युक्ते ॥ २२ ॥ यशोऽधिकग्रामपुराधिनाथः स्त्रीसंशयप्राप्तमनोरथः स्यात् । शूरो धनाढ्यः कुशलः कलासु जीवे समन्दे मनुजः प्रसूतौ ॥ २३॥ सच्छिल्पलेख्यविधिजातकुतूहलाढ्यः पाषाणकर्मकुशलश्चलबुद्धियुक्तः । स्याद्दारुदारणकरो मनुजः प्रसूतौ पूर्वामरेज्यसहिते तरणेस्तनूजे ॥२४॥

मंगल बृहस्पतिसे युक्त हो तो मंत्रविद्या, अस्त्रशास्त्रके बोधमें मनुष्य अत्यंत निपुण होवै । तथा विवेकी, सेनापति, यद्वा राज्य अथवा नगरका स्वामी वा ग्रामका स्वामी ग्रहबलानुसार होवै ॥ १६ ॥ मंगल शुक्रयुत हो तो प्रपंच, झूठ, द्यूत कर्ममें प्रीति रखे, अनेक स्त्रियोंके भोगमें मन रहै, घमण्डी होवै और मनुष्य सबके साथ वैर करनेवाला होवै ॥ १७ ॥ मंगल शनियुक्त होवै तो अस्त्र शस्त्र जाननेवाला, युद्धकर्ममें तत्पर, सर्वदा चोरी, झूंठको प्रिय माने । अल्प-

धनवान्, सुजनतासे रहित, सुखहीन और लोकमें अतिनिंद्य होवै ॥ १८ ॥ बुध बृहस्पति युक्त होवै तो संगीत जाने, नीतिका स्वामी होवै, नम्र, अधिक सुखी, उत्तम गुणोंसे पूर्ण, धीर, सुगंधि वस्तु प्रिय, उदार होवै ॥ १९॥ बुध शुक्रयुक्त होवै तो उत्तम वाणीके विलासवाला, गुणवान्, विवेकवाला, सर्वदा खुश, अपने कुलमें, श्रेष्ठ सुन्दर वेषवाला और बहुतोंका स्वामी होवै ॥२०॥ शनियुत बुध होनेमें मनुष्य कलहको प्यारा माने, चित्तवृत्ति चञ्चल रहे, कलाओंके समूहमें चतुर, बहुतोंका पालन करनेवाला तथा परम सुशील होवै ॥ २१ ॥ बृहस्पति शुक्रयुत हो तो मनुष्य सर्वदा स्त्री, धन, मित्र, पुत्रादियोंसे सुख पावै। विद्या करके पण्डित होवै, पंडितश्रेष्ठोंसे अत्यंत शास्त्रार्थ करे ॥ २२ ॥ बृहस्पति शनियुक्त हो तो अधिक यशवाला, ग्राम नगरका स्वामी, स्त्रीके पक्षमें सन्देही, मनोरथ सिद्धिवाला, शूरमा, धनवान्, कला जाननेवाला होवै ॥ २३ ॥ शुक्र शनियुत होवै तो उत्तम शिल्प, लेख-विधिसे उत्पन्न खेलसे युत होवै । पत्थरके कामोंमें चतुर, चञ्चलबुद्धिसे युक्त तथा लकडी चीरनेवाला होवै ॥ २४ ॥ इति द्विग्रहयोगाः ॥

अथ त्रिग्रहयोगाः ।

सद्यंत्रपाषाणविधौ प्रवीणस्त्रपाकृपाभ्यां रहितश्च शूरः ।
एकत्रसंस्थैर्जनने मनुष्यो भवेदशीतद्युतिरक्तचन्द्रैः ॥ २५ ॥
सत्कार्यकृन्नरपतेश्च भवेन्महौजा वार्त्ताविधौ सकलशास्त्र-कलासु दक्षः । प्रद्योतनामृतकरामृतरश्मिजानां चेन्मानवश्च खलु संमिलने प्रसूतौ ॥२६॥ प्राज्ञो धूर्त्तश्चंचलः स्यात्प्रवीणः सेवाभिज्ञस्त्वन्यदेशाभिगामी । ताराधीशादित्यवाचस्पतीनां योगे नूनं सूतिकाले मनुष्यः ॥ २७ ॥ सद्धर्मकर्मण्यरुचिर्नरः स्यात्परार्थहर्त्ता व्यसनानुरक्तः । सरोजिनीशोशनशीतभास-श्चैकत्र भावे यदि संयुताः स्युः ॥ २८ ॥ मन्दोऽतिनिःस्वश्च परेङ्गितज्ञो धातुक्रियायां निरतोऽतिधूर्त्तः । व्यर्थप्रयास-प्रकरो नरः स्यादेकर्क्षगाः सूर्यसुधांशुमन्दाः ॥ २९ ॥

त्रिग्रहयोग कहते हैं—यदि सू० चं० मं० एक स्थानमें हों तो मनुष्य उत्तम यंत्र पत्थरके काममें प्रवीण, लज्जा एवं दयासे रहित, शूरमा होवै ॥ २५ ॥ सू० चं० बु० के योगसे राजाका उत्तम काम करनेवाला, बडा तेजस्वी, बातचीतमें और संपूर्ण शास्त्र तथा संपूर्ण कलाओंमें चतुर होवै ॥ २६ ॥ सू० चं० बृ० से पंडित, धूर्त्त, चञ्चल, प्रवीण, सेवा जाननेवाला, परदेश जानेवाला होता है ॥ २७ ॥ सू० चं० शु० से उत्तम धर्म कर्ममें अरुचि, पराया कार्यनाशक, व्यसनोंमें तत्पर रहै ॥ २८ ॥ सू० चं० श० से मूर्ख अतिनिर्द्धन, पराये इसारे जाननेवाला, धातुक्रियामें तत्पर, धूर्त्त, व्यर्थ कष्ट करनेवाला मनुष्य होवै ॥ २९ ॥

लज्जात्मजार्थवनिताजनमित्रवर्गैस्त्यक्तो भवेज्जनुषि निष्ठुर-चित्तवृत्तिः । ख्यातः ससाहसकमन्दविधौ प्रवीणो युक्तैर्दिना-ऽधिपकुजेन्दुसुतैर्मनुष्यः ॥ ३० ॥ वक्ता धनाढ्यः सचिवो नृपाणां चमूपतिर्नीतिविधौ समर्थः । उदारहृत्सत्यवचा विलासी स्यान्मानवोऽर्कारसुरेज्ययुक्तैः ॥ ३१ ॥ भाग्यान्वि-तोऽतिधिषणः सधनो विनीतो वंशाधिकः सुचतुरो बहु-जल्पकः स्यात् ॥ ३२ ॥ सच्छीलसद्गुणयुतो मनुजः प्रसूतौ चैकर्क्षगैस्तरणिभूसुतदानवेज्यैः । विवेकहीनः पितृबंधुवर्गै-र्धनैर्विहीनः कलहानुरक्तः॥ रोमाऽन्वितः स्यान्मनुजः प्रसूतौ चेदर्कवक्रार्कसुता हि योगे ॥ ३३ ॥

सू० मं० बु० से मनुष्य लज्जा, पुत्र, धन, स्त्रीजन और मित्रवर्गसे रहित रहता है, चित्तकी वृत्ति कठोर, विख्यात, साहसी, मन्द कामोंमें प्रवीण होता है ॥ ३० ॥ सू० मं० बृ० से व्याख्याता, धनवान्, राजाओंका मंत्री, सेना-पति, न्याय करनेमें समर्थ, उदार मन, सत्यवादी और विलासवान् होवै॥ ३१॥ सू० मं० शु० से भाग्ययुक्त, अतिबुद्धिमान्, धनवान्, नम्र, अपने वंशमें अधिक चतुर, बहुत बोलनेवाला तथा मनुष्य उत्तम स्वभाव, उत्तम गुणयुक्त होता है ॥ ३२ ॥ सू० मं० श० से विवेकरहित, पिता बन्धुवर्ग तथा धनसे हीन, कलहमें तत्पर, बहुत रोमवाला होवै ॥ ३३ ॥

दृग्रोगयुक् शास्त्रकलाकलापे विचक्षणः स्यान्मनुजः सुशीलः । सुसंग्रहार्थः प्रबलः प्रसूतौ योगे रविज्ञामरपूजितानाम् ॥ ३४ ॥ कांतानिमित्तं परितप्तचित्तस्त्वनल्पजल्पश्च विदेशवासी । द्वेषी सतां निन्द्यमतिर्नरः स्याद्योगे विवस्वद्बुधभार्गवानाम् ॥ ३५ ॥ मन्दाकृतिश्चात्मजनैर्विहीनो लोकैर्महाद्वेषकरोऽतिदुष्टः । भवेन्नरो नीचजनानुयातः सूतौ रविज्ञार्कसुतैः समेतैः ॥ ३६ ॥

सू० बु० बृ० से नेत्ररोगयुक्त, शास्त्रकलाके विषयमें प्रवीण, सुशील, समस्त गृहधनमें अधिक होवै ॥ ३४ ॥ सू० बु० शु० से स्त्रीके निमित्त मन संतप्त रहै, बहुत बोलनेवाला, विदेशनिवासी, सज्जनोंका द्वेषी, निन्द्य बुद्धि होवै ॥ ३५ ॥ सू० बु० श० से हीन आकृति, अपने मनुष्योंसे रहित, लोगोंके साथ बडा द्वेष करनेवाला अतिदुष्ट नीचजनसंगतिवाला होवै ॥ ३६ ॥

परस्य कार्येऽप्यातिसादरो ना प्रगल्भवाक्यो द्रविणेन हीनः । भूपाश्रितः क्रूरतरः प्रसूतौ योगे रवीज्यासुरपूजितानाम् ॥ ३७ ॥ कान्तासु नित्यव्ययकृत्प्रगल्भः कलत्रपुत्रादिसुखैः समेतः । भूपप्रियः स्यात्पुरुषः प्रसूतौ योगे दिनेशेज्यशनैश्चराणाम् ॥ ३८ ॥ द्रविणकाव्यकथास्वजनोज्झितः कुचरिताभिरुचिस्त्वतिभीतियुक् । भवति कंडुरुजार्तियुतः सदा रविसितार्कसुतैः सहितैर्नरः ॥ ३९ ॥

र० बृ० शु० योगमें मनुष्य पराये कार्यमें श्रद्धालु, वाचाल, चतुर, धनहीन, राजाश्रयी, अति क्रूर होता है ।। ३७ ।। सू० बृ० श० के योगसे स्त्रियोंमें नित्य धनव्यय करनेवाला, बोलनेमें चतुर, स्त्री पुत्रादि सुखयुक्त, राजाका प्रिय होता है ।। ३८ ।। र० शु० श० से धन, काव्य कथा और अपने मनुष्योंसे त्यक्त रहै, दुष्ट चरित्रोंमें रुचि रहै, अति भयवान्, सर्वदा खुजलीके रोगोंसे पीडित रहै ।। ३९ ।।

दीनोऽत्यंतं स्वीयवर्गापमानो नूनं मर्त्यो वित्तधान्येन हीनः । स्यादुत्पत्तौ हीनलोकानुयातो योगे दोषाधीशभौमेन्दुजानाम् ॥ ४० ॥ स्त्रीयुतोऽमलवपुः परिहर्त्ता कोपसंयुतनरो व्रणयुक्तः चेत्प्रसूतिसमये मिलिताः स्युः शीतभानुरुधिरामरपूज्याः ॥ ४१ ॥ दुःशीलास्त्रीनायकश्चंचलो ना दुःशीलः स्यात्तत्सुतः शीलयुक्तः । मर्त्यो नूनं चैकभावे यदि स्युः सूतौ ताराधीशभौमासुरेज्याः ॥४२॥ मृतिप्रदः शैशवके जनन्याः सदा मनुष्यः कलहाभितप्तः । स्याद्गर्हितश्चन्द्रकुजार्कपुत्राः प्रसूतिकाले मिलिता यदि स्युः ॥ ४३ ॥

चं० मं० बु० के योगसे मनुष्य अत्यंत दीन, अपने मनुष्योंसे अपमानित, अन्न धनसे हीन, हीन मनुष्योंके अनुकूल रहनेवाला होता है ॥४०॥ चं० मं० बृ० से स्त्रीसहित, निर्मल देह, दूसरेके शुभ कार्यको हरण करनेवाला, कोपसंयुक्त और घावसे चिह्नित होवै ॥ ४१ ॥ चं० मं० शु० से दुष्टस्वभावकी स्त्रियोंके विषे (नायक) अफ्सर, चंचल, दुष्टस्वभाव होवै, उसका पुत्र सुशील होवै ॥ ४२ ॥ चं० मं० श० से बाल्यावस्थामें माताको मृत्यु देवै, सर्वदा कलहसे संतप्त रहै, निंद्य होवै ॥ ४३ ॥

धीमान्महौजा बहुभाग्ययुक्तः सुवृत्तविद्योऽतिविचित्रमित्रः । विख्यातकीर्तिश्च भवेन्मनुष्यश्चैकत्रसंस्थैः शशिसौम्यजीवैः ॥४४॥ वृद्धस्पर्द्धायुक् सुविद्याप्रवीणो मर्त्यो नूनं नीचवृत्त्यर्थलुब्धः । चेदेकत्रस्थानसंस्थाः प्रसूतौ ताराधीशज्ञासुराचार्यसंज्ञाः ॥ ४५ ॥ ख्यातो विनीतोऽभिमतो नृपाणां नरः पुरग्रामकृताधिकारः । कलाकलापामलबुद्धिशाली चंद्रज्ञमन्दाः सहिता यदा स्युः ॥ ४६ ॥

चं० बु० बृ० एकत्र होनेमें मनुष्य बुद्धिमान्, बडा तेजस्वी, बडे ऐश्वर्यवाला, उत्तम विद्यावाला, बहुत एवं अनेक प्रकारके मित्रोंवाला विख्यातकीर्ति होवै ॥ ४४ ॥ चं० बु० शु० से मनुष्य बडी स्पर्धासे युक्त, दूसरेका डाह माने, उत्तम विद्यायुक्त, नीचवृत्ति, अतिधनलोभी होवै ॥ ४५ ॥

चं० बु० श० से मनुष्य ख्यात, नम्र, राजाके मनोनुकूल, नगर, ग्रामके अधिकारी कलाविद्या जाननेवाला बुद्धिमान् होता है ॥ ४६ ॥

भाग्याधिकः सद्गुणकीर्तियुक्तः सद्बुद्धिवृद्ध्या सहितो नरः स्यात् ।
प्रसूतिकाले हिमरश्मिजीवपूर्वामरेज्याः सहिता यदा स्युः ॥ ४७ ॥
सन्मन्त्रशास्त्राधिकृतः सुवेषो भूपप्रियोऽत्यन्तविचक्षणश्च ।
भवेन्महौजा मनुजः प्रसूतौ योगे निशीशेज्यशनैश्चराणाम् ॥ ४८ ॥
अभिमतोत्तमपुस्तकवीक्षणे सुलिखनेऽपि च पुण्यपरायणः ।
श्रुतिविदां प्रवरश्च पुरोधसः शशिसितार्कभुवां मिलने नरः ॥ ४९ ॥

चं० बृ० शु० से अधिक ऐश्वर्यवाला, शुभ गुण, कीर्तिमान्, उत्तम बुद्धि-वृद्धि करिके युक्त मनुष्य होवै ॥ ४७ ॥ चं० बृ० श० से मनुष्य उत्तम मंत्र उत्तम शास्त्रोंका जाननेवाला, सुंदर वेष, राजप्रिय, अत्यंत चतुर और बडा तेजस्वी होवे ॥ ४८ ॥ चं० शु० श० से उत्तम ग्रन्थ देखनेमें श्रद्धालु, उत्तम लेखमेंभी रुचिवाला, पुण्यमें तत्पर, वेदपाठियोंमें श्रेष्ठ और पुरोहित होवै ४९

निजकुले नृपतिर्मनुजो भवेद्वरकवित्वकगीतकलादरः ।
अतिपरार्थकसाधनमानसः कुजबुधांगिरसां जनने युतौ ॥ ५० ॥
वाचालः स्याच्चंचलः क्षीणदेहो नित्योत्साही मानवो वित्तयुक्तः ।
धृष्टोऽत्यंतं तारकेशावनीजदैत्येज्यानां संभवः संयुतेश्चेत् ॥ ५१ ॥
भयान्वितः क्षीणवपुर्वनेच्छुः प्रेष्यः प्रवासी कुविलोचनश्च ।
न स्यात्सहिष्णुर्बहुजल्पको ना योगे कुजज्ञार्कभुवां प्रसूतौ ॥ ५२ ॥

मं० बु० बृ० से मनुष्य अपने कुलमें श्रेष्ठ, श्रेष्ठ कविता, गीत कलाका आदर करनेवाला, परार्थ साधनमें अत्यंत मन रहै ॥ ५० ॥ मं० बु० शु० से मनुष्य वाचाल (बहुत बोलनेवाला), चपल, दुबला शरीर, सर्वदा उत्साही, धनवान् और अत्यंत धृष्ट होता है ॥ ५१ ॥ मं० बु० श० से मनुष्य भय-युक्त, क्षीण शरीर, वनकी इच्छा रखनेवाला, दूत, परदेशवासी, कुनेत्र, सहनशील नहीं, बहुत बकनेवाला होवै ॥ ५२ ॥

कलत्रपुत्रादिसुखैः समेतो भूपालमान्यः सुजनानुयातः ।
भवेन्मनुष्योऽवनिजामरेज्यपूर्वामरेज्यैः सहितैः प्रसूतौ ॥५३॥
भूपात्तमानः कृपया विहीनः कृशः कुवृत्तो गतमित्रसौख्यः ।
भवेन्नरश्चैकगृहं प्रयातैः क्षोणीतनूजांगिरसार्कपुत्रैः ॥ ५४ ॥
विदेशवासी जननी त्वनार्या कुरंगनेत्रोपहतिः सुखांतः ।
प्रसूतिकाले यदि संयुताः स्युर्माहेयदैत्यार्चितभानुपुत्राः ॥ ५५ ॥

मं० बृ० शु० से स्त्रीपुत्रादियोंके सुखयुक्त, राजमान्य, सज्जन संगी, मनुष्य होता है ॥ ५३ ॥ मं० बृ० श० से मनुष्य राजासे मान प्राप्त, दयारहित, दुबला शरीर, दुष्ट वृत्तिवाला, मित्रसुखरहित होता है ॥ ५४ ॥ मं० शु०श० से मनुष्य विदेशवासी होवै, उसकी माता असभ्य होवै, सुंदर-स्त्रीके कारण मानहानि आदिसे सुखनाश होवै ॥ ५५ ॥

सत्यान्वितः स्याद्बहुगीतकीर्तिर्भूपानुकंपा विजितारिपक्षः ।
प्रसन्नमूर्तिर्बुधजीवशुक्रैरेकर्क्षसंस्थैर्जनने नरः स्यात् ॥ ५६ ॥
संस्थानसद्वैभवसौख्ययुक्तो नरः सुवृत्तो धृतिसंयुतः स्यात् ।
अनल्पभाषी बुधजीवमंदाः प्रसूतिकाले यदि संयुताः स्युः ॥ ५७ ॥
असत्यभाषी बहुजल्पको ना धूर्त्तः सदाचारविवर्जितः स्यात् ।
दूरप्रयाणानुरतः कलाज्ञो देवेज्यशुक्रार्कभुवां प्रसूतौ ॥ ५८ ॥
यदपि नीचकुलोद्भवमानवो विशदकीर्तियुतः पृथिवीपतिः ।
अमलवृत्तियुतो जनने भवेद्धिषणभार्गवभानुभुवां युतौ ॥ ५९ ॥

बु० बृ० शु० एक राशिमें हों तो मनुष्य सत्यवादी होवै, उसकी कीर्ति बहुधा गायी जावै, राजाकी कृपा रहै, शत्रुसे विजयी रहे, मुख प्रसन्न रहै ॥ ५६ ॥ बु० बृ० श० से मनुष्य स्थान ऐश्वर्यसे उत्पन्न सुखसे युक्त रहै, उत्तम चारित्रवाला होवै, धारणायुक्त, बहुत बोलनेवाला होवै ॥ ५७ ॥ बृ० शु० श०से झूँठ बोलनेवाला, बहुत बकनेवाला, धूर्त्त, सदाचार रहित, दूर गमनमें तत्पर और कला जाननेवाला होवै ॥ ५८ ॥ बृ० शु० श० के योगमें मनुष्य यद्यपि नीचकुलोत्पन्न हो तो भी विशालकीर्तियुक्त राजा होवै, निर्मल वृत्तिवाला होवै ॥ ५९ ॥ इति त्रिग्रहयोगाः ॥

पापखेटसहिते कलानिधौ कीर्तयंति जननीविनाशनम् ।
तादृशेऽम्बरमणौ जनकस्य मिश्रिते च खलु मिश्रितं फलम् ॥ ६० ॥
सद्युते कुमुदिनीपतौ जनौ भूयशोऽर्थवरकीर्तिसंयुतम् ।
गौरवेण नृपतेर्वरेण्यकं मानवं प्रकुरुते कुलोत्तमम् ॥ ६१ ॥

चंद्रमा पापयुत हो तो माताका और ऐसा सूर्य होवै तो पिताका नाश करते, हैं मिश्रितमें मिश्रित फल होता है ॥ ६० ॥ चन्द्रमा जन्ममें शुभयुत होवै तो मनुष्यको भूमि, यश, धन, श्रेष्ठ कीर्त्तिसे युक्त तथा गौरवसे श्रेष्ठ और अपने कुलमें उत्तम करता है ॥ ६१ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च ।
होरासारे शंभुहोराप्रकाशेऽध्यायः पूर्णः सप्तवर्गादिकानाम् ॥ ६२ ॥

इति श्रीपुंजराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे सप्तवर्गफलाद्यध्यायः षोडशः ॥ १६ ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है ॥ ६२ ॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां सप्तवर्गफलाद्यध्यायः षोडशः ॥ १६ ॥

अथ राजयोगाध्यायः १७ ।

भाग्यादिभावजफलं प्रतिपादितं यद्भाग्यं भवेत्तदखिलं खलु राजयोगैः । तान्विस्तरेण च वदाम्यथ राजयोगांस्तैः सार्थकं हि जननस्य यतो नराणाम् ॥ १ ॥

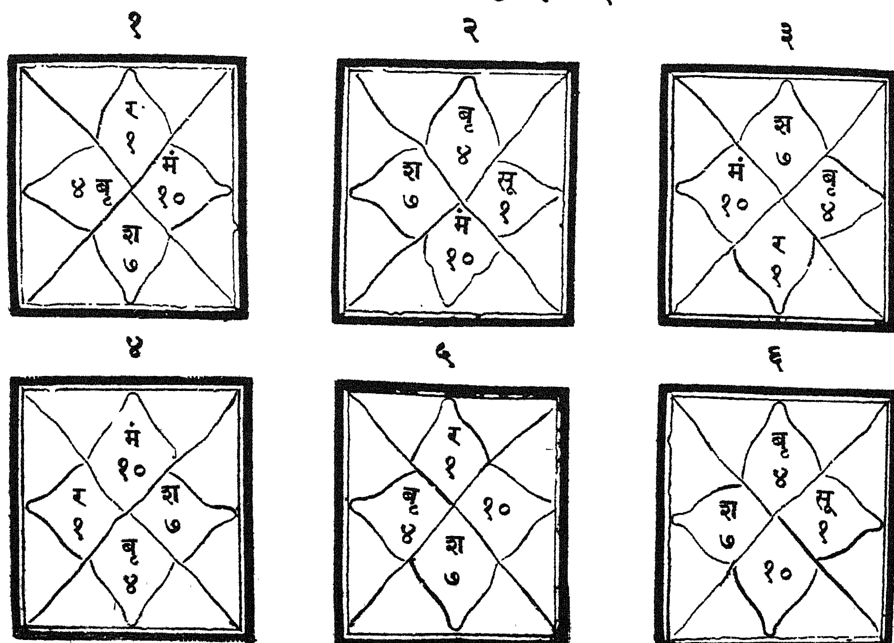
जो भाग्यभावादि फल कहे हैं वह समस्त ऐश्वर्य निश्चय राजयोगोंसे होता है, उन योगोंके ही कारण जन्मकी सफलता है, इसलिये उन राजयोगोंको विस्तारसे कहताहूं ॥ १ ॥

निजोच्चस्थिताः खेचराः पंच यस्य प्रसूतौ भवेत्सार्वभौमः स मर्त्यः । त्रयः स्वीयतुंगादियाताः स राजा नृपालात्मजोऽन्यस्य पुत्रोऽत्र मंत्री ॥ २ ॥ चतुःखेचरा यस्य तुंगोपयाता महानिम्नगातारणे स्युर्बलानाम् । महासेतुबंधाश्च दंतावलानां तथा कीर्तिबंधा धरित्रीतले ते ॥ ३ ॥ तुंगस्थैरिनभौमजीवशानिभिर्यद्वा त्रिभिर्विक्रमात्तेषामन्यतमोदयेऽवनिभुजां योगाः

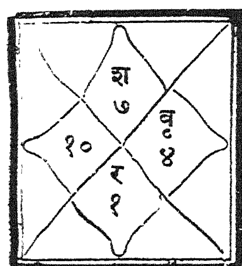
स्मृताः षोडश । तन्मध्येऽपि निजोच्चगे ग्रहयुगे चैकग्रहे शीतगौ स्वर्क्षे तुंगगतेऽथवैकखचरे मूर्त्तौ परे षोडश ॥ ४ ॥

जिसके जन्ममें पांच ग्रह उच्चके हों वह मनुष्य (चक्रवर्त्ती) बादशाह होता है, जिसके तीन ग्रह अपने उच्च आदियोंमें हों वह राजपुत्र हो तो राजा अन्यका पुत्र मंत्री होता है ॥ २ ॥ जिसके चार ग्रह उच्चके हों उसकी सेनायें महान् महानदियोंके पार विजय करनेको समर्थ होवैं । सेनाके हाथियोंसे उनपर बडे पुल बंधें तथा सारी पृथ्वीमें उसकी कीर्तिके बांध बंधें ॥ ३ ॥ केंद्रों १ । ४ । ७ । १० में उच्चके सूर्य, मंगल, गुरु, शनि हों या तीन ग्रह उच्चके हों तो इन्हीं लग्नोंसे कोई लग्न हो तो हेरफेरके १६ विकल्प राजयोगोंके होते हैं उन्हीं विकल्पोंमें २ ग्रह उच्चके और चन्द्रमा स्वगृही हो अथवा एक ग्रह उच्चका चन्द्रमा स्वगृही हो अथवा ३ ग्रह उच्चके और चन्द्रमा स्वगृही हो तो येभी १६ भेद राजयोगके होते हैं। उदाहरण–कुण्डलियोंमें हैं ॥ ४ ॥

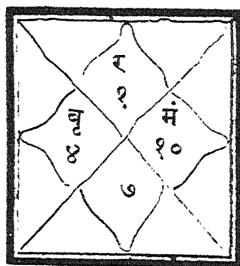
राजयोगविकल्पानामुदाहरणम् ।



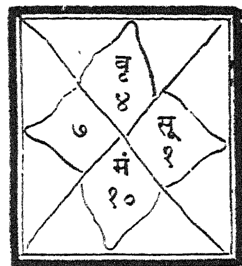
७



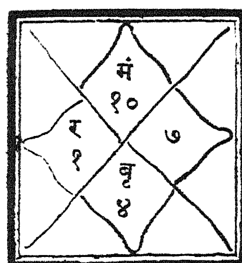
८



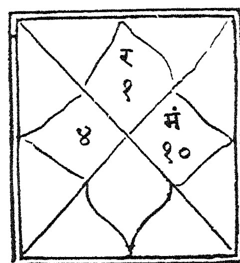
९



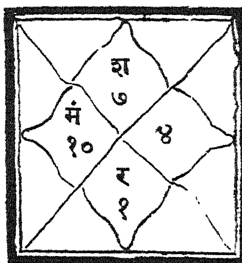
१०



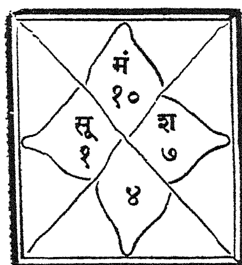
११



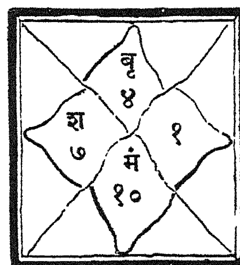
१२



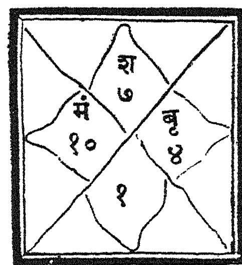
१३



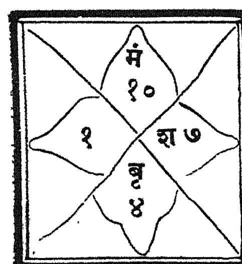
१४



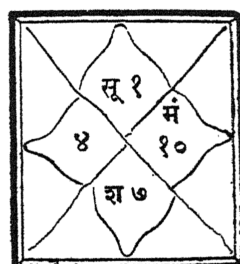
१५



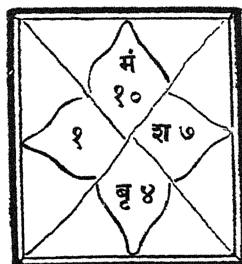
१६



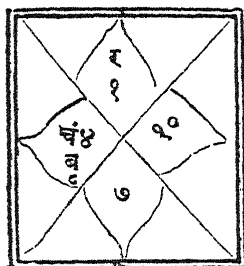
१७



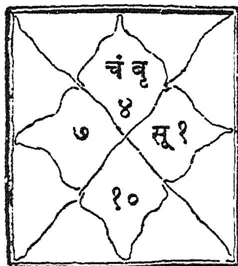
१८



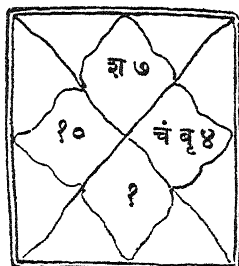
१९



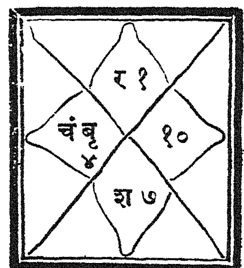
२०



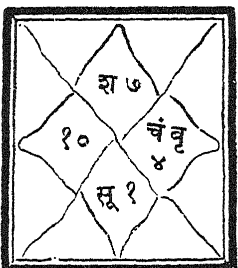
२१



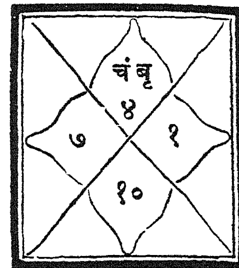
२२



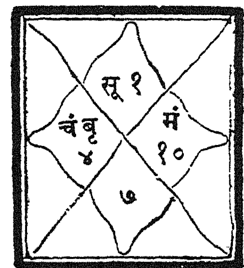
२३



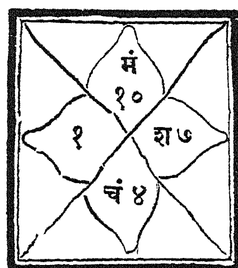
२४



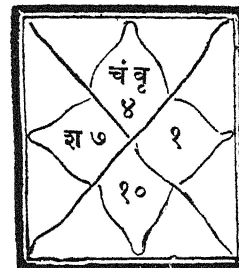
२५



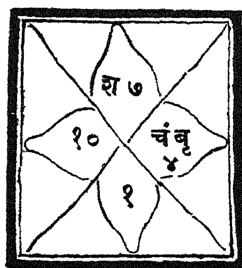
२६



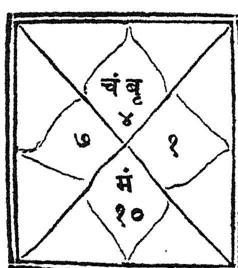
२७



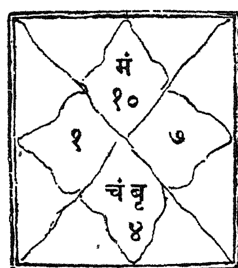
२८

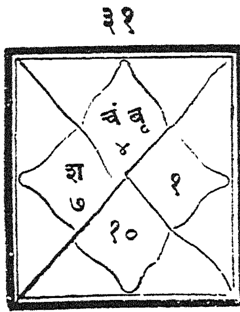


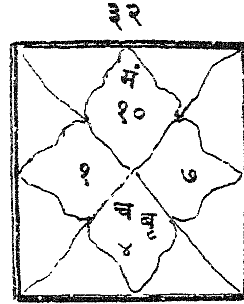
२९



३०



३१ 

३२ 

वर्गोत्तमे हिमकरे तनुगे च यद्वा चन्द्रोज्झितैश्च चतुरादिभि-रीक्षिते च। द्वाविंशतिः क्षितिभुजामपि संभवन्ति योगाः सदा जलधिसीमवतीं महीं च ॥ ५ ॥ प्राग्देवेज्यः कुंभभूर्दक्षिणे च शुक्रः पश्चात्सौम्यसंस्थो वसिष्ठः। पुंसो नूनं सूतिकाले तु यस्य नाथः स स्यादासमुद्रं धारित्र्याः ॥ ६ ॥ स्वोच्चे बुधे तनुगतेऽर्कसुते सभौमे नक्रे गुरौ धनुषि चन्द्रसुतेन युक्ते। स्यात्तस्य धात्र्यधिपतेर्नियतं प्रयाणे सेनाश्वकुंजर-चयैर्दलिताचलाः स्युः ॥ ७ ॥

चन्द्रमा अथवा लग्न वर्गोत्तममें हों उसे चार आदि ग्रह चन्द्रवर्जित देखें तो इस योगमें ग्रह दृष्टिके विकल्पसे २२ भेद होते हैं, इन योगोंके किसी भेदमें जन्म हो तो समुद्र पर्यंतका राजा होता है ॥ ५ ॥ जिसके जन्ममें बृहस्पति पूर्वमें, अगस्ति दक्षिणमें, शुक्र पश्चिममें और वशिष्ठ उत्तरमें हो तो वह समुद्रांत पृथ्वीका राजा होता है ॥ ६ ॥ उच्चका बुध लग्नमें, शनि, मंगल सहित मकरमें, बृहस्पति बुध धनमें हो उस राजाके गमनमें सेना घोडे हाथि-योंके समूहसे पर्वत चूर्ण होजावै ॥ ७ ॥

कंठीरवस्थे दिवसाधिनाथे मृगेऽवनीजेऽर्कसुते घटस्थे। पाथोनलग्ने तुहिनांशुयुक्ते पृथ्वीपतेर्जन्म महौजसः स्यात् ॥ ८ ॥ क्षोणीपुत्रे मेषगे मूर्तिसंस्थे वागीशे चेल्लग्नसंस्थे निजोच्चे। स्यातां भूपौ चापि योगद्वयेऽस्मिन् श्रेष्ठौ वीर्याढ्यौ जितारातिपक्षौ ॥ ९ ॥

सूर्य सिंहका, मंगल मकरका, शनि कुंभका, कन्या लग्न हो और उसीमें चंद्रमा होवै तो बडे तेजस्वी राजाका जन्म होवै ॥ ८ ॥ मंगल मेषका, बृहस्पति उच्चराशिका लग्नमें हो तो ये दो राजयोग हैं, इनमें शत्रु जीतनेवाले बलवान् राजा होते हैं ॥ ९ ॥

गीर्वाणेज्यः स्वोच्चगो लग्नवर्त्ती मेषे हेलिर्मंदशुक्रेन्दुपुत्राः । लाभर्क्षस्था भूमिपस्तं गृणंति वीर्योपेतं भूषणं भूतलस्य ॥ १० ॥ आर्कोकेरस्थः शनिर्लग्नवर्ती मित्रेणाढ्याः सिंहयुग्माजजूकाः । कार्किस्ते वै नायकं तं प्रकुर्युर्यद्वाऽम्भोधिप्रांतभूमीतलस्य ॥ ११ ॥ द्वन्द्वे सितेऽब्जधिषणौ शफरे कुजार्की नक्रे विलग्नभगते शशिजे स्वतुंगे । सूतौ भवेत्स हि महानचलाधिनाथो मत्तेभशत्रुदलने मृगराजतुल्यः ॥ १२॥ सिंहांगेऽर्कश्छागसंस्थो हिमांशुर्नक्रे वक्रः कार्मुकस्थः सुरेज्यः । सौरिः कुंभे सूतिकाले यदि स्यान्मर्त्योऽत्यर्थं वापि राजाधिराजः ॥ १३ ॥

बृहस्पति उच्चका लग्नमें, सूर्य मेषमें, शनि, शुक्र, बुध लाभभावमें हों तो इस योगवालेको बलवान् राजा पृथ्वीका भूषण करते हैं ॥ १० ॥ मकरका शनि लग्नमें और ५ । ३ । १ । ७ । ४ । मेंसे किसीमें सूर्य हो तो समुद्रांत पृथ्वीका पति करते हैं ॥ ११ ॥ मिथुनमें शुक्र, मीनमें चन्द्रमा, गुरु मकरमें, मंगल, शनि, बुध लग्नमें उच्चका हो तो वह बडे पर्वतोंका राजा शत्रुरूपी उन्मत्त हाथियोंके दलनमें सिंहके समान होवै ॥ १२ ॥ सिंहलग्नमें सूर्य, मेषमें चंद्रमा, मकरमें मंगल, धनमें गुरु, कुम्भमें शनि जन्म समयमें हो तो मनुष्य अत्यर्थ राजाधिराज होवै ॥ १३ ॥

मेषे सौम्यो मूर्तिसंस्थः प्रसूतौ वागीशश्चेन्मन्मथस्थः कलावान् । पातालस्थो व्योमगो दानवेज्यः पृथ्वीनाथः स्याद्दिगंतप्रकीर्तिः ॥ १४ ॥ वाचस्पतिः कर्कटगः प्रसूतौ खास्तांबुसंस्थाः कुजशुक्रमंदाः । तद्यानकाले जलधेर्जलानि भेरीनिनादोल्ललनं प्रयांति ॥ १५ ॥

मेषका बुध लग्नमें, सप्तम गुरु, चतुर्थ चंद्रमा, दशम शुक्र, जन्ममें हो तो दिगंतकीर्तिवाला राजा होवै ॥ १४ ॥ बृहस्पति कर्कका, १० । ७ । ४ में क्रमसे मंगल, शुक्र, शनि जन्ममें हों तो उस राजाके चलनेमें भेरि (तुरही) योंके शब्दोंसे समुद्रके जल उछलते हैं ॥ १५ ॥

सूतौ खेटश्चेत्स्फुरद्रश्मिजालः स्वर्क्षे मित्रर्क्षे च षड्वर्गशुद्धः । संस्थः सो वै कंटके वा त्रिकोणे कुर्यान्नूनं मानवं सार्वभौमम् ॥ १६ ॥ षड्वर्गशुद्धमपि खेचरयुग्मकं चेद्यस्य प्रसूतिसमये च यथोक्तरीत्या । तस्याधिपत्यमतुलं खलु किन्नरेषु द्वीपांतरे भवति चात्र न किं धरायाम् ॥ १७॥ तुंगत्रिकोणभवनाद्यधिकारहीनैः षड्वर्गशुद्धिसहितैस्त्रिभिरेव मंत्री । राजा भवेच्छ्रुतिमितैः खलु सार्वभौमः पंचादिभिश्च सहसा गुरुणैककेन ॥ १८ ॥

एकभी ग्रह जो अस्तंगत न हो स्वराशी, मित्रराशिमेंभी षड्वर्गशुद्ध हो और केन्द्र वा त्रिकोणमें हो तो वही एकग्रह मनुष्यको चक्रवर्त्ती करदेता है ॥ १६ ॥ यदि षड्वर्गशुद्ध दो ग्रह उक्त प्रकार गुणोंसे युक्त हों तो उस मनुष्यका राज्य किन्नरोंमें, द्वीपांतरोंमें भी होता है, पृथ्वीमें होना तो क्या वडी बात है ॥ १७ ॥ उच्च त्रिकोणादि अधिकार रहितभी तीन ग्रह षड्वर्गशुद्ध हों तो मनुष्य मंत्री होता है, चार ग्रह हों तो राजा, पांच आदि हों तो निश्चय चक्रवर्त्ती होता है और एक गुरुही षड्वर्गशुद्ध होवै तो सहसा चक्रवर्त्ती करता है ॥ १८ ॥

वृषे शीतगुर्लग्नसंस्थः प्रसूतौ खतुर्यास्तगा मंदसूर्यामरेज्याः । भवंतीह तद्दण्डयात्रा सुधूल्यंधकारा दिने स्यात्तमिस्राप्रवेशम् ॥ १९ ॥ यस्येन्दुशुक्रेन्दुजनिर्जरेज्यास्त्रिषड्भवांत्योपगता भवंति । लग्ने शनिर्नक्रगतोऽत्र नूनमेकातपत्रः स भुनक्ति भूमिम् ॥ २० ॥

जन्मकालमें वृषका चंद्रमा लग्नमें, १० । ४ । ७ भावोंमें क्रमसे शनि, सूर्य, गुरु होवै तो उस राजाकी सेनाके चलनेके गर्दसे दिनमेंभी रात्रिकेसे

अंधकार प्रतीत होवै ॥ १९ ॥ जिसके चंद्रमा, शुक्र, बुध, गुरु ३ । ६ । ११ । १२ भावोंमें हों और लग्नमें मकरका शनि हो तो वह मनुष्य सारी पृथ्वीका एक छत्र राज्य भोगता है ॥ २० ॥

स्वतुंगस्थितौ सौम्यशुक्रौ विलग्ने मृगे भूमिजश्चापगौ जीवचंद्रौ। प्रसूतौ मनुष्यौ च तौ भूमिपालौ भवेतां तथाऽऽखण्डलौ भूतलस्थौ ॥ २१ ॥ कुलीरगौ चंद्ररवी सुरेज्यः सपत्नगश्चंद्रसुतः स्वतुंगे । कश्चिद्बली मूर्त्तिगतः स राजा राजाधिराजाह्वयताभियुक्तः ॥ २२ ॥ केन्द्रगः सुरगुरुर्निजोच्चभे दानवेन्द्रसचिवो नभास्थितः । संभवेदपि सुमुद्रिका चतुस्तोयराश्यवधिगामिनी भवेत् ॥ २३ ॥

अपने उच्चराशिके शुक्र वा बुध लग्नमें, मकरमें मंगल, धनमें गुरु, चंद्रमा जिसके जन्ममें हो वह मनुष्य पृथ्वीमें राजा होकर सूर्यके समान तपते हैं ॥ २१ ॥ कर्कटमें चंद्रमा सूर्य, छठा गुरु, उच्चका बुध हो तथा कोई बलवान् ग्रह लग्नमें हो तो वह राजा राजाधिराज नामसे युक्त होवै ॥ २२ ॥ अपने उच्चका गुरु केन्द्रमें, शुक्र दशममें जिसके जन्ममें हो उसकी मोहर (छाप) चारों समुद्र पर्यंत जानेवाली होवै ॥ २३ ॥

मेषेऽर्केज्यौ खे कुजो ज्ञोशनाब्जाः पुण्ये सूतौ यस्य चेत्सोऽवनीशः । तद्याने स्याद्दिग्जयो व्याकुला भूः सैन्यैश्चित्तोद्वेगिताः शत्रवः स्युः ॥ २४ ॥ नीचारिभागरहिताः स्फुरदंशुजालाः सूतौ खगा बलयुताः खलु त्यक्तवैराः । शुक्रे वृषे समुदितः स च मातृचक्रे जीवो भवेदमरतुल्यपराक्रमश्च ॥ २५ ॥

मेषमें सूर्य, गुरु, दशम मंगल, नवम बुध, शुक्र, चंद्रमा जिसके जन्ममें हों वह राजा होवै, उसके गमनमें दिग्विजय होवै और सेनाके चलनेसे भूमि व्याकुल और शत्रु चिंता एवं उद्वेग युक्त होवै ॥ २४ ॥ जन्ममें ग्रह नीच, शत्रु भागमें न हों, अस्तंगत न हों, बलवान् हों, शत्रु युक्त न हों, शुक्र वृषमें उदयी हो तो वह मनुष्य संसारचक्रमें देवतुल्य पराक्रमी होवै ॥ २५ ॥

मार्तण्डश्चेन्मेषगो लग्नवर्त्ती कर्के जीवे जूकगौ चंद्रमंदौ ।
सूतौ धात्रीपालको भूपमालाभिर्वै मर्त्यः पालिताज्ञो भवेत्सः॥२६
मीनगः कुमुदिनीदयितश्चेत्पूर्ण एव निखिलेक्षितयुक्तः ।
सार्वभौममवनीश्वरैः करोतींद्रतुल्यसुपराक्रमं जनौ ॥ २७ ॥

मेषका सूर्य लग्नमें, बृहस्पति कर्कमें, तुलामें शनि, चन्द्रमा जन्ममें हों तो जिसकी आज्ञाको बहुत राजा पालन करें ऐसा राजा होवै ॥ २६ ॥ यदि चन्द्रमा मीनका, सर्वग्रह दृष्ट तथा पूर्णमण्डल हो तो चक्रवर्त्ती राजा होकर मनुष्योंमे इन्द्रतुल्य पराक्रम करता है ॥ २७ ॥

सत्त्वोपेतः सौम्यखेटः प्रपश्येत्पूर्णं चंद्रं सूतिकाले नरस्य ।
भूपालः स्यान्निर्जितारातिपक्षः शूरोऽत्यर्थं सर्वसेनाप्रपूर्णः ॥ २८ ॥
नास्तं याताः पुत्रगा ज्ञेज्यशुक्राः पुण्ये मंदः शत्रुसंस्थः खरांशुः ।
यात्राकाले तस्य सेनातिचाराद्वस्राधीशश्चापि धूलीकृतास्तः ॥२९॥
कन्यालग्ने ज्ञोऽर्कवक्रौ तृतीयेऽम्बुस्थः शुक्रोऽस्ते गुरुः सूर्यजोऽरौ ।
सूतो योगेऽस्मिन्महाभूमिपालो वैकल्याः स्युः शत्रवस्तद्रणाग्रे॥३०॥
मीनोदये चेद्दनुजेन्द्रमन्त्री कार्किस्थितौ जीवनिशीथिनीशौ ।
मेषेऽर्कवक्रौ धरणीपतिः स्यादाखण्डलेनापि तुलां प्रयाति ॥ ३१ ॥
इत्युक्तैः स्यान्नीचवंशोद्भवोऽपि योगैर्भूपः किं पुनर्भूपसूनुः ।
भूपाज्जातो वक्ष्यमाणैश्च योगैर्भूपालः स्यात्तत्समोऽन्यस्य पुत्रः॥३२

बलवान् शुभग्रह पूर्णचन्द्रमाको जिस मनुष्यके जन्मकालमें देखें वह राजा होवै, शत्रु जीते हैं जिसने ऐसा समस्त सेनासे पूर्ण अत्यंत शूर होवै ॥ २८ ॥ पंचम भावमें बुध, गुरु, शुक्र उदयी हों, नवम शनि, छठा सूर्य हो तो उस राजाके चलनेमें सेनाके दौडनेसे सूर्य धूल गर्दसे अस्त हो जावै ॥ २९ ॥ कन्यालग्नमें बुध, सूर्य, मंगल तीसरे, शुक्र चौथा, सप्तम गुरु, शनि छठा जिसके जन्ममें हो वह महाराजा होवै, उसके रणके आगे शत्रु विकल होवैं ॥ ३० ॥ मीनलग्नमें शुक्र, कर्कमें गुरु चंद्रमा, मेषमें सूर्य मंगल हों तो राजा सूर्यकी तुलनाको प्राप्त होवै ॥ ३१ ॥ इतने जो राज-योग कहे हैं इनमें नीचकुलोत्पन्नभी मनुष्य राजा होता है, राजपुत्रका तो

कहनाही क्या है । अब आगे जिन योगोंसे राजपुत्रही राजा होता है अन्य राजतुल्य होते हैं उन योगोंको कहते हैं ॥ ३२ ॥

छायापुत्रो नक्रलग्नोपयातश्चेदुत्पत्तौ मन्मथे पुष्पवंतौ । लाभे वक्रो भार्गवश्चाष्टमस्थो भूपालः स्याद्भूपवंशप्रसूतः ॥ ३३ ॥ पातालस्थौ जीवशुक्रौ प्रसूतौ भूमीपालो निर्भरं स्यात्समर्थः । वागीशश्चेत्कर्कटस्थः प्रकुर्यान्नूनं मर्त्यं वापि काश्मीरनाथम् ॥ ३४ ॥ निरीक्ष्यमाणो धिषणोशनोभ्यां स्वोच्चस्थितोऽब्जो नृपतिं करोति । खेटो यदेकः परिसूतिकाले वा पंचमांशे कुरुते नृपालम् ॥ ३५ ॥ विलोकयँश्चन्द्रसुतं सुरेज्यो विचित्रसंपन्नृपतिं करोति । संपूर्णचन्द्रं प्रविलोकयंतश्शुक्रेज्यसौम्या जनयंति भूपम् ॥ ३६ ॥ अधिसुहृल्लवगः क्षणदाधिपो नरपतिं प्रकरोति सितेक्षितः । अधिसुहृन्निजभागगतोऽथवा धिषणवीक्षणतः कुरुते नृपम् ॥ ३७ ॥ घस्राधीशे चाधिमित्रांशकस्थे दृष्टे सम्यग् यामिनीनायकेन । मर्त्याधीशस्तस्कराणां समूहे सच्छीलो वै निर्भरं स्यादुदारः ॥ ३८ ॥ सौम्यः स्वोच्चस्थः ससोमः प्रसूतौ कुर्याद्भूपं मागधेशं सवीर्यम् । वीर्योपेतः शर्वरीनायकश्चेद्भूमीपालं वापि सन्मन्दिरस्थः ॥ ३९ ॥ जनुर्लग्नपो जन्मराशीश्वरो वा बली कंटके नीचवंशेऽपि भूपम् । प्रकुर्यादुदारं नितांतं पवित्रं किमत्रैव चित्रं महीपालपुत्रम् ॥ ४० ॥

शनि मकरलग्नमें, सप्तम सूर्य चंद्रमा, लाभभावमें मंगल, अष्टम शुक्र जन्ममें हो तो राजवंशोत्पन्न मनुष्य राजा होवै ॥ ३३ ॥ चतुर्थ बृहस्पति, शुक्र जन्ममें हों तो सामर्थ्यवान् राजा होवै । बृहस्पति कर्कका भी होवै तो मनुष्य निश्चय काश्मीरदेशका राजा होवै ॥ ३४ ॥ उच्चराशिका चंद्रमा गुरु शुक्रसे दृष्ट हो तो राजा बनाता है अथवा जन्ममें कोई एक ग्रह पंचवर्गशुद्ध हो तो वह भी राजा बनाता है ॥ ३५ ॥ बुधको गुरु देखे तो अनेक संपत्तिवाला राजा करता है । पूर्ण चन्द्रमाको शुक्र, गुरु, बुध देखें तो राजा करता है ॥ ३६ ॥

चन्द्रमा अधिमित्रके स्थानमें शुक्रसे दृष्ट हो तो राजा बनाता है अथवा अधिमित्रांशकी यद्वा स्वांशकी हो उसे गुरु देखे तो राजा करता है ॥ ३७॥ सूर्य अधिमित्रांशकमें चन्द्रमासे दृष्ट हो तो चोरोंके समूहमें राजा होवै और उत्तम चरित तथा उदार होवै ॥ ३८ ॥ जन्ममें उच्चका बुध चन्द्रसहित हो तो मगधदेशका बलवान् राजा करता है, बलवान् चन्द्रमा शुभराशिमें हो तोभी राजा बनाता है ॥ ३९ ॥ जन्म लग्नेश वा जन्म राशीश बलवान् केन्द्रगत होवै तो नीचवंशोत्पन्न मनुष्यकोभी सर्वदा उदार पवित्र राजा बनाता है, राजपुत्रका ऐसा हो तो क्या आश्चर्य है ॥ ४० ॥

अविस्थितस्तिग्मरुचिः ससोमो यस्य प्रसूतौ स तु भूपतिः स्यात् । कर्णाटकद्राविडकेरलांध्रदेशाधिपानामनुकूलवर्त्ती ॥ ४१ ॥ स्वोच्चस्वमंदिरगतौ भृगुजामरेज्यौ केंद्रत्रिकोणभवनेषु गतौ भवेताम् । यस्य प्रसूतिसमये कुरुते नृपालं भूपालसंभवमलं सचिवेन्द्रमन्यम् ॥४२॥ यस्य प्रसूतिसमये मदने धने च प्रांते विलग्नभवने यदि संति खेटाः । ते छत्रयोगमपि संजनयंत्यवश्यं प्राचीनपुण्यनिचयाभ्युदयो हि यस्य ॥ ४३ ॥ तनुस्थितः क्रूरखगः प्रसूतौ विलोकितो गीष्पतिना तु यस्य । कविः कुलीरे द्विजदेवभक्तः प्रासादवापीपुरकृन्नृपः स्यात् ॥४४॥ शस्तो यदेकः शुभदः स्वतुंगे केन्द्रेऽम्बुजेशो बलवान् प्रदृष्टः । देवार्चितेनात्मजसंस्थितेन चेन्मानवो वै मनुजाधिपः स्यात् ॥ ४५ ॥ नक्रराशिमपहाय लग्नगो यस्य जन्मसमये सुरार्चितः । चेत्करोति मनुजं नराधिपं मत्तकुंजरगणैः समन्वितम् ॥ ४६ ॥

जिसके जन्ममें सूर्य चन्द्रमा सहित मेषका हो वह राजा कर्णाटक, द्राविड, केरल और अन्ध्रदेशवालोंके अनुकूलवर्त्ती होता है ॥ ४१ ॥ अपने उच्च वा स्वगृहगत गुरु शुक्र केन्द्र त्रिकोणमें जिसके जन्ममें हों वह राजपुत्र मंत्रिश्रेष्ठोंके माननीय राजा, अन्य वर्ण मंत्री होता है ॥ ४२ ॥ जिसके जन्ममें ७ । २ । १२ । १ भावोंमें ग्रह हों तो छत्र योग करते हैं, जिसका

पूर्वकृत पुण्य समूहका उदय होता है उसका ऐसा योग होता है ॥ ४३ ॥ जन्ममें लग्नगत क्रूरग्रह बृहस्पतिसे दृष्ट हो शुक्र कर्कका हो तो देवता ब्राह्मणोंका भक्त एवं बडे महल, बावली और नगर बनानेवाला राजा होवै ॥४४॥ एकभी शुभग्रह अपने उच्चमें हो, सूर्य केन्द्रमें बलवान् हो, उसे पंचम भावगत गुरु देखे तो मनुष्य राजा होवै ॥ ४५ ॥ जिसके जन्म समयमें मकरराशि छोडकर अन्य किसी राशिके लग्नमें बृहस्पति हो तो उस मनुष्यको उन्मत्त हाथियोंके समूहयुक्त राजा करता है ॥ ४६ ॥

विहाय लग्नं परिपूर्णचन्द्रः केन्द्रस्थितो वीर्ययुतस्तु यस्य । प्रसूतिकाले कुरुते नृपालं लीलाविलासं कलितारिवृन्दम् ॥ ४७ ॥ सुरगुरुः सविधुर्जनने भवेद्यदि चतुष्टयगः सितवीक्षितः । अतुलकीर्तियुतो नृपतिर्भवेद्विचरो न च नीचगतः क्वचित् ॥ ४८ ॥ धनगताः सितजीवशशांकजा मदनगाः कुजमंदनिशाकराः । भवति यस्य जनो स तु भूपतिस्त्वारिगजप्रशमे च मृगाधिपः ॥ ४९ ॥

जिसके जन्म समयमें लग्न छोडके केन्द्रमें पूर्ण चन्द्रमा बलशाली हो तो शत्रु समूहको नाश करके खेलविलास करनेवाला राजा होवै ॥ ४७ ॥ जन्ममें चन्द्रमा सहित गुरु, केन्द्रमें शुक्रसे दृष्ट हो और कोई ग्रह नीचका न हो तो असंख्य कीर्त्ति युक्त राजा होता है ॥ ४८ ॥ धन स्थानमें शुक्र, गुरु, बुध सप्तममें, मंगल, शनि, चन्द्रमा जिसके जन्ममें हों वह राजा शत्रुरूप हाथियोंके शमन करनेमें सिंह होवै ॥ ४९ ॥

कुंभेऽन्त्यांशे यामिनीशे त्रिकोणे मेषे मीने मेदिनीनन्दने वा । सौम्ये द्वंद्वे चैकविंशांशके वा भूपालः स्याद्भूमिपालः प्रजातः ॥ ५० ॥ कलशपंचदशांशगते शनावपि कुलीरदशांशगते विधौ । धनुषि वह्निलवे विबुधार्चिते शशिनि सिंहगतेऽप्यथवा नृपः ॥ ५१ ॥ वर्गोत्तमः पूर्णबलः शशांको दास्त्रेथ पुष्येप्यथ कृत्तिकासु । करोति मर्त्यं खलु सार्वभौमं त्रिपुष्करोत्पन्ननरोऽपि भूपः ॥ ५२ ॥ भद्रातिथिः स्याद्विषमांध्रिभं चेद्वारे-

ऽर्कजीवारशनैश्वराणाम् । त्रिपुष्कराख्यः कथितो हि योगो वृद्धौ च हानौ त्रिगुणात्तिकर्ता ॥ ५३ ॥ यद्वा सूतौ भार्गवो यस्य पुण्ये पूर्णश्चन्द्रश्चापि मेषूरणस्थः । अन्ये खेटा लाभसंस्था भवेयुः पृथ्वीनाथो भूपवंशप्रजातः ॥ ५४ ॥

कुंभराशिके अंत्यांश अर्थात् कुंभकुंभांशक वर्गोत्तममें चंद्रमा अथवा १२ वा १ राशिका मंगल त्रिकोणमें अथवा बुध मिथुनके २१ अंशपर हो तो राजवंशज राजा होवै ॥ ५०॥ कुंभके १५ अंशपर शनि, कर्कके १० अंशपर चंद्रमा, धनके ३ अंशपर गुरु हो तो राजा होवै अथवा इसी योगमें चंद्रमा सिंहमें हो तो भी राजा होवै ॥ ५१ ॥ अश्विनी, पुष्य अथवा कृत्तिकामें पूर्णबली वर्गोत्तमी चन्द्रमा हो तो चक्रवर्त्ती राजा होवै । त्रिपुष्कर योगमें उत्पन्न हुआ मनुष्यभी राजा होता है ॥ ५२ ॥ त्रिपुष्कर लक्षण कहते हैं कि, भद्रा २ । ७ । १२ तिथि, रवि, मंगल, गुरु, शनिवार और त्रिपाद् नक्षत्र अर्थात् कृत्तिका पुनर्वसु विशाखा उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र हों तो त्रिपुष्कर योग होता है। यह वृद्धि तथा हानिमें त्रिगुण फल करता है ॥ ५३ ॥ अथवा जन्ममें नवम शुक्र पूर्ण चंद्रमा दशम और ग्रह लाभभावमें होवै तो राजवंशीय राजा होता है ॥ ५४ ॥

दोषाकरादुपचयेष्वखिलग्रहाश्चेद्बौमात्त्रिधर्मसुतगा धिषणेंदुसूर्याः। कुर्वन्ति ते हि मनुजं धरणीपतीन्दुमुन्मत्तकुंजरतुरंगमसंपदाढ्यम् ॥ ५५ ॥ तुर्यस्थितौ बुधसितौ सहजेऽम्बुजेशस्तिष्ठंति पुष्करचराः सुतधाम्नि चान्ये । नीचेऽथवाऽरिसदने नहि कश्चिदत्र धात्रीपतिर्भवति चैककृताधिकारः ॥ ५६ ॥ हरिस्थितस्तिग्ममयूखमाली कुलीरगः कैरविणीपतिश्चेत् । निरीक्षितौ चित्रशिखण्डिजेन धराधिनाथं कुरुते तदानीम् ॥ ५७ ॥ शरासनस्थस्त्रिदशार्चितश्चेत्सोमात्मजः कर्कटगः प्रसूतौ । दृष्टौ च तौ भार्गवभूमिजाभ्यां नराधिनाथं कुरुत-

स्तदानीम् ॥ ५८ ॥ शशी झषस्थितो गुरुः कुलीरगः कविर्घटे । भवेज्जनौ नराधिपो द्विदंतवाजिसंयुतः ॥ ५९ ॥

समस्त ग्रह चन्द्रमासे उपचयमें हों और मंगलसे ३ । ९ । ५ भावोंमें शुक्र चन्द्रमा सूर्य हों तो मनुष्य उन्मत्त हाथी घोडाओंसे युक्त राजाओंमें चन्द्रमा जैसा होता है ॥ ५५ ॥ बुध, शुक्र चौथे भावमें, तीसरा सूर्य, अन्यग्रह पंचम भावमें हों यहां नीच शत्रु राशिका कोई हो तो पृथिवीमें एकाधिकारी राजा होवै ॥ ५६ ॥ सूर्य सिंहमें, चंद्रमा कर्कमें हो इनको गुरु देखे तो राजा करते हैं ॥ ५७ ॥ यदि गुरु धनमें, बुध कर्कमें हो इनको शुक्र मंगल देखें तो राजा करते हैं ॥ ५८ ॥ चंद्रमा मीनमें गुरु कर्कमें, शुक्र कुंभमें जन्ममें हो तो हाथी घोडाओंसे संयुक्त रहनेवाला राजा होवै ॥ ५९ ॥

सितेक्षितः शनिर्घटे सरोजिनीश्वरस्तनौ । जलेचरर्क्षगे विधौ यदा भवेन्नृपो वरः ॥ ६० ॥ खेचरो यदि च नीचभस्थितस्तत्पतिस्तदपि तुंगनायकः । केन्द्रगौ हि भवतः समुद्भवे कीर्तितौ नृपतिसंभवाय तौ ॥ ६१ ॥ समीरपौष्णानिलजीवभेषु नासत्यभे वा दनुजेन्द्रमंत्री । स्थितः प्रसूतौ मनुजं करोति नराधिपालं नृपवंशजातम् ॥ ६२ ॥ राज्योपलब्धिरपि कर्मगृहस्थितस्य यद्वा विलग्नगृहगस्य भवेद्दशायाम् । वीर्यान्वितस्य खचरस्य तयोरभावे सद्राजयोग इह चेत्परिसूतिकाले ॥ ६३ ॥

शुक्रसे दृष्ट शनि कुंभका हो, लग्नमें सूर्य, जलचर राशिमें चंद्रमा हो तो मनुष्य राजा होवै ॥ ६० ॥ यदि कोई ग्रह नीच राशिमें हो तो उस राशिका स्वामी और उसके उच्चराशिका स्वामी यदि केंद्रमें हों तो राजा करते हैं ॥ ६१ ॥ स्वाती, रेवती, कृत्तिका, पुष्य, अश्विनीमेंसे किसी नक्षत्रमें शुक्र हो तो राजवंशीयको राजा करता है ॥ ६२ ॥ उक्त राजयोगोंके फल दशमगत वा लग्नगत ग्रहकी दशामें होता है । लग्न दशममें ग्रह न हो तो बलवान् ग्रहकी दशामें होता है ॥ ६३ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुंजराजोदिते च।
होरासारे शंभुहोराप्रकाशेऽध्यायः पूर्णो राजयोगाख्य आसीत् ॥६४॥

इति श्रीपुंजराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे राजयोगाध्यायः सप्तदशः ॥ १७ ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है ॥ ६४ ॥

इति श्रीशंभुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां राजयोगाध्यायः सप्तदशः ॥ १७ ॥

अथ सामुद्रिकाध्यायः १८।

यस्य प्रसूतिसमये प्रबला नृपालयोगा भवंति यदिवा पुरुषस्य नूनम्। सद्राजलाञ्छनवराणि पदे तदीये यद्वा भवन्त्यपि च पाणितलेऽमलानि ॥ १ ॥ अनामिकामूलगता रेखा पुण्याह्वया च सा। प्राप्ता मध्यांगुष्ठतोर्द्धा मणिबंधं तु राज्यदा ॥ २ ॥ यवचिह्नं यदा यस्यांगुष्ठमध्ये विराजते। विनीतः स्याद्यशस्वी च स्ववंशाभरणं च सः ॥३॥ वैसारिणो वारणो वाऽऽतपवारणकं सृणिः। वीणा पुष्करिणी पाणौ चरणे स्युर्नराधिपाः ॥ ४ ॥ करवालादर्शमालाहलपर्वतवाजि यत्। पाणौ चेन्नरनाथो वा मांडलीको यथाकुलम् ॥ ५ ॥ चेत्पाणौ चरणे च यस्य हि रथो दोला सरोजध्वजा चक्रं वा व्यजनासनानि च भवंत्येतानि चिह्नानि च। नूनं तस्य गृहे भवंति कमलालीलाविलासाङ्कुशं शालाः कुञ्जरसत्तुरंगमभवाः ख्याता महीमण्डले ॥६॥ स्तंभः कुंभः पादपो वा मृदङ्गः पाणौ दण्डो घोटको वा गदा चेत्। मर्त्योऽत्यर्थं राजते राजलक्ष्म्या ख्यातो नूनं पण्डितानां वरेण्यः ॥ ७ ॥

जिसके जन्ममें राजयोग होते हैं वे राजा होते हैं अथवा उनके हथेली वा पादतलमें राजलक्षण चिह्न होते हैं वे लक्षण कहते हैं ॥ १ ॥ अनामिकाके मूलमें पुण्यनाम रेखा होती है वह रेखा मध्यांगुष्ठपर्यंत ऊपरको होकर

मणिबंधपर्यंत पहुँचे तो राज्य देती है ॥ २ ॥ जिसके अंगुष्ठमध्यमें यव (जौ) का चिह्न हो तो वह नम्र, यशस्वी और अपने वंशका भूषण होता है ॥ ३॥ जिनके हाथ वा पैरमें मछली, हाथी, छत्र, अंकुश, वीणा, बावली हो वे राजा होते हैं ॥ ४ ॥ तलवार (खंजर), दर्पण, माला, हल, पर्वत, घोडाका चिह्न हो वह राजा (वा मांडलिक) कुछ गांवका मालक कुलानुमान होता है ॥ ५ ॥ जिसके हाथ पैरमें रथ, दोला, कमल, ध्वजा, चक्र वा पंखा, आसनके चिह्न हों उसके घरमें निश्चय लक्ष्मीकी क्रीडाके विलाससे अत्यर्थ हाथी घोडाओंसे अस्तबल ऐसे परिपूर्ण रहै कि, पृथ्वीमें विख्यात हो जावै ॥ ६ ॥ जिसके हाथमें स्तंभ, कुंभ, वृक्ष वा मृदंग, दंड, घोडा, गदाका चिह्न हो वह मनुष्य राजलक्ष्मीसे विराजित रहै और निश्चय ख्यात पंडितोंमें श्रेष्ठ होवै ॥ ७ ॥

विशालभालश्चाकर्णनीलोत्पलदलेक्षणः । सुवृत्तमौलिश्चाजानुबाहुः स्यात्पुरुषश्च यः॥८॥ तमाहुर्विबुधा भूमिमण्डलाखण्डलं नृपम् । नासा तु सरला यस्य शिलातलनिभं च हृत् ॥ ९ ॥ नाभिर्गभीरोऽतिमृदुश्चरणौ रक्तवर्णकौ । राजराजः स तु भवेन्नात्र कार्या विचारणा ॥ १० ॥ वंशाभिमानः समुदारचेताः प्रसन्नमूर्तिर्गुरुसाधुनम्रः । अनीतिभीरुः शुभवाग्विलासः साम्राज्यलक्ष्मीं लभते मनुष्यः ॥ ११ ॥ तिलः करतले यस्य विरलः स्याद्धनागमः । तिलः पादे नरेशः स्याद्वाहनांकसमन्वितः ॥ १२ ॥ एतच्चिह्नं राजवंशोद्भवानां स्यान्मर्त्यानां तद्विदः संवदंति । स्वल्पं कल्प्यं चाल्पवंशोद्भवानां मर्त्यानां वा स्वीयवंशानुमानात् ॥ १३ ॥ चिह्नानि यानि मुनिभिः प्रतिपादितानि व्यक्तानि तानि परिपूर्णफलप्रदानि । दक्षे करे च चरणे खलु मानवानां धन्यानि चेदितरयोश्च सुलोचनानाम् ॥ १४ ॥

जिसके बडा ललाट (माथा), कानपर्यंत नीलकमलदलके समान नेत्र, वृत्ताकार शिर, घुटनोंपर्यंत बाहु हों उसको पंडितोंने सारी पृथ्वीका राजा

कहा है। जिसकी नाक सरल हो, छाती शिलातलके समान सरल, नाभि गहरी, चरण रक्त वर्ण एवं कोमल हों वह राजाओंका राजा होता है इसमें विचार न करना ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ जो मनुष्य अपने वंशका अनुकूल अभिमानी अर्थात् उत्तम वंशज हो, उदार मन, प्रसन्न चेहरा, गुरु जन, साधुजनोंके समक्ष नम्र अर्थात् भक्त हो, अन्यायसे डरता हो, सुन्दर वाणीके विलासवाला हो, वह बादशाही लक्ष्मीको पाता है ॥ ११ ॥ जिसके हाथमें तिल हो उसको धनागम कभी२ होवै, जिसके पैरमें तिल हो वह राजा वाहन, राजचिह्नोंसे युक्त रहै ॥ १२ ॥ ऐसे चिह्न राजवंशवालोंके हों तो वही राजा होते हैं, अन्य वंशवाले थोडा पावते हैं अथवा वे अपने वंशानुमान ऐश्वर्य पावते हैं ॥ १३ ॥ जो चिह्न मुनिजनोंने कहे हैं वे पुरुषके दाहिने हाथ पैरमें, स्त्रियोंके बायें हाथ पैरोंमें पूर्ण फल देते हैं ॥ १४ ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च।
होरासारे शम्भुहोराप्रकाशे सामुद्राख्योऽध्याय आसीत्सुपूर्णः ॥१५॥

इति श्रीपुञ्जराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे सामुद्रिकाध्यायोऽष्टादशः ॥ १८ ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है ॥ १५ ॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां सामुद्रिकाध्यायोऽष्टादशः ॥ १८ ॥

अथ राजयोगभंगाध्यायः १९।

शत्रुराशिस्थितैर्वाथ नीचस्थितैः सर्वखेटैश्च वर्गोत्तमप्रच्युतैः।
सूतिकाले नृणां राजयोगालयं याति निस्संशयं वाच्यमेतद्बुधैः ॥१॥
नक्षत्रेशं वाथ लग्नं यदैको नो संपश्येत्खेचरः सूतिकाले।
उक्ता ये वै राजयोगाश्च तेषां भंगं नूनं चाह पाराशराख्यः ॥ २ ॥
स्वांशे सूर्ये यामिनीशे विनष्टे पापैर्युक्ते सौम्यदृष्ट्या विहीने।
कृत्वा राज्यं प्रच्युतिं याति मर्त्यः पश्चाद्दुःखं प्राप्यतेऽसौ हताशः॥३
केतूदये व्यतीपात उल्कानिर्घातवासरे।
राजयोगेऽपि सूतिः स्यान्नरो दारिद्र्यभाग्भवेत् ॥ ४ ॥

भास्करः परमनीचमाश्रितो राजयोगदलनाय कीर्तितः ।
तद्वदेव धिषणः करोत्यलं राजयोगदलनं दरिद्रताम् ॥ ५ ॥
सूतिकाले भृगोः पुत्रः परमं नीचमाश्रितः ।
करोति मनुजानां च पतनं हि महत्पदात् ॥ ६ ॥
कुंभे लग्नेऽस्तं गते देवपूज्ये नीचर्क्षस्थाश्चेत्त्रयः खेचरेंद्राः ।
नैकोप्युच्चे खे च पापास्तदानीं राज्ञां योगा भंगमायांति तस्य ॥७॥
अस्तं यातैर्नीचगैर्वा शुभाख्यैः सर्वे पापाः केन्द्रसंस्थाः प्रसूतौ ।
सौम्याः खेटा रन्ध्रशत्रुव्ययस्था व्यर्थाः सर्वे राजयोगास्तदानीम् ॥८॥
चेल्लग्नस्थो राहुरिन्दुप्रदृष्टः षट्त्र्यायस्था लोहितांगारमंदाः ।
सौम्याः सूतावस्तगाः केंद्रहीना राज्ञां योगो व्यथ एवेति वाच्यम् ॥९॥

राजयोगभंग कहते हैं कि, मनुष्योंके जन्मकालमें सभी ग्रह शत्रुराशियोंमें वा नीचराशियोंमें हों वर्गोत्तमांशमें न हों तो राजयोग भंग होजाना निःसन्देह पंडितोंने कहना ॥ १ ॥ यदि जन्म समयमें चन्द्रमाको तथा लग्नको एकभी ग्रह न देखे तो उक्त राजयोग भंग हो जाते हैं यह पराशर कहते हैं ॥ २ ॥ सूर्य अपने अंशकमें हो, चन्द्रमा क्षीण पापदृष्ट शुभदृष्टिरहित हो तो मनुष्य प्रथम राज्य करके राज्यभ्रष्ट होवै, पीछे दुःख पावता है और आशा मारी जाती है ॥ ३ ॥ केतुके उदयमें, व्यतीपात योगमें, उल्कापात निर्घातदिनमें जिसका जन्म हो तो वह मनुष्य राजयोग हुएमें भी दरिद्र होवै ॥ ४ ॥ सूर्य परम नीचमें हो तो राजयोगभंग करनेवाला कहा है, ऐसाही गुरुभी राजयोगभंग तथा दरिद्रता करता है ॥ ५ ॥ जन्ममें शुक्र परमनीचका मनुष्योंको बडे पदसे पतन करता है ॥ ६ ॥ लग्न कुंभ हो, गुरु अस्तंगत हो, तीन ग्रह नीचके हों, एक ग्रहभी उच्चमें न हो, दशममें पाप हो तो राजयोग भंग होता है ॥७॥ शुभग्रह अस्त हो वा नीचगत हो समस्त पाप केंद्रोंमें हों और शुभग्रह ८।६।१२ भावोंमें हों तो सम्पूर्ण राजयोग भंग होते हैं ॥ ८ ॥ लग्नमें राहु चन्द्रमासे दृष्ट हो, ६।३।११ भावोंमें मंगल, सूर्य, शनि होवै शुभग्रह अस्तंगत एवं केन्द्ररहित हो तो राजयोग व्यर्थ होते हैं ॥ ९ ॥

केन्द्रेषु खेटरहितेषु शुभैर्नभोगैरस्तंगतैश्च यदि नीचगृह-
स्थितैर्वा । यद्वा चतुर्दिविचरैररिमंदिरस्थैर्नाशं प्रयांति
निखिलाः क्षितिपालयोगाः ॥ १० ॥

केन्द्रोंमें कोई ग्रह न हों शुभग्रह अस्त हों वा नीच राशियोंमें हों अथवा चार ग्रह शत्रुराशियोंमें हों तो संपूर्ण राजयोग नाश हो जाते हैं ॥ १० ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च ।
होरासारे शम्भुहोराप्रकाशे भंगाध्यायो राजयोगस्य पूर्णः॥११॥

इति श्रीपुञ्जराजविरचिते शम्भुहोराप्रकाशे राजयोगभंगाध्याय एकोनविंशः ॥१९ ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है ॥ १८ ॥

इति श्रीशंभुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां राजयोगभंगाध्याय एकोनविंशः ॥ १९ ॥

अथ पंचमहापुरुषलक्षणाध्यायः २० ।

ये वै महापुरुषसंज्ञकभूमिपालाः पंचैव पूर्वमुनिभिः किल
संप्रदिष्टाः । वक्ष्याम्यहं सुसरलामलकोक्तिभिस्तान् सद्राज-
योगविधिदर्शनलिप्सया च॥१॥स्वर्क्षोच्च।श्रयकेन्द्रस्थैरुच्चगैर्वा
कुजादिभिः । क्रमाद्रुचकभद्राख्यहंसमालव्यशाशकाः ॥ २ ॥

जो महापुरुषसंज्ञक राजयोग हैं वे पूर्वाचार्योंने पांचही कहे हैं । उनको सुंदर निर्मल कोमल उक्तिसे उत्तम राजयोग दिखानेकी इच्छासे कहता हूं ॥ १ ॥ मङ्गलादिक ग्रह अपनी राशि या अपने उच्चमें स्थित होकर लग्नसे केन्द्रमें पडे हों अथवा जिस किसी स्थानमें अपने उच्चके हों तो क्रमसे रुचक १, भद्र २, हंस ३, मालव्य ४, शशक ५, ये पांच महापुरुषयोग होते हैं, अर्थात् मङ्गल स्वराशिस्थ या स्वोचस्थ होकर केन्द्रमें हो तो रुचक, बुध हो तो भद्र, बृहस्पति हो तो हंस, शुक्र हो तो मालव्य और शनि अपने राशि या अपने उच्चके होकर केंद्रमें हो तो शशक ये पांच योगक्रमसे होते हैं । अथवा जिस किसी स्थान स्थितभी भौमादिक ग्रह अपने उच्चमें पडे हों तौभी क्रमसे पूर्वोक्त पांचों योग होते हैं ॥ २ ॥

अथ रुचकयोगफलम् ।

रक्तश्यामो दीर्घवक्रोऽतिरक्तवीर्यः शुभ्रो नीलकेशोऽतिशूरः। मंत्राभिज्ञः कंबुकंठो महौजाः क्रूरोऽत्यर्थं साहसावाप्तसिद्धिः ॥ ३ ॥ भक्तो विप्राचार्यवृन्दारकाणां मर्त्योऽत्यर्थं शत्रुवीर्यस्य हंता । चंचत्कीर्तिश्चारुकीर्तिः समानहस्तांघ्रिः स्याल्लोमजानूरुजंघाः ॥ ४ ॥ वीणाशंखश्चापखट्वांगपाशगोवज्राख्यैश्चिह्नितः पाणिपादः । कौशल्यः स्याद्यंत्रमंत्राभिचारे तन्मध्यं स्याद्वक्त्रदैर्घ्येण तुल्यम् ॥ ५ ॥ सह्यस्य विंध्यसहितस्य तथोज्जयिन्या ईशश्च वत्सरकसप्ततिजीवितोऽसौ । शस्त्राग्निचिह्नसहितो रुचकाभिधाने देवालये हि निधनं खलु स प्रयाति ॥ ६ ॥

रुचक योगवाला मनुष्य रक्तश्याम रंग, लंबा मुख, सुर्खरंग वीर्य, सुंदर, नीले केश, अति शूरमा, मंत्र जाननेवाला, शंखके समान कण्ठ, बडा तेजस्वी, क्रूरसाहससे सिद्धि प्राप्त होवै ॥ ३॥ ब्राह्मण, गुरु देवताओंका भक्त, अत्यर्थ शत्रुबलका मारनेवाला, देदीप्यमान सुन्दर कीर्ति, हाथ पैर सरल, ऊरु, जंघा, रोम समान ॥ ४ ॥ वीणा, शंख, धनुष्य, खट्वांग, पाश, गौ, वज्रके चिह्नोंसे युक्त हाथ पैरवाला, यंत्र, मंत्र जादूगरीमें चतुर होवै, उसका कटिभाग मुखकी लंबाईके समान होवै ॥ ५ ॥ विंध्यसहित सह्यपर्वत और उज्जयिनीका राजा होवै, ७० वर्ष जीवै, शस्त्र अग्निका चिह्न अंगमें हो, देवालयमें मृत्यु होवै ॥ ६ ॥

अथ भद्रयोगफलम् ।

शार्दूलप्रतिमाननो द्विपगतिः पीनोरुवक्षस्थलो लंबापीनसुवृत्तबाहुयुगलस्तत्तुल्यमानोच्छ्रयः । कामी कोमलसूक्ष्मरोमनिचयैः संरुद्धगंडस्थलः प्राज्ञः पंकजगर्भपाणिचरणः सत्त्वाधिको योगवित् ॥ ७॥ शंखासिकुञ्जरगदाकुसुमेषुकेतुचक्राब्जलांगलविचिह्नितपाणिपादः । यात्रागजेन्द्रमदवारि-

कृताईमूर्त्तिः सत्कुंकुमप्रतिमगंधतनुः सुघोषः ॥ ८ ॥ सद्भ्रू-
युगोऽतिमतिमान् खलु शास्त्रवेत्ता मानोपभोगसहितोऽपि
निगूढगुह्यः । सत्कुक्षिधर्मनिरतः सुललाटपट्टो धीरो भवेद-
सितकुंचितकेशपाशः ॥९॥ स्वतंत्रः सर्वकार्येषु स्वजनं प्रति
न क्षमी । भुज्यते विभवस्तस्य नित्यमार्थिजनैः परैः ॥ १० ॥
भारं तुलायां तुलयेत्सुरत्नैः श्रीकान्यकुब्जाधिपतिर्भवेत्सः ।
भद्रोद्भवः पुत्रकलत्रसौख्यो जीवेन्नृपालः शरदामशीतिः ॥ ११ ॥

भद्रयोगवाला पुरुष सिंहके समान मुख, हाथी समान गति, नितंब और छाती ऊंचे, दोनों बाहु लंबे और मोटे, उन्हींके तुल्य ऊंचा अर्थात् दोनों बाहु लंबे करके जितना हो उतनाही ऊंचा होवै । कामी, बारीक और कोमल रोमसमूहसे गंडस्थल ढका हो । विद्यावान्, कमलके गर्भसदृश लालिमा युक्त हाथ और पैर हों, सत्त्वगुणाधिक, योग जाननेवाला ॥ ७ ॥ शंख, तलवार, हाथी, गदा, पुष्प बाण, ध्वजा, चक्र, कमल, हलका चिह्न, हाथ पैरमें तथा यात्रा हाथियोंके मदजलसे गीली मूर्त्तिवाली है, शरीरमें उत्तम केसरकी गंध आवै, वाणीका सुंदर शब्द होवै ॥ ८ ॥ सुंदर भ्रूकुटी, अतिबुद्धिमान्, शास्त्रज्ञ, सन्मान और भागसे युक्त, गूढ गुह्यदेश, सजीली कुक्षि, धर्ममें तत्पर, सुंदर ललाट, धीर, कृष्ण और घुंघराले बाल ॥ ९ ॥ सब कामोंमें स्वतंत्र, अपने मनुष्योंमें क्षमारहित रहे, उसके ऐश्वर्यको सर्वदा याचकलोग भोगें ॥ १० ॥ रत्नोंके भारको तराजूसे तोले, कान्यकुब्ज-देशका राजा होवै, मंगल करनेवाला, पुत्र कलत्र सुखवान् होवै और वह राजा ८० वर्षपर्यंत जीता रहे ॥ ११ ॥

अथ हंसयोगफलम् ।

रक्तश्चोन्नतनासिकः सुचरणे हंसे प्रसन्नेंद्रियो गौरः पीनकपोल-
रक्तकरजो हंसस्वनः श्लेष्मलः । शंखाब्जांकुशमत्स्यदाम-
युगकैः खट्वांगमालाघटैश्चंचत्पादकरस्थले मधुनिभे नेत्रे
सुवृत्तं शिरः ॥ १२ ॥ जलाशये प्रीतिरतीव कामी न याति
तृप्तिं वनितासु नूनम् । उच्चोऽङ्गुलैर्वै षडशीतितुल्यैरायुर्भवेत्

षण्णवतेः समानाम् ॥ १३ ॥ बाह्लीकदेशान्वरशूरसेनान् गांधर्वगंगायमुनांतरालान् । भुक्त्वा वनांते निधनं प्रयाति हंसोऽयमुक्तो मुनिभिः पुराणैः ॥ १४ ॥

हंसयोगवाला मनुष्य ताम्रवर्ण, ऊंची नाक, सुंदर कोमलचरण, प्रसन्न इंद्रिय गण, गोरा ऊंची गाल, हथेली रक्तवर्ण, हंसके समान स्वर, श्लेष्मप्रकृति, हाथ, पैर शंख, कमल, अंकुश मछली, रस्सी यूप, खट्वांग, माला, घडेके चिह्नसे शोभायमान रहे, नेत्र सहदके सदृश रंगके और शिर सुंदर वृत्ताकार होवै ॥ १२ ॥ जलाशयमें प्रीति, अतिकामी स्त्रियोंमें तृप्त न होवै, ८६ अंगुल ऊंचा शरीर होवै । आयु ९६ वर्षकी होवै ॥ १३ ॥ बाह्लीक देश, शूरसेन देश, गांधर्व देश और गंगा यमुनाके बीचके देशोंका राज्य भोगके वनमें मृत्युको प्राप्त होवै यह हंसयोगका फल प्राचीन मुनियोंने कहा है ॥ १४ ॥

अथ मालव्ययोगफलम् ।

अस्थूलोष्ठो न विषमवपुर्नैव रिक्तांगसंधिर्मध्ये क्षामः शशधररुचिर्हस्तिनीशः सुगंडः । सद्दीप्ताक्षः समसितरदो जानुदेशाप्तपाणिर्मालव्योऽयं विलसति नृपः सप्ततिर्वत्सराणाम् ॥ १५ ॥ वक्त्रं त्रयोदशमितांगुलमस्य दैर्घ्यं तिर्यग् दशांगुलमितं श्रवणांतरालम् । मालव्यसंज्ञनृपतिः स भुनक्ति नूनं लाटाँश्च मालवकसिंधुसुपारियात्रान् ॥ १६ ॥

मालव्ययोगवाला मनुष्य पतले ओंठ, सरल शरीरवाला, अंगोंकी संधियां भरी, कमर पतली, चंद्रमाके समान कांतिमान्, हस्तिनी स्त्रीका स्वामी, सुंदर गंडस्थल, देदीप्यमान नेत्र, सम एवं श्वेत दांत, हाथ घुटनोंतक लंबे होते हैं, ७० वर्षपर्यन्त राजत्वमें विराजता है ॥ १५ ॥ मुखकी लंबाई १३ अंगुल और तिर्छा १० अंगुल परिमित कानोंतक होती है, यह मालव्यसंज्ञक राजा लाटदेश मालवा, सिन्धु, पारियात्र देशोंको भोगता है ॥ १६ ॥

अथ शशकयोगफलम् ।

लघुद्विजास्यः सुभगः सकोपः शठोऽतिशूरो विजनप्रचारः । वनाद्रिदुर्गेषु नदीषु शस्तः प्रियातिथिर्नातिलघुः प्रसिद्धः ॥ १७ ॥

नानासेनानिचयनिरतो दंतुरश्चापि किंचिद्धातोर्वादे भवति कुशलश्चञ्चलं कोलनेत्रः । स्त्रीसंसक्तः परधनहरो मातृभक्तः सुजंघो मध्ये क्षामः सुललितमती रंध्रवेदी परेषाम् ॥ १८ ॥ पर्यंकशंखशरशस्त्रमृदंगमालावीणोपमाः खलु करे चरणे च रेखाः । वर्षाणि सप्ततिमितानि करोति राज्यं संज्ञः शशाख्य-नृपतिः कथितो मुनीन्द्रैः ॥१९॥ केन्द्रोपगा यद्यपि भूसुताद्या मार्तण्डशीतांशुयुता भवंति । कुर्वंति नोर्वीपतिमात्मपाके यच्छंति ते सत्फलमेव पुंसाम् ॥ २० ॥

शशक संज्ञकराजा छोटे दांत, छोटा मुख, सुभग, कोपसहित, धूर्त, अति शूरमा, वनमें फिरनेवाला, वन, पर्वत, किला और नदियोंमें प्रसन्न रहने-वाला, अतिथियोंको प्रियमाननेवाला हो । अतिह्रस्व शरीर न होवै, प्रसिद्ध होवै ॥ १७ ॥ अनेक प्रकारकी सेनासमूहमें रतरहे, किंचित् (दंतुर) बाहरकी ओर दांतवाला, धातुवादमें चतुर, चञ्चल शूकरकेसे नेत्रका, स्त्रीमें आसक्त, पराये धनका हरण करनेवाला, माताका भक्त, सुडौल जानुदेश, कटिभाग माडा, सुंदर ललित बुद्धि और दूसरोंका छिद्र जाननेवाला होवै ॥ १८ ॥ हाथ पैरोंमें पलंग, शंख, बाण, शस्त्र, मृदंग, माला, वीणा-सरीखे चिह्न होवैं, ७० वर्षपर्यन्त राज्य करता है यह शशसंज्ञक राजा मुनींद्रोंने कहा है ॥ १९ ॥ यदि सूर्य चंद्रमा सहित भौमादि ग्रह हों तो राजा नहीं करते, केवल स्वदशामें अन्यप्रकार शुभफल देते हैं ॥ २० ॥

विद्वद्रम्ये खेटलीलाविलासे सम्यग्बोधे पुञ्जराजोदिते च ।
होरासारे शम्भुहोराप्रकाशेऽध्यायः पूर्णो वै महापूरुषाख्यः ॥ २१ ॥

इति श्रीपुञ्जराजविरचिते शंभुहोराप्रकाशे पञ्चमहापुरुष-लक्षणाध्यायो विंशः ॥ २० ॥

विद्वद्रम्येत्यादिका अर्थ पूर्ववत् है ॥ २१ ॥

इति श्रीशम्भुहोराप्रकाशे माहीधरीभाषाटीकायां पञ्चमहापुरुषलक्षणाध्यायो विंशः ॥ २० ॥

श्रीवैक्रमेऽश्विरसनन्दकुसंमितेऽब्दे होराप्रकाशविवृतिर्नृगिरा व्यतानि । धर्माधिकारिपदधारिमहीधरेण श्रीकीर्तिशाह-नृपतेर्नगरे टिहर्य्याम् ॥ १ ॥ नानादायैरायुषो निर्णयोऽस्मिन् ग्रन्थेऽन्येभ्यो जातकेभ्यो विशेषात् । योगादिभ्यः खेटपाक-व्रजश्चागादि व्याख्योदाहृतिर्मूलमात्रात् ॥ २ ॥ यदत्र चापलं मे स्याच्छोधयंतु विपश्चितः । तथा लोकोपकाराय भूया-देष परिश्रमः ॥ ३ ॥

भाषाकारकी उक्ति है कि, श्रीविक्रमसंवत् १९६२ में धर्माधिकारिपद-युक्त महीधरने श्रीमान् कीर्तिशाहमहाराजकी राजधानी टिहरी नगरमें इस शंभुहोराप्रकाश ग्रन्थकी भाषाटीका बनाई ॥ १ ॥ इस ग्रन्थमें अनेक प्रकारकी दशाओंसे आयुका निर्णय एवं योगादियोंकरके ग्रहफलसमूह अन्य जातकोंकी अपेक्षा विशेषतासे हैं परंतु टीकाटिप्पणी कुछ नहीं थीं इसलिये इसकी भाषाव्याख्या उदाहरणसहित मूलमात्रसे कही है ॥ २ ॥ इसमें जो कुछ त्रुटि रहगई हो उसे विद्वान् लोग शुद्ध करें और यह मेरा परिश्रम लोकोपकारके लिये होवै ॥ ३ ॥ इति शुभम्.

समाप्तश्चायं ग्रन्थः ।

